र्मदा-दर्शन



लेखक - श्रीप्रभुदत्त ब्रह्मचारी

॥ श्री हरिः ॥



नर्मदा-दर्शन

(नर्मदा जी की मोटर द्वारा परिक्रमा तथा पैदल परिक्रमा समस्त स्थानों का क्रम पूर्वक वर्णन)



लेखक

श्री प्रभुदत्तजी ब्रह्मचारी



प्रकाशक

संकीर्तन भवन, प्रतिष्ठानपुर

पो भूसी (प्रयाग)

प्रथम संस्करण २००० | ज्येष्ठ संवत् २०३७ सन् १९८० | मूल्य १०.रु०

मुद्रक—बंशीधर शर्मा, भागवत प्रेस, ८५२ मुट्ठीगंज, प्रयाग।

॥ श्री हरिः ॥

नर्मदा-दर्शन

की

विषय-सूची

नर्मदा-दर्शन

की

चित्र-सूची

सम्पूर्ण चित्र संख्या—४२

भूमिका

श्री नर्मदा जी की इतनी महिमा क्यों ?

नमोऽस्तु ते ऋषिगण सिद्धसेविते
नमोऽस्तु ते शंकर देह निसृते ।
नमोऽस्तुते धर्म भृतां वरप्रदे
नमोऽस्तुते सर्वपवित्रपावने ॥*

(मत्स्य पुराणे)

छप्पय

प्रथम तपस्या करी मातु तनु सकल सुखायो ।
दूसर नग नग निकरि सकल बन पन्थ डुबायो ॥
तीसरि शिवकी सुता पार्वती प्रान पियारी ।
चौथे सुर, नर, असुर, सिद्ध, ऋषि मुनि हितकारी ॥
पंचम तट पाषान तव, सबई शम्भु सरूप हैं ।
सर्वश्रेष्ठ तातैं भई, सेवें सुर नर भूप हैं ॥

---

* हे नर्मदे आप ऋषि मुनियों तथा सिद्धों द्वारा सेवित हैं। हे देवि ! आप श्रीशंकरजी के शरीर से निकली हुई हैं । हे भगवति ! आप धर्मात्माओं को वर प्रदान करने वाली हो । हे रेवे ! आप जितने भी पवित्र तीर्थ हैं उन्हें पावन करने वाली हो । आपके पादपद्मों में हमारा बारम्बार प्रणाम है । नमस्कार है वन्दन है ।

यह सम्पूर्ण संसार सम्बन्ध के ही द्वारा चल रहा है। पिता चाहता है, मेरा पुत्र मुझसे भी बढ़कर हो। मनुष्य सर्वत्र अपनी विजय चाहता है, किन्तु पुत्र से पराजित होने पर प्रसन्नता प्रकट करता है। जो प्रतिष्ठित पद पर पहुँच जाते हैं, वे चाहते हैं, हमारी सन्तानें भी हमसे श्रेष्ठ पद प्राप्त कर लें। भगवान् समदर्शी कहलाते हैं, किन्तु वे भी अपने एकान्तनिष्ठ भक्त का पक्ष लेते हैं। भगवान् ने यही बात दुर्वासा जी से स्पष्ट कही है। भगवान् कहते हैं— देखो, दुर्वासा जी! जैसे सती स्त्री अपने पातिव्रत से सदाचारी पति को अपने वश में कर लेती है, वैसे ही मेरे साथ अपने हृदय को प्रेम के बन्धन से बाँध लेने वाले समदर्शी साधु प्रकृति वाले मेरे भक्त भक्ति के द्वारा मुझे अपने वश में कर लेते हैं।*

इसी प्रकार सन्तानें अपने प्रेम पाश में पिता को ऐसे बाँध लेती हैं कि उनसे उचित अनुचित सब ही कार्य करा लेती हैं। बड़ों की सन्तान होना, बड़े पद पर पहुँचने का यह भी एक अमोघ उपाय है। चाहें ऊपर से कहें भले ही नहीं, किन्तु बड़े लोग अपने पुत्र-पुत्रियों को सबसे श्रेष्ठ बनाना चाहते हैं। बड़ों की सन्तानें भी किसी दूसरे से इच्छा की पूर्ति न देखकर अपने समर्थ पिता की ही शरण में जाती हैं और रो-धोकर अपनी इच्छा पूर्ण करा लेती हैं। यही बात नर्मदा जी के सर्वश्रेष्ठ बनने के सम्बन्ध में है। स्कन्द पुराण के काशी खण्ड में एक कथा आयी है।

नदियाँ तो सभी पवित्र हैं, उनमें भी जो समुद्रगा हैं, सीधी

---

* मयि निर्बद्धहृदयाः साधवः समदर्शिनाः।
वशीकुर्वन्ति मां भक्त्या सत्स्त्रियः सत्पतिं यथा ॥
(श्री० भा० ९ स्क० ४ अ० ६६ श्लो०)

समुद्र में जाकर मिली हैं, वे और नदियों से श्रेष्ठा हैं। समुद्र में मिलने वाली नदियों में भी चार नदियाँ सर्वश्रेष्ठ मानी जाती हैं। गंगा, यमुना, सरस्वती और नर्मदा। गंगा ऋक्वेद स्वरूपा हैं। यमुना यजुर्वेद स्वरूपा, नर्मदा सामवेद स्वरूपा और सरस्वती अथर्ववेद स्वरूपा हैं।[1]

इस प्रकार नर्मदा जी ने अपनी योग्यता से प्रथम श्रेणी तो प्राप्त कर ली। किन्तु वे चाहती थीं, प्रथम श्रेणी में भी मुझे सर्व-प्रथम स्थान मिले। यह तपस्या द्वारा ही हो सकता है और इसे लोक पितामह ब्रह्मा ही दे सकते हैं। अतः उन्होंने इसके लिये घोर तपस्या करनी आरम्भ कर दीं।

इनकी तपस्या से ब्रह्माजी प्रसन्न हुए और इनके सम्मुख प्रकट होकर वरदान माँगने को कहा। तब नर्मदा जी ने बड़े विनीत भाव से कहा—"हे प्रभो! यदि आप मेरे ऊपर प्रसन्न हैं, तो मुझे गंगा के सदृश सर्वश्रेष्ठ पद प्रदान कर दीजिये।"[2]

यह सुनकर ब्रह्मा बाबा हँसे और बोले—बिटिया! अच्छा

---

१. सर्वाभ्योऽपि नदीभ्यश्च श्रेष्ठाः सर्वा समुद्रगाः ॥१॥
ततोऽपि हि महाश्रेष्ठाः सरित्सुसरिदुत्तमाः ॥२॥
गंगा च यमुना चाथ नर्मदा च सरस्वती।
चतुष्टय मिदं पुण्यं धुनीषु मुनि पुंगवाः ॥३॥
ऋग्वेद मूर्तिर्गङ्गा स्याद् यमुना च यजुर्ध्रुवम्।
नर्मदा साममूर्तिस्तु स्यादथर्वा सरस्वती ॥
गंगा सर्वसरिद्योनिः समुद्रस्यापि पूरणी।
गंगया न लभेत् साम्यं काचिदत्र सरिद्वरा ॥४॥

२. गंगा साम्यं विधे! देहि प्रसन्नोऽसि यदि प्रभो।
ब्रह्मणाथ ततः प्रोक्ता नर्मदास्मित पूर्वकम् ॥

हम तुमसे कुछ प्रश्न पूछते हैं, पहिले तुम उनका उत्तर दो तब तुम्हारी बात सुनेंगे।

नर्मदा जी ने कहा—"पूछिये बाबाजी।"

ब्रह्माजी ने पूछा—"अच्छा बताओ भगवान् पुरुषोत्तम के सदृश कोई और पुरुष हो सकता है?"

नर्मदा जी ने कहा—"नहीं।"

ब्रह्माजी ने फिर पूछा—"अच्छा बताओ क्या सती पार्वती गौरी के सदृश कोई और नारी हो सकती है?"

नर्मदा जी ने कहा—"नहीं।"

पुनः ब्रह्माजी ने पूछा—"अच्छा, बताओ, काशी के सदृश परम पावन कोई और पुरी हो सकती है?"

नर्मदा जी ने कहा—"नहीं।"

हँसकर ब्रह्माजी बोले—"तब बिटिया! तुम कैसे कहती हो मैं गंगा के सदृश सर्वश्रेष्ठा बन जाऊँ। भला, तुम्हीं बताओ स्वर्ग तरङ्गिणी त्रिभुवन तारिणी सुरसरि गंगा के सदृश कोई दूसरी नदी कैसे हो सकती है?"*

यह सुनकर नर्मदा जी चुप हो गयीं। उन्होंने अपने मन में सोचा—अरे, बड़ी भूल हो गयी। ओ हो! मैं तो अनुपयुक्त परीक्षक के पास पहुँच गयी। जिसे मोह नहीं, ममता नहीं, अपनापन नहीं। अब ऐसे परीक्षक की शरण में जाऊँ जिसके

---

* पुरुषोत्तम तुल्यः स्यात् पुरुषोऽन्यो यदि क्वचित्।
स्रोतस्विनी तदा साम्यं लभते गंगयाऽपरा॥
यदि गौरी समा नारी क्वचिदन्या भवेदिह।
अन्या धुनीह स्वर्धुन्यास्तदा साम्यमुपेष्यति॥
यदि काशीपुरी तुल्या भवेदन्या क्वचित्पुरी।
तदा स्वर्गतरङ्गिण्याः साम्यमन्या नदी लभेत्॥

हृदय में दयामया अपनापन हो, जो निजत्व के कारण अधिक-से-अधिक अनुग्रहांक दे सकता हो। यह सोचकर वह अपने पिता शिवजी की शरण में काशी गयीं। घोर तपस्या की, अपने नाम के नर्मदेश्वर की स्थापना करके उनकी आराधना करने लगीं। इनकी सेवा से सन्तुष्ट होकर शंकर जी इनके सम्मुख प्रकट हुए और वर माँगने को कहा।

अब के नर्मदा जी सम्हल गयीं। उन्होंने सोचा—पहिले ही अपने प्रयोजन की बात नहीं कह देनी चाहिये। यदि इन्होंने भी ब्रह्माजी की भाँति प्रश्नों की झड़ी लगा दी तो फिर मैं किधर की भी न रहूँगी अतः पहिले अपनी निष्कामता प्रदर्शित करूँ। क्योंकि माँगने वाला पहिले ही स्वार्थ की बात कह देता है तो दाता को घृणा हो जाती है, यदि पहिले अपना त्याग दिखावे। निष्कामता प्रकट करे तो दाता को अधिक देने की श्रद्धा होती है, जैसे बामन ने बलि के प्रति अपनी निष्कामता दिखायी तो वह स्वयं ही सर्वस्व देने को तत्पर हो गया। यह सोचकर हाथ जोड़कर नम्रता के साथ बोली—"हे प्रभो! आप मेरे ऊपर प्रसन्न हैं, इससे बढ़कर हे देवेश! और क्या वर होगा? हे धूर्जटे! आपकी प्रसन्नता के आगे और सब वरदान तुच्छ हैं। आपके चरणारविन्दों में मेरी अहैतुकी भक्ति बनी रहे, यही वरदान आप मुझे दें।"❀

नर्मदा के ऐसे निष्काम निस्पृह भक्तियुक्त वचनों को सुनकर औघरदानी आशुतोष भगवान् शंकर बड़े प्रसन्न हुए। वे तो असुर

❀ सरिद्वरा निशम्येति रेवा प्राह महेश्वरम्।
किं वरेणेह देवेश! भृशं तुच्छेन धूर्जटे॥
निर्द्वन्द्वात्वत्पदद्वन्द्वे भक्तिरस्तु महेश्वर!
श्रुत्वेति नितरां तुष्टो रेवा गिर मनुत्तमाम्॥

राक्षसों को भी वे जो माँगते हैं दे देते हैं। फिर यह तो अपनी पुत्री ठहरी। कुछ माँग भी नहीं रही है, केवल मेरे चरणों की भक्ति माँग रही है। अतः शिवजी का रोम-रोम खिल उठा और अत्यन्त ही प्रसन्नता प्रकट करते हुए बोले—"बेटी ! तुमने जो मेरे चरणों की भक्ति माँगी वह तो तुम्हें प्राप्त होगी ही। किन्तु मैं तुम्हें अपनी ओर से भी कुछ वरदान देना चाहता हूँ।"

नर्मदा जी ने कहा—"भगवन् ! यह आपकी इच्छा के ऊपर निर्भर करता है। आप जो भी देंगे वह मुझे सहर्ष स्वीकार है।"

तब शिवजी बोले—"अच्छा, सुन, भक्ति के अतिरिक्त पहला वर तो मैं यह देता हूँ कि तेरे दोनों किनारे के जितने भी पाषाण होंगे, वे सब मेरे स्वरूप ही–शिवलिङ्ग–समझे जायँगे।

दूसरा वर मैं यह देता हूँ कि गंगा, यमुना, सरस्वती और तू चार सर्वश्रेष्ठ नदियाँ मानी जाती हैं, तू इन चारों में सर्वश्रेष्ठ समझी जायगी।"

नर्मदा जी तो यह चाहती ही थीं, फिर भी बात को पक्की करने के लिये पूछा—"सो कैसे जाना जायगा भगवन् !"

शिवजी बोले—"देख सुन, गंगाजी में स्नान करो, तुरन्त निष्पाप हो जाओगे। यमुनाजी के किनारे सात दिनों तक रहो, स्नान पूजन अर्चन करो तप-निष्पाप होगे। सरस्वती के किनारे तीन दिनों तक रहने पर निष्पाप होते हैं। किन्तु हे रेवे ! तुम्हारे तो केवल दर्शन मात्र से ही प्राणी निष्पाप बन जायँगे। इसके अतिरिक्त और भी एक बर देता हूँ, तुम्हारे इस स्थापित नर्मदेश्वर के काशी में दर्शन करके पापी निष्पाप बन जायँगे।❀

❀ प्रोवाच च सरिच्छ्रेष्टे ! त्वयोक्तं यत् तथाऽस्तुतत्।
गृहाण पुण्य निलये ! वितरामि वरान्तरम्॥
यावन्त्यो दृषदः सन्ति तव रोधसि नर्मदे।
तावन्त्यो लिङ्ग रूपिण्यो भविष्यन्ति वरान्मम॥

अपने मनोनुकूल बिना माँगे इतने वर पाकर नर्मदा जी बड़ी प्रसन्न हुई। जिनके दर्शन मात्र से समस्त पाप जल जाते हैं, वे नर्मदा जी इन वरदानों को प्राप्त करके काशी से अपने विन्ध्य-प्रदेश के स्वस्थान को चली गयीं।❀

अब आप इसे चाहें नर्मदा का पुरुषार्थ समझें, चाहें राजनैतिक दाव-पेच समझें, चाहे पक्षपात समझें, चाहे भाई भतीजा अथवा बाप बेटी वाद समझें जो चाहें सो समझें शिवजी के वरदान से नर्मदा परम पावन सर्वश्रेष्ठा सरित्-प्रवरा बन ही गयीं। अन्य नदियों से इनमें विशेषता भी है।

१—पहिली विशेषता तो यह है कि ये आदि से अन्त तक पहाड़ों में ही होकर बहीं हैं। इसीलिये स्वराज्य से पूर्व इनमें से कोई भी नहर नहीं निकली। अब कई स्थानों में बाँध-बाँधकर इनका जल एकत्रित करके नहरें निकालने का प्रयास किया जा रहा है।

२—दूसरी विशेषता यह है कि ये उलटी बहीं हैं। और नदियाँ तो उत्तर से पूर्व की ओर बहती हैं। ये पूर्व से पश्चिम की ओर बही हैं।

३—तीसरी विशेषता यह है कि जितने तीर्थ नर्मदा जी के

अन्यं च ते वरं दद्यां तमप्याकर्णयोत्तमम्।
दुष्प्रापंयश्च तपसां राशिभिः परमार्थतः॥
सद्यः पापहरा गङ्गा सप्ताहेन कलिन्दजा।
त्र्यहात्सरस्वती तीरे रेवे! त्वं तु दर्शनमात्रतः॥
अपरं च वरं दद्यां नर्मदे! दर्शनाद्यहे!!
भवत्या स्थापितं लिङ्गं नर्मदेश्वर संज्ञकम्॥
❀ नर्मदाऽपि प्रहृष्टाऽऽसीत्पाविश्यं प्राप्य चाद्भुतम्।
स्वदेशं च परिप्राप्ता दृष्टमात्राऽघहारिणी॥

तट पर हैं, उतने तीर्थ किसी भी नदी के तट पर नहीं हैं। इसका तो प्रत्येक पत्थर कंकर शंकर है।

४—चौथी विशेषता यह है कि जितने पक्के घाट नर्मदा जी में हैं उतने घाट किसी भी नदी पर नहीं हैं।

५—पाँचवीं विशेषता यह है कि इतने घने जंगल वन इसके किनारे-किनारे हैं उतने स्यात् ही कहीं हों।

६—छटी विशेषता यह है कि किसी भी नदी के जयकार में उसके बाप का नाम नहीं लिया जाता। इनके पिता ने पक्षपात करके इन्हें सर्वश्रेष्ठ बना दिया इसलिये इनके साथ ही इनके पिता का नाम लिया जाता है। "नर्मदेहर"

७—सातवीं विशेषता यह है कि अनादि काल से इनकी जैसी विधिवत् परिक्रमा होती है वैसी किसी भी नदी की नहीं होती। इन्हीं सब कारणों से नर्मदा जी का महत्व सबसे अधिक है। प्रायः सभी पुराणों में नर्मदा जी की महिमा गायी गयी है। वायु पुराण तथा स्कन्द पुराण में तो रेवा खण्ड पृथक् ही खण्ड हैं। सम्पूर्ण देश के शिव मन्दिरों में नर्मदा जी से लाये हुए शिवलिंग ही स्थापित होते हैं। हमने भी प्रयाग के, वृन्दावन के तथा देहली के आश्रमों में नर्मदेश्वर की स्थापना की है। देहली के हमारे आश्रम में तो डेढ़ मन से भी अधिक भार के नर्मदेश्वर हैं। जहाँ रहता हूँ, नित्य नर्मदेश्वर के दर्शन करता हूँ। नर्मदेश्वर का दर्शन नर्मदा के दर्शन के ही समान है।

फिर भी नर्मदा परिक्रमा की इच्छा रही। मोटर द्वारा परिक्रमा सविधि परिक्रमा तो कही नहीं जा सकती। फिर भी नर्मदा दर्शन, नर्मदा स्पर्शन, नर्मदा स्नान, नर्मदा जल पान तो नित्य हुआ ही। वैसे मैं सदा गंगाजल पान करता हूँ। बाहर जाता हूँ, तो बड़े-बड़े पात्रों में गंगाजल भर कर ले जाता हूँ। नर्मदा जी गया तो जबलपुर तक तो गंगाजल पिया। आगे नर्मदा का ही स्नान

जल-पान हुआ। सोचा-नर्मदा जी बुरा मान जायँगी। रहता है हमारे तट पर जल पीता है गंगा का। कितनी भी बड़ी देवी हों डाह तो सबको होता ही है।

नर्मदा किनारे आकर ब्रह्मा, विष्णु, महेश, लोकपाल, देवता, उरग, राक्षस, बानर भालू अप्सरा, यक्ष, गन्धर्व, किंपुरुष आदि सभी ने तपस्या करके सिद्धि प्राप्त की। रेवा तपस्थली है। अतः कहा है—"रेवातीरे तपः कुर्यात् मरणं जाह्नवीतटे" नर्मदा जी के तट पर जाकर तपस्या करे और मृत्यु के समय जाह्नवी–गंगाजी–के तट पर आ जाय। मैं तो तप से वंचित ही रहा। रेवातीर पर तपस्या नहीं कर सका।

अब अन्तिम अवस्था आ गयी, माँ जाह्नवी अपनी शरण में ले लें यही बहुत है। मरण समय महाराज परीक्षित् गंगाजी की शरण में गये थे। उन्होंने हाथ जोड़कर गद्‌गद कंठ से कहा था— इन भगवती भागीरथी जी का जल भगवान् श्री कृष्णचन्द्र जी के कमलरूपी चरणों के उस पराग को लेकर प्रवाहित होता है, जो श्रीमता तुलसीजी की गन्ध से संमिश्रित है। इसीलिये वे लोकपालों के सहित समस्त ऊपर के तथा नीचे के लोकों को पवित्र करती हैं। जिसकी मृत्यु संनिकट आ गयी है, ऐसा कौन म्रियमाण पुरुष होगा जो श्री गंगाजी का सेवन न करेगा ?*

सो, माँ! अब तुम्हारी शरण में आ गया हूँ। इस अन्तिम अवस्था में जननी! अपना लेना, यही प्रार्थना है। आप दोनों परस्पर में चाहें जो स्पर्धा रखो, किन्तु मैं तो दोनों को एक ही मानता हूँ। एक शिव के श्वेद से उत्पन्न हुई हैं। दूसरी सदा उनके शिर पर विराजमान रहती हैं।

---

* या वै लसच्छ्रीतुलसीविमिश्रकृष्णाङ्घ्रिरेण्वभ्यधिकाम्बुनेत्री।
पुनाति लोकानुभयत्र सेशान् कस्तां न सेवेत मरिष्यमाणः॥
(श्री० भा० १ स्क० १९ अ० ६ श्लोक)

लगभग डेढ़ महीने नर्मदा मैया ने अपनी शरण में रखा। वे जीव की निर्बलता जानती ही हैं। बाहन से ही सही उनके चरणों की शरण में ही तो रहना हुआ। कुछ देखकर, कुछ सुन-कर, कुछ पढ़कर कुछ पुराणों से कुछ अन्य ग्रन्थों से लेकर यह "नर्मदा-दर्शन" लिखा गया। इससे नर्मदा यात्रियों को नर्मदा प्रेमियों को कुछ भी लाभ हुआ तो मैं अपने परिश्रम को सफल समझूँगा।

नर्मदा जी के ऊपर विविध भाषाओं में अनेक ग्रन्थ लिखे गये हैं। किसी ने किसी दृष्टि से लिखा है, किसी ने अपने यात्रा विवरण को रोचक बनाने के निमित्त औपन्यासिक ढंग से लिखा है। मुझे स्वामी श्री मायानन्द जी महाराज द्वारा लिखित "हिन्दी नर्मदा पंचाङ्ग" सबसे अच्छा लगा। स्वामी जी ने बड़े परिश्रम से बड़ी खोज बीन के साथ शास्त्रीय प्रमाणों से युक्त इस ग्रन्थ को लिखा है। स्वयं स्वामी जी ने बड़े परिश्रम से दो बार दर्मदा जी की पैदल परिक्रमा की है। प्रत्येक स्थान को देखा है, नापा है और मुख्य-मुख्य स्थानों के घाटों के चित्र लिये हैं। उनकी पुस्तक में ४४ चित्र हैं। यद्यपि वे स्पष्ट नहीं हैं तो भी उनका प्रयत्न परम सराहनीय है। परिक्रमा सम्बन्धी सभी बातों का उन्होंने बड़े ही सुन्दर ढंग से संग्रह किया है। स्वामी जी अन्त में ओंका-रेश्वर में आश्रम बनाकर रहने लगे थे। आप मराठी और हिन्दी में कविता भी लिखते थे। आपके और कई ग्रन्थ हैं। सन् १९३४ में आप परमधाम को पधारे। आपके "नमदा पंचाङ्ग" से हमें बहुत सहायता मिली है।

हमारे मित्र दारागंज प्रयाग निवासी प्रयाग विश्व विद्यालय के अर्थ शास्त्र के प्राध्यापक पं० दया शंकर जी दूबे ने भी "नर्मदा रहस्य" नामक पुस्तक लिखी है, उन्होंने स्वयं कभी नर्मदा की परिक्रमा नहीं की "नर्मदा पंचाङ्ग" के ही आधार और इधर-



नर्मदा परिक्रमा के संयोजक प्रो० राजेन्द्र सिंह जी

उधर के कुछ लोगों की सहायता से लिखी है। एक पुस्तक गुजराती की "साधकनी स्वानुभव कथा अथवा मारी नर्मदा परिक्रमा" नामक दो खण्डों में है। इसके लेखक हैं स्वामी नर्मदानन्द जी। ये हमारे स्वामी रंग अवधूत जी महाराज के शिष्य हैं। पहिले खण्ड में नारेश्वर से अमरकंटक तक का वर्णन है। यह ५३४ पृष्ठ की पुस्तक है। दूसरे खण्ड में अमरकंटक से नारेश्वर तक का वर्णन है यह ६०५ पृष्ठ की पुस्तक है। नारेश्वर में इनके गुरु महाराज श्री रंग अवधूत स्वामी विराजते थे। उन्हीं की आज्ञा से इन्होंने नर्मदा जी की परिक्रमा की। जैसा कि पुस्तक का नाम है, 'साधक की स्वानुभव कथा' इसमें आप बीती वार्ता ही अत्यधिक हैं। गुजराती भाषा-भाषियों के लिये पुस्तक पठनीय तथा शिक्षाप्रद है। नर्मदा जी पर और छोटे-बड़े बहुत ग्रन्थ हैं। इन सब ग्रन्थों से मुझे सहायता मिली है। अतः मैं इन ग्रन्थों के लेखक प्रकाशक तथा सम्पादकों का आभारी हूँ।

हमारी मोटर द्वारा जो नर्मदा जी की परिक्रमा हुई है, इसमें हमारे राजेन्द्र सिंह (रज्जू भैया) का अत्याधिक सहयोग है। विश्व हिन्दु परिषद् के कार्यकर्ता, राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के स्वयं सेवक, सरस्वती शिशुमन्दिरों के अध्यापकों, छात्रों, का तथा स्थानीय कार्य-कर्ताओं का अवर्णनीय सहयोग रहा। जिससे नगर-नगर में डगर-डगर में अभूतपूर्व स्वागत सत्कार हुआ। हम तो ट्रक में भोजन की सामग्री भरकर, पाचकों को लेकर गये थे, किन्तु एक दिन विमलेश्वर में छोड़कर कभी भी भोजन बनाने की आवश्यकता नहीं पड़ी। सर्वत्र जलपान के स्थान पर जलपान, भोजन के स्थान पर भोजन, रात्रि की व्यालू के समय व्यालू सब स्थानों में तैयार मिली।

इन सबके प्रबन्ध में सैकड़ों नहीं, सहस्रों नहीं, लाखों नर-नारियों ने बड़े ही उत्साह से परमश्रद्धा के साथ सहयोग दिया।

मैं उन सबका नाम ग्राम नहीं जानता, उन सबके नामों का उल्लेख करना असम्भव है, ये सभी अपने आत्मीय हैं, उनके प्रति कृतज्ञता प्रकट करना तो शिष्टाचार हो जायगा। किन्तु इन सभी ने कितनी लगन से, कितने उत्साह से, कितने अपनेपन से हमारी यात्रा में सहयोग दिया इसके लिये मैं हार्दिक प्रसन्नता प्रकट करता हूँ। परमपिता परमात्मा के पादपद्मों में पुनः-पुनः प्रार्थना करता हूँ कि इन सभी भाइयों की धार्मिक कार्यों में अधिकाधिक रुचि हो।

माँ नर्मदा जी की कृपा से उनके दर्शनों का सौभाग्य प्राप्त हुआ। "नर्मदा-दर्शन" द्वारा उनकी महिमा वर्णन का सुयोग मिला। इसे मैं अपना सौभाग्य समझता हूँ। माँ नर्मदा के पादपद्मों में प्रार्थना है कि वे हमें प्रभु के पादपद्मों में प्रेम प्रदान करने की कृपा करें। इन शब्दों के साथ मैं अपने इस क्षुद्र वक्तव्य को समाप्त करता हूँ।

सङ्कीर्तन भवन, प्रतिष्ठानपुर
पो० झूसी (प्रयागराज)
बैशाख कृ० ८। २०३७ वि०

विनीत—
प्रभुदत्त ब्रह्मचारी

॥ श्री हरिः ॥

हमारी मोटर द्वारा नर्मदा परिक्रमा

प्राक्कथन

(१)

स बिन्दु सिन्धु सुस्खलत्तरङ्गभङ्गरञ्जितम्
द्विषत्सु पापजात जात कारिवारि संयुतम् ।
कृतान्तदूत कालभूतभीतिहारि वर्मदे
त्वदीय पादपङ्कजं नमामि देवि नर्मदे ॥*

(आद्य शङ्कराचार्य)

छप्पय

हे मेकलगिरिसुता ! कमलनयनी ! सुकुमारी !
हे शिवतनया ! परम सुन्दरी शङ्कर प्यारी !!
हे अघहरनी ! अमल विमल जल प्रवल प्रवाहिनि !
हे त्रयताप विनाश करन दच्छा ! अति पावान !!
हे दरुन दुख दाहिनी ! शरन गही तव सुखमयी !
हे कलिकल्मष काटिनी ! करो कृपा करुनामयी ॥

---

* अपने जलकणों द्वारा समुद्र की उत्ताल तरङ्गों में अत्यन्त रोचक दृश्य उत्पन्न करने वाली तथा द्वेष करने वालों के भी पाप समुदाय को विनष्ट करने वाले अपने निर्मल जल सहित आपके चरण कमलों में हे नर्मदा देवि मैं प्रणाम करता हूँ आप यम दूतों तथा काल भूतों के भय का हरण करके रक्षा करने वाली हैं ।

साधु वेष धारण करने पर भी मुझे किसी से कुछ माँगने में बड़ी ही लज्जा प्रतीत होती थी। मैं यही सोचता था कि जहाँ तक भी किसी से माँगना न पड़े। यहाँ तक कि जब टाट की लँगोटी लगाकर विरक्त वेष में भगवती भागीरथी के पावन तट पर निष्किंचन भाव से भ्रमण करता था, तब भी मधुकरी माँगने के लिये इन्द्र, गोविन्द नाम के दो बन्धुओं को साथ रखता था। वे घर-घर से मधुकरी माँग लाते हम तीनों गंगातट पर बैठकर बाँटकर पा लेते।

मेरे मन में यह भाव उठा कि इस देश में लाखों करोड़ों ऋषि मुनि केवल कन्द, मूल फलों पर ही निर्वाह करते थे। अकेले नैमिषारण्य में ही अठासी सहस्र ऋषिगण रहते थे। वे सब-के-सब बिना जोती बोई भूमि में स्वतः उत्पन्न कन्द मूलों से निर्वाह करते थे। क्या भारत में अब कोई ऐसा स्थान नहीं है जहाँ उदर पूर्ति के निमित्त बारहों महीने कन्द मूल मिल सकें। मैं सबसे पूछता कोई ऐसा स्थान बताओ जहाँ स्वतः प्राप्त कन्द, मूल फलों से उदर पूर्ति हो सके। किसी ने बताया चित्रकूट ऐसा स्थान है जहाँ वनों में कन्द, मूल फल मिल सकते हैं। एक ने मुझे अपनी आप बीती कथा भी सुनायी कि एक बार हम अनसूयाजी के घोर जङ्गलों में भटक गये। कहीं मार्ग ही न मिला। भूख के कारण प्राण निकले जा रहे थे। चलते-चलते एक साधु की कुटिया पर पहुँचे। हमने कहा—"महात्माजी! हमें बड़ी भूख लगी है कुछ खाने को हो तो दो।" यह सुनकर वे महात्माजी हँसे उन्होंने चिमटे से अपनी धूनी से एक बड़ी-सी कन्द निकाली। उसकी राख झाड़ी। एक गीले कपड़े पर उसे कई बार पटककर झाड़ा। उसमें से चावलों की भाँति बहुत से दाने निकले। उन्होंने एक पत्ते पर वे हमें दिये। हमने उन्हें खाया। उनमें बड़ी सुगन्ध

निकल रही थी, खाने में बहुत मीठे परम स्वादिष्ट। उन्हें खाकर ठण्डा पानी पीया। परम सन्तोष हुआ।"

इस कथा को सुनकर मेरी जिज्ञासा बहुत बढ़ी। मैंने सोचा—"ऐसी कन्द का पता यदि मुझे लग जाय तो जीवन भर चित्रकूट में ही रह जाऊँ।" यह सोचकर मैं चित्रकूट गया। वहाँ के निवासियों से, पण्डा पुरोहितों से कन्द मूलों के सम्बन्ध में पूछा। उन्होंने बताया—महाराज, ये सब पुरानी बातें हैं एक वैरागी महात्मा थे, उनको उस कन्द का पता था। उनका देहान्त हो गया। अब कोई उस कन्द को जानने वाला नहीं हैं। कन्द तो अब भी जङ्गलों में मिलते हैं किन्तु कमर तक गड्ढा खोदो तो संभव है कन्द मिल जाय। कभी-कभी नहीं भी मिलती। उसकी बेल भी मुझे दिखायी। अब बारहो महीने कन्द मूलों पर निर्वाह करना अत्यन्त कठिन है। मैंने सोचा—पूरे दिन कन्दों को ही खोजने खोदने में समय बीता तो फिर भजन क्या करेंगे मैं निराश होकर लौट आया।

किसी ने बताया नर्मदाजी के किनारे के जंगलों में कन्द मूल फल मिलते हैं, मैं नर्मदाजी के किनारे हुसङ्गाबाद गया। वहाँ भी लोगों ने बताया—महाराज, यहाँ कोई ऐसे कन्द मूल फल नहीं हैं जिनसे बारहों महीने निर्वाह हो सके। जङ्गली विल्व के फल अवश्य है वे भी २-३ महीने मिलते हैं। वहाँ से भी निराश होकर मैं प्रयागराज में आ गया और हिन्दी प्रेस के स्वामी पं० रामजी लाल शर्मा से मैंने कहा—मैं तुम्हें पुस्तकें लिखकर दे दिया करूँगा। तुम मेरी भिक्षा के लिये ३०) महीने मुझे दे दिया करना। उन्होंने इसे सहर्ष स्वीकार किया तभी मैंने दो भागों में उन्हें "भक्तचरितावली" लिखकर दी।

मेरे बहुत से साथी नर्मदाजी की परिक्रमा करते थे, वे अपने अनुभव सुनाते थे। नर्मदा ही एक ऐसी परम पावन नदी है

जिसकी विधिवत परिक्रमा की जाती है, कोई बारह वर्ष में कोई ६ वर्ष में और कोई तीन ही वर्ष में नर्मदाजी की परिक्रमा करते हैं। नर्मदाजी की परिक्रमा पैदल ही की जाती है और निष्किञ्चन भाव से। परिक्रमा में स्थान-स्थान पर अन्न क्षेत्र लगे हुए थे। धनी हो दरिद्र हो सभी को सदावर्त के अन्न से ही निर्वाह करना पड़ता था। क्षौर नहीं कराते थे। नर्मदा को पार नहीं कर सकते थे, एक बार भोजन करते थे। चातुर्मास के चार महीने एक ही स्थान पर रहना पड़ता था। ओंकारेश्वर की शूलपाणि की घाटियों की वन झाड़ियों में वहाँ के कोल-भील सभी यात्रियों का सामान लूट लेते थे। आगे धर्मात्मा सेठ लोग उन्हें आवश्यक सामग्री दे देते थे। नित्य नर्मदा का स्नान, नर्मदा जलपान आवश्यक था। सहस्रों नर-नारी उन दिनों नर्मदाजी की परिक्रमा किया करते थे। श्री गौरी शंकरजी महाराज जमात हाथी, घोड़ों के साथ सैकड़ों साधुओं की मण्डली लेकर सदा नर्मदाजी की परिक्रमा किया करते थे। गौरी शंकरजी महाराज को सुनते हैं नर्मदाजी सिद्ध थी, जब कभी उनके भण्डारे में घृत की कमी पड़ती थी तो सुनते हैं वे नर्मदाजी के जल को मँगवाकर उसी में पूड़ियाँ उतरवाते थे। फिर समय पर जितने कनस्टर उधार मँगाते थे उतना घृत नर्मदाजी को दे देते थे। उनके और भी बहुत से चमत्कार प्रसिद्ध हैं। और भी बहुत से महात्माओं के सम्बन्ध में हम बालकाल से सुनते आते थे कि वे गंगाजी, यमुनाजी, सरयूजी, नर्मदाजी से जल मँगाकर समय पड़ने पर उससे घृत का काम ले लेते थे।

एक बार हमारे भी मन में आया कि देखें हममें भी कुछ सिद्धि है या नहीं। हमारे मँगाने पर यमुना जल घृत का काम करता है या नहीं। बात यह थी कि हमने प्रयागराज में यमुना तट पर गौघाट में पुरुषोत्तम मास में एक महीने का बड़ा भारी यज्ञ किया। यज्ञ के अन्त में भण्डारा हुआ। और सब तो खा

गये अन्त में भिक्षुकों का भोजन हुआ। उस समय घृत चुक गया था। भिक्षुक चिल्ला रहे थे—पूड़ी लाओ, पूड़ी लाओ।" इतनी शीघ्रता में घृत का प्रबन्ध होना बहुत कठिन था। तभी मेरे मन में आई कि देखें अपने में कुछ सिद्धि है या नहीं। चुपके से यमुनाजल मँगाकर देखें पूड़ी उतरती हैं या नहीं। मैंने अपने एक बहुत ही अन्ध श्रद्धालु परमहंस को बुलाकर कहा—तुम चुपके से दो कनस्टर यमुनाजल लाकर कढ़ाई में डालो देखें पूड़ी उतरती हैं या नहीं। किसी से कहना मत।

वह तो अन्ध भक्त ही ठहरा। दोनों कन्धों पर दो कनस्टर लादकर यमुनाजी की सीढ़ियों में उतरता हुआ चिल्लाता जाता था, अब सब लोग चमत्कार देखो, यमुनाजल में पूड़ियाँ उतरेंगी। सब लोग बड़ी उत्सुकता से इस चमत्कार को देखने के लिये प्रतीक्षा करने लगे। मेरा हृदय धुकुर-पुकुर कर रहा था। हे भगवान्! आज रही सही प्रतिष्ठा भी धूल में मिल जायगी। यमुनाजल में पूड़ी न उतरीं तो सब लोग कहेंगे ढोंगी हैं अपनी सिद्धि की डींग मारता है। "देखा देखी साधे योग। छीजै काया बाढ़ें रोग।" मैं मन-ही-मन भगवान् से प्रार्थना करने लगा।

उसी समय नैंनी के रईस स्वर्गीय लाला बैंनी प्रसादजी दो कनस्टर घी लेकर आ गये। मेरे हर्ष का ठिकाना नहीं रहा। मैंने कहा—परमहंस! चले आओ, चले आओ। यमुनाजी ने घी भेज दिया। सो उस समय तो काम चल गया किन्तु हमने अपनी आँखों से कभी गंगा-यमुना सरयू-नर्मदा के जल में पूड़ी छनते नहीं देखी। यों महात्माओं में सभी सामर्थ्य है वे जो चाहें सो करें।

हाँ तो नर्मदा परिक्रमा में महात्मा गौरी शंकर महाराज का बड़ा नाम हैं। उनके पश्चात् उनके दो-तीन उत्तराधिकारियों ने जैसे-तैसे जमात चलाई। फिर वह छिन्न-भिन्न हो गयी। अब

नर्मदाजी की परिक्रमा में कोई जमात तो नहीं चलती है। सर्व साधारण सहस्रों नर-नारी अब भी परिक्रमा देते हैं। पहिले जैसी भावना नहीं रही, प्रबन्ध भी नहीं रहा, अन्न क्षेत्र भी प्रायः बन्द हो गये। कहीं-कहीं रह गये हैं फिर भी जैसे-तैसे परिक्रमा तो चालू ही है।

वास्तव में परिक्रमा तो पैरों से ही की जाती है। परिक्रमा के मन्त्र में कहा है—मेरे जो भी जन्मान्तरों में किये हुए पाप हैं, वे सब-के-सब पाप प्रदक्षिणा करने से पद-पद पर नष्ट हो जाते हैं।[१]

जैसे ब्रज में गोवर्धन की परिक्रमा की जाती है, वैसे ही दक्षिण में अरुणाचल पर्वत की प्रदक्षिणा करते हैं। स्कन्द पुराण में अरुणाचल प्रदक्षिणा का अनन्त माहात्म्य बताया है, वहाँ महादेवजी ने स्पष्ट कहा है—अरुणाचल मेरा ही रूप है अतः अरुणाचल की प्रदक्षिणा कभी भी वाहन के द्वारा न करनी चाहिये। इसमें दृष्टांत देते हुए कहा है—एक धर्मकेतु नाम का राजा था, वह यमलोक से प्रदक्षिणा करने आया था। उसने घोड़े पर चढ़कर ही प्रदक्षिणा करना अच्छा समझा। उसने ज्यों ही घोड़े पर चढ़कर प्रदक्षिणा की तो तुरन्त वह घोड़ा देवताओं द्वारा पूजित होकर शिवजी के गणनाथ पद शैव पद को राजा के देखते-देखते उसे छोड़कर प्राप्त हो गया। जब राजा ने देखा घोड़ा शिवजी का गणनाथ हो गया है तो फिर राजा ने भी पैरों से ही पैदल-पैदल परिक्रमा की। इसके प्रभाव से वह राजा भी शिवजी के गणपति पद को प्राप्त हो गया।[२]

---

१. यानि कानि च पापानि जन्मान्तर कृतानि च।
तानि तानि प्रणश्यन्ति प्रदक्षिणायां पदे पदे ॥

२. न वाहनेन कुर्वीत मम जातु प्रदक्षिणाम्।
धर्मलुब्धमना जानञ्छिवाचारपरिप्लुतिम् ॥

पहिले समस्त तीर्थ यात्रायें पैदल ही होती थीं। लोग चारों धामों की यात्रा १२-१२ वर्षों में करते थे। बद्रीनाथजी की भी पैदल ही यात्रा होती थी। हम सदा प्रतिवर्ष पैदल ही जाते थे। जब से मोटरें जाने लगीं तब से प्रायः सभी तीर्थ यात्री मोटर से ही जाने लगे हैं।

मैं भी नर्मदाजी की पैदल ही यात्रा करना चाहता था, किन्तु नित्य नई-नई धार्मिक प्रवृत्तियों में फँसे रहने के कारण नर्मदा परिक्रमा के विचार को भूल गया। जब मैंने देखा मेरे समस्त साथी एक-एक करके परलोकवासी हो गये और मैं भी नदी के तट के वृक्ष के समान, पके हुए आम के फल के समान बन गया, न जाने कब नदी में बाढ़ आ जाय कि धराशायी बन जाऊँ। कब वायु का झोंका आ जाय वृक्ष से चू पड़ूँ तो नर्मदा परिक्रमा की स्मृति आई। अब शरीर में पूर्ववत् उत्साह नहीं रहा। अब पैदल चलने योग्य शरीर की शक्ति नहीं रही तो मैंने सोचा—लाओ मोटर से ही परिक्रमा करके इस सद्वासना की पूर्ति कर लें। इसलिये मोटर द्वारा ही परिक्रमा करने का विचार किया। कुछ लोगों ने कहा भी—"अजी, मोटर से क्या परिक्रमा। यह तो मोटर की परिक्रमा हुई।" मैंने कहा—"भाई न करने से तो कुछ करना श्रेष्ठ ही है। 'अकरणात् मन्द करण

धर्मकेतुः पुरा राजा यमलोकादुपागतः।
मम प्रदक्षिणां कर्तुं तुरगेणाऽभ्यरोचयत्॥
क्षणेन तुरगो जातो गणनाथ सुरार्चितः।
प्रतिपेदे पदं शैवं विमुच्य धरणीपतिम्॥
वीक्ष्यतं वाहनं भूयो गणनाथ वपुर्द्धरम्।
पाद प्रदक्षिणां कृत्वा स्वयं च गणयोऽभवत्॥
(स्क० पु० मा० खं० ६ अ० ८४ से ८७ तक)

श्रेयः ।' नर्मदा मैया का दर्शन होगा, प्रतिदिन नर्मदा जल का पान स्नान मिलेगा। देश-दर्शन होगा। नये-नये नगर घाट, मन्दिर देखने को मिलेंगे, नर्मदा के किनारे वास करने वाले पुण्यात्मा पुरुषों के, साधु सन्तों के दर्शन होंगे। स्कन्द पुराण में लिखा है—गङ्गाजी तो कनखल में पुण्यप्रदा हैं और सरस्वती कुरुक्षेत्र में पुण्यप्रदा हैं, किन्तु नर्मदा तो चाहें जिस ग्राम से गयी हों, जिस अरण्य से गयी हों, वे तो सर्वत्र ही पुण्य प्रदातृ हैं। नर्मदा जी का नाम लेने से ही एक जन्म के पाप नाश हो जाते हैं, दर्शन करने से तीन जन्म के पाप नष्ट हो जाते हैं और स्नान करने से सहस्रों जन्मों के कलियुग में पाप नष्ट हो जाते हैं। अतः पैदल परिक्रमा का फल न भी हो तो भी स्मरण, दर्शन, स्पर्श, स्नान और पान से पाप तो कटेंगे ही। न करने से तो मोटर परिक्रमा श्रेष्ठ ही है।

एक आदमी खाट पर बैठकर भजन कर रहा था। किसी ने कहा—अरे, तू खाट पर बैठकर भजन करता है ? उसने पूछा—भाई साहब! आप किस पर बैठकर भजन करते हैं ? उसने कहा—'हम तो कहीं भी बैठकर भजन नहीं करते।' तब उसने कहा—"तो कम-से-कम आपसे तो हम अच्छे ही हैं।" यही सोचकर हमने मोटर द्वारा ही नर्मदा परिक्रमा करने का निश्चय किया।

अब हमारे सम्मुख एक जटिल समस्या थी, आज तक मोटर द्वारा किसी ने परिक्रमा की नहीं। मोटर से परिक्रमा हो भी सकेगी या नहीं। तब हमने भारतवर्ष की पक्की सड़कों के मानचित्र (नकशे) मँगाये। प्रोफेसर राजेन्द्रसिंह (रज्जू भैया) से कहा। उन्होंने बड़ा परिश्रम किया कलकत्ते आदि से कठिनता से कई सड़कों के मानचित्र लाये। कई महीनों तक मानचित्रों द्वारा अपने सहयोगी, साथी, इष्टमित्रों से सम्मति करके एक यात्रा

का कार्यक्रम बनाया। उसमें इन बातों का विशेष ध्यान रखा कि नित्य प्रति नर्मदा स्नान करने को मिले। रात्रि में जहाँ तक हो नर्मदा किनारे ही विश्राम हो, मुख्य-मुख्य तीर्थ छूटने न पावे। मानचित्रों से हमने अनुमान लगाया। साढ़े तीन सहस्र कीलो मीटर यात्रा होगी। किन्तु जब यात्रा की तो लगभग साढ़े पाँच सहस्र किलो मीटर हुई।

कहाँ से यात्रा उठाई जाय। परिक्रमा का नियम है कि जहाँ से परिक्रमा प्रारम्भ की जाय वहीं आकर समाप्त की जाय। हमने जबलपुर के समीप भेड़ा घाट की बहुत प्रशंसा सुनी थी। २५-३० वर्ष पूर्व वहाँ गये भी थे। पं० शिवरामजी पटेल का आग्रह था परिक्रमा भेड़ा घाट से ही उठायी जाय। अतः हमने उस स्थान को देखने के लिये शरद पूर्णिमा का उत्सव अबके भेड़ा घाट पर ही करने का निश्चय किया। शरदोत्सव में हम लोग १०-१२ मन दूध की खीर बनवाकर उसके साथ खांसी दमा जुकाम की औषधि वितरित करते हैं। यह उत्सव झूसी में तथा प्रयाग के स्वरूप रानी पार्क में मनाया जाता था। अबके पं० शिवरामजी पटेल के संरक्षण में विशाल रूप में भेड़ा घाट में मनाया गया। औषधि के प्रलोभन से बहुत बड़ी भीड़ उपस्थित हुई। उस भीड़ को देखकर ऐसा प्रतीत होता था कि संसार के अधिकांश मनुष्य रोगग्रस्त हैं।

भेड़ा घाट के सौन्दर्य को देखकर मन मुग्ध हो गया। यहाँ सरित् प्रवरा भगवती नर्मदा सङ्गमरमर के पहाड़ों को काटती हुई बड़े वेग से प्रवाहित हुई हैं। इन इतने संगमरमर के सुदृढ़ पहाड़ों को माता ने कितने युगों में काटते-काटते वर्तमान मार्ग बनाया होगा ? कभी माता पहाड़ की चोटी पर बहती होंगी। उसके चिन्ह अभी स्पष्ट प्रतीत होते हैं। पञ्चवटी घाट से नर्मदा के इस अनुपम दृश्य को देखने नौका द्वारा सहस्रों देशी-विदेशी नर-

नारी नित्य प्रति आते हैं। ऐसा दृश्य संसार भर में स्याद् ही कहीं हो। इसे देखने इंगलैण्ड, रूस, जर्मनी, स्वीजरलैण्ड आदि विदेशों से बहुत से विदेशी नित्य आते रहते हैं। नौकाओं का प्रबन्ध मध्यप्रदेशी सरकार की ओर से है। प्रत्येक नौका में पुलिस के एक दो सिपाही साथ जाते हैं। नौका चलते ही कहीं काले संगमर के तट हैं, कहीं लाल, कहीं हरे, कहीं बगुला के पंख के सदृश सफेद संगमरमर के पहाड़ हैं। सैकड़ों फुट ऊँचे किनारे हैं। ऐसा लगता है मानों नर्मदा के दोनों तटों के दोनों ओर किले की सुदृढ़ चिकनी सीधी दीवारें खड़ी हों। आगे चलकर भूल भुलैया आती हैं, एक विस्तृत-सा तालाब बन गया है, वहाँ यात्री यह नहीं बता सकता नर्मदा किधर से आ रही हैं। संगमरमर के चट्टानों में सूर्य, चन्द्रमा, हाथी, हाथी के पैर, हनुमानजी आदि की जल के प्रवाह के कारण प्राकृत मूर्तियाँ बन गयी हैं। आगे बन्दर कूदनी है। प्रवाह के मध्य में संगमरमर का एक बहुत बड़ा चट्टान है। उसमें शिवजी की लिङ्ग स्थापित है। कहते हैं इन्दौर की अहिल्याबाई ने इसे स्थापित किया था। यहाँ पर एक बहुत पुराना बूढ़ा मगर रहता था। शिवजी के पुजारी मुझे बताते थे मैं नित्य प्रति एक मोटी रोटी उसे दे आता था। मेरे पुकारने पर वह झट निकल आता था। हम दोनों साथ-साथ तैरते थे। मेरे हाथ से रोटी खा लेता था। उसने आज तक कभी किसी को हानि नहीं पहुँचाई। उस समय वह जीवित था। जब हम परिक्रमा से लौटे तो सुनते हैं उसका देहान्त हो गया। उसकी खाल किसी अधिकारी के पास सुरक्षित है। नौकायें बन्दर कूदनी चट्टानों तक जाती हैं, आगे धूँआधार के ऊँचे चट्टान हैं। इससे आगे नौकायें नहीं जाती। उस दृश्य की अद्भुत छटा तो देखने से ही जानी जा सकती है। लेखनी द्वारा उसका वर्णन असम्भव है।

भेड़ा घाट छोटा-सा ग्राम है। १००-१५० की बस्ती होगी। वह भी अभी थोड़े ही दिनों से बसा है। उसमें सफेद पत्थरों की भाँति-भाँति की मूर्तियाँ बेचने वाले ही रहते हैं। छोटा-सा बाजार है। डाकघर, प्रारम्भिक हिन्दी पाठशाला, पुलिस की चौकी, तार घर आदि आधुनिक सभी सामग्री उपलब्ध हैं। एक छोट-सा आजयब घर भी है, जिसमें जीवित मृतक जानवर रखे गये हैं। बहुत से ऐसे शीशा हैं जिनमें अपनी विचित्र प्रकार की आकृतियाँ दिखाई देती हैं। यात्री उन आकृतियों को देखकर हँसी के मारे लोट-पोट हो जाते हैं। हम बहुत देर तक अपनी भिन्न-भिन्न आकृतियों को देखकर अपना मनोरञ्जन करते रहे।

अनेक शिवजी के मन्दिर हैं, दिगम्बर जैनियों का विशाल मन्दिर और बहुत बड़ा धर्मशाला है। तीन डाक बँगले हैं, वे नर्मदा तट पर बहुत ही भव्य बने हैं। आधुनिक सभी उपकरण उनमें उपलब्ध हैं। अभी-अभी पर्यटन विभाग की ओर से एक बड़ा विश्राम गृह बना है। जिसमें एक कमरे की एक दिन की ४०) शुल्क है। अँगरेजी शासन काल में अँगरेजों का यह मनोरञ्जन स्थान था। अँगरेजों का यहाँ एक तट पर बड़ा सुन्दर नाचघर बना है वहाँ वे छुट्टियों में स्त्री पुरुष सम्मिलित नृत्य किया करते थे। अब वह रिक्त पड़ा है। शरदोत्सव हमने उसी नृत्य घर के विशाल मैदान में किया था। नृत्यघर में चौबीस घण्टे का दमोह के भक्तों द्वारा अखण्ड कीर्तन कराया था।

यहाँ से लगभग एक मील की दूर पर धूँआधार है। वहाँ नर्मदा सैकड़ों फुट ऊपर से नीचे गिरी हैं। ऊँचे से धारा गिरने से जल के फैन दूध की भाँति शुभ्र दीखते हैं। गर्मियों में तो धारा कम हो जाती है। वर्षा में तो वास्तव में धूँआधार ही बन जाता है। सफेद पत्थर की मूर्तियों की सैकड़ों फूस की झोपड़ियों में दुकानें हैं। देश-विदेशों के विभिन्न प्रान्तों के सहस्रों यात्री इस

दृश्य को देखने नित्य प्रति आते हैं। रात्रि की चाँदनी में संगमरमर की शिलायें दूध की फैन की भाँति चमकती हैं। शरद पूर्णिमा की रात्रि में अत्यधिक दर्शनार्थी आते हैं। बीच में ही ६४ योगिनियों का मन्दिर है। ६४ योगिनियों की कैसी कलात्मक मूर्तियाँ थीं। आततायी दस्यु धर्मी मुसलमान धर्मान्धों द्वारा सभी मूर्तियाँ तोड़ दी गई हैं। उन्हें देखकर हृदय में एक प्रकार की टीस उत्पन्न होती है। नर्मदा किनारे के प्रायः बहुत प्राचीन मन्दिर इन धर्म द्वेषी मूर्तिभञ्जक यवनों द्वारा खण्डित किये गये हैं।

यहाँ एक तालाब-सा है, जिसमें से नर्मदेश्वर शिवजी निकलते हैं। सम्पूर्ण भारतवर्ष में तथा विदेशों में यहीं से मन्दिरों में स्थापित करने के लिये शिवजी जाते हैं। नर्मदा का प्रत्येक कंकड़ शंकर है। नर्मदाजी शिवजी की पुत्री हैं। शिवजी जब प्रसन्नता के साथ ताण्डव नृत्य कर रहे थे तो उनके पसीना से माता नर्मदाजी की उत्पत्ति हुई। उन्हें विन्ध्य के पुत्र मेकल ने धारण किया इसलिये ये मेकल सुता भी कही जाती हैं। पुराणों में इनकी अनेकों कथायें हैं स्कन्द पुराण तथा वायु पुराण में तो इनकी महिमा के रेवाखण्ड ही हैं। उन्हीं के आधार पर पृथक् नर्मदा पुराण भी छप गया है।

भेड़ाघाट हमको अत्यन्त ही मनोहर तथा सुखप्रद प्रतीत हुआ। यही निश्चय हुआ कि यहीं से नर्मदा परिक्रमा उठायी जायगी। ऐसा निश्चय करके शरदोत्सव करके हम प्रयाग लौट आये।

अब हमारे सामने कई समस्यायें थीं। केवल मानचित्रों को ही देखकर यात्रा नहीं उठाई जा सकती। कुछ मार्ग दर्शक होने चाहिये, जहाँ ठहरेंगे वहाँ के कुछ निवासी प्रबन्धक भी होने चाहिये। सौभाग्य से इसी वर्ष माघ में विश्व हिन्दु परिषद् का विशाल द्वितीय महोत्सव हुआ। उसमें देश भर के लाखों मनुष्य

आये। नर्मदाजी की परिक्रमा में तीन प्रान्त पड़ते हैं। अधिक तो मध्य प्रदेश ही पड़ता है। अन्त में गुजरात प्रान्त पड़ता है। बीच में बहुत ही थोड़ा महाराष्ट्र का कुछ भाग पड़ता है। रज्जू भैया ने उन प्रान्तों के समस्त विश्व हिन्दु परिषद् के कार्यकर्ताओं से हमारा परिचय करा दिया। वे इस समाचार से अत्यधिक उत्साहित हुए और उन्होंने परिक्रमा मार्ग में सभी प्रकार के प्रबन्ध करने की दृढ़ प्रतिज्ञा की।

हम सोचते थे कि इस ऐसी विकट यात्रा में कौन हमारे साथ जायेगा। हमारे ही १०-२०-५० आदमी साथ होंगे। हमारे सामने मोटर की भी समस्या थी। आश्रम की एक टूटी फूटी पुरानी मोटर है। वह इस कँकरीली पथरीली विशाल यात्रा में जा नहीं सकती। लोग इतनी बड़ी यात्रा को अपनी मँगनी मोटर दे नहीं सकते। इस समस्या को भी हमारे संकीर्तन भवन न्यास के अध्यक्ष पं० यशवन्तराय हरिशंकर वोरा ने निर्णीत कर दिया। उन्होंने एक बहुत ही सुन्दर समस्त साधनों से युक्त नयी मेटाडोर गाड़ा हमें चालक सहित यात्रा के लिये प्रदान कर दी जिससे १०-१५ आदमी सुखपूर्वक यात्रा कर सकते हैं। साथ ही मार्ग व्यय के लिये पाँच सहस्र रुपये भी दिये और यह भी अश्वासन दे दिया कि और भी जो व्यय होगा वह मैं दूँगा।

अब तो प्रायः सभी समस्यायें निर्णीत हो गयीं। निश्चय हुआ तीर्थराज प्रयाग का माघ मेला समाप्त करके माघ की पूर्णिमा को यहाँ से चलेंगे। प्रतिपदा को भेड़ा घाट पहुँचकर फाल्गुन कृष्णा द्वितीय से अष्टमी तक भेड़ाघाट में श्रीमद्भागवत तथा भागवत चरित सप्ताह का सात दिन उत्सव करेंगे। फाल्गुन शुक्ला नौमी (२१ फरवरी) को भण्डारा करके नर्मदाजी में परिक्रमा का संकल्प लेंगे और फाल्गुन शुक्ला दशमी (२२ फरवरी) से भेड़ा घाट से प्रस्थान करेंगे।

उसी समय वृन्दावन की सुप्रसिद्ध रास मण्डली के स्वामी पं० कुँवरपालजी शर्मा का पत्र आया कि मैं भी अपनी मण्डली सहित आपके साथ नर्मदा परिक्रया में चलूँगा। मैंने सोचा— यह तो सोने में सुगन्ध है। रास मण्डली साथ चलेगी तो परिक्रमावासियों को व्रज की रासलीला का भी लाभ होगा। मैंने लिख दिया। आप माघ को पूर्णिमा को भेड़ाघाट पहुँच जायँ। सो वे लेखानुसार पूर्णिमा से पहिले ही भेड़ाघाट पहुँच गये।

यह हमारी मोटर द्वारा नर्मदा परिक्रमा की भूमिका है। प्राक्कथन है अब आगे से हम धारा प्रवाह रूप में अपनी यात्रा का वर्णन करेंगे। पाठक अग्रिम अध्यायों में २६ दिन की यात्रा के प्रकरण की प्रतीक्षा करें।

छप्पय

तव जल अमृत समान पान करि हिय हरषावै।
आवै तव तट निकट शोक सन्ताप नसावै॥
अवगाहन जे करें न पुनि भवसागर आवैं।
मिटैं शोक दुख दुरित परम सुख प्रानी पावैं॥
भव-वनमें भटकत दुखित, चरन शरन जननी गही।
हे कलि कल्मष काटिनी, करो कृपा करुनामयी॥

संकीर्तन भवन, प्रतिष्ठानपुर
झूसी (प्रयाग)
भाद्र-शु० वामन द्वादशी २०३६ वि०

प्रभुदत्त ब्रह्मचारी

—:०:—

॥ श्री हरिः ॥

हमारी मोटर द्वारा नर्मदा परिक्रमा

भेड़ाघाट से धनपुरी तक

[२]

त्वदम्बुलीन दीनमीन दिव्य सम्प्रदायकम्
कलौ मलौघभारहारि सर्वतीर्थनायकम् ।
सुमत्स्यकच्छ नक्र चक्रचाकशर्मदे
त्वदीयपादपङ्कजं नमामि देवि नर्मदे ॥*

(आद्य शङ्कराचार्यः)

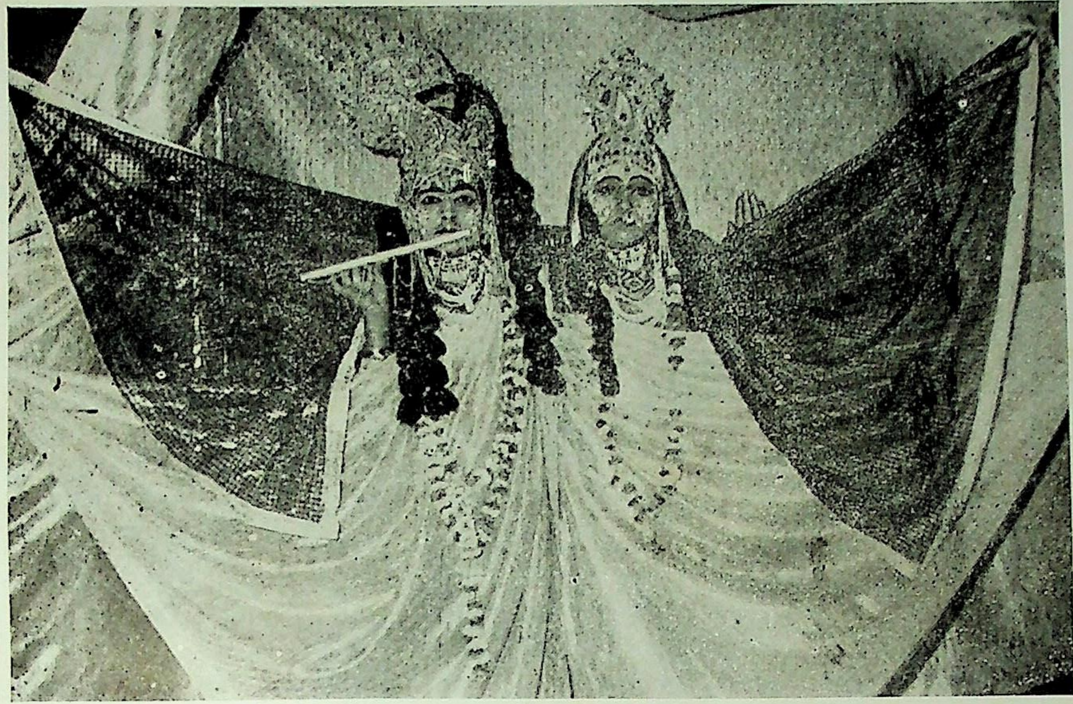
छप्पय

जगकूँ पावन करन स्वर्गतैं माँ ! तुम आयीं ।
उतरीं विन्ध्य समीप सुता-मेकल कहलायीं ॥
गिरि वन तोरत बहीं मिलीं सागरमें जननी !
शरणागत दुख हरत सकल जग पावन करनी ॥
अति पावन तव उभय तट, परिकम्मा जे जन करें ।
कोटि जनमके पाप तिनि, पय परसत जननी हरें ॥

---

* हे माँ ! आप मत्स्य, कच्छप तथा नक्र आदि आपके जल में रहने वाले जन्तुओं को तथा आपके तट के वृक्षों पर रहने वाले चकवा-चकवी आदि पक्षियों को सुख देने वाली हैं । आपके चरणकमल कलिकाल के पाप पुञ्ज रूपी भार को हरने वाले हैं तथा आपके जल में मग्न रहने वाले दीन-दुखी मत्स्यों को दिव्य गति देने वाले और सर्व तीर्थों के जलों में सर्वश्रेष्ठ हैं, ऐसे आपके पादपद्मों में बारम्बार नमस्कार है ।

माघ शुक्ल पूर्णिमा सं० २०३५ (ता० १२ फरवरी) को हम लोगों ने तीर्थराज प्रयाग से प्रस्थान किया और रात्रि के १२ बजे जाबालिपुर (जबलपुर) पहुँचे। वहाँ स्टेशन पर शिवरामजी पटेल श्री पुरुषोत्तम संघी जी तथा रमेशचन्द्र अग्रवाल आदि बन्धु मिल गये। स्टेशन पर ही हमें परिक्रमा में ले जाने वाली बोराजी की मेटाडोर मोटर मिल गयी। उसी से हम उसी समय ही भेड़ाघाट चले गये। वहाँ स्वर्गीय श्रीराम सनेही महाराज का बनवाया हुआ एक रिक्त आश्रम था उसी में जाकर ठहर गये। प्रतिपदा को वहाँ स्थान स्वच्छ कराकर पाण्डाल आदि का निर्माण कराया। स्वामी कुँवर पालजी की रासमण्डली हमसे पूर्व ही भेड़ाघाट पहुँच चुकी थी। द्वितीया से श्रीमद्भागवत संहिता का सप्ताह पारायण आचार्य पं० राजदेव उपाध्याय जी द्वारा तथा भागवत चरित सप्ताह का पारायण पण्डित राजेन्द्र प्रसाद द्विवेदी और वहाँ की संस्कृत पाठशाला के १०-१५ विद्यार्थियों द्वारा आरम्भ हुआ। प्रातःकाल तो बाजे तबले के साथ सस्वर सामूहिक भागवत चरित का पाठ होता। दूसरी ओर श्रीमद्भागवत संहिता का मूल पाठ होता। नर्मदाजी को सुनाने के लिये ही तट पर ही वृहद् पांडाल बनाया था, जिससे नर्मदाजी पाठ सुन सकें। तीन बजे से आचार्य जी भागवत की कथा करते ७ बजे तक। ८ बजे से रासलीला अभिनय होता। ऐसा उत्सव भेड़ाघाट में कभी हुआ नहीं था। अतः भागवत और वृन्दावन की रासलीला की प्रशंसा सुनकर ८-८ १०-१० कोश के नर-नारी एकत्रित होते। विशेष कर रात्रि के समय तो रासलीला में अपार भीड़ होती। भीड़ सम्हाले नहीं सम्हलती थी। बड़े उत्साह से सप्ताह यज्ञ समाप्त हुआ। फाल्गुन कृष्णा ९ (२१ फरवरी) को हवन, नर्मदा पूजन ब्रह्मभोज हुआ और उसी दिन वहाँ सभी ने नर्मदा परिक्रमा का सङ्कल्प लिया।



श्री राधा-कृष्ण

श्रीवृन्दावन की रासलीला की एक झाँकी

पृष्ठ २८

हम तो डर रहे थे कि हमारे साथ कौन चलेगा डरते-डरते एक बस ३००) नित्य के हिसाब से की थी कि बस के लिये ५० आदमी होंगे भी या नहीं किन्तु यात्री इतने बढ़ गये कि तीन बसें करनी पड़ीं। सामान ढोने को एक ट्रक भी की। एक हमारी मेटाडोर गाड़ी, एक बालकृष्ण जी टण्डनजी की, एक शिवराम पटैल की जीप ४-५ और मोटरें इस प्रकार १०-१२ वाहन परिक्रमा के लिये तैयार हुए।

परिक्रमा प्रारम्भ

फाल्गुन कृष्णा दशमी (२२ फरवरी) प्रातःकाल स्नान पूजन आदि नित्य कर्मों से निवृत्त होकर हमारी यात्रा मण्डली ने नर्मदा परिक्रमा के लिये प्रस्थान का निश्चय किया। अमरकंटक जहाँ से श्री नर्मदाजी निकली हैं, उसके पास शहडोल जिले में एक धनपुरी स्थान है। वहाँ के लोग कई वर्षों से वहाँ जाने को मेरे पीछे पड़े थे। इस वर्ष भी वे माघ में मेरे पास आये। उनको मैंने वचन दे दिया था कि नर्मदा परिक्रमा के समय फाल्गुन शुक्ला दशमी (२२ फरवरी) को हम पूरी मण्डली सहित आपके यहाँ ठहरेंगे। उन्होंने उसी क्रम से वहाँ विष्णु यज्ञ का आयोजन किया था। आज प्रथम दिन धनपुरी में ही विश्राम करने का निश्चय किया।

हम सोचते थे, भेड़ाघाट से हम नित्य कर्मों से निवृत्त होकर प्रातः ८-९ बजे चल देंगे और ४-५ बजे धनपुरी पहुँच जायँगे, क्योंकि मानचित्रों से नापकर हमने भेड़ाघाट से धनपुरी १७५ कि० मी० समझी थी। किन्तु यात्रा करने पर २५०-३०० कि० मी० के लगभग निकली।

हम तो पूजा पाठ से लगभग ८ बजे ही निवृत्त होकर चलने को तैयार हो गये। किन्तु २५०-३०० नर-नारियों की तैयारी में

देर होना स्वाभाविक है। फिर जीव का एक धर्म है, सबसे अधिक अपनी सुख सुविधा का प्रबन्ध करना। उसकी इच्छा पूर्ति न होने पर दूसरों पर दोषारोपण करना। जैसे हम आम बाँट रहे हों। आमों में छोटे-बड़े, कच्चे-पक्के सभी प्रकार के होते हैं। सभी चाहते हैं, हमें अच्छे-से-अच्छा पके-से-पका आम मिले। हम बिना पक्षपात के जो हाथ में आ गया उसे ही सामने वाले को दे दिया। दैवयोग से उसे छोटा या कड़ा मिला तो वह तुरन्त कह देगा—अजी, महाराज तो मुँह देख-देखकर बाँटते हैं। अपने आदमियों को अच्छे-से-अच्छा छाँटकर देते हैं, हम लोगों को सड़ा-गला पकड़ा देते हैं। यद्यपि उनका यह आक्षेप सत्य नहीं। फिर भी जैव धर्म है, "कामात् क्रोधोऽभिजायते।" स्वयं की इच्छा पूर्ति न होने पर खीजना—क्रोध आ जाना, वितरित करने वाले पर पक्षपात का लांछन लगा देना स्वाभाविक है।

हमारे साथ कटक के, इन्दौर के, मध्य प्रदेश के विभिन्न जिलों के, महाराष्ट्र, प्रयागराज आदि स्थानों के सैकड़ों यात्री थे। सब चाहते थे, बस में हमें सर्वप्रथम स्थान मिले पीछे कोई भी बैठना नहीं चाहता था। बस में ५० आदमियों के स्थान थे। सभी स्थानों पर यात्री बैठेंगे कोई स्थान रिक्त तो रखा नहीं जायगा। सभी ने समान भाड़ा दिया है। बहुत से अड़ गये हम आगे बैठेंगे।

हम तैयार होकर अपनी मोटर में बैठे थे। सङ्घीजी ने मुझसे कहा—महाराज! आप तो चलें, हम आज ही निर्णय कर देंगे कौन कहाँ बैठेगा। नहीं तो यात्रा में नित्य ही खट-खट होगी। यद्यपि प्रबन्धकर्ता सबकी सुविधा देखकर स्थान दे रहे थे, किन्तु जैव धर्म है, वितरक पर कोई-न-कोई दोषारोपण करना।

एक भक्त के यहाँ चार सन्यासी महात्मा पहुँचे। बड़ी श्रद्धा से भक्त ने सबका समान स्वागत सत्कार किया। भिक्षा के लिये

समान आसन बिछाये। सबके सामने समान रूप से पत्तल सकोरे लगाये। साग, रायते आदि समान रूप से परस दिये। उसने सोचा—सबको गरमागरम सेंककर पूड़ियाँ दें।

चार पूड़ी एक साथ सेंककर एक पात्र में रक्खी जातीं। तीन नीचे की पूढ़िया तो पिचक जातीं। ऊपर की पूड़ी फूली रह जाती। जो पहिली संख्या में बैठे उन पर ही फूली हुई पूड़ी आती औरों पर पिचकी हुई। भक्तजी ने कुछ ध्यान नहीं दिया। दो-तीन बार परस गये। तब उनमें से एक महात्मा क्रोधित होकर बोले—क्यों जी! तुम पहिले के साथ पक्षपात करते हो, हर बार उन्हीं को फूली-फूली पूड़ी दे देते हो। क्या हम महात्मा नहीं हैं?" तब भक्तजी को ध्यान हुआ। अब उन्होंने पूड़ियों के ऊपर पूड़ी न रखकर चारों फूली-फूली पूड़ियाँ फैलाकर थाली में रखकर परौसीं कि सबके पास फूली-फूली पूड़ियाँ आ जायँ। यही झगड़ा हमारे यहाँ वाहनों में बैठने पर हो रहा था।" मैं तो अपने साथियों को लेकर अपनी मोटर बढ़ाकर चला गया। आगे राम-पुरा में भी स्वामी रामसनेही महाराज का आश्रम बगीचा था वहाँ पर हम जाकर रुक गये और अपने साथियों की प्रतीक्षा करने लगे। जबलपुर से फौन पर फौन आ रहे थे हम लोग यहाँ प्रातःकाल से स्वागत करने को बैठे हैं। हमने सोचा—सब लोग जबलपुर में मिल जायँगे, अतः हम स्वागत स्वीकार करने को बिना साथियों के ही चल दिये। हमारे साथ केवल श्रीबालकृष्णजी टंडन की ही मोटर थी। जबलपुर में प्रथम ही विश्व हिन्दु परिषद् की ओर से स्वागत हुआ। वहाँ एक नरसिंह मन्दिर है, वहाँ के महन्तजी जनसेवी हैं, विश्व हिन्दु परिषद् जबलपुर के अध्यक्ष भी हैं उन्होंने भी मन्दिर में स्वागत की बड़ी तैयारी कर रखी थी। वहाँ भी गये, भेंट पूजा स्वागत सत्कार हुआ। फिर भी हमारी बसें मोटरें नहीं आईं। हमने सोचा सम्भव है दूसरे

मार्ग से निकल गये हों। अतः हम बिना उनकी प्रतीक्षा किये हुए चल दिये।

मार्ग तो पक्की सड़कों के मानचित्रों के आधार पर बनाया था सुनावल, पाली होते हुए शहडोल, बुरहम होकर धनपुरी पहुँचना था, किन्तु यह मार्ग चालू नहीं था। ये सड़कें वन विभाग की थीं। हमें तो कटनी होकर धनपुरी ठीक पड़ता। किन्तु जानकारी नहीं थी। वन विभाग की सड़क तो अच्छी थीं, किन्तु इनमें न कहीं एक भी वाहन चल रहा था, न एक आदमी ही। सघन वनों के मध्य से सर्पाकार टेढ़ी-मेढ़ी सड़कें कहीं पहाड़ों पर चढ़ जाती कहीं नीचे उतर आतीं। नीचे इतने भारी-भारी खड्ड थे कि इसमें गाड़ी गिर जाय तो खील-खील हो जाय। इतने पर भी मार्ग बड़ा सुहावना था। सघन वनों की छटा निराली थी। हमारी दो गाड़ियाँ निर्जन वन में भटक रहीं थीं। हम बार-बार सोचते मार्ग भूल तो नहीं गये हैं, चलते ही गये चलते ही गये। हमें अपनी चिन्ता नहीं थी। अपने साथियों की चिन्ता थी। हमारे पिछले वाहनों में मातायें अधिक थीं। इस जनशून्य नगर विहीन अरण्य में कोई वाहनों को रोक ले तो पुकारने पर भी कोई नहीं आ सकता। इन विकट वनों में कोई हाथ मार कर भी भागे तो किसी प्रकार पता नहीं पा सकता। पचासों मील चलने पर कहीं कोई छोटा-मोटा गाँव दिखायी दे जाय। एक प्रबलधारा वाली नदी को राम-राम करके पार किया। गाड़ी तनिक भी रुक जाती तो प्रबल धारा में बहकर कहाँ की कहाँ बह कर चली जाती। जैसे-तैसे शहडोल पहुँचे गाड़ियों में तैल भराया। पूछा धनपुरी कितनी दूर है, तो अब भी ५०।६० मील बताया। रात्रि के ८ बज गये थे। धनपुरी में सहस्रों आदमी चार पाँच बजे से ही प्रतीक्षा कर रहे थे। जबलपुर, शहडोल आदि स्थानों के लिये दूरभाष (फौन) खट-खटा रहे थे। जैसे-तैसे रात्रि के १० बजे हम धनपुरी में

पहुँचे। वहाँ के भक्तों ने बड़े कलात्मक ढंग से पंडाल सजाया था। वृन्दावन की रासमंडली आवेगी। इस समाचार से १०।१०। २०।२० कोश के दर्शनार्थी आये थे। भक्तों ने अत्यन्त ही श्रद्धा भक्ति के साथ पूरी उमंग के साथ स्वागत सत्कार किया। हमारे पहुँचने के लगभग दो घन्टे के पश्चात् १२ बजे तक हमारे समस्त वाहन सकुशल पहुँच गये। वहाँ के भक्तों ने कच्ची, पक्की, फलाहारी सभी प्रकार की रसोई तैयार कर रखी थी। सबने प्रसाद पाया। फिर रासलीला अभिनय हुआ। लगभग ३ बजे सभी ने विश्राम किया। इस एक दिन की यात्रा में हमने जबलपुर जिला, मंडला जिला दो जिलों की सीमाओं को पार करके रीवाँ जिले में प्रवेश किया। धनपुरी रीवाँ जिले में ही है। मोटर से लगभग हम २०० मील आज चलें।

यदि हम भेड़ाघाट से पैदल परिक्रमा करते तो कौन-कौन स्थान पड़ते ?

१—यदि हम भेड़ाघाट से पैदल यात्रा उठाते तो हमें भेड़ाघाट से नर्मदा किनारे-किनारे पहिले गोपालपुर आना पड़ता। भेड़ाघाट में भृगु ऋषि ने तपस्वा की थी, इससे भृगु का अपभ्रंश भेड़ा हो गया। किन्हीं का कहना है यहाँ एक छोटी नदी वामन गंगा का नर्मदा के साथ भेड़ा (संगम) हुआ है, इसी से इसका नाम भेड़ाघाट पड़ा।

२—भेड़ाघाट से नर्मदा किनारे-किनारे चलें तो लगभग तीन मील पर गोपालपुर घाट मिलेगा।

गोपालपुर नर्मदा के किनारे रमणीक स्थान है। यहाँ पहिले कभी सती हुई होंगी। सतियों के चोरे हैं। एक सती होने का आँखों देखा दृश्य कर्नल डबल्यू० एच० स्लीमन नामक एक अँगरेज ने अपनी पुस्तक में वर्णन किया है। उस समय वह जबलपुर का जिलाधीश था। यह सम्वत् १८८६ की बात है।

स्लीमन अपनी पुस्तक में लिखते हैं कि जब मैं जबलपुर का जिलाधीश था तब मेरे सामने एक प्रार्थना पत्र प्रस्तुत किया गया। वह उम्मेदसिंह उपाध्याय के सम्बन्धियों की ओर से था। उसमें प्रार्थना की गयी थी कि आज श्री उम्मेदसिंह का देहान्त हो गया है, उनकी पत्नी सती होना चाहती है। उसे सती होने की आज्ञा प्रदान की जाय।"

मैंने ऐसा करने की आज्ञा नहीं दी। क्योंकि प्रायः भूमि तथा धन के लोभ से बलपूर्वक स्त्री को पति के साथ जला देते थे। मैंने पुलिस भेजकर उसे सती होने से रोक दिया।

इसके तीन चार दिन के पश्चात् मुझे ज्ञात हुआ कि उम्मेद सिंह की पत्नी अपने पति की भस्मी के समीप बिना कुछ खाये दिन रात्रि वहीं बैठी हुई है, वह वहाँ से हटती नहीं और वहीं प्राण देने की हठ करती है।" वह स्थान मेरे निवास से लगभग दस मील था। उसके सम्बन्धियों द्वारा यह समाचार सुनकर मैं स्वयं घोड़े पर चढ़कर गोपालपुर गया। मैंने देखा कि वह ६५ वर्ष की वृद्धा नर्मदा किनारे एक पत्थर की चट्टान पर पानी में पैर लटकाये बैठी है। वह केवल एक सफेद धोती पहिने थी, उसने अपने हाथों की चूड़ियाँ फोड़ दीं थीं, सिर पर एक लाल कपड़ा लपेट रखा था, उसके सम्मुख एक पीतल की थाली रखी थी, जिसमें कुछ पुष्प तथा चावल रखे थे तथा उसके दोनों हाथों में एक-एक नारियल था, उसके मुख-मण्डल पर शान्ति विराजमान थी आँखों में एक प्रकार की दृढ़ता की चमक थी। वह परमशान्ति और संयम के साथ बात करती थी, जिसमें किसी प्रकार के अभिमान की गन्ध नहीं थी।

उसने मुझसे विनीत भाव से कहा—मेरी अन्तिम इच्छा एक मात्र यही है कि मेरे शरीर की भस्म मेरे पति के शरीर की भस्म

के साथ मिल जाय। तीन जन्मों से मेरी राख मेरे पति के साथ मिलती रही है।"

मैंने उसे सभी प्रकार से समझाया, भय दिखाया, प्रलोभन भी दिये। किन्तु वह अपने निश्चय पर दृढ़ रही और मुझसे बार-बार सती होने के लिये विनीतभाव से आग्रह करती रही। जब मैंने देखा यह अपनी प्रतिज्ञा पर दृढ़ है तो मैंने पुनः उससे एक बार कहा—"तुम घर लौट जाओ तुम्हारे घर वाले प्रसन्न होंगे, तुम जैसा भी चाहो जीवन बिताना।"

तब उसने कहा—"मुझे अब जीने की रंचक मात्र भी इच्छा नहीं है। मेरी आत्मा पाँच दिनों से मेरे पति की आत्मा के साथ सूय के निकट पहुँच चुकी है। यहाँ जो आप मेरा शरीर देख रहे हैं, यह केवल मिट्टी का पुंज मात्र है। आप मेरी नाड़ी देख लें उसका चलना भी बन्द हो गया है। आप मेरे हाथ को जलते अङ्गारों के बीच में रखवा कर देख लें, मुझे तनिक भी कष्ट न होगा।"

मैंने न तो उसकी नाड़ी ही देखी और न उसके हाथों को अङ्गारों पर रखवाया। उसकी दृढ़ता को देखकर मैंने उसे सती होने का आदेश देना ही उचित समझा। क्योंकि तब तक सती प्रथानिरोधक विधान नहीं बना था। मैंने उसे सती होने की आज्ञा दे दी। मेरी आज्ञा पाते ही उसकी प्रसन्नता का ठिकाना नहीं रहा। उसका मुखमंडल आनन्द से खिल उठा। उसने मुझे हृदय से धन्यवाद दिया।

उसके लिये चिता तैयार की गयी। आठ फुट लम्बे चौड़े, तीन फुट गहरे गड्ढे में जिसमें उसके पति का दाह संस्कार हुआ था उसी में बहुत-सी लकड़ियों से चिता रचाई गई। जब चिता बन गई तब उसने नर्मदाजी में स्नान किया फिर एक पान खाया। अपना दायाँ हाथ अपने बड़े लड़के पर तथा बायाँ हाथ अपने

भतीजे के कन्धे पर रखकर, वह चिता के समीप आयी और कुछ ही दूरी पर खड़ी होकर उसने आकाश की ओर अवलोकन किया तदनन्तर हाथ जोड़कर बोली—"हे मेरे स्वामी ! इन लोगों ने पाँच दिनों तक मुझे तुम्हारे समीप पहुँचने से रोक रखा था, इसमें मेरा कोई अपराध नहीं।" इतना कहकर उसने चिता की परिक्रमा की, हाथ जोड़कर प्रार्थना की, हाथ के पुष्प चिता पर चढ़ाये। फिर अत्यन्त शान्ति के साथ चिता पर चढ़ गई। चिता की लकड़ियाँ अङ्गारे की भाँति जल चुकी थीं, अग्नि की ऊँची-ऊँची लपटें उठ रही थीं उसमें वह ऐसे जाकर बैठ गई जैसे कोई गुदगुदे गद्दे पर जाकर बैठ गया हो। उसके मुख से एक भी शब्द नहीं निकला, देखते-देखते उसका सम्पूर्ण शरीर जलकर भस्मसात हो गया।

मैं यह देखकर चकित रह गया कि हिन्दु महिलाओं का पुनर्जन्म पर कैसा अटल विश्वास है कि वे अपने जीवित शरीर को इसी आशा से जला देती हैं कि हमें अगले जन्म में भी अपने इसी पति के साथ रहने का अवसर प्राप्त हो। मैंने अपने जीवन में ऐसी अनोखी घटना कभी नहीं देखी थी। मेरी धारणा है कि इस देश की वह अन्तिम सती थी जिसने अपने पति की चिता के साथ स्वेच्छा से जलकर अपनी भस्म को अपने पति की भस्म में मिला दिया। इसके अनन्तर तो सती निरोधक विधान बन गया।"

एक विदेशी अँगरेज द्वारा लिखा यह एक सती का विवरण है। हमारे देश में न जाने ऐसी कितनी सती हुई हैं, जिनके अभी तक देश के सभी भागों में सती चौरा और सती मन्दिर बने हैं, जिनकी पूजा यहाँ के नर-नारी बड़ी श्रद्धा के साथ देवताओं की भाँति करते हैं।

गोपालपुर घाट से लगभग तीन मील पर तेवर नाम का

एक साधारण-सा ग्राम है। प्राचीन काल में इसका नाम "त्रिपुरी" था। इसका नाम 'त्रिपुरी' क्यों पड़ा इस सम्बन्ध की श्रीमद्भागवत में तथा अन्यान्य पुराणों में विस्तार से कथा है। वसिष्ठ संहिता में वसिष्ठ ने श्रीरामचन्द्रजी को इसकी जो कथा सुनाई उसे ही हम यहाँ संक्षेप में कहेंगे—एक बार देवासुर संग्राम में देवताओं से असुर हार गये। इससे वे बड़े चिन्तित हुए। इस पर असुरों के शिल्पी मयासुर ने लोहे, चाँदी और सुवर्ण के तीन पुर बनाये, वे तीनों पुर अस्त्र-शस्त्रों से सुसज्जित थे। वे तीनों आकाश में घूमते रहते थे। किसी एक पर्व पर मिलते थे, नहीं तो अदृश्य रूप से घूमते रहते। वे जो अस्त्र-शस्त्रों की वर्षा करते उससे देवताओं को तो क्षति पहुँचती किन्तु अदृश्य रहने से तथा घूमते रहने से उन पर कोई प्रहार नहीं कर सकता था। सब देवताओं ने मिलकर शिवजी से प्रार्थना की। शिवजी उन दैत्यों से लड़ने गये। शिवजी अपने वाणों से असुरों को मारकर गिरा तो देते थे, किन्तु मय दानव ने अमृत का कुण्ड बना रखा था। मयासुर मृतक असुरों को ले जाता और कुण्ड में डालकर जीवित कर देता। फिर शिवजी से लड़ने आ जाते। शिवजी सोचते—अभी तो यह मर गया था फिर कैसे लड़ने आ गया। चिरकाल तक युद्ध होता रहा। शिवजी उन्हें परास्त न कर सके। हारकर वे कैलाश पर चले गये।

अब देवता बड़े घबड़ाये। वे ब्रह्माजी की शरण गये। ब्रह्माजी ने कहा—"भाई! मेरे वश की बात नहीं है। चलो हम सब मिलकर शङ्करजी की शरण में चलें।" जब सब शङ्करजी के समीप गये तो शङ्करजी ने कहा—देखो, भाई! वह मयासुर बड़ा मायावी है, यह मेरे वश की बात नहीं है। वह मायावी माया से ही जीता जा सकता है। भगवान् विष्णु मायापति हैं, वे

ही अपनी माया से उसे जीत सकते हैं। चलो सब मिलकर उन मायेश्वर की शरण में चलें।

जब सब अज, शङ्कर तथा देवगण विष्णु की शरण गये तो भगवान् हँसे और बोले—मायावी तो माया से ही जीता जायगा। जब तक उनके पास अमृत कुण्ड है, तब तक उन्हें कोई जीत नहीं सकता। ब्रह्माजी! तुम तो बनो बछड़ा, मैं बनता हूँ गौ तब काम चलेगा।"

ब्रह्माजी ने कहा—महाराज! मैं तो आपका बछड़ा हूँ ही, चलिये। अब भगवान् सुन्दर-सी दुबली-पतली गौ बन गये। ब्रह्माजी बछड़ा बनकर उनके पीछे-पीछे चले। त्रिपुर के नगर में घुस गये और अमृत के कुण्ड में से अमृत पीने लगे। कुछ ने कहा भी—देखो, यह गौ अमृत पी रही है।"

सबने कहा—प्यासी गौ को पीने से हटाना न चाहिये। कितना पीवेगी यह गौ साधारण गौ तो थी नहीं। सब-के-सब अमृत को पी गई और तुरन्त चली आई। अब शिवजी ने भगवान् विष्णु की सहायता से दिव्य रथ पर चढ़कर तीनों पुरों का नाश कर दिया। तभी से उनका नाम "त्रिपुरारि" प्रसिद्ध हो गया। इसी स्थान से शिवजी ने तीनों पुरों को नाश किया था, अतः इस स्थान का नाम 'त्रिपुरी' प्रसिद्ध हुआ। त्रिपुरी का ही अपभ्रंश 'तेवर' हो गया। जब मयासुर को आगे करके सब असुर आशुतोष शङ्करजी की शरण गये, तब शङ्करजी ने मयासुर को पंचाक्षर मंत्र का उपदेश देकर नर्मदा किनारे तप करने की आज्ञा दी तब उसने तिलेश्वर तथा भैरवेश्वर तीर्थ में तप करके सिद्धि प्राप्त की। गोपालपुर यहाँ से तीन माल है।

पहिले यहाँ कलचुरी-वंश का राज्य था। इसी वंश में ग्यारहवीं शताब्दी में कर्ण देव नाम के एक बहुत ही सुप्रसिद्ध महाराजा हुए। उन्होंने अपने बाहुबल से भारत का अधिकांश

भाग अपने अधीन किया था। ये महाराज बड़े धर्मात्मा थे। इन्होंने बहुत से मन्दिर, वापी, कूप, तड़ाग बनवाये। इनकी महारानी अदहना देवी ने भेड़ाघाट और धूँआधार के बीच गौरीशङ्करजी का मन्दिर बनवाया था, जिसमें चौंसठ योगिनियों की स्थापना की। योगिनियों की मूर्तियाँ अत्यन्त कलात्मक भव्य थीं जिन्हें आततायी दस्युधर्मी यवनों ने खण्डित कर दिया है।

३—गोपालपुर से लगभग एक मील पर लमेटा घाट है। पिप्पलाद मुनि ने यहीं तपस्या की थी, यहाँ उनके स्थापित पिप्पलेश्वर शिव हैं। यहाँ पीपल के वृक्षों के नीचे से सरस्वती नदी निकलकर नर्मदाजी में मिली हैं। यहीं शनिदेव का मन्दिर है यहाँ नर्मदा सरस्वती का सङ्गम है। यहीं देवराज इन्द्र ने तपस्या की थी, उनके द्वारा स्थापित इन्द्रेश्वर शिवजी का मन्दिर है। यहाँ पत्थरों पर हाथी के पैर जैसे चिन्ह बने हैं। कहते हैं ये इन्द्र के हाथी ऐरावत के चिन्ह हैं। जबलपुर से जो तिलवारा घाट को सड़क गई, उसमें से एक शाखा लमेटाघाट को भी गई है। पक्के घाट हैं, कई मन्दिर हैं।

४—यहाँ से एक मील आगे त्रिशूल घाट है। शिवजी ने अपने त्रिशूल का प्रहार करके इस तार्थ का निर्माण किया है। यहाँ नर्मदाजी त्रिशूल के सदृश प्रवाहित होती हैं। व्यतीपात, संक्रान्ति और सूर्य ग्रहण के समय यहाँ के स्नान का बड़ा माहात्म्य है।

५—त्रिशूल घाट से एक मील आगे रामनगरा मुकुट क्षेत्र है। कहते हैं यहाँ महाराज हरिश्चन्द्रजी ने तपस्या करके सिद्धि प्राप्त की थी। रेवा खण्ड में इसकी कथा है कि राजा हरिश्चन्द्र ने कुरुक्षेत्र में सूर्य ग्रहण के समय दस सहस्र सुवर्णालङ्कार युक्त गौओं का दान दिया था तथा ब्राह्मणों को १०८ समृद्धशाली ग्रामों का दान दिया था। इन पुण्यों के कारण उन्हें अन्तरिक्ष पुरी प्राप्त

हुई। उसी समय शशोक नाम के एक राजा ने अमरकंटक में केवल एक सहस्र गौओं का दान किया। इसके फलस्वरूप उन्हें मुक्ति प्राप्त हुई।

इस पर महाराज हरिश्चन्द्र ने ब्रह्माजी से पूछा—"महाराज! मेरे इतने दान का फल केवल अन्तरिक्षपुरी प्राप्त ही हुआ और शशोक ने केवल एक सहस्र गौ दान से ही मुक्ति कैसे प्राप्त कर ली। इस विषमता का कारण बतावें ?"

तब ब्रह्माजी ने कहा—देखो, भाई ! नर्मदा के अमरकंटक में किये हुए पुण्य का अन्य क्षेत्रों से दस सहस्र गुणा फल है। अतः तुम नर्मदा किनारे जाकर तपस्या करो। ब्रह्माजी की आज्ञा से हरिश्चन्द्रजी ने यहाँ तपस्या करके सिद्धि प्राप्त की। यहाँ पर एक सूअर ने स्नान करके मुक्ति प्राप्त की। इसीलिये इसका नाम मुक्ति क्षेत्र (मुकुट क्षेत्र) हुआ।

६—रामनगरा मुकुट क्षेत्र से लगभग १॥ मील तिलवाड़ाघाट है। यहाँ पर तिलभांडेश्वर शिवजी का मन्दिर है। वसिष्ठ संहिता में इसकी कथा इस प्रकार है—"एक बार भरद्वाज, याज्ञवल्क्य, दुर्वासा, वामदेव, वसिष्ठ, विश्वामित्र तथा जमदग्नि आदि महर्षि गण नर्मदा परिक्रमा करते हुए इस तीर्थ में आये। उस दिन मकर संक्रान्ति का दिन था। मकर संक्रान्ति के अवसर पर तिल दान का अनन्त फल होता है नर्मदा किनारे पर विशेष रूप से। किन्तु इन महर्षियों के पास तिल का अभाव था। इन्होंने सोचा—नर्मदा किनारे मकर संक्रान्ति पर तिल दान का विशेष माहात्म्य है, हमारे पास तिल नहीं हैं, क्या किया जाय।" यह सोचते-सोचते वे सब सो गये। स्वप्नावस्था में शङ्करजी ने उनसे कहा—ऋषियो ! यहाँ पर वाणासुर ने तिलभांडेश्वर शिवजी की स्थापना की थी, वह शिवलिङ्ग नर्मदाजी के जल में पड़ा है। उसके सदृश अन्य शिवलिङ्ग नहीं है। उस पर तिल का चिन्ह है, उसे जल

से निकालकर उसकी पूजा करो, तुम्हें तिल दान का फल प्राप्त हो जायगा। तब ऋषियों ने ऐसा ही किया। यहाँ मकर संक्रान्ति पर मेला होता है, यहाँ पर तिल दान का बड़ा माहात्म्य है।

यहाँ एक बार अखिल भारतीय राजनैतिक सभा (कांग्रेस) का अधिवेशन हुआ था, जो 'त्रिपुरी कांग्रेस' के नाम से प्रसिद्ध है। यहाँ पर एक गांधी स्मारक नाम का भवन भी है। यहीं पर नर्मदेश्वरजी का एक भव्य शिवालय है। हमारे एक परम भक्त झरिया के स्वर्गीय श्री वीरमभाई घेला थे उन्होंने एक वर्ष का बड़ा यज्ञ कराया था, जिसमें नित्य सहस्रों मृत्तिका के शिवजी बनाकर पार्थिव पूजा होती थी। वहाँ उन्होंने मन्दिर, गोशाला आदि बनाकर एक धार्मिक न्यास बना दिया है। स्थान बड़ा रमणीक है। मंडला से आते हुए हम एक दिन इस स्थान में ठहरे थे।

७—यहाँ से लगभग दो मील की दूरी पर मदन महल है। बारहवीं शताब्दी में यहाँ गढ़ा के राजा मदनसिंह ने मदन महल नाम का भव्य महल बनवाया था जो दर्शनीय है, आज कल जीर्ण हो गया है, सुनते हैं यहाँ बहुत सम्पत्ति गड़ी है एक दोहा प्रसिद्ध है—मदन महल की छाँह में, दो टोंग नदी के बीच। माया गड़ी नौ लाख की, दो सोने की ईंट !

८—इसके आगे गौर सङ्गम है, यहाँ गौर नदी आकर नर्मदा जी में मिलती हैं, नर्मदाजी पर पक्के घाट हैं।

९—गौर सङ्गम से आगे लगभग ५ मील पर नाँदिया घाट है, इसके सामने ही नर्मदाजी पर खिरनी घाट है।

१०—नँदिया घाट से आगे पहाड़ी मार्ग है, घोर जङ्गल है बीहड़ वन में होकर नर्मदा किनारे-किनारे जाना होता है। ७ मील के लगभग चलकर नन्दिकेश्वर तीर्थ आता है। यह स्थान

बहुत रमणीक तथा ठण्डा है। वसिष्ठ संहिता में इस तीर्थ की कथा इस प्रकार है—

इस तीर्थ की महिमा तथा परम पावनता श्रवण करके ब्रह्माजी के पुत्र धर्म ने यहाँ दश सहस्र वर्ष निवास करके घोर तपस्या की। इनकी तपस्या से प्रसन्न होकर आशुतोष भगवान् भूतपति शिवजी अपने गणों के सहित इनके सम्मुख प्रकट हुए। धर्मराज ने शिवजी के पादपद्मों में साष्टाङ्ग प्रणाम करके उनकी विधिवत पूजा की तथा दोनों हाथों की अञ्जलि बाँधकर प्रेम में विभोर होकर स्तुति की। इनकी पूजा स्तुति से प्रसन्न होकर वर माँगने को कहा। तब धर्म ने कहा—"प्रभो! मैं सदा आपकी सेवा में ही संलग्न रहूँ ऐसा वर दीजिये।"

यह सुनकर शिवजी प्रसन्न हुए और बोले—अब तक हमारा वाहन कुम्भोहर नादिया था। आज से तुम हमारे नन्दीगण हुए। यह सुनकर समस्त देवताओं ने शिवजी का जय-जयकार किया। तब शिवजी ने इस तीर्थ में सदैव हमारी सन्निधि रहेगी और यह तीर्थ नन्दिकेश्वर नाम से ख्यात होगा। यहाँ पर शिवरात्रि के दिन शिवजी का मेला होता है।

११—नन्दिकेश्वर तीर्थ के आगे घने वीहड़ वनों में होकर नर्मदा किनारे-किनारे लगभग पाँच मील चलकर छोलिया घाट आता है। स्थान रमणीक है, शिवजी के दो मन्दिर हैं। यह स्थान भेड़ाघाट से नर्मदा किनारे-किनारे चलने से लगभग ३१ मील पड़ता है। ब्रह्मकुण्ड जो नर्मदा किनारे है वहीं से जबलपुर जिला लग जाता है। ब्रह्मकुण्ड भेड़ाघाट नर्मदा किनारे से लगभग २८ मील है। इस प्रकार इस किनारे से लगभग ६० मील नर्मदा जी जबलपुर जिले में प्रवाहित हुई हैं। अब आगे मंडला जिला आ जायगा।

१२—छोलियाघाट से ठाटी घाट झाड़ी के मार्ग से लगभग

७।८ मील ठाटीघाट है, सुनते हैं यह स्थान हठ योग करने के लिए बहुत ही उत्तम माना गया है। यहाँ दो शिवजी के मन्दिर हैं।

१३—ठाटीघाट से लगभग ८।९ मील की दूरी पर पद्मीघाट है। यहाँ बाइली नदी आकर नर्मदा जी में मिलती है। बाइली नदी का संगम है। यहाँ से पक्की सड़क मिलती है हम लोग इसी सड़क से मोटरों द्वारा गये थे। नर्मदा जी के दर्शन दूर से होते हैं।

१४—पद्मीघाट से लगभग चार मील की दूरी पर महोदर नदी आकर नर्मदा जी में मिलती हैं। यह महोदर संगम घाट रमणीक स्थान है। यहाँ की जलवायु शीतल है, गर्मियों में रहने योग्य है।

१५—महोदर संगम से लगभग तीन मील पर पक्की सड़क-सड़क चलने पर चिरई डोंगरी घाट मिलता है।

१६—चिरई घाट से लगभग ५।६ मील की दूरी पर फूल सागर घाट है यह स्थान भी पक्की सड़क के समीप ही है।

१७—फूल सागर से लगभग ५।६ मील दूर सहस्रधारा तीर्थ है। स्थान बहुत ही रमणीक तथा दर्शनीय है, यहाँ नर्मदा जी विन्ध्य पर्वत को फोड़कर कई धाराओं में बही हैं। सुनते हैं राजा सहस्रबाहु ने अपनी सहस्रों भुजाओं से नर्मदा जी का प्रवाह रोक लिया था। इससे तटपर शंकर जी की पूजा करते हुए रावण की पूजा सामग्री बह गयी थी। जब रावण सहस्रबाहु से लड़ने आया तब सहस्राबाहु उसे अपनी कांख में दबाकर ले गया। महर्षि पुलस्त जी ने आकर उसे छुड़ाया।

१८—यहाँ से दो तीन मील की दूरी पर ही मंडला नगर है जिसे प्राचीन माहिष्मती नगरी भी कहते हैं यहाँ पर एक प्राचीन

किला है। देव गाँव से नर्मदा जी के किनारे-किनारे पक्की सड़क मंडला तक आई है। मंडला मध्य प्रदेश का प्रसिद्ध जिला है। यहाँ से जबलपुर को पक्की सड़क गयी है। हम जब मंडला गये थे, तब मंडला का पुराना टूटा-फूटा किला तथा वहाँ के मन्दिर तथा नर्मदा जी के घाट देखे थे। मंडला से हम मोटर द्वारा जबलपुर आये थे। घोर जंगलों के बीच से टेढ़ी-मेढ़ी सर्पाकार सड़क तथा उसके आस-पास के सघन वृक्षों से आच्छादित मार्ग का दृश्य बड़ा ही मनमोहक था। जबलपुर के पास जो गढ़ मंडला स्थान है, वह अनेकों वर्षों तक गौंड़ राजाओं की राजधानी रही थी यहीं के गौंड़ राजा मदन सिंह ने ऐतिहासिक सुप्रद्धि मदन महल बनवाया था। जिसका जीर्णोद्धार राजा संग्राम सिंह ने कराया था। सुप्रसिद्ध महारानी दुर्गावती यहीं की रानी थीं। इसी वंश के राजा नरेन्द्रसिंह ने गढ़मंडला से अपनी राजधानी हटाकर यहाँ अपनी राजधानी बनायी। उसी राजा ने सन् १६८० में इस किला को बनवाया था। हम किले के भीतर गये। कहीं-कहीं पुरानी दीवालें खड़ी हैं। किले के भीतर टूटा-फूटा राजेश्वरी देवी का मन्दिर है, किले के भीतर और भी बहुत-सी मूर्तियाँ हैं, इनमें से राजा सहस्रबाहु की भी मूर्ति है। सुनते हैं यहाँ भगवान् वेदव्यास जी का भी एक आश्रम था। नर्मदा जी के दक्षिण तट पर पहिले यह आश्रम था। एक समय की बात है व्यासजी के आश्रम पर महर्षि पराशर, मनु, अत्रि, याज्ञवल्क्य, अङ्गिरा तथा और भी बहुत से महर्षि पधारे। व्यासजी ने विधिवत् उनका स्वागत सत्कार तथा पूजन करना चाहा। तब पराशर महर्षि ने कहा—व्यासजी! नर्मदा के दक्षिण तट पर ऋषिगण आपकी पूजा ग्रहण करना नहीं चाहते। इस पर व्यासजी ने भगवती नर्मदा जी से प्रार्थना की। व्यास जी की प्रार्थना स्वीकार करके उन्होंने अपना प्रवाह बदल दिया। वे कुछ दूर दक्षिण की ओर बहकर

फिर उत्तर की ओर बहने लगीं। इससे उनका आश्रम उत्तर की ओर हो गया। तब सब ऋषियों ने उनकी पूजा ग्रहण की। मंडला के तीनों ओर नर्मदा जी हैं। भगवान् व्यास के स्थापित व्यास नारायण नाम के शिवजी अभी तक विद्यमान हैं। मंडला में और कई मन्दिर हैं। कालीदेवी जी का मन्दिर प्रसिद्ध है। नर्मदा जी पर पक्का पुल भी है।

भगवान् दत्तात्रेय के आशीर्वाद से महाराज कार्तवीर्य अर्जुन ने यहीं सहस्र बाहुएँ प्राप्त कीं। जिन्हें भगवान् परशुराम जी ने छेदन किया। श्रीमद्भागवतादि पुराणों में यह सहस्रबाहु अर्जुन और परशुराम जी की कथा प्रसिद्ध ही है। सहस्राबाहु अर्जुन की राजधानी माहिष्मती पुरी इसी मंडला को मानते हैं। मंडला से देव गाँव और डिंडोरी होती हुई एक सड़क अमरकंटक तक गयी है। हम लोग जब भेड़ाघाट से अमरकंटक के लिये चले थे, तब लोगों ने यही बताया था कि आप मंडला नर्मदा जी पार करके डिंडोरी होते हुए अमरकंटक पहुँच जाइये। किन्तु परिक्रमा में नर्मदा पार नहीं की जाती इसलिये हम मंडला न जाकर सीधे धनपुरी होकर अमरकंटक गये।

१९—मंडला से लगभग १० मील दूर रामनगर घाट है इसके सम्मुख दक्षिण तट पर रामनगर गाँव है। इसका वर्णन दक्षिण तट की परिक्रमा में किया जायगा।

२०—रामनगर घाट से लगभग ११ मील पर लिंगाघाट है, यहाँ से थोड़ी दूर पर ही पक्की सड़क है। लिंगाघाट से रामनगर तक पक्की सड़क नर्मदा जी के किनारे-किनारे ही है।

२१—लिंगाघाट से ६ मील दूरी पर बिलगड़ा ग्राम है, यह पहाड़ी ग्राम है, इसमें अहीरों की बस्ती है, मार्ग जंगल और पहाड़ का है।

२२—बिलगड़ा से दो मील चलकर दुपट्टा घाट आता है। यहाँ पर दुपट्टा नदी आकर नर्मदाजी में मिली है दुपट्टा नर्मदा का संगम है, स्थान रमणीक है, पर्वत का मार्ग है।

२३—दुपट्टा से चार मील दूर चकढेई है।

२४—चकढेई से ४ मील खाया है।

२५—खाया से ३ मील सिवनी गाँव है।

२६—सिवनी से ६ मील फुटरई ग्राम है यहाँ पर सनगी नदी आकर नर्मदाजी में मिलती है।

२७—सनगी संगम से चार मील दूर पर सारङ्गपुर गाँव है।

२८—सारङ्गपुर से ९ मील पटपरा गाँव है।

२९—पटपरा से ५ मील कन्हैया घाट है। यहाँ कन्हैया नदी आकर नर्मदाजी में मिलती है।

३०—कन्हैया सङ्गम से ५ मील घुसिया है।

३१—घुसिया से ६ मील शाहपुर है। यहाँ से नर्मदाजी ५-६ मील पड़ती है। पक्की सड़क पर यह गाँव है। जबलपुर से हम इसी सड़क पर आये थे।

३२—शाहपुर से ६ मील जोगीपुर टिकड़िया ग्राम है। यह ग्राम नर्मदाजी के किनारे पर है, ग्राम बड़ा है, शिवजी और रामचन्द्रजी के मन्दिर हैं, एक धर्मशाला भी है। यह ग्राम नर्मदाजी के किनारे पर है जबलपुर वाली पक्की सड़क के किनारे पर यह ग्राम है।

३३—जोगी टिकरिया से दो मील देवरा ग्राम है, यहाँ कटोरी नदी आकर श्री नर्मदाजी में मिलती है।

३४—कटोरी सङ्गम से चार मील दूर लुटगाँव है। यहाँ कपिलजी ने तपस्या की थी। छोटी-सी कपिल धारा भी है।

लछमन मंडवा तीर्थ तथा रामकुण्ड आदि तीर्थ हैं। सुनते हैं श्रीरामचन्द्रजी ने दिग्विजय के समय इसकी स्थापना की थी। यह स्थान यहाँ का प्रसिद्ध तीर्थ है।

यहाँ आकर मंडला जिला समाप्त होता है। इससे आगे रीवाँ जिला आ जाता है। हम पहिले दिन जिस धनपुरी नगर में ठहरे थे। वह पहिले रीवाँ राज्य में ही था। धनपुरी वालों ने विष्णुयज्ञ का हमारे आने पर आयोजन किया था। उसकी पूर्णाहुति के समय रीवाँ के भूतपूर्व महाराजा आये थे। उनसे हमारी बहुत देर तक देश की समस्या पर बातें होती रही। महाराज युवक थे, बड़े सज्जन मिलनसार और धार्मिक थे।

ठाटीघाट से मंडला जिला लगा था लुटगाँव में समाप्त हुआ। इस प्रकार नर्मदा किनारे-किनारे लगभग सवा सौ मील हम मंडला जिले में चले। भेड़ाघाट से छोलियाघाट लगभग ३१ मील है। तो ३१ मील जबलपुर जिले में और सवा सौ मील मंडला जिले में पड़ते हैं, यदि नर्मदा किनारे-किनारे आवें तो। इस प्रकार लगभग १६० मील लुटगाँव तक होते हैं। सड़क से कुछ अधिक पड़ते हैं, तो हम अनुमान से कहते हैं पहिले दिन जबलपुर से धनपुरी तक आने में हमें २५० किलोमीटर अवश्य पड़े होंगे। वैसे मानचित्रों से हमने धनपुरी १७५ किलोमीटर लिखा था। इस प्रकार मोटर से ही हमारी पहिले दिन की परिक्रमा समाप्त हुई। पैदल आने वाले यदि १० मील भी नित्य चलें तो वे लुटगाँव १५।१६ दिन में पहुँच सकेंगे।

छप्पय

मातु नर्मदे ! बहो करो सब जीवनि पावन।
जननी ! तुमरो नीर हरे दुख अति मन भावन ॥
भेड़ातैं हम चले पुरी त्रिपुरीमें आये।
तिल भांडेश्वर, नंदि छोलि ठाटी मन भाये ॥
पद्मी, चिरई, मंडला, रामनगर पुर नाँघिकें।
संगम नदियनि पार करि, बसे धनपुरी आइकें ॥

उल्लाला

वामन गंगा सरसुती, गौर, बाइली, महोदरि।
नदी दुपट्टा, कन्हैया, सनगि, कटोरी पार करि ॥
करे पार संगम सकल, माँ दरसन कहुँ कहुँ भये।
मोटर मगतैं धनपुरी, आइ एक दिनमें गये ॥



नर्मदा तट के एक घाट का दृश्य।

धनपुरी से अमरकंटक

(३)

महागभीरनीरपूर पापधूत भूतलम्
ध्वनत्समस्त पातकारिदारितापदाचलम् ।
जगल्लये महाभये मृकण्डु सूनुहर्म्यदे
त्वदीय पादपंकजं नमामि देवि नर्मदे ॥*

छप्पय

ऋषि मुनि त्यागी संत मातु तट तुम्हरे निबसें ।
करिकें तव पय-पान स्नान हित तव जल प्रविसें ॥
कन्द मूल फल खायँ तपस्या करि सुख पावें ।
वे शरणागत भक्त लौटि पुनि जग नहिँ आवें ॥
माता ! पीकें नीर तव, तीर आइकें जे बसें ।
यमकिंकर तिनितैं डरें, तिनिके सबई अघ नसें ॥

कहावत है 'परदेश कलेश नरेशनि कूँ' परदेशां में राजाओं को भी कष्ट होता है। किन्तु यात्रा का मार्ग प्रशस्त हो, राजपथ हो,

---

* हे माँ नर्मदे ! तुम अन्यन्त गम्भीर जल के प्रवाह-द्वारा पृथ्वी-तल के पापों को घोने वाली हो। तुम अपने कल-कल करते शब्दों द्वारा सम्पूर्ण पातकों को नाश करने वाली हो। तुम महान् भयंकर संसार के प्रलय काल में मार्कण्डेय मुनि को आश्रय देने वाली हो, ऐसे आपके पाद-पङ्कजों में हे नर्मदे देवि ! पुनः-पुनः प्रणाम है।

पक्की सड़क हो। सुखप्रद वाहन हो, मार्ग में स्वागत सत्कार करने वाले सज्जन स्वजन मिलते रहें। पहिले से ही अपने स्वजन बन्धु-बान्धवों के द्वारा आवास भोजनादि की समुचित व्यवस्था हो, साथ में अपने स्नेही स्वजन इष्ट मित्र हों तो वह यात्रा कष्टप्रद न होकर परम सुखप्रद ही होती है। हमारी यात्रा परम सुख प्रद रही। राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ तथा विश्व हिन्दु परिषद् के हमारे स्नेही बन्धु-बान्धवों ने हमारी यात्रा की पहिले से ही समुचित व्यवस्था कर रखी थी विश्व हिन्दु परिषद् के प्रान्तीय संगठन मन्त्री आगे चलकर हमारी सब व्यवस्था करते जाते थे। मार्ग में पड़ने वाले समस्त ग्रामों में पहिले से ही स्वागत सत्कार की व्यवस्था रहती। कहाँ जल पान होगा, कहाँ मध्यान्ह भोजन होगा, कहाँ रात्रि का विश्राम, भोजन, सभा तथा रासलीला होगी। इसकी व्यवस्था पहिले से ही बनी रहती। इससे हमें पूरी यात्रा में किसी प्रकार की असुविधा नहीं हुई। वर यात्रा से भी अत्यन्त बढ़कर स्थानीय लोग हमारे स्वागत सत्कार, ठहरने की, भोजनादि की व्यवस्था करते। इससे यह यात्रा इतनी सुख प्रद रही कि जिसकी हम कल्पना भी नहीं कर सकते।

फाल्गुन कृष्णा एकादशी (२३ फरवरी) को हम सब विष्णु-यज्ञ की पूर्णाहुति करा कर तथा भोजनादि करके मध्यान्होत्तर धनपुरी से अमरकंटक के लिये निकले। मार्ग इतना सुन्दर तथा मन मोहक था कि मनमयूर आनन्द में विभोर होकर नृत्य करने लगता। हमने प्रायः सम्पूर्ण देश के पर्वतों की यात्रायें की हैं, किन्तु मध्यप्रदेश में भी ऐसे हृदय को प्रफुल्लित करने वाले दृश्य होंगे, इसकी हमें कल्पना तक नहीं थी। सड़क के किनारे अत्यन्त ही हरे-भरे सघन वृक्ष लगे हुए थे। दूर-दूर तक गेहूँ, जौ, सरसों तथा मटर के पके हुए खेत खड़े थे। कहीं-कहीं खेतों में कटाई हो रही थी। कहीं-कहीं स्त्री पुरुष खेतों को सींचकर उनमें

बीज बो रहे थे। ऐसा लगता था, हम स्वर्ग के मार्ग से जा रहे हों। मोटरें कहीं ऊँची पहाड़ी पर चढ़ जातीं, फिर नीचे उतर आतीं। सड़क बड़ी ही सुन्दर तारकूल से पुती थी। मोटरें चल नहीं रहीं थीं रपट रही थीं। आस-पास गौएँ, भैंसे, बकरियाँ चर रही थीं। सड़क यातायात नहीं के बराबर था। हाँ, पहाड़ी स्त्री पुरुष शिव रात्रि के मेलें के लिये पैदल-पैदल जा रहे थे। सभी एक-एक सूखी लकड़ियों का बोझ सिर पर रखकर लिये जा रहे थे। मैंने पहिले समझा ये लकड़ी बेचने के लिये ले जाते होंगे। किन्तु पीछे पता चला ये सब इन लकड़ियों को जलाकर आग तापते हुये पूरी रात्रि बिता देंगे। सहस्रों की संख्या में बनवासी नर-नारी चारों ओर से अमरकंटक में शिवजी के दर्शनार्थ जा रहे थे। कैसी अनुपम भक्ति है इन अपढ़ नर-नारियों की, न कुछ ओढ़ने को है, न बिछाने को। खाने को चना चबैना सत्तू बाँधे हुए लकड़ियों की आग के सहारे ही ये पूरी रात्रि बिताकर प्रातः नर्मदाकुंड में स्नान करके शिवजी के दर्शन करने के उपरान्त अपने-अपने घरों को चल देंगे।

छोटे-छोटे गाँवों के, जंगलों के, बाग-बगीचों के दृश्यों को देखते हुए हम अमरकंटकजी के समीप पहुँच गये। पहाड़ों के कारण बड़ी सरदी थी। हमारे टंडनजी की लड़की कुंकुम के पति इंजिनियर हैं, यहाँ से पत्थर खुदवाकर वे रेल के किनारे डलवाने को भिजवाते हैं। यहाँ वे रेलवे के विश्राम गृह में ठहरे हुए थे। टंडन जी उनका पता लगाने लगे। हमारी बसें पहिले ही पहुँच कर सेठ की धर्मशाला में ठहर गयीं। यात्रीगण भोजन बनाने खाने में व्यस्त थे। हमारे लिये वहाँ ठहरने का स्थान नहीं था। अतः हम बरफानी बाबा के आश्रम में चले। वहाँ उन्होंने ठहरने को हमें कमरे दे दिये। रासमंडली भी यहीं ठहरी। कुछ लोग इधर-उधर ठहर गये। प्रयाग से पंडित बंशीधर शर्मा, पंडित

कमलाप्रसाद वकील आदि आ गये थे, कटक से गिरधारी लाल केड़िया सपत्नीक आ गये, वृन्दावन से रामराज भी आ गये और भी अनेकों स्थान से बहुत से यात्री बन्धु आ गये। हम लोग सब भिन्न-भिन्न स्थानों में ठहर गये। शिवरात्रि के मेले के कारण बड़ी भीड़-भाड़ थी। परसों शिवरात्रि होगी। हम लोग फाल्गुन कृष्णा एकादशी (२३ फरवरी) को धनपुर से बसनिया आदि स्थानों में होते हुए अमरकंटक पहुँच गये।

यदि नर्मदा जी के किनारे-किनारे पैदल परिक्रमा करते तो कंडाकापा रीवाँ जिले में हैं। लुटगाँव से कंडाकापा ८ मील है।

३५—कंडाकापा (कंकडिया) से चार मील कुल्हार-संगम है यहाँ कुल्हार नदी श्री नर्मदा जी में आकर मिली हैं पहाड़ी ऊबड़-खाबड़ मार्ग है। नर्मदा जी अमरकंटक से रेवासागर संगम तक प्रायः पहाड़ों में ही होकर बही हैं।

३६—कुल्हार संगम से दो मील आगे टेढ़ी नदी का संगम है। यहाँ टेढ़ी नदी श्री नर्मदा जी में आकर मिली हैं।

३७—टेढ़ी संगम से ६।७ मील दूर कञ्चनपुर है। यहाँ एक छोटी-सी कोई दान नदी श्री नर्मदा जी में आकर मिली हैं।

३८—कञ्चनपुर से ७।८ मील दूर देवरी है। यहाँ देवरी नदी आकर श्री नर्मदा जी में मिली हैं।

३९—देवरी संगम से दो मील पर दम्हेड़ी हैं।

४०—दम्हेड़ी से दो मील भीमकुंडी है। यहाँ श्री वाणगंगा श्री नर्मदा जी में मिली हैं। यहाँ एक ही पत्थर को काटकर नर्मदा जी का घाट बना है। कहते हैं भीमसेन ने गदा मार कर नर्मदा जी के मध्य में कुंड बनाया है। यहीं भीमसेन ने नर्मदा जी को पार किया था। नर्मदा के दोनों ओर उनके चरणचिह्न हैं उन्होंने ही कुंडों का रूप धारण कर लिया है।

४१—भीमकुंडी घाट से ८ मील दूरी पर हराई टोला स्थान है। यह स्थान झाड़ियों के बीच में होकर है। रास्ता विकट है।

४२—हराई टोला से लगभग ७ मील दमगढ़ घाट है। यहाँ बराती नाम की छोटी-सी नदी नर्मदा जी में आकर मिली है।

४३—दमगढ़ से लगभग ३ मील कपिलधारा स्थान है। यहाँ नर्मदा जी पहाड़ से लगभग ६० फुट नीचे गिरती हैं, बड़ा ही सुन्दर नयनाभिराम प्रपात है। हम बड़ी देर तक खड़े-खड़े इसका दृश्य देखते रहे। यहाँ पर कपिलमुनि ने पूर्वकाल में तपस्या की थी। ऐसी किंवदन्ती है कि कपिल मुनि ने यहाँ नर्मदा जी की धारा को रोकने का प्रयत्न किया था। नर्मदा जी के किनारे पर उनके चरणचिह्न अभी तक दृष्टिगोचर होते हैं। अमरकंटक यहाँ से लगभग चार मील है मार्ग संकीर्ण है। यहाँ का दृश्य अत्यन्त ही मनोहर है, चारों ओर हरे-भरे वृक्ष दिखायी देते हैं। इसके समीप ही आलमोनियम का कारखाना है। बड़े-बड़े पहाड़ों के टुकड़े दैत्याकार मशीनों के द्वारा तोड़कर लाये जाते हैं, यहाँ के कारखाने के व्यवस्थापक हमारे परिचित भक्त निकले वे हमें दिखाने ले गये। पत्थरों को फोड़कर कैसे आलमोनियम निकाला जाता है, हमने ऐसा दृश्य और ऐसी दैत्याकार मशीनें पहिले कभी देखी नहीं थी।

कपिलधारा बहुत ही पुण्यप्रद तीर्थ है पुराणों में इसके सम्बन्ध की बहुत-सी कथायें हैं। यहाँ से तीन मील दूर दक्षिण में कपिल गुफा है, वहाँ नीलगंगा का संगम है। यहाँ से एक मील गायत्री सावित्री (कपिला पिप्पला) का संगम है। इस स्थान को कोटितीर्थ अमर कंटक भी कहते हैं। कपिलागंगा की उत्पत्ति की कथा इस प्रकार है, शिवजी का विवाह दक्ष की पुत्री दाक्षायणी सतीजी के साथ हुआ। एक बार शंकरजी सतीजी के साथ जल

क्रीड़ा कर रहे थे। क्रीड़ा के समय उनका वस्त्र हरण कर लिया, तब दासियों ने उन्हें तुरन्त उसी वस्त्र को निचोड़ कर उन्हें पहिना दिया। उनके निचोड़े हुए वस्त्र के रंग की गंगा प्रकट हुईं। वे ही कपिल गंगा के नाम से ख्यात हुईं।

कपिला का एक दूसरा नाम विशल्या भी है। कपिला का विशल्या नाम कैसे पड़ा इस सम्बन्ध की भी रेवाखण्ड में एक कथा है—ब्रह्माजी के पुत्र अग्निदेव हुए। उनका विवाह दक्ष की पुत्री स्वाहा के साथ हुआ। स्वाहा से अग्निदेव के तीन पुत्र हुये (१) आवहनीय, (२) दक्षिणाग्नि और (३) गार्हस्पत्याग्नि। समस्त द्विजातियों ने इन तीनों अग्नियों को ग्रहण किया। गार्हस्पत्याग्नि के दो पुत्र हुए। एक का नाम शंकुनाश और दूसरे का शधाक हुआ। शधाक ने नर्मदा जी के तीर पर दस सहस्त्र वर्षों तक घोर तप किया। उसके तप से प्रसन्न होकर भगवान् भूतनाथ श्री शंकर जी उसके सम्मुख प्रकट हुए और वरदान माँगने को कहा—

तब शधाक ने हाथ जोड़कर विनीत भाव से कहा—प्रभो! यदि आप मुझ पर प्रसन्न हैं तो गङ्गादि सोलह सखियों सहित नर्मदाजी मेरी पत्नी बनें और उनके सन्तानें हों।"

शिवजी ने तथास्तु कहा और कह दिया इनके गर्भ से जो सन्तानें होंगी, वे सब-की-सब अग्नि कहलायेंगी। और उन सब नदियों के पुत्र धीष्णा कहलायेंगे। उन सोलह नदियों से जो पुत्र हुये वे सब धीष्ण कहलाये। नर्मदा जी का पुत्र उन सब पुत्रों से परम पराक्रमी तथा बलवान् था अतः उसका नाम धीष्ण्येन्द्र हुआ। उसी ने देवताओं को साथ लेकर मयसार दैत्य तथा तारकासुर का वध किया। असुरों से युद्ध करने के कारण उसके सम्पूर्ण शरीर में शल्य-घाव हो गये थे। इन्द्रादि देवों ने उसकी रणचातुरी की प्रशंसा की, विधिवत् उसकी पूजा स्तुति की। देवताओं द्वारा

सत्कृत होकर धीष्णेन्द्र अपनी माता नर्मदा जी के दर्शनों के निमित्त आया। माता ने देखा मेरे पुत्र के शरीर में स्थान-स्थान पर शल्य-घाव हो रहे हैं और वह युद्ध व्यथा के कारण व्यथित हो रहा है तो माँ नर्मदा ने पुत्र के सहित कपिला गंगा में स्नान किया। कपिला में स्नान करते ही उसकी युद्ध व्यथा मिट गयी तथा उसका शरीर शल्य रहित हो गया। इसीलिये कपिला का नाम विशल्या विख्यात हुआ।

इस स्थान में कपिल पिप्पला संगम है। यहाँ करोड़ों देवताओं ने तथा ऋषियों ने तपस्या की है, ऋषि मुनि तथा देवताओं के स्थान ही तीर्थ बन जाते हैं। इसीलिये इस स्थान को कोटि-तीर्थ भी कहते हैं। कपिला संगम कोटितीर्थ का बहुत बड़ा माहात्म्य है, यहाँ स्नान करने से पातक, उपपातक तथा महा-पातक भी नष्ट हो जाते हैं। इस सम्बन्ध की एक कथा है।

आदि कल्प में अयोध्या के सूर्यवंशी एक धुन्धुमार नामक बड़े प्रतापी सम्राट् थे। उनके अनेक पुत्र थे, वे भी बड़े शूरवीर, वैभवसम्पन्न तथा युद्ध विद्या में पारंगत थे। एक समय महाराज धुन्धुमार मृगया करते-करते नर्मदा किनारे यहाँ नर्मदा कपिला संगम के समीप कोटितीर्थ में पहुँचे। वहाँ अनेक ऋषि मुनि तपस्या में संलग्न थे। महाराज ने एक श्वेत वाराह को देखा, वह बड़ा बलवान् हृष्ट-पुष्ट तथा वेग से भागने वाला था। राजा ने उसके पीछे अपना घोड़ा दौड़ाया। वह राजा के हाथ न आकर भागकर कोटितीर्थ आ गया और वहाँ आकर मर गया। राजा ने बड़े आश्चर्य के साथ देखा कि वह सूकर मरकर गन्धर्व हो गया और दिव्य विमान पर चढ़कर गन्धर्व लोक को जाने लगा।

तब राजा ने उससे पूछा—"महानुभाव! आपने किस कारण यह सूकर योनि पायी? और किस कारण आप देवत्व को प्राप्त हो गये?"

तब उसने बताया—"राजन्! मैं पहिले अंगद नाम का गन्धर्व था। गान विद्या में, मैं अत्यन्त निपुण था। एक दिन ब्रह्माजी की सभा में मैं गाने के लिये गया। वहाँ मुझसे कुछ अविनय हो गयी। तभी ब्रह्माजी ने मुझे शाप दे दिया—जा तू शूकर हो जा।"

इसलिये मुझे सूकर योनि में आना पड़ा। दैववशात् मैं कोटितीर्थ में आ गया और आपके कारण यहाँ मेरी मृत्यु हो गयी। इस तीर्थ के प्रभाव से मैं शाप से विनिर्मुक्त हो गया। आपने मेरा बड़ा उपकार किया।" यह कहकर वह राजा का अभिनन्दन करके गन्धर्व लोक को चला गया।

महाराज धुन्धुमार ने देखा, जिस घोड़े पर वे चढ़े हुये थे, वह भी कोटितीर्थ में आकर स्नान करते ही मृत्यु को प्राप्त हो गया। और देखते-देखते वह दिव्य तेजस्वी ब्राह्मण बन गया।

महाराज ने पूछा—"आपको किस कारण घोड़े की योनि प्राप्त हुई?"

उसने कहा—राजन्! पूर्वजन्म में मैं गालव नाम का ब्रह्मर्षि था। कुरुक्षेत्र में रहकर तपस्या किया करता था। उसी समय द्रुमसेन नाम के एक राजा कुरुक्षेत्र में आये। वे अश्वदान करना चाहते थे। वहाँ के ब्राह्मणों ने कहा अश्वदान लेना महान् प्रतिग्रह है, इससे किसी ने भी अश्व का दान लेना स्वीकार नहीं किया। घोड़ा बड़ा सुन्दर था। उसे देखकर मुझे लालच आ गया। लोभवश मैंने राजा से शास्त्रीय विधि से अश्व का दान ग्रहण कर लिया। इसी कारण मुझे अश्वयोनि में जन्म लेना पड़ा। आपकी कृपा से मुझे यहाँ आकर कपिला संगम में स्नान का सुयोग प्राप्त हो गया। इससे मेरे समस्त पाप नष्ट हो गये अब मैं ब्रह्मलोक का अधिकारी हो गया।" यह कहकर वह ब्राह्मण देखते-देखते ही दिव्य विमान पर चढ़कर ब्रह्मलोक को चला गया।

महाराजा धुन्धुमार ने सोचा—यह अश्व ब्राह्मण था। मैंने इसे कितना क्लेश दिया। अनजान में ही ऐसा हुआ फिर भी पाप तो मुझे लगा ही। मैं अग्नि में जलकर इस पाप का प्रायश्चित्त करूँगा।" यह सोचकर राजा ज्योंही अग्नि में जलने को उद्यत हुए त्योंही कपिला देवी ने प्रत्यक्ष प्रकट होकर राजा को ऐसा करने से रोका।

राजा समीप ही एक लाख ब्रह्मचारियों के साथ ब्रह्मचिन्तन करते हुए मार्कण्डेय मुनि के समीप गये और अपना सब वृत्तान्त कहा—महामुनि ने अपने लक्ष शिष्यों सहित राजा को कपिला संगम का स्नान कराया। इससे राजा का अन्तःकरण शुद्ध हो गया। महाराज सर्वथा क्षीणपाप बन गये। इस प्रकार कपिला संगम और कोटितीर्थ का महात्म्य कहा। यहाँ समीप ही दैत्यसूदन और चक्रतीर्थ हैं। कलियुग में नर्मदा जी समस्त पापों को नाश करने वाली हैं अतः मनुष्य शरीर पाकर नर्मदा जी में अवश्य ही स्नान करना चाहिये।

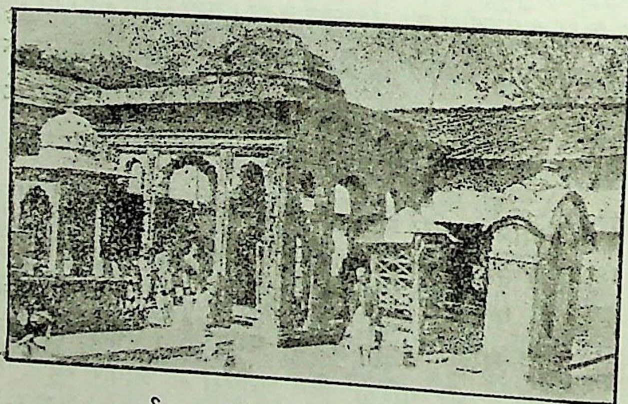
४४—अपिल धारा से चार मील पर अमरकंटक कोटितीर्थ है। यहीं से नर्मदा जी निकली हैं। परिक्रमा वाले प्रायः अमरकंटक से ही परिक्रमा उठाते हैं। वैसे तो परिक्रमा कहीं से भी उठाओ, वहीं आकर समाप्त करनी पड़ती है। हमने भेड़ाघाट से परिक्रमा उठायी थी, पहिले दिन धनपुरी में आकर रहे। दूसरे दिन धनपुरी से चलकर बसनिया होते हुए अमरकंटक में विश्राम किया। दूसरे दिन की यात्रा पूरी रीवाँ जिले में ही हुई।

यदि नर्मदा किनारे-किनारे पैदल परिक्रमा करते तो कंडापा से अमरकंटक ६४ मील पड़ता है। मानचित्रों के द्वारा धनपुरी से अमरकंटक हमने ६८ किलोमीटर लिखा था। लगभग ७५

किलोमीटर ही होगा। अब आगे आप अमरकंटक के सम्बन्ध में सुनिये।

छप्पय

कंडाकापा चले नदी टेढ़ी कंचनपुर।
नदी देवरी देखि भीमकुंडी संगमवर॥
माँ तैं आकें मिली बानगंगा अति सुन्दर।
नदी बराती मिली घाट दमगढ़ वर मनहर॥
जल प्रपात धारा कपिल, कोटितीर्थ ऋषि तप थलीं।
आइ अमरकंटक गये, रेवाजी जहँतैं चलीं॥



नर्मदा तट के एक घाट का दृश्य।

नर्मदाजी का उद्गम स्थान अमरकंटक

(४)

गतं तदैव मे भयं त्वदम्बु वीक्षितं यदा
मृकण्डुसूनुशौनकासुरारिसेवि सर्वदा ।
पुनर्भवाब्धिजन्मजं भवाब्धि दुःखवर्मदे
त्वदीयपादपंकजं नमामि देवि नर्मदे ॥*

छप्पय

अब तक भटके बहुत शरन तुम्हारी अब आये ।
कितने करे कृतार्थ कृपा करि पार लगाये ॥
सुनी प्रशंसा जननि शरन चरननिकी लीन्हीं ।
भव-भय छेदनि छैंनि तऊ हमने नहिँ चीन्हीं ॥
देवि नर्मदे ! कृपा करि, निज सुतकूँ अपनाइलें ।
सब अपराध बिसारिकें, सेवक सतत बनाइलें ॥

कहावत है ऋषियों के उत्पत्ति स्थान वंश को और नदियों के उद्गम स्थान को देखना नहीं चाहिये । क्योंकि देखने में ये लघु

---

* माँ ! मेरे तो भय उसी समय भाग गये, जब मार्कण्डेय, शौनकादि ऋषियों तथा देवताओं से निरन्तर सेवित आपके जल को जिस समय देख लिया । संसार रूपी समुद्र के दुःखों से विमुक्त करने वाली हे मातेश्वरी नर्मदे ! आपके पादपद्मों में पुनः पुनः प्रणाम है ।

होते हैं, किन्तु इनकी आगे चलकर महिमा अत्यन्त विशाल होती है। सोणभद्र जैसा महानद और नर्मदाजी जैसी महानदी जहाँ से निकली हों, उनके मूल स्थान अमरकण्टक में उनके उद्गम को देखकर आश्चर्य होता है, ये छोटी-सी धारायें जिन्हें सुगमता से बच्चे भी नाँघ सकते हैं, वे नद नदी आगे चलकर कितने विशाल हो सकते हैं।

अमरकण्टक एक छोटी-सी बस्ती है। आज से २५-३० वर्ष पूर्व जब हम अमरकण्टक की यात्रा को शिवरात्रि पर गये थे, तब यह ३०-४० घरों की बस्ती रही होगी। १५०-२०० के लगभग जनसंख्या रही होगी। तब तलक यहाँ पक्की सड़क नहीं बनी थी। हम लोग पण्डरा रोड स्टेशन पर उतरे थे, स्टेशन के समीप ही गोरेला ग्राम है अच्छा बड़ा गाँव है, बाजार है, बहुत-सी दुकानें हैं, डाक घर है, एक अच्छी बड़ी धर्मशाला है, हम लोग धर्मशाला में ही ठहरे थे। यहाँ से अमरकंटक १६ मील पड़ता है। उन दिनों जाने के लिये घोड़े तथा बैलगाड़ियाँ मिलती थीं। जङ्गलों से लकड़ी लाने को ट्रक भी कच्चे मार्ग से आने जाने लगी थीं। हम लोग कुछ दूर ऐसी ट्रक में ही आये थे। गोरेला से लगभग ६ मील दूर पर पकरिया नाम का ग्राम है, प्रायः यात्री पहिले दिन यहीं ठहरते थे। यहाँ भी धर्मशाला है, तालाब है। यहाँ से १० मील आगे अमरकण्टक है। बीच में अमर नाला या आमानाला है। उस समय अमरकण्टक में १०-१२ दुकान रही होंगीं। मेला भी कोई बड़ा नहीं होता था। २५-३० वर्ष में ही आकाश पाताल का अन्तर हो गया। अब तो अमरकण्टक एक अच्छा सर्व साधन सम्पन्न नगर बन गया है। आधुनिक सभी सुख सुविधायें वहाँ प्राप्त हैं। बीसों आश्रम बन गये हैं। अच्छी-अच्छी धर्मशालायें, विश्रामगृह तथा विद्यालय खुल गये। बहुत अच्छा बाजार हो गया है। सहस्रों की वस्ती हो गयी।

यातायात की समस्त सुविधायें हो गयीं। शीतल जलवायु होने के कारण गर्मियों में लोग आकर रहने भी लगे। राजकीय भी बहुत से विभाग खुल गये। अब अमरकंटक छोटा-सा ग्राम नहीं रहा। वह नगर बन गया है। सुनते हैं पहिले यहाँ बासों का वन था। अब भी आस-पास बाँसों के बन हैं। नर्मदाजी किसी बाँस के पिण्डे से निकली थीं। अब तो वहाँ एक बड़ा भारी कुण्ड बना है, जिसके ११ कोने हैं और २६० हाथ की परिधि में है। कुण्ड के चारों ओर परिधि बनी है जिसमें नर्मदाजी, अमरनाथजी, नर्मदेश्वर तथा अमरकण्टकेश्वर के मन्दिर बने हैं। इन मन्दिरों के अतिरिक्त भी छोटे-बड़े बहुत से मन्दिर और भी हैं जिनमें गौरी-शङ्कर, गोरखनाथ, महादेवजी, पार्वतीजी, बालासुन्दरी, घंटेश्वर, रामचन्द्रजी, गौरीशङ्कर, मुरलीमनोहर, एकादशी, रोहिणीदेवी, चर्तुभुजजी आदि के मन्दिर हैं। इस कुण्ड को ही कोटि तीर्थ भी कहते हैं। एक गोमुख है, जिसमें से जल निकलकर कुण्ड में गिरता रहता है। इसी को नर्मदाजी का उद्गम स्थान मानते हैं। पहिले तो जल बहुत गिरता रहता था। अब आलमोनियम के लिये पहाड़ों की चट्टान तोड़ने से, वृक्षों की कटाई से जल बहुत कम हो गया है। इसी प्रकार वृक्ष कटते रहे और पहाड़ की चट्टानें टूटती रहीं तो संभव है जल निकलना बन्द ही हो जाय। इसी कुण्ड में यात्री लोग स्नान करते हैं, इससे जल बहुत ही मैला हो जाता है। पहिले न तो कुण्ड था न मन्दिरों की परिधि ही थी। नागपुर के भोंसला राजा ने यह कुण्ड बनवाया था और रीवाँ के महाराज ने परिधि बनवा दी। इन्दौर की अहल्याबाई ने भी मन्दिर का जीर्णोद्धार कराया था। और भी मन्दिर आदि का निर्माण कराया था।

अमरकण्टक के आस-पास बहुत से तीर्थ स्थान है, यहाँ से कई नदियाँ निकलती हैं। और सब तो स्त्री लिङ्ग नदियाँ हैं, केवल

सौंण (सोन) और दामोदर दो पुलिङ्ग नद हैं। सौंण, नर्मदा, कर-गंगा, गायत्री, सवित्री ये सब अमरकण्टक से ही निकली हैं। यात्री अमरकण्टक में आकर पहिले अमरकण्टक की पंचक्रोशी परिक्रमा करते हैं पहिले पश्चिम दिशा में कपिलधारा जाते हैं यहाँ नर्मदाजी लगभग ८० फुट नीचे पहाड़ से गिरती हैं। चारों ओर परम नयनाभिराम दृश्य है, हरे-भरे वृक्षों से घिरा होने से अत्यन्त ही सुन्दर प्रतीत होता है। नीचे लोग नर्मदाजी के आर-पार चले जाते हैं, जल अधिक नहीं है। जब हम गये थे, तब बहुत से मेला के लिये आने वाले यात्री सिर पर लकड़ियों का गट्ठर लिये चले आ रहे थे, कोई नीचे नर्मदा के किनारे भोजन बना रहे थे। जंगल में मंगल हो रहा था। यह स्थान अमरकंटक कोटि तीर्थ से लगभग चार मील पश्चिम की ओर है।

अमरकंटक से उत्तर की ओर बराती नाला है, घने जंगलों में होकर यह दर्शनीय स्थान है उत्तर दिशा में ही ज्वालेश्वर तीर्थ है। प्राचीन काल में यहाँ बहुत से देवता आकर तपस्या करते थे। उन्हें बली तथा वाणासुर आदि असुरगण कष्ट दिया करते थे। उनकी तपस्या में विघ्न डालते थे। इस पर सब देवताओं ने मिलकर असुरों से युद्ध किया इस युद्ध में देवताओं की पराजय हुई। असुरगण जीत गये। अपनी पराजय से दुखित हुए देवगण ब्रह्माजी की शरण में गये। ब्रह्माजी सभी देवताओं को लेकर शङ्करजी के समीप गये और अपनी पराजय का वृत्तान्त सुनाया। शिवजी ने पहिले तो नारदजी द्वारा वाणासुर को ज्ञान का उपदेश कराया। उसकी स्त्री को मधुमास का व्रत करने को कहा। किन्तु उन्होंने शिवजी के उपदेश की उपेक्षा की। इस पर शिवजी ने विश्वरूप धारण करके वाणासुर के तीनों पुरों को भस्म कर दिया। इस पर वाणासुर दीन होकर शिवजी की शरण आया। तब शिवजी ने अग्नि से उसकी रक्षा की और उसे अभय प्रदान

किया। वाणासुर के जो तीन पुर जले थे, उनमें से एक पुर जलता हुआ यहाँ आकर गिरा था। उसी से ज्वाला नदी उत्पन्न हो गयी। इसीलिये यहाँ के शिवजी ज्वालेश्वर कहलाये। यहाँ पर ज्वाला नदी नर्मदाजी में मिलती हैं। ज्वाला सङ्गम क्षेत्र में भगवान् गौरीशङ्कर सदा सर्वदा विराजमान रहते हैं। यह परम पुण्यप्रद तीर्थ है, यहाँ गायत्री मन्त्र के जप का बहुत माहात्म्य है। यहाँ से पाँच मील लौटकर मार्ग में अक्षयवटों का दर्शन करते हुए माई के बगीचे में आवे।

माई का बगीचा

माई अर्थात् नर्मदा माताजी का यह परम रम्य बगीचा है। यह अमरकंटक से लगभग मील भर दूर है। सड़क बन गयी है, मोटरें जा सकती हैं। हम तो मोटर द्वारा ही गये थे। मेला के समय बहुत से साधु यहाँ आकर रहते हैं। जब हम गये थे तब बहुत से साधु सन्त यहाँ ठहरे थे। स्थायी रहने वाले साधुओं की कुटिया भी हैं। यहाँ नाले में गुलबकावली होती है, जो नेत्रों की परमोषधि है। यहाँ से आगे आग्नेय कोंण में लगभग आधे मील की दूरी पर सोनमूढ़ा स्थान है, यह सोनभद्र नद का उद्गम स्थान है। सोनमूल से ही सोनमूढ़ा बन गया होगा। यहाँ एक छोटा-सा कुण्ड है और साधुओं के रहने की कुटी है, यहीं गुलबकावली की क्यारियाँ हैं। इसकी पत्तियाँ बाँस की छोटी पत्तियों के समान होती हैं। चैत्र के महीने में इनमें फूल आते हैं। बहुत से पुरुष पत्ते ही तोड़ ले जाते हैं। हमारे सामने एक बुढ़िया पत्ते तोड़ रही थी। कुटिया के महात्मा के बार-बार मना करने पर भी वह मानी नहीं। सुनते हैं, यहाँ के जंगलों में कई प्रकार की ओषधियाँ तथा कन्द मूलादि होते हैं। कुण्ड में से एक छोटी-सी धारा बह कर पर्वत के नीचे गिरती है, वहीं से सोनभद्र नद प्रवा-

हित होता है, पचासों हाथ नीचे खड्ड है, वही धारा बहकर आगे जाती है। वहाँ लोहे की छड़े लगाकर रोक कर दी है कि कोई खड्ड में गिर न पड़े। नीचे मध्यप्रदेश के छत्तीसगढ़ का सघन वन है। यहाँ का दृश्य दर्शनीय है, हम बहुत देर तक इस नयनाभिराम दृश्य को देखते रहे। २०-२५ कोस तक यह घना जंगल है, इसकी रमणीयता को देखकर यात्री मुग्ध हो जाते हैं। यहाँ वन विभाग की पक्की सड़क है। उसी सड़क से हम अपनी मोटर द्वारा अमरकंटक आये थे।

सोनभद्र के उद्‌गम स्थान सोनमूढ़ा से दक्षिण दिशा में भृगुकमण्डल नाम का तीर्थ है यह करगंगा का उद्‌गम स्थान है। कहते हैं ये भृगुजी के करमंडन (कमंडलु) से निकली हैं इसीलिये इनका नाम करगंगा पड़ गया है। ये नर्मदाजी में जाकर मिली हैं। इस प्रकार अमरकंटक की पंचक्रोशी की परिक्रमा करके आप कोटितीर्थ अमरकंटक में आ जाइये। पहिले तो ये आस-पास के स्थान घने जंगलों के कारण बहुत ही विकट थे। कोई निश्चित मार्ग नहीं था। जानकार आदमी के साथ लिये बिना यात्रा कठिन थी। अब तो सभी स्थानों के लिये प्रायः सड़कें बन गई हैं। यात्री सुगमता के साथ अकेले भी जा सकते हैं। हम अमरकंटक में फाल्गुन कृष्णा एकादशी (२३ फरवरी सन् १९७९) को पहुँचे थे। दूसरे दिन द्वादशी और तृयोदशी एक हो गयीं थी। उस दिन सभी ने आस-पास के तीर्थों के दर्शन किये। तीसरे दिन (२४ फरवरी) को महाशिवरात्रि का पुण्य पर्व था। उस दिन वहाँ बड़ी भीड़ होती है। सहस्रों नर-नारी दर्शन करने तथा कुंड में स्नान करने आते हैं। वहाँ पंडों ने हमारे लिये विशेष प्रबन्ध कर दिया। फाटक खुलने के पूर्व ही हमें एक दूसरे छोटे मार्ग से भीतर कर दिया था। जिसमें हम सबने विधि विधान पूर्वक शङ्करजी का अभिषेक किया। वैदिक मन्त्रों से जब अभिषेक हो

रहा था, तब बड़ा ही आनन्द आया वहाँ की छटा निराली थी। कुंड का जल यद्यपि सहस्रों नर-नारियों के स्नान करने के कारण मटमैला हो गया था। किन्तु भक्ति भावना में तो कुछ मैला दीखता ही नहीं यथार्थ में भक्ति अन्धी ही होती है। दोपहर तक स्नान पूजन का कार्य समाप्त करके प्रसाद पाने के अनन्तर आज ही हमें दक्षिण तट की नर्मदा परिक्रमा आरम्भ करनी थी, अतः सभी अपने-अपने निवास स्थानों पर आ गये। परिक्रमा प्रारम्भ करने के पूर्व पहिले आप नर्मदाजी की उत्पत्ति की कथा सुन लीजिये।

नर्मदाजी की उत्पत्ति की कथा

नर्मदाजी की उत्पत्ति की भिन्न-भिन्न पुराणों में भिन्न-भिन्न कथायें हैं। कहीं तो बताया है, सृष्टि के आदि में शङ्करजी के ताण्डव नृत्य के समय शिवजी के श्वेद से नर्मदाजी उत्पन्न हुई। वे ब्रह्मलोक में रहने लगीं। तब तक पृथ्वी पर कोई नदी नहीं थी। देवताओं ने शिवजी से नर्मदा को पृथ्वी पर भेजने की प्रार्थना की। तब शिवजी ने कहा—नर्मदा के वेग को कौन धारण करेगा ? इस पर विन्ध्य पर्वत के पुत्र मेकल ने उनके वेग को धारण करना स्वीकार किया। इसी से ये मेकलसुता भी कहलाती हैं। विन्ध्य पुत्र मेकल के त्रिकूटाचल, ऋक्ष्यपर्वत ये नाम भी हैं। नर्मदाजी का माहात्म्य तो प्रायः सभी पुराणों में आता है, किन्तु स्कन्धपुराण और वायुपुराण में तो रेवा खण्ड ही हैं। वायुपुराण की कथा है। शङ्करजी और वायुदेव का सम्वाद है, उसे ही मार्कण्डेय मुनि ने युधिष्ठिर को सुनाया है।

वनवास के काल में पांडव अमरकंटक में आये। वहाँ उन्हें मार्कण्डेय महामुनि के दर्शन हुए। धर्मराज युधिष्ठिर ने उनसे भगवती नर्मदाजी की उत्पत्ति की कथा पूछी। इस पर महामुनि

मार्कण्डेयजी ने धर्मराज को नर्मदाजी की उत्पत्ति इस प्रकार बताई।

आदि सत्ययुग में शिवजी समस्त प्राणियों से अदृश्य होकर दश सहस्र वर्षों तक ऋष्यपर्वत-विन्ध्याचल-पर तपस्या करते रहे। उसी समय शङ्करजी के शरीर से श्वेत रंग का श्वेद निकलने लगा। वह श्वेद पर्वत पर बहने लगा। उसी से एक परम सुन्दरी कन्या उत्पन्न हो गई। वह कन्या सुन्दरी होने के साथ परम साधन सम्पन्ना और तपस्विनी थी। उसने उसी पर्वत पर शङ्करजी के सम्मुख ही एक पैर पर खड़े होकर घोर तप किया। उसके तप से प्रसन्न होकर शङ्करजी ने कहा—"बेटी! तू जैसा चाहे, जितने चाहे वर माँग ले।"

तब नर्मदाजी ने कहा—प्रभो! यदि आप प्रसन्न हैं तो मुझे इतने वर दीजिये।

१—पृथ्वी पर मैं अमर हो जाऊँ।

२—जो जीव मेरे में स्नान करें वे पापों से रहित हो जावें।

३—जैसे उत्तर में भागीरथी गङ्गा हैं, वैसे ही दक्षिण में मैं हो जाऊँ।

४—समस्त तीर्थों के स्नान का फल मेरे जल में स्नान करने से हो जाया करे।

५—मेरे दर्शनादि से मुक्ति प्राप्त हो जाय।

६—आप सदा सर्वदा पार्वती सहित मेरे जल में निवास किया करें।

७—मेरे जल से जिस पाषाण का स्पर्श हो जाय, वह आपका रूप हो जाया करे। नर्मदेश्वर शिव।

जब नर्मदाजी ने इस प्रकार के वर माँगे, तब शिवजी ने तथास्तु कहकर ये सब वर दिये। इतना ही नहीं शङ्करजी ने यह

भी कहा—"तेरे उत्तर तट पर बसने वाले सुकृति मेरे लोक में और दक्षिण तट पर रहने वाले पितृलोक में जाया करेंगे। तुम विन्ध्यपर्वत पर जाकर निवास करो वहाँ जगत् का कल्याण किया करना।" तब नर्मदाजी गुप्त भाव से आकर विन्ध्यपर्वत पर प्रकट हुईं जो कलिङ्ग देश में है। (पहिले अमरकंटक तक आन्ध्र प्रदेश की सीमा थी) नर्मदाजी के त्रिभुवन सुन्दर स्वरूप को देखकर सभी देवता उनसे विवाह करना चाहते थे, किन्तु कोई भी उनकी महिमा का पार न पा सका तब शिवजी ने उन्हें समुद्र को सौंप दिया। समस्त नदियों में नर्मदाजी की ही ऐसी महिमा है, जो इनके साथ इनके पिता का भी सर्वदा नाम लिया जाता है। सब लोग यही कहते हैं—"नर्मदे हर! नर्मदे हर!!" नर्मदाजी के किनारे पहिले तो बहुत से त्यागी तपस्वी महात्मा रहते थे। अब भी कहीं-कहीं अच्छे साधु सन्त साधक मिल जाते हैं, हम तो बरफानी बाबा के आश्रम में ठहरे थे, जो अयोध्याजी के श्री रामानन्दी वैष्णव वैरागी हैं। कुछ लोग महात्मा मोहनदासजी के मोहन निवास में ठहरे थे। ये भी श्री रामानन्दी वैष्णव सन्त हैं, इन्होंने भी नर्मदाजी की कई परिक्रमायें की हैं, अमरकंटक में और भी बहुत से सन्तों के आश्रम हैं। बहुत से अमरकंटक से कुछ दूर भी रहते हैं। समयाभाव से हम सबके दर्शनों को नहीं जा सके।

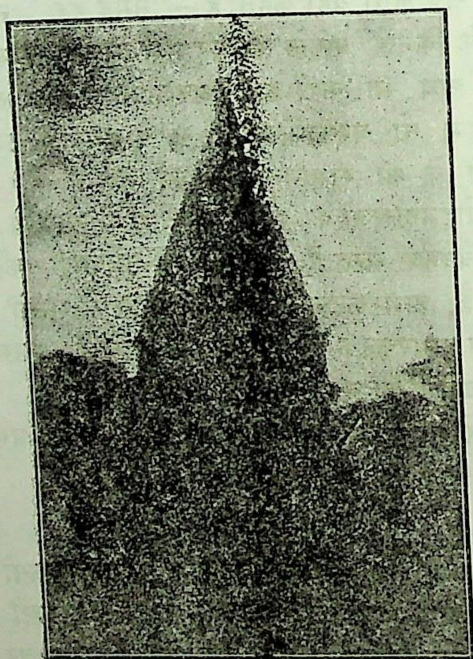
मध्यान्होत्तर हमने शिवरात्रि का पूजन करके प्रसाद पाकर डिँडौरी के लिये प्रस्थान किया।

छप्पय

मेकल हैं सुत विन्ध्य जहाँ तैं रेवा निकसीं।
अति लघु धारा तहाँ मिलीं सरिता बहु विकसीं॥
अति सुन्दर वन विकट अमरकंटक तीरथ वर।
परिकम्मा नर करें पञ्चक्रोशी की सुखकर॥

कपिल धार पच्छिम दिशा, जल प्रपात मनहर परसि ।
ज्वालेश्वर उत्तर दिशा, मातु बगीचा पूर्व दिसि ॥

अग्निकौणमें सोनभद्र उद्गम अति सुन्दर ।
वन, परवत, नद, नदी सुघर मन्दिर वर मनहर ॥
पतरी-सी बहि धार गिरै नीचे परबततैं ।
दृश्य मनोहर परम सुशोभा सघन तरुनितैं ॥
दच्छिनमें भृगु कमण्डलु, भृगु मुनि तप थल सघन वन ।
करगङ्गा उद्गम परम, परिकम्मा करि विमल मन ॥



नर्मदा तट के एक घाट का दृश्य

अमरकण्टक से डिँडौरी

(५)

अलक्षलक्षकिन्नरामरासुरादि पूजितम्
सुलक्षनीरतीरधीरपक्षिलक्षकूजितम् ।
वसिष्ठशिष्टपिप्पलादकर्दमादि शर्मदे
त्वदीयपादपङ्कजं नमामि देवि नर्मदे ॥*

छप्पय

माँ! तुम्हरो यश शुभ्र विश्वमें सब थल छायो।
श्वेत कमल वर लिये अङ्क वीणा सरसायो ॥
मुक्ता सम वर दन्त पंक्ति मुसकान श्वेत वर।
श्वेत वस्त्र वर धारि श्वेत शृङ्गार मनोहर ॥
शिरपै श्वेत किरीट शुभ, जलधारा तव श्वेत है।
गिरिवर वन पावन करन, सकल श्वेत तव क्षेत्र है ॥

तीर्थ यात्री को पूजन, अर्चन, वन्दन, प्रणाम तथा परिक्रमा करके स्थान देवताओं से अनुमति लेकर तब आगे की यात्रा आरम्भ करनी चाहिये। प्रत्येक तीर्थ के पृथक्-पृथक् स्थानीय

---

* जो दिखाई नहीं देते ऐसे लाखों किन्नरों, देवताओं तथा असुरों आदि से पूजित प्रत्यक्ष में आपके जल के किनारे निवास करने वाले लाखों पक्षियों से कूजित, जो आपके चरण कमल हैं, वे वसिष्ठ, श्रेष्ठ पिप्पलादि तथा कर्दमादि ऋषियों को सुख देने वाली माता हम उनमें पुनः-पुनः प्रणाम करते हैं।

देवता होते हैं, प्रत्येक ग्राम के भी ग्राम देवता होते हैं, सबके प्रति आभार प्रदर्शित करने से यात्रा निर्विघ्न हो जाती है।

हम लोगों ने दो रात्रि अमरकंटक में विश्राम किया। तीसरे दिन (२५ फरवरी) को महाशिवरात्रि थी, उस दिन शिव जी की पूजा करके, प्रसाद पाकर दक्षिण तट की परिक्रमा के लिये चल दिये। नर्मदाजी की परिक्रमा वाले यात्री पार नहीं करते। अतः हमारी मोटरें तो उत्तर तट से पुल को पार करके कपिल धारा की ओर पहुँच गयीं। सब लोग उत्तर तट से पैदल वहाँ तक गये। हम लोग जीप से जंगल झाड़ियों में होते हुए मोटरों के समीप पहुँच गये। आज हमें डिँडौरी ही पहुँचना था, अमरकंटक से डिँडौरी तक पक्की सड़क है। लगभग सड़क से ६९-७० किलो मीटर डिँडौरी है, अतः हमारे लिये दो घण्टे का मार्ग था। विश्व हिन्दु परिषद् के प्रान्त प्रचारक जी..........आगे-आगे जाकर हमारे ठहरने, खाने-पीने तथा स्वागतादि का प्रबन्ध करने पहिले ही पहुँच जाते थे। अतः हम लोगों को किसी भी प्रकार की असुविधा नहीं होती थी। हमारी बसें कभी आगे कभी पीछे हो जातीं। हमारी गाड़ी के साथ तो टण्डनजी की ही गाड़ी चलती थी। हमारी गाड़ी जा रही थी सड़क के दोनों ओर कभी जङ्गल आ जाते कभी हरे-भरे खेत आ जाते थे। जङ्गल में कुछ लोग पशुओं को चरा रहे थे। एक पाँच-छै वर्ष के बालक ने जो पशुओं को चरा रहा था, दूर से हमारी मोटर देखकर अत्यंत ही भक्तिभाव से दोनों हाथों को जोड़कर सिर झुकाकर नेत्र बन्द कर श्रद्धा से प्रणाम किया। रामराज ने कहा—देखिये, महाराज! छोटे से बच्चे में कितनी श्रद्धा है। यह माता-पिता आदि की शिक्षा का प्रभाव है। बाल्यकाल से ही उन्हें सिखाया जाता है, साधु महात्माओं को प्रणाम करना चाहिये।

लगभग दो ढाई घण्टे में हम दिन रहते ही डिँडौरी पहुँच

गये। वहाँ हमारे स्वागत-सत्कार का पहिले से ही प्रबन्ध था। यहाँ एक संघ की ओर से सरस्वती शिशु मन्दिर भी है। डिँडौरी मण्डला जिले की तहसील है, अच्छा छोटा-सा नगर है। शिव जी के दो तीन मदिर हैं, नर्मदाजी नीचे ही बहती हैं, शिवरात्रि होने के कारण आस-पास के बहुत से नर-नारी नर्मदा स्नान करने आये थे। छोटा-मोटा मेला ही लगा था। वहाँ के संघ के स्वयं सेवकों ने, शिशु मन्दिर के विद्यार्थियों ने तथा नागरिकों ने डेरा तम्बू लगाकर कुछ ही देर में हमारा सब प्रबन्ध कर दिया। सबके लिये फलाहार की सुन्दर व्यवस्था थी। रात्रि में सभा हुई। रासलीला हुई। शिशु मन्दिर के लिये सभी यात्रियों ने यथाशक्ति दान दिया। नागरिकों में अत्यन्त ही उत्साह था। वे चाहते थे हम एक दो दिन और रहें, किन्तु हमारा तो कार्यक्रम निश्चित था। अतः रात्रि में विश्राम करके दूसरे दिन शीघ्र ही चलने की तैयारी कर दी।

१—यदि अमरकंटक से पैदल परिक्रमा करते तो सबसे पहिले अमरकंटक से आगे दक्षिण तट पर कबीर चौतरा पड़ता है। यह स्थान अमरकंटक से ३ मील है। कहते हैं यहाँ पर कुछ दिनों तक कबीरदासजी ने रहकर आत्मचिन्तन और तपस्या की थी। स्थान बहुत रमणीक सघन वृक्षों से घिरा हुआ है, जल की विपुलता है। यहाँ तक रीवाँ जिला है, इसके आगे मण्डला जिला आ जाता है इसके समीप ही विलासपुर जिले की सीमा है। रीवाँ, मण्डला और विलासपुर जिलों की सीमायें यहाँ से पास में ही पड़ती हैं।

२—कबीर चौरा से ६ मील मण्डला जिले में करमण्डल स्थान है। हम अमरकंटक पंचक्रोशी में भृगुकमण्डलु स्थान का वर्णन कर चुके हैं जहाँ भृगुजी के कमण्डलु से करगङ्गा नदी निकली

है। उसी करगङ्गा नदी का यहाँ पर नर्मदा के साथ संगम हुआ है; नर्मदाजी यहाँ से चार मील की दूरी पर हैं।

३—करगङ्गा से चार मील की दूरी पर करंजिया स्थान है, यह ग्राम डिँडौरी की पक्की सड़क पर ही है। यह मुण्डामहारण्य कहलाता है। वनवासी गौंड़ जातियाँ यहाँ के अरण्यों में रहती हैं। ईसाइयों ने यहाँ गौंड़ सेवा संघ नाम की संस्था खोल रखी है, जिसका उद्देश्य वनवासियों को ईसाई बनाना है। अच्छा ग्राम है, डाकघर है। यहाँ से भी नर्मदाजी लगभग ४ मील ही होंगी।

४—करंजिया से ३ मील आगे कण्वासंगम है। यहाँ कण्वा नदी श्रीनर्मदाजी में आकर मिली हैं। परम पवित्र तीर्थ माना जाता है।

५—कण्वा संगम से ४ मील तुडार संगम नाम का तीर्थ स्थान है, यहाँ तुडार नदी आकर नर्मदाजी में मिली हैं। बोंदर ग्राम से यह लगभग चार मील है। यहाँ से भी नर्मदाजी लगभग पाँच मील की दूरी पर हैं।

६—तुडार संगम से ६ मील दूर पर सरसुवा नामक ग्राम है, यहीं पर सिवनी नदी और नर्मदाजी का संगम है, नर्मदाजी यहाँ से ३ मील हैं। डिँडौरी की पक्की सड़क पर सिवनी नदी का पुल है।

७—सरसुवा से ६ मील लोटी टोला है, नर्मदाजी यहाँ से तीन मील हैं, यहाँ भी सड़क पर एक छोटा-सा पुल है।

८—लोटी टोला से आगे ५ मील गाड़ा सराई ग्राम है, इसके पास चिकरार नदी का संगम है, यहाँ से पाँच मील आगे।

९—बोंदर नामक ग्राम है। सड़क के तट पर है नर्मदाजी यहाँ से ४ मील हैं।

१०—बोंदर ग्राम से ६ मील की दूरी पर कुक्कुर मठ है यहाँ पर मचरार या गोमती नदी का संगम है। यहाँ गोमती गङ्गा के किनारे बहुत प्राचीन ऋणमुक्तेश्वर नाम का शिव मन्दिर है। कहते हैं, यह आद्यशंकराचार्यजी के द्वारा बनवाया हुआ मंदिर है। इस शिवालय के सम्बन्ध में एक और भी लोक कथा प्रसिद्ध है।

इस ग्राम में एक बंजारा रहता था। उसके पास एक बहुत ही प्यारा कुत्ता था। पहिले लोग अपनी कोई प्रिय वस्तु गहने रखकर ऋण ले लेते थे। जब तक उस वस्तु को छुड़ा न लें तब तक वे सुख से नहीं बैठते थे। अपने जीवन में न भी छुड़ा सकते तो अपने पुत्र पौत्रों से उसे छुड़ा लेने को कह जाते। राजस्थान में अपनी मूँछ का एक बाल गिरवी रखकर ऋण लेते थे। जब तक उस मूँछ के बाल को छुड़ा न लें तब तक उन्हें चैन नहीं पड़ता था। कोई यह न कह सके कि इसका या इसके बाप की मूँछ का बाल हमारे यहाँ गिरवी रखा है। सात पीढ़ी तक उसे छुड़ाने का प्रयत्न करते।

हाँ, तो उस बंजारे ने महाजन से ऋण लिया और उसके बदले अपने प्यारे कुत्ते को गिरवी रख दिया। कुत्ता महाजन के यहाँ रहने लगा। एक दिन महाजन के यहाँ चोरी हुई। चोर लोग चोरी के माल को एक गुप्त स्थान में छिपा गये। कुत्ता चोरों के पीछे-पीछे जाकर उस स्थान को देख आया। प्रातःकाल होते ही कुत्ता महाजन के कपड़े को मुँह से पकड़कर उस स्थान पर ले गया। वहाँ महाजन का चुराया हुआ सब धन मिल गया। इससे कृतज्ञतावश उसने कुत्ते को ऋण मुक्त करके उसके स्वामी

बंजारे के पास भेज दिया और सब वृत्तान्त लिखकर चिट्ठी उसके गले में बाँध दी।

बंजारे ने जब देखा कुत्ता महाजन के यहाँ से भाग आया है तो उसने उसमें डण्डा मारा। इससे कुत्ता मर गया। पीछे जब उसके गले में बँधी चिट्ठी पढ़ी तब उसे अत्यन्त पश्चात्ताप हुआ। उसी के प्रायश्चित्त स्वरूप उसने अपने कुक्कुर के नाम से ऋणमुक्तेश्वर शिवजी की स्थापना की। लोगों का कहना है कि रात्रि के समय एक लाल आँख वाला सर्प आता है, वह शंकरजी की मूर्ति से लिपटकर चला जाता है। यह स्थान डिँडौरी से ९ मील पीछे पड़ता है।

११—कुक्कुर घाट से आगे ४ मील विछिया ग्राम है इसी के पास कोतराल नदी का संगम है।

१२—विछिया से ५ मील आगे ही डिँडौरा मण्डला जिले की तहसील है। अमरकंटक से यहाँ तक नर्मदा किनारे-किनारे पक्की सड़क है। यहाँ नर्मदाजी पर पक्का पुल है। इस पर से जबलपुर को पक्की सड़क जाती है। यहाँ आधुनिक सुविधा के सभी साधन हैं। सरकारी बगीचा है, डाकघर, थाना, विश्रामघर, तहसील सभी हैं। यहीं हम रात्रि पर रहकर दूसरे दिन महाराजपुर के लिये चल दिये। यहाँ से अमरकंटक ५७ मील है।

छप्पय

परिकम्माकूँ चलो दिशा दच्छिन अति सुखकर।
पहिले परै कबीर चौंतरा करमंडल वर॥
फिर करंजिया करव तुडार सुरसुवा सङ्गम।
लोटी टोला गड़ा सराई, बोंदर अनुपम॥
ऋणमुक्तेश्वर कुकुरमठ, सङ्गम वर मचरार को।
विछिया ह्वैकें डिँडौरी, प्रथम दिवस थल वास को॥

——

डिँडौरी से महाराजपुर

[६]

सनत्कुमार नाचिकेत कस्यपात्रिषट्पदै-
धृतं स्वकीयमानसेषु नारदादि षट्पदैः।
रवीन्दुरन्ति देवराज कर्मदे शर्मदे
त्वदीयपादपङ्कजे नमामि देवि नर्मदे ॥*

छप्पय

जगकी उलटो धार मातु तुम उलटी बहिकें।
काटो कठिन कलेश जगतके सब कछु सहिकें॥
जनम जनमके पाप मातु तुम सबके लेओ।
पावन करिके तुरत मोक्ष सुख जगकूँ देओ॥
धार अमरकंटक चली, सब थलकूँ पावन करत।
भृगु मुनि क्षेत्र भड़ौंच में, रेवासागरमें मिलत॥

संसार में वे पुरुष धन्य हैं, जो जनता जनार्दन की सेवा में सदा संलग्न रहते हैं। प्राचीनकाल में ऐसी परिपाटी थी कि

---

* चन्द्र, सूर्य, रन्तिदेव तथा इन्द्रादि देवताओं को सुख प्रदान करने वाली हे नर्मदे माताजी! आपके चरण जो कमल रूप हैं उनके पराग के लोभी भ्रमर रूप जो सनत्कुमार, नाचिकेत, कश्यप, अत्रि तथा नारादादि मुनि हैं, जिन्हें वे अपने मन में धारण करते रहते हैं, आपके उन्हीं पादपद्मों में मैं पुनः-पुनः प्रणाम करता हूँ।

तीर्थयात्री पैदल ही यात्रा किया करते थे। साधु-महात्माओं के लिये तो सर्वत्र अन्नक्षेत्र लगे रहते थे। जो गृहस्थी तीर्थ-यात्री होते थे, वे सायंकाल में जिस ग्राम में, जिस घर में, पहुँच जायँ उस घर के लोग जब तक अतिथि रूप में आये हुए तीर्थयात्री हैं, उन्हें भोजन कराये बिना वे स्वयं भोजन नहीं करते थे। हमारे यहाँ अतिथि किसी जाति का, किसी वर्ण आश्रम का हो, उसे विष्णु का रूप माना जाता था। बिना जाति कुल, वर्ण पूछे पहिले उसे भोजन कराया जाता था, तब फिर और बातें पूछी जाती थीं। इसीलिये हमारे यहाँ मातृदेवोभव, पितृदेवोभव, अतिथि देवोभव" कहा जाता था। माता, पिता तथा अतिथि की देववत् पूजा करो। नर्मदा परिक्रमा में पहिले सर्वत्र अन्न के सदा-वर्त लगे रहते थे, सभी यात्रियों को चाहें वे गृहस्थ हो, साधुसन्त हों सभी को बिना भेदभाव के सदावर्त दिया जाता था। अब काल के प्रभाव से बहुत से सदावर्त बन्द हो गये हैं, फिर भी नर्मदा किनारे अभी भी बहुत से सदावर्त लगे हुए हैं। बहुत से लोग तो सदावर्त के ही लोभ से परिक्रमा करते रहते हैं। हमने सदावर्त तो नहीं लिये, किन्तु स्थान-स्थान पर, ग्राम नगर वासियों ने हमारा इतना अधिक स्वागत सत्कार किया कि यात्रा भर में हमें एक दो स्थान को छोड़कर कहीं भी भोजन नहीं बनाना पड़ा। सर्वत्र पहिले से हमें सुन्दर-से-सुन्दर बना हुआ भोजन तैयार मिलता।

फाल्गुन कृष्णा अमावास्या (२६ फरवरी) को हम डिँडौरी से चले। ग्रामवासियों को पहिले से ही हमारे आगमन की सूचना मिल गयी थी, अतः सभी ग्रामों में लोग मञ्च बनाये एक-त्रित होकर हमारी प्रतीक्षा कर रहे थे। रामपुरी, सक्का, हर्राटोला आदि कई ग्रामों का स्वागत सत्कार स्वीकार करते हुए हम चाबी नामक ग्राम में पहुँचे। हर्राटोला से यह ग्राम मंडला की

पक्की सड़क के किनारे पर है, पास में ही बढ़नेर नदी है। यहाँ से नर्मदा जी सात मील की दूरी पर हैं। यहाँ बहुत से स्त्री-पुरुष हमारे स्वागत को आये। एक महिला ने मेरे पैर छुए। किसी ने बताया—"यह माना भैया (पं० कृष्णकुमार जी मिश्र) की लड़की है। मैंने कहा—अरे, तब तो यह हमारी लड़की ही है। उसे श्रीफल–नारियल–दिया। हमारी प्राचीन कितनी सुन्दर आदर्श परम्परा है। अपने ग्राम की किसी भी जाति की लड़की हो, हम उसे अपने पुत्री ही मानते थे। ग्राम का कोई सुनार है दूसरे ग्राम में वह अपने व्यवसाय से जाता था। उस ग्राम में अपने ग्राम की कोई भी लड़की हो, उस ग्राम का पानी भी नहीं पीते थे, इस ग्राम में हमारी लड़की विवाही है। लड़की कितने भी धनिक के घर में विवाही हो, जब सुनती हमारे ग्राम का सुनार आया है तो सबसे कहती हमारे चाचा आये हैं। गाँव में भङ्गी चमार सभी से भाई, चाचा ताऊ का सम्बन्ध मानते हैं। वह सुनार उस लड़की को चार पैसा देता। लड़की बड़े प्रेम से हाथ पसार कर लेती। हमारे चाचा ने यह दिया है।

कानपुर जिले के पं० बाला प्रसाद जी भागवत के बड़े विद्वान् थे, वे बड़ौदा जिले के बेमार ग्राम में एक बगीचा लगाकर रहते थे बहुत से उनके शिष्य भी हो गये थे। उनके पाँच पुत्र थे, सबसे बड़े पं० कृष्ण कुमार, (माना भैया) उनसे छोटे गोविन्द प्रसाद जी डिप्टी कलेक्टर थे, उनसे छोटे पं० व्रजकिशोर, (राजा भैया) उनसे छोटे कन्हैयालाल उनसे छोटे एक और थे। पं० बालाप्रसाद जी साधु प्रकृति के बड़े विरक्त थे। उन्होंने उस बगीचे को अपने किसी भी पुत्र को न देकर डाकौर जी के रणछोड़ राय के नाम कर दिया था। उनके परलोक वास के अनन्तर पं० व्रजकिशोर जी (राजाभैया) मेरे पास आकर रहने लगे। फिर कृष्णकुमार जी भी आ गये। वे गायक थे, उनका गला बड़ा सुरीला और तीव्र था।

वे ही हमारे भागवत चरित के सर्वप्रथम प्रधान व्यास बने। उन्होंने छप्पय की सुन्दर लय निकाली। उसी लय में आज तक हमारे सब व्यास गाते हैं। राजा भैया भागवत के विद्वान् हैं। फिर क्रमशः सभी भाई मेरे पास आने लगे। तब तीन ही शेष हैं कृष्णकुमार परलोकवासी बन गये, चाभी में उन्हीं की पुत्री विवाही थी। उसने पिता की भाँति ही हमारा आदर किया। भारतीय संस्कृत में पुत्री का कितना आदर है, उसे लक्ष्मी मानकर पैर पूजते हैं। वर को विष्णु स्वरूप समझकर कन्या का दान करते हैं, फिर ग्राम भर के लोग सगे सम्बन्धी बिना कुछ खाये वर-वधू के पैर पूजते हैं, कन्या दान देते हैं यथा शक्ति द्रव्य अर्पण करते हैं। जब भी आती है, तब उसे देते हैं, उसके घर जाते हैं तब देते हैं, जीवन भर देते ही रहते हैं। कन्या के घर का पानी तक नहीं पीते कितनी उच्च भावना है।

जगन्नाथपुरी के महाराज आखेट को कहीं गये। एक ग्राम में प्यास लगी। मन्त्री से कहा—"कूए से पानी खींच लाओ।" मन्त्री पानी खींचने लगा। तभी एक भंगिनि लड़की ने महाराज को प्रणाम करके कहा—"ताऊजी! आप यहाँ कहाँ?"

महाराज ने पूछा—"बेटी! तू कौन है?"

उसने कहा—"महाराज! आपके महल में जो भंगिनि टहल करती हैं, मैं उसी की लड़की हूँ।"

महाराज ने मन्त्री ने कहा—"अरे, भाई! इस गाँव में तो हमारी लड़की विवाही है। इस गाँव का पानी नहीं पीना है।" कितनी बड़ी सहृदता है।

इसी प्रकार कश्मीर के महाराज की एक कथा है। वे वेष बदलकर प्रजा में घूमा करते थे। एक दिन साधारण ग्रामीण का वेष बनाये घोड़े पर आ रहे थे। एक भंगी ने पूछा—श्रीनगर का मार्ग कौन है?

महाराज ने पूछा—"वहाँ किसके यहाँ जाना है ? उसने भंगी का नाम बताया। वह महल का ही भंगी था।" महाराज ने कहा—मेरे साथ चलो। तुम थक गये होगे, आओ घोड़े पर बैठ लो।" उसने कहा—"मैं घोड़े पर चढ़ना नहीं जानता।"

महाराज ने कहा—"तुम चढ़ लो मैं लगाम पकड़े चलूँगा।" महाराज के बहुत आग्रह से वह घोड़े पर चढ़ गया। महाराज घोड़े की लगाम पकड़े चलने लगे। महल के समीप पहुँचे तो उसकी सास भंगिनी खड़ी थी। वह इस दृश्य को देखकर पछाड़ खाकर गिर पड़ी और रोते-रोते बोली—"हाय ! महाराज ! सरकार !" यह पाप क्यों चढ़ा रहे हैं ?"

महाराज ने कहा—"चुप रह। तेरे दामाद हैं तो क्या मेरे दामाद नहीं ? अपने दामाद का सभी आदर करते हैं।" अब ऐसी भावना कहाँ रही ? इन तथा कथित सुधारकों ने सब गुड़ गोबर कर दिया। सबमें द्वेष का अंकुर उत्पन्न कर दिया।

पहिले मुसलमानी काल में गावों का नीलाम हुआ करता था। लोग १०।२०।५० गाँव ले लेते। उनका लगान बादशाह के यहाँ प्रतिवर्ष दे आते थे। ऐसे ही कई गाँव के भूस्वामी एक तगा चौधरी थे, मेरठ जिले के पिलरतुआ ग्राम के पास के थे। वे दो तीन बैलगाड़ियों में रुपया लेकर औरंगजेब को लगान देने जा रहे थे। रात्रि भर चलकर प्रातःकाल गाजियाबाद के समीप पहुँचे। वहाँ नित्यकर्म से निबट रहे थे कि कुछ चमारों की स्त्रियाँ चौमुखा दीपक लिये गाती बजाती आईं। समीप आकर उन्होंने कहा—"अरे, ये नहीं हैं।"

चौधरी जी ने पूछा—"क्या बात है ?"

उन्होंने बताया। आज हमारी लड़की का विवाह है, कल ही हमारे भाई भात लेकर आने वाले थे, वे कल नहीं आये। आज

आपकी गाड़ियों को देखकर हमें भ्रम हो गया, वे ही आये हैं। क्षमा करें हमसे भूल हो गयी।

चौधरी जी ने पूछा—"कौन से गाँव से आने वाले थे? गाँव का नाम सुना तो वह गाँव उनके पास में ही था। बोले—"कोई बात नहीं। लड़की हमारे गाँव की है हम ही भात भरेंगे।"

तब सब स्त्रियाँ उन्हें ही गाजे-बाजे के साथ ले गयीं। जितना रुपया लगान के लिये लाये थे, सब भात में दे दिया।"

खाली हाथ बादशाह के यहाँ पहुँचे। कोषाध्यक्ष हिन्दु था। चौधरी जी ने सब घटना बताकर कहा—"इस वर्ष हम लगान न दे सकेंगे, अगले वर्ष दोनों ही वर्षों का ले आवेंगे।"

कोषाध्यक्ष ने कहा—"यह मेरी सामर्थ्य के बाहर है, आप बादशाह सलामत से प्रार्थना करें।" यह कहकर वह उन्हें बादशाह के समीप ले गया। सब सुनकर बादशाह ने कहा—"कोई बात नहीं। रुपया लड़की के भात में दिया। लड़की जैसी आपकी वैसी ही मेरी। जाइये अब रुपया देने की कोई आवश्यकता नहीं।"

यही हमारी भारतीय संस्कृति थी। गाँव की लड़की पूरे ग्राम की लड़की मानी जाती थी। जब हम नर्मदा परिक्रमा के सम्बन्ध में जबलपुर आये थे। तो हम पर बहुत से नारियल चढ़े थे। जबलपुर में प्रयाग की बहुत-सी लड़कियाँ विवाही हैं। हमने कहा—हमारे यहाँ की जितनी लड़कियाँ हैं, सबको एक-एक नारियल सवा-सवा रुपया देंगे। सबको दिया उनमें समाज कल्याण विभाग की मन्त्री जय बनर्जी भी थीं।"

एक हमारे परम भक्त श्री हिम्मत सिंह जी माहेश्वरी थे। वे मणिपुर में उपराज्य पाल थे। हमारे प्रति उनकी अनन्य श्रद्धा थी। उनकी लड़की जबलपुर के सुप्रसिद्ध नेता सेठ गोविन्ददासजी के पुत्र को विवाही थी। वे भी मध्यप्रदेश सरकार में मन्त्री थे।

सेठ गोविन्ददास जी के पिता राजा गोकुलचन्दजी मध्यप्रदेश के बहुत नामी राजा थे। लगभग ५०० गाँवों के राजा थे, जबलपुर में उनका महल दर्शनीय है। सीता को भी मैंने नारियल रुपया दिया। तब उसकी जिठानी स्नेह का कोप दिखाती हुई बोली—"महाराज! आप सब अपनी छोटी बेटी को ही देते हैं, बड़ी बेटी को भूल ही जाते हैं।"

मुझे यह सुनकर बड़ा हर्ष हुआ। संकोचवश मैंने नहीं दिया था जब उसे दिया तो दोनों हाथ पसार कर उसने बड़े अनुराग से वह तुच्छ भेंट स्वीकार की।

अरे, मैं तो भटक गया। कहाँ नर्मदा परिक्रमा का वर्णन कर रहा था। कहाँ सामाजिक सम्बन्ध के गीत गाने लगा। यह तो गंगाजी के गैल में मदार के गीत के समान हुए। अस्तु हम चाबी ग्राम से गिठोरी होते हुए ८ मील महोगाँव में आये। यहाँ से भी नर्मदा ५ मील पड़ती हैं। बढ़नेर नदी के किनारे यह ग्राम है। यहाँ से दो मील दूर पर्वत पर जमदग्नि ऋषि की कामधेनु का स्थान है। यहाँ का हृदय बड़ा ही मनोहर है। महोगाँव से ९ मील सड़क पर ही देवगाँव है। यहीं बढ़नेर नदी का संगम है। जमदग्नेश्वर शिवजी का मन्दिर है। यहाँ मकर संक्रान्ति पर मेला लगता है। यहाँ नर्मदा जी पर पक्का पुल है, मंडला की पक्की सड़क उस पार गयी है। देवगाँव से रामनगर ९ मील है। गढ़ा-मंडला की इतिहास प्रसिद्ध महारानी दुर्गावती से पाँचवी पीढ़ी में हृदयशाह नाम के राजा हुए। उन्होंने ही रामनगर को अपनी राजधानी बनायी। उन्हीं का बनवाया हुआ किला यहाँ जीर्ण-शीर्ण अवस्था में पड़ा हुआ है पहिले इस प्रदेश में गौंड़ राजाओं का ही आधिपत्य था। यहाँ के एक शिलालेख में गौंड़ राजाओं की ५२ पीढ़ियों का उल्लेख है। गाँव बड़ा है प्रति मंगल को बाजार भी लगता है।

रामनगर से ६ मील दूर पर सीतारपटन स्थान है यहाँ सुरपन नदी का संगम है। यहाँ वाल्मीक ऋषि का आश्रम बताया जाता है। कहते हैं—यहाँ सीताजी ने ब्राह्मणों को भोजन कराया था। वे पत्तलें काला पहाड़ के रूप में परिणत हो गयीं। स्थान रमणीक है, यहाँ कार्तिकी पूर्णिमा को प्रतिवर्ष बड़ा मेला लगता है। यहाँ भोजन परोसते समय सीताजी रपट पड़ी थीं। इसीलिये इसका नाम सीता रपटन पड़ा गया।

सीतारपटन से लगभग ५ मील की दूरी पर मधुपुरी घाट है। इसकी कथा रामाश्वमेध में है। रामचन्द्र जी ने जब नैमिषारण्य में अश्वमेध यज्ञ किया, तब यज्ञ का घोड़ा दिग्विजय के लिये छोड़ा गया। उसकी रक्षा के लिये सेना लेकर शत्रुघ्नजी उसके पीछे-पीछे चले। शत्रुघ्नजी की सहायता के लिये हनुमान् जी भी उनके साथ भेजे गये। अश्वमेध का अश्व नाना देश, वन, पर्वतों को लाँगता हुआ, यहाँ नर्मदा के किनारे पहुँचा। पानी पीने के लिये ज्योंही नर्मदा जी में उतरा, त्योंही अदृश्य हो गया। सेवकों ने घबराते हुए शत्रुघ्न जी से यह समाचर कहा। शत्रुघ्न जी ने चारों ओर देखा घोड़े का कोई पता न चला। ध्यान से जब उन लोगों ने देखा तो यमुना जी में एक बहुत बड़ा दह-कुंड-दिखायी दिया। शत्रुघ्न जी तथा हनुमान् जी उस दह में कूद पड़े। बहुत नीचे जाकर उन्होंने देखा नीचे एक अत्यन्त रमणीय उद्यान है, उसमें सुन्दर भवन हैं। वहाँ एक योगिनी बड़े वैभव के साथ बहुत-सी सखियों सहित टहल रही है। शत्रुघ्न जी को देखकर उसने डाँटकर कहा—"तुम यहाँ कैसे आ गये। यह स्थान तो देवताओं के लिये भी दुर्लभ है। यदि तुम्हें अपने प्राण प्यारे हों तो तुरन्त यहाँ से चले जाओ।"

इस पर शत्रुघ्न जी कहा—"हम तो यहाँ श्री रामजी के कार्य के निमित्त आये हैं, राम काज के निमित्त यदि हमारे प्राण भी

चले जायें तो हमें कोई चिन्ता नहीं।" उनकी ऐसी दृढ़ता देखकर तथा रामकाज समझकर योगिनी ने उनका अभिनन्दन किया। शत्रुघ्न जी को मन्त्र दिया, अभय प्रदान की तथा घोड़े सहित उन्हें पृथ्वी पर पहुँचा दिया।

इस मधुपुरी घाट को लोग घोड़ाघाट भी कहते हैं, यहाँ बहुत से सुन्दर घाट हैं, यहाँ से योगिनी की गुफा तीन मील पर है। रमणीक स्थान है, मार्कण्डेश्वर शिवजी का मन्दिर है।

मधुपुरी से ८ मील दूरी पर महाराजपुर नाम का नगर है। यहाँ बंजर (बनजा) नदी का संगम है। उस पार सामने मंडला नगर है, जो प्रसिद्ध जिला है। संगम के समीप ही पुरवा नाम का छोटा ग्राम है। पहिले इस स्थान का नाम विष्णुपुरी था। अब दुम्बरेश्वर महादेव जी का मन्दिर है। बनजा गंगा पार करके महाराजपुर है, इसका नाम ब्रह्मपुरी भी हैं। इस क्षेत्र का नाम सरस्वती प्रस्रवण तीर्थ है। कहते हैं यहाँ सरस्वती जी ने तपस्या की थी। समीप ही हेमटेकड़ी नाम का स्थान है, पूर्वकाल में यहाँ बहुत से यज्ञ हुए हैं। उन यज्ञों में इतनी बड़ी घृत की धारायें डाली जाती थी कि यज्ञकुण्ड से घृतधारा बहकर नर्मदा जी में मिल जाती थी। जिस नाले से घृत बहता था, उस नाले का नाम ही घृत नाला है। यह पवित्र तीर्थ माना जाता है। यहाँ विद्यादान, ग्रन्थदान, अन्नदान, ब्राह्मण भोजन का तथा गायत्री पुरश्चरण का बड़ा माहात्म्य है।

डिँडौरी से मोटरों द्वारा चलकर हम रात्रि में यहीं रहे। हमारे रहने का प्रबन्ध एक गुरुद्वारे में किया। गुरुद्वारे के प्रबन्धक सरदार जी बहुत ही सज्जन तथा परमभक्त थे। और सब लोगों के ठहरने का प्रबन्ध विद्यालय के भवनों में था। रात्रि में बहुत बड़ी सभा हुई। व्याख्यान उपदेशों के अनन्तर रासलीला हुई।

आस-पास के ग्रामों के लोगों की अपार भीड़ एकत्रित हो गयी थी।

स्थान रमणीक था, संगम का दृश्य मनोहर था। यहाँ किसी विद्यालय में हमारे द्वारा सरस्वती जी की स्थापना हुई। वनवासी भाइयों का अपूर्व नृत्य देखने को मिला।

डिँडौरी से महाराजपुर ७५-७६ मील पड़ता है। हमने १०५ किलोमीटर लिखा था। पैदल का भी लगभग यही मार्ग है। डिँडौरी से ९ मील रामपुरी, वहाँ से सक्का ५ मील, सक्का से हर्राटोला ९ मील, हर्राटोला से चाबी ७ मील चाबी से महोगाँव ८ मील, महोगाँव से देवगाँव ९ मील, देवगाँव से रामनगर ९ मील, रामनगर से सीतारपटन ६ मील, सीतारपटन से मधुपुरी ५ मील और मधुपुरी से महाराजपुर आठ मील। इस प्रकार आज ७५-७६ मील की यात्रा हुई। महाराजपुर अच्छी बस्ती है, भारत विभाजन के कारण बहुत से शरणार्थी पुरुषार्थी पंजाबी यहाँ आकर बस गये हैं।

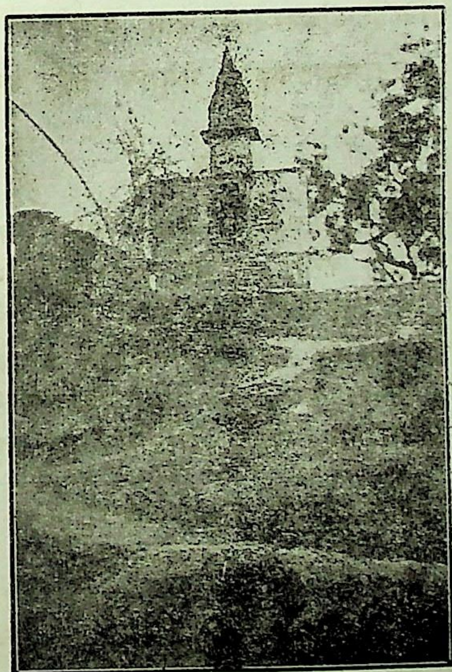
रात्रि भर हमने महाराजपुर में विश्राम किया। दूसरे दिन यहाँ से हमने वरमान के लिये प्रस्थान किया।

छप्पय

चले डिँडौरी राम-पुरी सक्कामें आये।
हर्राटोला नाँघि लखी चाबी हरषाये॥
महोगाँव अरु देव-गाँव पुनि रामनगर है।
सीतारपटन थली जहाँ संगम सुरपन है॥
बालमीक आश्रम तहाँ, आगे नगरी मधुपुरी।
महाराजपुरमें बसें, परिकम्मा अति सुखकरी॥

दोहा

संगम नदियनिके परे, रेवामें खरमेर।
मिली देवगंगा जहाँ, पुनि आगे बुढ़नेर॥
सीतारपटनमें मिली, सुरपन नदी अनन्य।
महाराजपुरमें भयो, बंजर संगम धन्य॥



नर्मदा तट के एक घाट का दृश्य

महाराजपुर से ब्रह्माण

[७]

अलक्षलक्षलक्ष पाप लक्षसारसायुधम्
ततस्तु जीवजन्तु तन्तु भुक्तिमुक्तिदायकम् ।
विरंचिविष्णु शंकरस्वकीयधाम शर्मदे
त्वदीयपादपङ्कजं नमामि देवि नर्मदे ॥*

छप्पय

लहर लहर लहरात लहरि तुम्हरी अति पावन ।
हरहर कीर्तन करत नृत्य तव अति मन भावन ॥
मोती सम कण विखरि मोद मनमाहिँ बढ़ावैं ।
करि दरसन नर नारि हिये उल्लास बढ़ावैं ॥
शरणागत प्रतिपालिका, तव पय पावन परम है ।
दीन अकिञ्चन गुन रहित, शरनागत प्रभु-दत्त है ॥

---

* हे नर्मदे देवि ! आप ब्रह्मा, विष्णु तथा शङ्कर को अपना-अपना पद प्रदान करने वाली हो । जिन पापों की गणना करने को मन भी नहीं पहुँच सकता, उन असंख्यों पापों का विनाश करने के निमित्त प्रबल आयुध के समान आपके चरण हैं तथा आपके तट पर निवास करने वाले जीव, जन्तु तथा लता वृक्षों को इस लोक तथा परलोक का सुख देने वाले भी वे ही पादारविन्द हैं, उन अरुण चरणकमलों में हमारा पुनः पुनः प्रणाम है ।

प्रकृति ने कैसे-कैसे मनोरम दृश्य उपस्थित किये हैं। वनों की स्वाभाविक शोभा अपूर्व होती है, नदियों का दृश्य उससे भी अधिक मनमोहक होता है। जहाँ वन, पर्वत, नदियाँ तथा नदियों का संगम ये चारों एक स्थान में होते हैं, वहाँ तो प्रकृति नग्न होकर नृत्य करती-सी दिखाई देती है। प्राकृतिक दृश्यों का आनन्द सभी नहीं ले सकते। जिन्हें घर-द्वार, कुटुम्ब-परिवार, धन-वैभव, भूमि-भवन, पत्नी-पुत्रादि की चिन्ता लगी रहती है, वे प्राकृत दृश्यों को देखते हुए भी नहीं देख सकते। वे चिन्ता में ही अन्धे बने रहते हैं, जिन्हें किसी भी सांसारिक पदार्थ की चिन्ता न हो, भगवान् ने हृदय में वैराग्य का अंकुर उत्पन्न कर दिया हो, वे ही प्राकृत दृश्यों को देखकर विमुग्ध बन जाते हैं। इच्छा होने लगती है, इन दृश्यों को सदा देखते ही रहें यहीं बस जायँ, यहीं रह जायँ। नर्मदा किनारे ऐसे मन को मुग्ध करने वाले अनेकों स्थान हैं।

हम लोग महाराजपुर से फाल्गुन शुक्ला प्रतिपदा (२७ फरवरी) को मोटरों द्वारा नरसिंहपुर वाली सड़क से चले। आज हमें बरमन (ब्राह्मण घाट) में चलकर विश्राम करना था। मंडला के किले से होकर धनसौर में आये। अमरकंटक से कबीर चौरा तक तो रीवाँ जिला है। कबीर चौरा से आगे फिर मंडला जिला आ जाता है और फिर वह महाराज से आगे सहस्रधारा तक चलता है। सहस्रधारा से आगे सिवनी जिला आ जाता है। धनसौर सिवनी जिले की तहसील है। धनसौर से आगे हम लखनादीन होते हुए नरसिंहपुर पहुँचे। यहाँ हम पहिले भी आ चुके हैं, स्वर्गीय कंजजी ने बुलाया था। यहाँ के लोगों ने हमारा बहुत ही अधिक स्वागत-सत्कार किया। सभी का अत्यन्त आग्रह था, यहीं रात्रि निवास किया जाय, यहीं रासमण्डली की रास-लीला भी हो। सबका अत्यन्त आग्रह देखकर हमने सायंकाल

तक यहाँ रहकर रासलीला कराने का निश्चय किया। यहाँ नृसिंह भगवान् का बड़ा सुन्दर मन्दिर है। हम सब नृसिंह भगवान् के दर्शनों को गये। बहुत सुन्दर ढङ्ग से रासलीला हुई। बहुत जनता एकत्रित हुई। रात्रि के दस बजे रासलीला समाप्त करके हम चल दिये। रात्रि में करेली आये। करेली वाले ब्रह्मचारी हमारे साथ थे। उनका आग्रह यहाँ ठहरने का था, किन्तु कल ब्राह्मण घाट से लौटकर यहीं होकर जाना था, अतः हम सीधे बरमन (ब्राह्मण घाट) को चले गये। वहाँ राधाकृष्णजी के मंदिर में जाकर विश्राम किया।

यदि हम महाराजपुर से यहाँ तक पैदल आते तो मार्ग में कौन-कौन से घाट मिलते। अतः संक्षेप में हम अब उसी का वर्णन करेंगे आज फाल्गुन शु० प्रतिपदा (२७ फरवरी थी)

१—महाराजपुर से सहस्र धारा ३ मील है। कहते हैं यहाँ महाराज सहस्रबाहु ने अपनी सहस्र भुजाओं से नर्मदाजी का प्रवाह रोक लिया था। इससे यहाँ माताजी की कई धारायें हो गई हैं। कुछ लोगों का कहना है यहाँ सहस्र दैत्यों ने घोर तप किया था। वे ही दैत्य सहस्रबाहु की सहस्र भुजाओं के रूप में परिणित हो गये थे। तभी से इस क्षेत्र का नाम सहस्रधारा तीर्थ हो गया। इस सहस्रधारा तीर्थ से दो मील ऊपर महाराजपुर से एक मील नीचे गधैया नदी का संगम है। कोई एक गन्धर्व की कन्या थी। वह शापवश गदही बन गई थी। माता नर्मदाजी की कृपा से उसका उद्धार हो गया। वही नदी रूप होकर श्री नर्मदाजी में लीन हो गई। इससे इसका नाम गधैया संगम है। सहस्रधारा परम पावन तीर्थ है। जब अनेक धाराओं से नर्मदा कल-कल निनाद करके प्रवाहित होती हैं, तब यहाँ का दृश्य अत्यन्त ही अद्भुत प्रतीत होता है।

२—सहस्रधारा से सघन जंगलों के मार्ग से चलकर पाँच मील पर घाघा ग्राम है, इससे आगे चार मील और चलकर ३—बुधेरा घाट है। यह सिवनी जिले की लखनादौन तहसील में पड़ता है। बुधेरा से लगभग ६-७ मील पर ४—झुरकी ग्राम के समीप पद्मी घाट तीर्थ है। यहाँ का दृश्य भी परम मनोहर है।

५—पद्मी तीर्थ से ३ मील आगे मेढ़ा घाट तीर्थ है यहाँ नर्मदाजी की तीन धारायें हो गई हैं। मध्य में मेढ़ाकुंड है। ऐसा कहा जाता है, पूर्व काल में तीन विभिन्न सम्प्रदायों के तीन साधु परस्पर में जैसे मेढ़ा लड़ा करते हैं, वैसे ही लड़ा करते थे। लड़ते-लड़ते वे तीनों मर गये। तभी से इस घाट का नाम मेढ़ाघाट पड़ा।

६—मेढ़ा घाट से दो मील आगे लुकेश्वर तीर्थ है यहाँ नर्मदा जी अत्यन्त वेग के साथ बहती है। वायुपुराण के रेवा खण्ड में इस स्थान का वर्णन है, कहते हैं नर्मदाजी की प्रबल धारा के बीच में लुकेश्वर नामक शिवलिङ्ग है, यह लिङ्ग मणिमय है, अतः यहाँ देवता, असुर तथा नागकन्यायें आदि शिवजी का पूजन करने नित्य ही आती रहती हैं। किन्तु कोई भी मनुष्य उस लिङ्ग के दर्शन नहीं कर सकता। यहाँ शिवजी सदा लुके (छिपे) हुए रहते हैं। इसीलिये उनका नाम लुकेश्वर है। यहाँ चारों ओर सुन्दर सघन हरे-भरे वृक्ष हैं, उन वृक्षों के कारण यहाँ की शोभा अपूर्व हो गई है। दर्शन मात्र से चित्त प्रसन्न हो जाता है।

७—लुकेश्वर तीर्थ से चार मील आगे मछुरिया नाले को पार करने के अनन्तर बखारी घाट आता है, छोटा-सा ग्राम है मार्ग जंगलों में होकर पर्वतों से आना पड़ता है। नर्मदाजी की छटा तो सर्वत्र ही निराली रहती है। नर्मदा पर जितने घाट और शिवालय हैं, उतने स्यात ही किसी नदी पर हों।

बखारी घाट से ९ मील चलकर करैया घाट है, इससे ३ मील और आगे बीजासेन नाम का ग्राम है। इसी के पास

९—दुधारा घाट है। यहाँ पर भगवती नर्मदाजी की दो धारायें हो गई हैं। बीच में चबूतरा है, नर्मदाजी के तो सभी कंकर शंकर स्वरूप ही हैं। यहाँ शिवरात्रि पर बड़ा मेला लगता है।

१०—बीजाघाट से ४ मील आगे बंशी घाट है। नुधेरी घाट से लेकर यहाँ बंशीघाट तक माताजी मंडला और सिवनी जिलों की सीमाओं पर बहती हैं। यहाँ भगोड़ा नदी श्रीनर्मदाजी में मिली हैं।

११—बंशीघाट से घुघरी खरहर घाट ७ मील है। यहाँ से पहिले ही सिवनी जिला समाप्त हो जाता है। यह स्थान जबलपुर जिले में है। यहाँ से जबलपुर जिला आरम्भ हो जाता है।

१२—घुघरी से चार मील आगे चलकर टेमर संगम तीर्थ है। यहाँ टेमर नदी श्री रेवाजी में आकर मिली हैं। इसके पास ही रेल का बरगी नाम का स्टेशन है।

१३—घुघरी घाट से चार मील आगे खिरहनी घाट है। यहाँ पूर्वी रेलवे का नर्मदाजी पर पुल है। स्थान बड़ा रमणीक है उस पार गौर नदी का संगम है। घुघरी से ही जबलपुर जिला लग जाता है और इस पार विक्रमपुर तक जबलपुर जिला ही है, आगे नरसिंहपुर जिला आ जाता है।

१४—खिरनी घाट से ६ मील आगे ग्वारी घाट है यहीं से नागपुर वाली पक्की सड़क जाती है। हम भेड़ा घाट से मोटर द्वारा नागपुर गये थे।

१५—ग्वारी घाट से ४ मील आगे घनसोर घाट है। १६—घनसोर घाट से दो मील आगे त्रिशूल घाट है। इसके सामने

शिवनी ग्राम के समीप मृगवन तीर्थ है। यहाँ भगवान् विष्णु चतुर्भुज रूप में सदैव स्थित रहते हैं। यहाँ तपस्यादि समस्त शुभ कर्मों का फल सहस्रगुणा होता है। यहीं पर वराह तीर्थ है। द्वितीय कल्प में जब हिरण्याक्ष पृथ्वी को तथा वेदों को लेकर पाताल में चला गया था, तब भगवान् ने वराह रूप धारण करके पृथ्वी का उद्धार किया था और वेदों को लेकर यहीं प्रकट हुए थे। मृगवन तीर्थ इसका नाम क्यों पड़ा इसकी रेवाखण्ड में इस प्रकार कथा है। एक समय कोई व्याधा मृगों को मारता हुआ इस वन में आया। रात्रि हो गई तो एक वृक्ष के नीचे सो गया तभी वन में दावाग्नि लगी जिससे वृक्षों के साथ वह व्याधा भी जल गया। कुछ काल के पश्चात् कन्या संक्रान्ति के समय वर्षा होने से उस व्याधा की जली हुई राख नर्मदाजी में मिल गई। इससे वह दिव्य शरीर धारण करके वैकुण्ठवासी बन गया तथा अन्यान्य जले जीव गन्धर्वलोक को चले गये। यहाँ देव कर्म तथा पितृ कम करने का बहुत माहात्म्य है। यह घाट भगवान् शंकर के त्रिशूल प्रहार से स्थापित हुआ है, अतः दोनों तटों का नाम त्रिशूल घाट है। यहाँ भगवती नर्मदा की धारा पर्वत को विदीर्ण करके त्रिशूल के समान बही हैं। इसीलिये इसे त्रिशूल भेद तीर्थ भी कहते हैं।

१६—त्रिशूल घाट के समीप ही लगभग एक मील पर लमेटी घाट है। दोनों तट के घाटों का नाम लमेटी घाट ही है। यहाँ इन्द्र ने तपस्या की थी। ऐरावत के पैरों के चिन्ह पत्थरों पर अवस्थित हैं। इन्द्रेश्वर तथा पिप्पलेश्वर शिवजी के मन्दिर हैं। स्थान दर्शनीय है।

१७—लमेटी घाट से ३-४ मील पर भेड़ा घाट है। इस पार उस पार दोनों का नाम ही भेड़ा घाट है। हमने उत्तर तट के

भेड़ा घाट से ही यात्रा आरम्भ की थी। दोनों ओर का दृश्य अवर्णनीय है। लगभग दो मील तक नर्मदाजी संगमरमर के पर्वतों को तोड़कर बही हैं। यहीं धूँआधार प्रपात है। यहाँ नर्मदा जी लगभग ४० फुट से नीचे गिरती हैं, उनके कण धूँए के समान बड़े ही सुन्दर प्रतीत होते हैं। अबके वर्षा कम होने से नर्मदाजी उथली हो गई थी। प्रपात भी पहिले की अपेक्षा कम था। हम नर्मदाजी को पैदल ही पार करके उस पार गये थे। क्या ही मनोरम दृश्य है। इसका कुछ वर्णन हम उत्तर तट की यात्रा में कर ही चुके हैं।

१८—भेड़ा घाट से लगभग ५ मील पर राम घाट है। कहते हैं श्रीरामचन्द्रजी ने नर्मदा यात्रा करते समय यहाँ कुछ दिन निवास किया था। यहाँ रामचन्द्रजी ने नर्मदा में एक कुण्ड स्थापित किया था जो रामकुण्ड तीर्थ के नाम से विख्यात है।

१९—रामघाट तीर्थ से लगभग ५ मील की दूरी पर जलेरी घाट है। यहाँ नर्मदाजी जले हुए पर्वत की तली को फोड़कर शिवजी के लिये जलहरी बनाती हुई निकली हैं। कहते हैं उस जलहरी में शिवजी स्थापित हैं, किन्तु वे इतने गहरे में लुके (छिपे) हुए हैं कि उनके दर्शन नहीं होते इसीलिये उनका नाम लुकेश्वर है।

२०—रामघाट तीर्थ से लगभग ५ मील पर विक्रमपुर नाम का ग्राम है। यहाँ सीनियर नदी आकर श्रीनर्मदाजी में मिलती हैं। संगमेश्वर शिवजी का स्थान है। यहाँ जबलपुर जिला समाप्त होकर अब नरसिंहपुर जिला लग जाता है यहाँ नर्मदाजी पर रेल का नवनिर्मित पुल है।

२१—विक्रमपुर के आगे ५ मील पर वेलखेड़ी घाट है। यहाँ से ५ मील १२—झलोन घाट है। झलोन घाट से २ मील आगे

२२—भैंसाघाट है। भैंसाघाट से २ मील आगे २३—ब्रह्मकुण्ड (देवतीर्थ) है। यहाँ पर तपस्या करने से समस्त देवताओं को सिद्धि प्राप्त हुई थी। इस सम्बन्ध की रेवा खण्ड में इस प्रकार कथा है*—प्राचीन कल्प में शुम्भ निकुम्भादि दैत्यों ने देवताओं के ऊपर चढ़ाई की, दोनों में घोर युद्ध हुआ। अन्त में दैत्यों की विजय हुई, देवता हार गये। तब सब देवतागण प्रजापति भगवान् ब्रह्माजी की शरण में गये। ब्रह्माजी ने कहा—भाई! सब कार्य तपस्या से सिद्ध होते हैं। चलो, हम सब मिलकर नर्मदाजी के किनारे तपस्या करें।" ऐसा कहकर वे सब देवताओं को साथ लिये हुए इस स्थान पर आये और सबने मिलकर घोर तप किया। इससे शिवजी प्रसन्न हुए और उन्हें मनोनुकूल वर दिया। इससे देवताओं की मनोकामना पूर्ण हुई। तभी से यह स्थान देवतीर्थ के नाम से विख्यात हुआ। यहाँ नर्मदाजी के कुण्ड में एक देवशिला है। यहाँ यज्ञ, दान, तप तथा ब्रह्मभोज का बड़ा माहात्म्य है।

२४—ब्रह्मकुण्ड देवतीर्थ से लगभग दो मील पर बुध घाट है, यहाँ बुधदेव ने अपने शरीर दोष को नष्ट करने के निमित्त तपस्या की थी यहाँ घाट पर बुधेश्वर शिवजी का मन्दिर है।

२५—बुध घाट से लगभग ९ मील पर पिपरिया घाट है। मार्ग में साँकल, धाना, गुरबाड़ा और गूघरा ग्राम पड़ते हैं। यहाँ पर जबरेश्वर शिवजी का मन्दिर है। जबर कहते हैं बड़े को। यथार्थ में यहाँ के शिवजी बहुत जबर हैं। ५ फुट से भी ऊँचे हैं। नर्मदाजी के किनारे इतने ऊँचे शङ्करजी स्यात् ही कहीं हों।

२६—पिपरिया घाट से लगभग ५ मील की दूरी पर गरारू

---

* (रे० खं० ५६)

घाट है। यहाँ शिवजी तथा गरुड़जी के मन्दिर हैं। यहाँ से ३ मील आगे २७—हतिया घाट है। यह घाट चिनकी ग्राम के समीप में है। यहाँ से ४ मील आगे २८—धूँआधार घाट है, यह पिपरहा ग्राम के समीप है, यहाँ नर्मदाजी पूर्ववाहिनी हो गई हैं। यहाँ नर्मदाजी पर्वत को फोड़कर तीन धाराओं में कलकल करती हुई प्रवाहित हुई हैं। यहाँ की छटा निराली है। दृश्य परम मनमोहक है।

२९—धूँआधार घाट से २ मील आगे सगुन घाट है। यहाँ सेढ़ नदी श्री नर्मदाजी में आकर मिली हैं इसे पंचगंगा संगम भी कहते हैं। यहाँ संगमेश्वर शिवजी का मन्दिर है।

३०—सगुन घाट से ५ मील आगे ब्रह्माण घाट है। दोनों तटों के घाटों का नाम ब्रह्माण घाट है अतः इस पार दक्षिण तट के घाट को छोटा ब्रह्माण घाट कहते हैं। यहाँ नर्मदाजी पर पुल है। उस तट पर उस ओर का ब्रह्माण घाट है वहाँ बहुत बड़ी बस्ती है। दोनों में आधा मील का भी अन्तर नहीं। हम इसी पार ठहरे थे। हमारे साथ रास मण्डली है और रात्रि में रास होगा, यह सुनकर उस पार के ब्रह्माण घाट के तथा आसपास ग्राम के सहस्रों नर-नारी आये थे, किन्तु हम तो रात्रि के १२ बजे पहुँचे इसलिये सब लोग लौट गये।

प्रातःकाल सब लोगों से भेंट हुई उस पार तो अच्छा बड़ा नगर है। थाना, डाकघर, कालेज सभी आधुनिक सुविधायें हैं। इस पार जङ्गली दृश्य है और बहुत ही रमणीक स्थान है। हमने उन लोगों को आश्वासन दिया कि उधर की परिक्रमा में जब हम चैत्र कृष्णा पंचमी (१८ मार्च) को आवेंगे तब तुम्हारे यहाँ रासलीला होगी।

इस स्थान को लोग बरमान कहते हैं। नर्मदाजी के तट पर

श्री राधाकृष्णजी का मन्दिर है हम लोग करेली होकर यहाँ आये थे। करेली से यह स्थान ६ मील है, पक्की सड़क है जो उस पार होकर जाती है और नरसिंहपुर यहाँ से १५ मील है।

जब हम परिक्रमा करते हुए उत्तर तट के ब्रह्माण्ड घाट पर आये, तब पक्के घाट पर खड़े होकर लोगों ने बताया यहाँ से ऊपर श्री नर्मदाजी की दो धारायें हो गई हैं, बीच में छोटा-सा टापू निकल आया है। इससे कुछ दूर ऊपर सप्तधारा स्थान है। यहाँ नर्मदाजी कई धाराओं में होकर पर्वत से गिरती हैं। इस कारण नीचे कई कुण्ड बन गये हैं, इन कुण्डों में तीन कुण्ड प्रधान हैं। उनके नाम (१) भीमकुंड, (२) ब्रह्मकुंड और (३) अर्जुनकुंड हैं। कहते हैं वनवास के समय पांडव यहाँ रहते थे। भीमकुंड पर भीम के पैरों के चिन्ह बने हैं। ब्रह्मकुंड में ब्रह्माजी ने यज्ञ किया था। सुनते हैं उस कुंड से यज्ञ की भस्मी अभी तक निकलती है। ये श्री नर्मदाजी के बीच में हैं। परिक्रमा वाले नर्मदाजी को पार नहीं कर सकते। अतः न तो उत्तर तट वाले और न दक्षिण तट वाले परिक्रमा के यात्री उस स्थान पर जाते हैं। हमने भी दूर से ही इन्हें देखा हम दक्षिण तट के ब्रह्माण घाट पर ठहरे थे। यहाँ इतिहास प्रसिद्ध परम धार्मिक वृत्ति वाली गोंडवंशीया महारानी दुर्गावती का बनाया हुआ मन्दिर तथा पक्का घाट है। मन्दिर जीर्ण शीर्ण दशा में पड़ा है। कोई जीर्णोद्धार कराने वाला नहीं। कितना सुन्दर और विशाल मन्दिर है। इसके समीप ही वाराह भगवान् की विशाल मूर्ति है, श्रद्धालु भक्त इस मूर्ति के नीचे से निकलते हैं। मोटे शरीर वाले नीचे से नहीं निकल पाते, नीचे सड़क है। सड़क से बायीं ओर के टीले पर पिसनहारी का विशाल मन्दिर है।

जब इस धर्म प्रधान देश में धर्म की प्रधानता थी, तब प्रत्येक व्यक्ति की यही भावना होती थी कि हमारे नाम से कोई मन्दिर,

धर्मशाला, पाठशाला, अन्नक्षेत्र, बावड़ी, कूआँ, तालाब, बगीचा अथवा प्याऊ आदि कोई धार्मिक स्थान बन जाय। उन दिनों कल मशीनें आदि नहीं होती थी, चक्की पीसने वाली पिसनहारी पैसा लेकर अन्न पीस-पीसकर अपना निर्वाह करती थीं। हमारे सामने ही दो पैसे में पाँच सेर अन्न पीस देती थीं। इसी ब्रह्माण ग्राम में एक रामदीन नाम के श्रीराम भक्त ब्राह्मण रहते थे। उनकी स्त्री अन्न पीस-पीसकर निर्वाह करती थी। वृद्धावस्था में उसके पति भी मर गये और सब बच्चे भी मर गये। अब वह स्वतन्त्र हो गई। उसने धर्म में अपना मन लगाया। अन्न पीस-पीसकर जो आय होती, उसमें से सूक्ष्म-से-सूक्ष्म में अपना निर्वाह करती शेष आय को बचाती जाती। जब कुछ धन एकत्रित हो गया तब उसने इस मन्दिर को बनवाना आरम्भ किया। परिश्रम की कमाई का यह परिणाम है कि आज इस मन्दिर को बने ९१-९२ वर्ष हो गये। बड़ी-बड़ी बाढ़ें आईं, किन्तु इस मंदिर की कुछ भी क्षति नहीं हुई। मन्दिर बहुत ही सुदृढ़ बना है। बुलन्दशहर जिले में रामघाट को गंगा स्नान को जब जाते थे, तब मार्ग में एक पिसनहारी की प्याऊ मिलती थी, उसमें सभी यात्रियों को पानी के साथ चना गुड़ भी मिलता था। इन्हीं लोगों का धन सार्थक है जो पुण्य कार्य में लगता है। असंख्यों यात्रियों के मुख में जल पान पड़ता है। वैसे संसार में धनी तो बहुत हैं, किन्तु वे यक्षवित्त हैं। यक्ष की भाँति धन की केवल रक्षा करते रहते हैं। न तो स्वयं ही उसका उपभोग करते हैं और न दान धर्म में ही लगाते हैं। उन्हीं के लिये यह कहावत है—जोड़-जोड़ धर जायेंगे। माल जमाई खायेंगे।

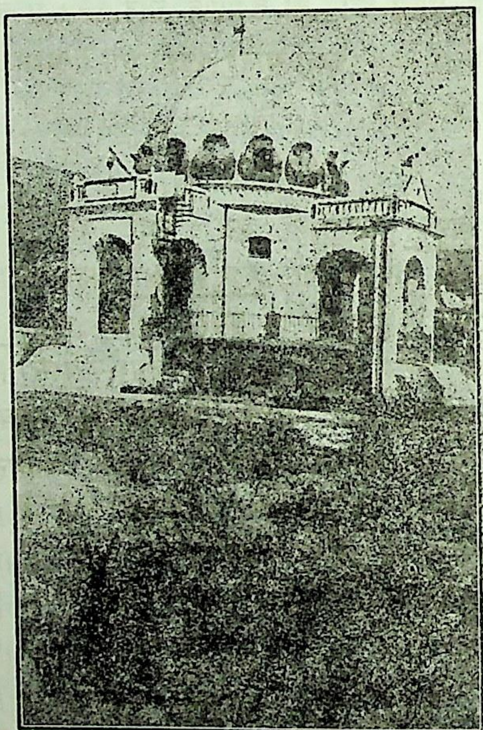
यहाँ पर सदावर्त भी लगा है, नर्मदा परिक्रमा के यात्रियों को सदावर्त मिलता है। सदावर्त बाँटने वाले से हमने कहा—"हमें भी कुछ सदावर्त दो।" तब वह ५-७ सेर की एक गुड़ की भेली

हमें बड़ी श्रद्धा से दे गया। हमने बस के यात्रियों को भेज दी वे बाँट-बूँटकर उसे चट कर गये। इस प्रकार हमने फाल्गुन शुक्ला प्रतिपदा (२७ फरवरी) को यहीं विश्राम किया। दूसरे दिन द्वितीया (२८ फरवरी) को हम हुसंगाबाद की ओर चल दिये। इसका विवरण अगले अध्याय में पढ़ें। महाराजपुर से नर्मदा किनारे-किनारे पैदल आते तो ब्रह्माण्ड घाट १२७ मील पड़ता। सड़क से लगभग २०० किलो मीटर पढ़ा होगा। आज और दिन से अधिक यात्रा हुई।

छप्पय

महाराजपुर यज्ञतीर्थ घृत नदी जहाँ पै।
सरस्वती तप थली ब्रह्म की पुरी वहाँ पै॥
सहस्रधार पुनि घाट बुधेरा आगे झरकी।
है पुन मेंढ़ा घाट लुकेश्वर नगरी बखरी॥
घाट कन्हैया तैं चलो, बीजासेन हु घूघरी।
टेमर संगम खिरहनी, ग्वारी शोभा मनहरी॥
बढ़ौ, घाट धनसोर फेरि तिरशूल घाट है।
श्री वराह को तीर्थ त्रिशूलहु भेद ठाट है॥
फेरि लमेंटी घाट लखो भेड़ा सुघाट वर।
रामकुण्ड शुभ घाट जलेरी संगम सिनियर॥
चेलाखेड़ी झुलन वर, भेंसा घाट प्रमान हैं।
ब्रह्मकुंड सुरतीर्थ हर, पिपरी लिङ्ग महान हैं॥
फेरि गरारू घाट सु-हतिया घाट मनोहर।
धुँआधार अति दिव्य सेढ़ संगम अति सुखकर॥

इत ब्रह्माण्ड सु घाट बीचमें रेवा सुन्दर।
रानी दुर्गावती रचित शिव मन्दिर दृढ़तर॥
सप्तधार त्रय कुंड जहँ, भीमार्जुन अरु ब्रह्म हैं।
रुके रात्रि में यहाँ हम, चन्द्रमौलि श्री शम्भु हैं॥



नर्मदा तट के एक घाट का दृश्य

ब्रह्माण घाट से हुसङ्गाबाद

(८)

अहोऽमृतं स्वनं श्रुतं महेशकेशजाततटे
किरातसूतवाडवेषु पण्डिते शठे नटे।
दुरन्तपापतापहारि सर्वजन्तु शर्मदे
त्वदीय पाद पंकजं नमामि देवि नर्मदे ॥*

छप्पय

पाप ताप सन्ताप जननि तुम सकल छुड़ाओ।
जाति पाति बिनु लखे सबनिकूँ पार लगाओ॥
शठ, नट, बिट अरु भाट होहिँ मूरख वा पंडित।
तव तट बसि जल पियें करो अघ तिनिके खंडित॥
हे महेश पुत्री विमल-तव जल कल कल श्रवन करि।
भयो कृतारथ तव कमल-चरन भक्तितैं धूरि धरि॥

---

* धन्य हैं माँ नर्मदे ! तुम भगवान् शंकरजी की जटाओं से उत्पन्न हुई हो। मैंने अमृत सदृश आपके कल-कल निनाद से युक्त जल का शब्द सुना है। आप समस्त जाति के व्यक्तियों को सुख देने वाली हो। हे जननि ! चाहें किरात हो, सूत हो, पण्डित हो, विद्वान् हो अथवा नट, शठ, कोई भी क्यों न हो सभी के अनन्त पाप पुञ्जों के तापों को शमन करने वाली हो। आपके ऐसे चरणारविन्दों में मैं पुनः पुनः प्रणाम करता हूँ।

पुण्य तीर्थों में श्रद्धा संयम के सहित जो तीर्थ यात्रा के उद्देश्य से भ्रमण करते हैं, वे परम भाग्यशाली पुरुष हैं, तीर्थों में लाभ-ही-लाभ है। भ्रमण होता है, भ्रमण से उदर विकार नष्ट होते हैं। स्वच्छ वायु सेवन को मिलती है। नगरों और महानगरों में जो कल कारखाने होते हैं उनका धूँआ वायु को दूषित करता है। वनों में, अरण्यों में पवन निर्दोष चलते हैं। सरिताओं के प्रवाह का स्वच्छ जल पीने को मिलता है, नित्य नयी-नयी पुण्य स्थलियों के दर्शन मिलते हैं। सन्त महात्माओं के दर्शन तथा सत्सङ्ग का लाभ होता है, इसी लिये हमारे ऋषि-मुनि सदा भ्रमण करते रहते थे। जहाँ वे कुछ दिन निवास कर लेते वही तीर्थ बन जाता। बाल्मीकजी के नाम के न जाने कितने आश्रम हैं। कुछ दिन जहाँ वे रह गये वहीं उनके नाम से आश्रम हो गया।

फाल्गुन शुक्ला द्वितीया (२८ फरवरी) को प्रातः नर्मदा स्नान करके ब्रह्माण घाट से चले। फिर लौटकर करेली ही आये। क्योंकि और कोई मार्ग नहीं था। स्वर्गीय कंजजी के आग्रह से एक बार मैं पहिले भी रामचरित मानस सम्मेलन में करेली आ चुका था। यहाँ के लोगों ने पहिले भी बड़ा स्वागत-सत्कार किया था, अब के तो उन्हें बहुत काल से पता है, अतः इन लोगों ने सबका भव्य स्वागत-सत्कार किया। करेली वाले ब्रह्मचारीजी भी हमारे साथ परिक्रमा में थे, उनके मन्दिरों में भी यथा योग्य सत्कार हुआ। सभी का जलपान हुआ और वहाँ से फिर तुरन्त चल दिये और गाड़रवारा में आकर मध्यान्ह भोजन हुआ। वहाँ हम एक सेठ के मन्दिर में ठहरे। वे पुष्टि मार्ग के वैष्णव थे। यहाँ के लोगों ने हमारे स्वागत-सत्कार तथा भोजनादि का बहुत ही सुन्दर प्रबन्ध किया। गाड़रवारा रेलवे का स्टेशन है। अच्छी बस्ती है। आज से लगभग ५० वर्ष पहिले मैं यहाँ आया था। तब यहाँ से १०-१२ मील पर साईंखेड़ा में धूनी वाले बाबा रहते

थे। उनकी प्रशंसा सुनकर मैं वहाँ गया था। उनको कोई तामसी सिद्धि रही होगी। वे दिगम्बर रहते थे, जो भी वस्तु उनको भेंट करते, वे उसे धूनी में डाल देते। उनकी देखा-देखी और भी बहुत से लोग नंगे होकर रहने लगे। वहाँ तीन मुख्य थे। बड़े धूनी वाले बाबा, छोटे धूनी वाले बाबा, दण्डी स्वामी। दण्डी स्वामी श्री भास्करानन्दजी मेरे पूर्व परिचित थे। वे श्री शङ्कराचार्य श्री स्वामी भारतीय कृष्ण तीर्थ के शिष्य थे। हमारे साथ १९२१ में लखनऊ जेल में थे। यहाँ आकर वे नंगे होकर बैठ गये थे। मुझे देखकर वे बड़े प्रसन्न हुए और कहने लगे—"ब्रह्मचारीजी! आप भी यहीं रह जाइये। बाबा बड़े सिद्ध हैं। अब आप यहाँ से जा ही नहीं सकते।" किन्तु मुझे वहाँ का भ्रष्टाचार तनिक भी रुचि-कर नहीं लगा। मुझे एक रात्रि रहना भी कठिन हो गया। घोर तामसिक वातावरण बाबा के अन्धभक्त उनके मल मूत्र का भी प्रसाद लेते थे। आचार-विचार तो वहाँ कुछ था ही नहीं। सब कुछ दुराचार वहाँ होते थे। पुलिस वहाँ सब आने वालों पर बड़ी कड़ी दृष्टि रखती। मैं उन दिनों टाट पहिनता था। परम विरक्त भाव से रहता था। एक गुजराती युवक अकस्मात् मेरे ऊपर अत्यन्त श्रद्धा प्रकट करने लगा। मैं जो कहूँ तुरन्त करे। मैंने यहाँ से कल ही प्रयाग जाने की इच्छा प्रकट की। उसने कहा—"कल चलिये मैं आपको प्रयागराज का टिकट दिला दूँगा।" मैं पैसा छूता नहीं था। मैंने सोचा अच्छा भक्त मिल गया।

इतने में पुलिस के लोग आ गये। मुझसे भी वे सन्देह के प्रश्न करने लगे। मैंने अपना रौब दिखाने को उपनेत्र (चश्मा) निकाला और समसिलेखनी (फाउंटनपैन) निकाला। उसने पूछा—आप कौन हैं? मैंने कहा—जनतासेवक (पबलिकसरवेंट) वह मेरे रौब में आ गया उसने सोचा—संभव है ये कोई गुप्तचर

विभाग के बड़े अधिकारी होंगे। उसने नम्रता से कहा—"महाराज यहाँ ऐसे बहुत लोग आ जाते हैं। आप आनन्द से रहिये।"

प्रातःकाल वह हमारा भक्त गुजराती युवक हमारे लिये बस का टिकट ले आया और हमारे साथ ही गाड़रवारा चलने को हमें टिकट दिलाने को बस में बैठ गया। उसी गाड़ी में रात्रि वाले पुलिस के लोग भी बैठ गये। गाड़रवारा पहुँचकर पुलिस वालों ने हमारे बनावटी भक्त के हाथों में हथकड़ी डाल दी। पता चला उसने एक द्विचक्री (साइकिल) चुराई थी। अब मैं घबराया कि कहीं मुझे भी इसका साथी समझकर पुलिस पकड़ न ले। यद्यपि मुझे विश्वास था ये मेरा कुछ बिगाड़ नहीं सकते, फिर भी झंझट तो हो ही जायगा। तभी तक इटारसी जाने वाली गाड़ी आ गयी। मैं रेल रक्षक (गार्ड) के पास गया कि मुझे इटारसी जाना है। उसने कहा—"आप बैठ जाइये मैं इटारसी में आपको निकलवा दूँगा।" मैंने कहा—"मेरा नियम है, मैं बिना भाड़ा दिये रेल में बैठता नहीं।"

उसने कहा—"तब आपकी इच्छा। वैसे मेरे कहने से बैठ जायँगे तो आपसे कोई कुछ बोलेगा नहीं, वहाँ मैं आपको निकलवा दूँगा।"

तब मैंने सोचा—"आपत्तिकाले मर्यादा नास्ति।" अब मैं रेल आने पर भी रह जाऊँगा तो पुलिस वालों को और सन्देह हो जायगा। अतः मैं रेल में बैठ गया। इटारसी में उसने मुझे निकलवा दिया। वहाँ मैं एक शिवालय में रहा। प्रातःकाल एक रायबहादुर जयसवाल के यहाँ गया। और प्रयाग का टिकट दिलाने को कहा। उसने बड़ी श्रद्धा से अपना मुनीम भेजकर मुझे टिकट दिला दिया तब मैं प्रयाग आ गया।

गाड़रवारा में आकर वह दृश्य मेरी आँखों के सामने नाचने लगा। धूनी वाले दोनों बाबा मर गये। वह कटु कथा है, दण्डी

स्वामी का देवास के राजा की लड़की को लेकर बड़ा झंझट हुआ वह सब कहने योग्य कथा नहीं। ये तामसी सिद्धियाँ ऐसी ही होती हैं और इनका अन्तिम परिणाम बड़ा दुखद होता है।

हाँ तो गाड़रवारा से हम सब लोग पिपरिया गये। पिपरिया में भी मैं पहिले आ चुका था। वहाँ के लोगों ने इतना स्नेह प्रकट किया था कि कुछ कहा नहीं जा सकता। इतनी भारी शोभा यात्रा से हमें पिपरिया स्टेशन ले गये कि एक बड़ा भारी मेला लग गया था। अब के भी वहाँ सभा तो हुई, किन्तु फीकी रही क्योंकि उसी दिन किसी प्रतिष्ठित व्यक्ति की मृत्यु हो गयी थी।

पिपरिया से हम लोग सोहागपुर आये वहाँ भी तुरन्त भाषण आदि देकर चलते बने और शाम को हुसङ्गाबाद में पहुँच गये। वहाँ एक प्रतिष्ठित कलहोपजीवी (वकील) के यहाँ हमारे ठहरने का प्रबन्ध था। एक घर में लड़के मेरा विस्तर बिछा रहे थे। उसके सामने बहुत बड़ा दर्पण लगा था। उस दर्पण में मुझे ऐसा लगा। दूसरे घर में भी कोई विस्तर बिछा रहा है और जब मैंने उसमें अपना प्रतिबिम्ब देखा तो समझा कोई दूसरे महात्मा भी खड़े हैं उनके लिये विस्तर बिछाया जा रहा है। मैंने उन प्रतिबिम्ब वाले महात्मा को प्रणाम भी किया। पीछे मेरा भ्रम दूर हुआ। अरे, दूसरा घर नहीं यह तो मेरा और मेरे विस्तर का प्रतिबिम्ब ही था। बड़ी हँसी आयी। लड़के भी हँसने लगे। इसी का नाम भ्रम है, माया है, अविद्या है। मनुष्य इसी माया में फँस कर न जाने क्या-क्या अनर्थ करता रहता है।

हुसङ्गाबाद में ही हमारे हरे राम बाबा रहते थे जब हमने झूसी में अखण्ड कीर्तन नाम जप का अनुष्ठान कराया था। तब उसमें भी वे रहे थे। हममें उनकी अनन्य श्रद्धा थी। प्रतिवर्ष वे १००-५० आदमियों को लेकर हमारे नव-सम्वत्सर महोत्सव में

आते थे। जब भी बुलाते तभी तुरन्त आ जाते। उन्होंने इस ओर के कई जिलों में अखण्ड कीर्तन का बड़ा प्रचार किया। कई स्थानों में अखण्ड कीर्तन चालू कराये। जहाँ अखण्ड कीर्तन होता था वहीं जाते थे। अपने साथ भी अखण्ड कीर्तन रखते। हरे राम मन्त्र से एक-एक चावल को गिन-गिनकर उसी का भोजन करते। महामन्त्र से कातकर जिस सूत का महामन्त्र पढ़ते हुए कपड़ा बुना जाता उसे ही पहिनते। केवल मेरे प्रसादी वस्त्र को और मेरे प्रसाद को वे पाते थे। उनका एक छोटा भाई था। उसकी मृत्यु भी हमारे ही यहाँ भूसी आश्रम में हुई। उनकी विधवा पत्नी और दो छोटे-छोटे बच्चे रह गये। उनके लिये कुछ रुपये किसी सेठ के यहाँ जमाकर दिये थे। अर्थार्थी भक्त उन्हें हनुमान का अवतार ही कहते थे। उनके कारण बहुतों के बहुत से रोग चले गये, बहुतों की मनोकामनायें पूर्ण हुईं। जब तक ये चमत्कार होते रहे तब तक तो सहस्रों नर-नारी उन्हें पूजते रहे। पीछे उन्हें महारोग (कुष्ट) हो गया। अब कोई उनके पास नहीं आता। तब वे मेरे पास वृन्दावन आ गये। राजमाता शिरमौर से कहकर मैंने वहाँ रहने का उनका प्रबन्ध कर दिया। और कह दिया अब आप यहीं जीवन भर रहें। हुसङ्गाबाद न जायँ। जब तक मैं रहा तब तक तो वे रहे। जब मैं प्रयाग चला गया तो वे भी हुसङ्गाबाद आ गये। जिस सेठ के पास रुपया जमा किये थे वह नट गया। उलटे उन्हें जेल में भेज दिया। किसी प्रकार भक्तों ने जेल से उन्हें छुड़ाया। फिर उनका देहान्त हो गया।

ये संसारी स्वार्थी भक्त जब तक चमत्कार रहता है तब तक नमस्कार करते हैं, पीछे कोई बात भी नहीं पूछता। मुझे इसका कटु अनुभव है कई महात्माओं की मैंने भक्तों द्वारा दुर्गति होते देखी है। पहिले तो ये स्वार्थी लोग उन्हें आकाश में चढ़ा देते हैं अवतार और ईश्वर न जाने क्या-क्या बना देते हैं, चरण धो-

धोकर पीते हैं। जय जगदीश हरे चिल्लाते-चिल्लाते आरती कर करके आकाश गुंजा देते हैं। जब उन्हें बीमारी हो जाती है शरीर काम करने योग्य नहीं रहता तब बात भी नहीं पूछते। अतः साधकों को ऐसे स्वार्थी भक्तों से सदा सचेष्ट रहना चाहिये।

यहाँ हरे रामजी के भक्तों के आग्रह से हमने अखण्ड हरे राम कीर्तन भवन का शिलान्यास किया। कुछ द्रव्य भी एकत्रित हुआ। रात्रि में बड़ी धूम-धाम के साथ रासलीला हुई, विश्राम किया। जब मुझे वैराग्य का भूत सवार हुआ था और किसी से कुछ भी माँगने में बड़ी लज्जा लगती थी, तब मैं ऐसे स्थान की खोज कर रहा था, जहाँ बारहों महीने पेट भरने योग्य कैसे भी कन्द, मूल, फल मिल जायँ तो जीवन भर वहीं रह जाऊँ किसी से कुछ माँगना न पड़े। किसी ने बताया नर्मदा किनारे ऐसे जङ्गल हैं तब भी खोजने को हुसङ्गाबाद आया था, किन्तु ऐसा स्थान मिला ही नहीं। श्री हरे राम बाबा के सम्बन्ध से भी कई बार हुसङ्गाबाद आना पड़ा। इससे हुसङ्गाबाद मेरे लिये अपरिचित स्थान नहीं है। यदि हम ब्रह्माण घाट से नर्मदा किनारे-किनारे पैदल आवें तो हमें मार्ग में कौन-कौन से घाट पड़ेंगे। इसका विवरण आगे दिया जाता है।

१—ब्रह्माण घाट से ५ मील चलकर बड़िया घाट मिलेगा वहाँ से आगे २ मील पर २—लिंगा घाट है। यहाँ सुखचेन नदी श्री नर्मदाजी में मिलती हैं। संगम के समीप ही एक बहुत बड़ा कुंड है। सुनते हैं इसमें मगर बहुत रहते हैं। इसलिये इसका "मगरोर" नाम भी प्रसिद्ध है।

२—लिंगा घाट से ७ मील आगे कोठिया घाट है, यहाँ शंकरा गंगा का रेवा के साथ संगम है। सुनते हैं इसे आदि

शङ्कराचार्यजी ने अपनी स्मृति के निमित्त उद्घाटित किया था। कोठिया घाट से ५ मील आगे ३—ककरा घाट है। उससे २ मील आगे ४—लेहरा संगम है। लेहरा संगम से दो मील आगे ५—भटेरा घाट है। वहाँ से ६ मील आगे ६—सोकलपुर घाट के समीप शक्कर नदी का संगम है। संगमेश्वर शिवजी का मंदिर है। इससे आगे ७—रोरा संगम है। रोरा संगम से ५ मील आगे ८—पीपल पाणि घाट है। यहाँ नर्मदाजी में बड़ा भारी कुंड है जिसे सोनाडहर कहते हैं। इससे ४ मील आगे ९—झिकाली घाट है। इससे एक मील आगे १०—जमुन घाट है। यहाँ नर्मदाजी के कुंड में बहुत चौड़ी एक विशाल धर्म शिला है।

११—जमुन घाट से ३ मील आगे ११—सिरसिरी घाट है। यहाँ पर दूधी नदी का संगम है। कहते हैं, यह नदी हनुमानजी की माता अंजना के स्तनों के दूध से उत्पन्न हुई है। इसकी कथा इस प्रकार है—जब श्रीरामचन्द्रजी रावण को मारकर लङ्का विजय करके पुष्पक विमान से अयोध्या को आ रहे थे तो मार्ग में किष्किन्धा पहाड़ मिला। हनुमानजी ने श्रीरामचन्द्रजी से निवेदन किया—"प्रभो यहाँ समीप में ही अंजना पर्वत है, वहाँ मेरी माताजी रहती हैं। आज्ञा हो तो मैं उनके दर्शन कर आऊँ ?"

रामजी ने कहा—"हनुमानजी ! बड़े स्वार्थी हो तुम अकेले ही दर्शनों को जाते हो। हमें भी माता के दर्शन करा दो।"

नम्रता के साथ हनुमानजी ने कहा—"भगवन् ! मेरी माता जी का बड़ा सौभाग्य होगा, जो भगवान् के दर्शन कर सकेंगी। मैंने तो सङ्कोचवश नहीं कहा।"

इतने में ही पुष्पक विमान अंजना पर्वत पर उतरा। हनुमानजी ने माता को प्रणाम किया माता ने प्रेम से पुत्र को

गोदी में बिठाया और उनका सिर सूँघा। तब सीताजी और लक्ष्मणजी के सहित श्रीरामचन्द्रजी ने माता को प्रणाम किया।

तब अंजनादेवी ने पूछा—"बेटा! ये कौन हैं? हनुमानजी ने सब कथा सुनाई। ये महाराजा दशरथ के सबसे बड़े पुत्र हैं, सीता माता इनकी धर्मपत्नी हैं, लक्ष्मण इनके छोटे भाई हैं। पिता की आज्ञा से ये चौदह वर्ष बन में रहे। बन में इनकी पत्नी सीताजी को रावण हर ले गया। तब इन्होंने हमारे स्वामी सुग्रीव जी से मित्रता की। सुग्रीवजी ने देश देशान्तरों से लाखों करोड़ों वानरों को एकत्रित किया। समुद्र पर पुल बाँधकर सेना सहित रामचन्द्रजी लङ्का को गये वहाँ राक्षसों से घनघोर युद्ध हुआ। रामजी रावण को मारकर लङ्का विजय करके अयोध्या जा रहे हैं। बीच में आपके दर्शनों को उतर पड़े हैं।"

इतना सुनते ही अंजना देवी ने हनुमानजी को अपनी गोदी में से उठाकर दूर फेंक दिया और बड़े क्रोध में भरकर बोली—"तू मेरा बेटा कहलाने योग्य नहीं। तैंने मेरे दूध को लजाया। अरे, इस छोटी-सी बात के लिये रामचन्द्रजी को इतना कष्ट हुआ। तैंने मेरा दूध पिया है। वह रावण भिनगा के समान है, उसे मारने के लिये रामजी को कितना परिश्रम करना पड़ा। तू चाहता तो लङ्का सहित उस रावण को रामजी के सम्मुख प्रस्तुत कर सकता था। वह रावण वस्तु ही क्या है? तैंने मेरे दूध को बट्टा लगा दिया।"

लक्ष्मणजी यह सुनकर हँस पड़े और मन-ही-मन सोचने लगे—"इस बुढ़िया को अपने दूध का बड़ा भारी अभिमान है। इसके दूध में ऐसी क्या विशेषता है?"

अञ्जना माता लक्ष्मणजी के भाव को ताड़ गयीं और बोली—"इन छोटे राजकुमार को मेरे दूध की शक्ति पर विश्वास नहीं होता। ये मेरे दूध का प्रभाव देखें।" यह कहकर माता ने अपने

दूध की धारा छोड़ी वह दूध पर्वत को फोड़कर नदी के रूप में बहने लगा। उसी से यह दूधी गंगा बन गई। जिसका यहाँ नर्मदाजी में संगम हुआ है।

इस पर श्रीरामचन्द्रजी ने माताजी से कहा—"माँ जी! आपके दूध में अनन्त शक्ति है। हनुमानजी ने आपका दूध पिया है, वे सब कुछ करने में समर्थ हैं। वे रावण को लंका सहित समुद्र में फेंक सकते थे। किन्तु माताजी! यदि ऐसा होता तो रामायण कैसे बनती जो भवसागर का सेत है। रामायण बने इसी लिये हनुमानजी ने ऐसा साहस नहीं किया। मैंने ही उन्हें ऐसा करने से मना कर दिया था। अब आप हनुमान जी पर रुष्ट न हों, उनसे प्रेम करें और पूर्ववत् उन्हें गोदी में लें।"

श्रीरामजी की बात सुनकर अंजना माता ने हनुमान्जी को क्षमा कर दिया और उन्हें पूर्ववत् गोदी में बिठाकर प्यार किया। उसी दूधी नदी का यहाँ सिरसिरी घाट में संगम है। समीप में ही उमरधा ग्राम है। नरसिंहपुर जिला यहाँ समाप्त हो जाता है। आगे हुसंगाबाद जिला आ जाता है।

१२—सिरसिरी घाट से ५ मील आगे खेरा घाट है। यहाँ अय्याजी ब्रह्मचारी की वेद पाठशाला है। यहाँ से ५ मील आगे १३—सांडिया घाट है। यहाँ पर श्री शांडिल्येश्वर शिवजी का स्थान है। शांडिल्य ऋषि ने यहाँ तपस्या की थी। वसिष्ठ संहिता में इसकी कथा इस प्रकार है—

एक बार जमदग्नि, वसिष्ठ तथा याज्ञवल्क्य आदि समस्त ऋषियों ने मिलकर बृहद् यज्ञ करना चाहा। उसमें समस्त ऋषियों को निमन्त्रित किया। प्रायः सभी ऋषि आ गये; किन्तु महर्षि कश्यपजी नहीं आये। कश्यप श्रेष्ठ ऋषि हैं, उनका आना आवश्यक था। जब वे नहीं आये तो ऋषियों ने कुशाओं की

एक ग्रन्थि बनाकर उसमें कश्यप ऋषि का आवाहन करके उनका पूजन करने लगे। दैवयोग से उसी समय कश्यप मुनि भी आकर यज्ञ में प्रस्तुत हो गये। कुशा ग्रन्थि का पूजन करते देखकर महामुनि कश्यप ने पूछा—"ऋषियो! आप कुश ग्रन्थि बनाकर किसका पूजन कर रहे हैं?"

ऋषियों ने कहा—"ब्रह्मन्! आप नहीं पधारे थे, इसलिये आपके ही निमित्त यह कुश ग्रन्थि बनाई थी और उसमें आपका ही पूजन कर रहे थे। यह बड़े सौभाग्य की बात है, अब आप स्वयं ही पधार गये। अब हम स्वयं साक्षात् आपका ही पूजन करेंगे।"

यह सुनकर महामुनि कश्यप हँसे और बोले—"आपका संकल्प व्यर्थ न जाय।" यह कहकर उन्होंने अपने कमण्डलु में से जल लेकर मन्त्र पढ़कर उस कुशा ग्रन्थि पर छोड़ा। सबके देखते-ही-देखते तत्क्षण उसमें से एक जटाजूटधारी, वल्कल वस्त्र पहिने मृग चर्म ओढ़े महर्षि प्रकट हो गये। कश्यपजी ने उनका नाम शांडिल्य ऋषि रखा। महर्षि उपमन्यु भी वहाँ उपस्थित थे उनके एक पुत्री थी, उसका नाम शांडिली था उपमन्यु महर्षि ने अपनी कन्या का विवाह उन महर्षि शांडिल्य के साथ कर दिया। उन दोनों ने मिलकर यहाँ नर्मदा तट पर चिरकाल तक तपस्या की। उन्होंने अपने नाम के यहाँ शिवजी की स्थापना की। तभी से इस स्थान का नाम शांडिल्येश्वर तीर्थ हुआ। यहाँ जप-तप, यज्ञ-याग, ब्रह्मभोज तथा गायत्री पुरश्चरण का बड़ा माहात्म्य है। यहाँ ऋषियों ने अनेक यज्ञ किये हैं।❀

१३—शांडिल्येश्वर तीर्थ से आगे ५ मील पर कुब्जा संगम नाम का तीर्थ है। वसिष्ठ संहिता में इसकी कथा इस प्रकार है।

❀ (वसि० सं० ५५ अ०)

एक बार सरस्वतीजी विमान में बैठकर ब्रह्माजी के यहाँ जा रही थीं। वे विमान में बैठी ही थीं कि वहाँ मरीचिक मुनि आ गये। वे अत्यन्त ही कुरूप थे। उनकी कुरूपता को देखकर सरस्वतीजी को हँसी आ गई। इस पर क्रुद्ध होकर ऋषि ने शाप दिया—"जा तू शूद्रा हो जा।" यह सुनकर सरस्वतीजी बहुत घबड़ाईं। उन्होंने हाथ जोड़कर अत्यन्त नम्रता के साथ ऋषि से क्षमा याचना की।

इस पर ऋषि ने कहा—मैंने स्वप्न में भी कभी असत्य भाषण नहीं किया। शूद्रा तो तू अवश्य होगी, किन्तु दो जन्मों में तुझे भगवान् के दर्शन होंगे और दूसरे जन्म में भगवान् श्रीकृष्णजी से संगम होने के कारण तेरा उद्धार हो जायगा। इसी कारण श्रीराम जन्म में सरस्वतीजी कैकेयी की दासी मन्थरा हुईं। जिसके कारण श्रीरामचन्द्रजी को वन जाना पड़ा। इसके उपरान्त श्री नारदजी के उपदेश से उसने इस स्थान पर तपस्या की। तदनन्तर दूसरे जन्म में वही कुब्जा हुई और श्रीकृष्ण के सत्सङ्ग से उसका उद्धार हो गया। तभी से इस स्थान का नाम कुब्जा तीर्थ हुआ। यहाँ प्रत्येक अमावस्या को मेला लगता है। यहाँ तपस्या करने से कुष्ठ रोग नष्ट हो जाते हैं।❀

१४—कुब्जा तीर्थ से ५ मील की दूरी पर भटगाँव से आगे वनखेड़ी घाट है इसके समीप ही रायन नदी आकर नर्मदाजी में मिलती हैं। यहाँ से दो मील आगे १५—रायन संगम है। यहाँ से दो मील आगे १६—पामली घाट है, यहाँ पालकमती नदी आकर नर्मदाजी में मिली हैं। यहाँ से एक मील आगे १७—पांडवद्वीप है, पास ही मारू नदी का संगम है। वनवास के समय पांडवों ने यहाँ तप किया था।

❀ (वसि० सं० ५६ अ०)

१८—पांडवद्वीप से ५ मील आगे सांगाखेड़ा घाट है, यहाँ से ५ मील आगे १९--धाना घाट है। धाना घाट से ५ मील आगे २०—वृद्धरेवाजी के मध्य में स्थित गौघाट है। किसी समय नर्मदा की कृपा से एक गौ का यहाँ उद्धार हुआ था, इसी लिये इसका नाम गौघाट है। यहाँ १२ योगिनी और तीन सिद्धों का स्थान है।

२१—गौघाट से ५ मील आगे बीकोरघाट है। यहाँ से ४ मील आगे २२—सूर्यकुंड है। यहाँ सूर्य नारायणजी ने तप किया था तथा अन्धकासुर दैत्य का वध किया था। यहाँ नर्मदाजी में सूर्य कुण्ड है। यह परम पावन तीर्थ माना जाता है।

२३—सूर्यकुण्ड से ६ मील आगे वानर भालू तीर्थ है यहाँ तपा नदी आकर नर्मदाजी में मिली हैं। तपा का विशाल संगम है। यहाँ का माहात्म्य तीर्थराज प्रयाग के समान बताया है, यहाँ कार्तिकी पूर्णिमा को विशाल मेला होता है। वैसे सूर्य ग्रहण, चन्द्र ग्रहण तथा अन्यान्य पर्वों पर मेले लगते हैं। यहाँ महाराज वैश्वानर ने तपस्या की थी। वसिष्ठ संहिता में इसकी कथा है—

प्राचीन काल में वैश्वानर नाम के एक सुप्रसिद्ध राजा थे। युद्ध में वे शत्रुओं से हार गये। शत्रुओं ने उनके राज्य पर अधिकार जमा लिया। राज्य पाट से वञ्चित होकर राजा अपने राज्य की पुनः प्राप्ति हेतु मन्दराचल पर जाकर घोर तप करने लगे। दैवयोग से नारदजी वहाँ पहुँच गये। नारदजी से उसने अपना सम्पूर्ण बृत्तान्त बताया। तब नारदजी ने कहा—राजन्! राजपाट में क्या रखा है। तुम आत्मज्ञान में मन लगाओ। नारदजी ने आत्मज्ञान का बहुत उपदेश दिया, किन्तु वह अनसुनी करता गया। तब तो नारदजी ने उसे शाप दे दिया—"तू बानर की भाँति चंचल चित्त वाला है। जा बानर हो जा।"

इस पर राजा को बड़ा दुःख हुआ। उसने अत्यन्त दीनता के साथ नारदजी के चरण पकड़कर अनुनय विनय की। तब नारदजी ने कहा—"अच्छा, तू तपा नर्मदा संगम में जाकर तपस्या कर तेरी समस्त कामनायें पूर्ण हो जायँगी।"

नारदजी के उपदेश से उसने तपा संगम पर जाकर घोर तपस्या की। इससे शिवजी ने उसकी समस्त कामनायें पूर्ण कर दी। तभी से इस तीर्थ का नाम वानर भालू तीर्थ हो गया।❀

२४—वानर भालू तीर्थ से ६ मील आगे हुसंगाबाद है। पहिले इस नगर का नाम नर्मदापुर था। मुसलमानी काल में इसका नाम हुसंगाबाद हुआ। यहाँ नर्मदाजी पर बहुत ही सुन्दर घाट बने हुए हैं। घाटों के समीप ही टाउन हाल है। हमारे सभी यात्री टाउन हाल में ही ठहरे थे। प्रातः हम घाटों पर स्नान करने गये। कितने सुन्दर और सुदृढ़ घाट बने हैं, लोगों की कितनी भारी श्रद्धा थी। बहुत से घाट हैं, इनमें जानकी सेठानी का घाट बहुत ही सुन्दर है। घाटों पर धर्मशाला तथा बहुत से मन्दिर बने हैं। इनमें हनुमानजी का मन्दिर, नर्मदाजी का मन्दिर, शिव जी का, शनिदेव का तथा श्री जगन्नाथजी के मदिर मुख्य हैं। एक रात्रि यहाँ रहकर दूसरे दिन यहाँ से हम हँड़िया के लिये चल दिये।

छप्पय

चलो फेरि ब्रह्मारड घाटतैं बड़िया आओ।
लिङ्गामें सुकचेन शांकरी गङ्गा न्हाओ॥
ककरा भटरा शोकलपुर रोरा संगम है।
पीपलमणि वर कुंड झिकोली डेमावर है॥

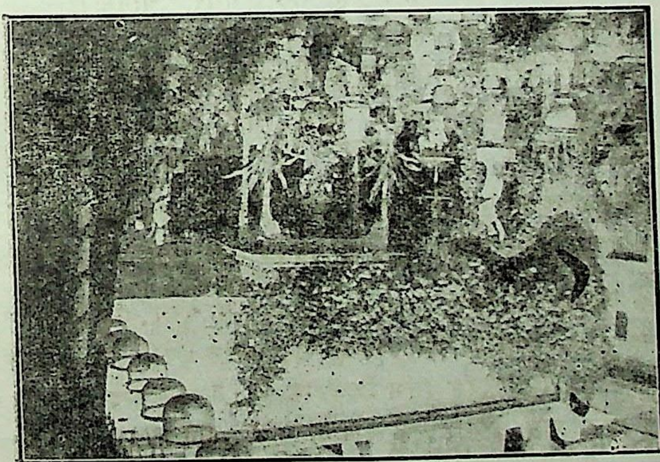
❀ (वसि० सं० ५४ अ०)

घाट सिरसिरी खेरिया अञ्जन सङ्गम सुखद वर।
शांडिल्याश्रम अङ्गनी, कुब्जा संगम प्रीतिकर॥

रामघाट भूगाँव वनखिड़ी रायन सङ्गम।
सङ्गम पालकमती द्वीप पांडव पुनीत तम॥
सांगाखेड़ा घाट घाट गौ सूय कुण्ड वर।
बन्दर भालू घाट तवा कों सङ्गम सुन्दर॥

आइ हुसङ्गाबाद में, पूर्व नर्मदापुर परम।
रेवा तट पै घाट बहु, दरसावैं पूरब धरम॥

मन्दिर घाट सुहावने, सोभा अति मनभावनी।
बहें नरमदा तीव्र गति, लागें परम सुहावनी॥



नर्मदा तट के एक घाट का दृश्य

हुसंगाबाद से हँड़िया

[६]

इदं तु नर्मदाष्टकं त्रिकालमेव ये सदा
पठन्ति ते निरन्तरं न यन्ति दुर्गतिं कदा।
सुलभ्यदेहदुर्लभं महेशधामगौरवम्
पुनर्भवा नरा न वै विलोकयन्ति रौरवम् ॥*

छप्पय

नित्य नर्मदा नाम प्रात मध्यान्ह साँझमें।
लेवैं ते तरि जाँय रहैं तट नगर गाँवमें॥
दरसन परसन न्हान करें जलपान आइ इत।
पूजन अरचन करें होइ अति पावन तिनि चित॥
कैसे हू माँ तव चरन, शरन गहें तरि जायँगे।
जीवत जगके सुख लहैं, मरें परमपद पायँगे॥

तीर्थयात्रा का पूर्ण फल तभी प्राप्त होता है, जब काम क्रोधादि को जीतकर, इन्द्रियों को वश में रखकर श्रद्धा विश्वास के साथ

---

* श्रीशङ्कराचार्यकृत इस नर्मदाष्टक का जो पुरुष प्रतिदिन प्रातः मध्यान्ह और सायंकाल तीनों समय पाठ करेंगे। कभी भी दुर्गति को प्राप्त न होंगे। तथा सबसे दुर्लभ शिवलोक को अत्यन्त सुन्दर दिव्य देह धारण करके प्राप्त होंगे। इस लोक में सुख पावेंगे, अन्त में पुनर्जन्म से सदा के लिये छुटकारा पा जायँगे। वे कभी भी रौरवादि नरकों को नहीं देखेंगे।

यात्रा की जाय। वैसे ही कल्याणकारी कार्य कभी निष्फल नहीं जाते। किन्तु अजितेन्द्रियों को तीर्थ करने पर भी उसका पूर्ण फल प्राप्त नहीं होता। अन्य क्षेत्रों में किये हुए पाप तो तीर्थों में जाने पर नष्ट हो जाते हैं, किन्तु तीर्थ क्षेत्र में किया हुआ पाप वज्रलेप हो जाता है। अतः तीर्थों में भूलकर भी पाप कर्म नहीं करना चाहिये।

फाल्गुन शुक्ला तृतीया (१ मार्च) को प्रातः हुसंगाबाद में नर्मदाजी के सुन्दर भव्य घाटों पर जाकर स्नान किया। श्री हनूमानजी आदि के मन्दिरों का दर्शन किया। पूजा पाठ करके वहाँ से चल दिये सिमोनी मलवा तथा हरदा होकर सायंकाल के समय हँड़िया ग्राम में पहुँचे। यहाँ नर्मदाजी पर कच्चा पुल है। यहाँ नर्मदाजी की नाभि मानी जाती है। यहाँ नर्मदाजी की इस पार की आधी परिक्रमा मानी जाती है। घाट पर पहुँचकर सबने नर्मदाजी में स्नान किया। नर्मदाजी की नाभि सड़क से कुछ दूर नर्मदाजी में है। वहाँ नौका से ही जाया जाता है। घाट पर एक दो छोटी नौकायें थीं, अतः सब लोग नाभि स्थान तक नहीं जा सके। हम लोग इन्दौर के व्यासजी तथा टण्डनजी के सहित एक छोटी नौका से नाभि स्थान तक गये। वहाँ नाभि की पूजा की। सामने उस पार उत्तर तट पर बहुत ऊँचे पर नेमावर ग्राम है। उसका वर्णन लौटते समय उत्तर तट की परिक्रमा में करेंगे।

हँड़िया साधारण-सा ग्राम है, ग्राम से पश्चिम दिशा में रिद्धनाथ शिवजी का मन्दिर है। यह स्थान हुसंगाबाद जिले के हरदा नगर से १३ मील है। हम हरदा होकर ही यहाँ आये थे। रात्रि में यहीं रहने का निश्चय था, किन्तु स्थान छोटा था। इतने आदमियों के रहने की समुचित व्यवस्था नहीं हो सकती थी। अतः हमने लौटकर हरदा में ही विश्राम किया।

हँड़िया में जो रिद्धनाथजी का मन्दिर है, उसमें रिद्धेश्वरनाथ

की स्थापना लोकपाल कुवेर ने की थी। इस सम्बन्ध की वसिष्ठ संहिता में निम्नलिखित कथा है।

कुवेरजी विश्रवाजी के पुत्र थे। उन्होंने ब्रह्माजी की चिरकाल तक आराधना की। इससे ब्रह्माजी ने प्रसन्न होकर उन्हें सुवर्ण की लङ्का प्रदान की। कुवेरजी सुखपूर्वक सुवर्ण की लंका में निवास करने लगे। लंका का ऐश्वर्य देखकर रावण जो कुवेरजी की विमाता का पुत्र था, उसने लंका पर चढ़ाई कर दी और कुवेरजी से लंका तथा पुष्पक विमान छीन लिया। तब कुवेरजी ने शिवजी की तपस्या की। उस पार नेमावर में सिद्धेश्वर महादेवजी का मन्दिर है। तब शिवजी ने नवनिधियुक्त अलकापुरी प्रदान की। नवनिधि ये हैं (१) पद्म, (२) शङ्ख, (३) महापद्म, (४) मकर, (५) कच्छप, (६) नील, (७) कुन्द, (८) मुकुन्द और (९) खर्व हैं। फिर कुवेरजी ने अलकापुरी को भी भली-भाँति सजाया। एक दिन घूमते-फिरते नारदजी रावण पालिता लंका में गये। रावण ने कुवेरजी का समाचार पूछा। तब नारदजी ने अलकापुरी के वैभव का वर्णन किया। तब रावण ने अलकापुरी पर चढ़ाई की और उसे भी कुवेरजी से छीन लिया इससे कुवेरजी बड़े निराश हुए। उन्होंने फिर यहाँ नर्मदाजी के नाभि स्थान में आकर सिद्धनाथ शिवजी की आराधना की। एक वर्ष तक षडाक्षरी मन्त्र का जप किया। इससे शिवजी प्रसन्न हुए और उन्होंने आज्ञा दी। यहाँ नर्मदा के उत्तर तट पर तो मैं सिद्धेश्वर रूप में अवस्थित हूँ। तुम दक्षिण तट पर मेरी रिद्धेश्वर रूप की स्थापना करके उनका पूजन करो। तुम्हारी मनोकामना पूर्ण होगी। तभी कुवेरजी ने यहाँ रिद्धेश्वर शिवजी की स्थापना की। इससे उनकी समस्त मनोकामना पूर्ण हुई और उन्हें पुनः अलकापुरी प्राप्त हो गई।* यह नर्मदा किनारे बहुत बड़ा तीर्थ है, पहिले इसका नाम

* (वसि० सं ५३ अ०)

नाभिपट्टन था। यहाँ मातृ गया मानी जाती थी। माताजी का यहाँ श्राद्ध होता था। मुसलिम राज्य में इसका नाम हँड़िया पड़ा। इससे आगे ही ओंकारनाथ की झाड़ी आरम्भ हो जाती है। हम लोग हँड़िया में न रहकर हरदा चले गये।

हरदा हुसंगाबाद जिले का नगर है। यहाँ की प्रसिद्ध मण्डी है। अच्छे-अच्छे धनिक यहाँ रहते हैं। एक बार पहिले भी एक सम्मेलन में मैं हरदा आ चुका हूँ। यहाँ एक बहुत बड़ी धर्मशाला है। यद्यपि यहाँ के भक्तों को पहिले से सूचना नहीं थी कि हम यहाँ निवास करेंगे। फिर भी सबने कुछ ही समय में हमारे निवास का, भोजन का अच्छा प्रबन्ध कर दिया। यहाँ के लोग भक्त तथा भावुक हैं। रात्रि में सभा, रासलीला हुई।

यदि हम हुसंगाबाद से नर्मदाजी के किनारे-किनारे पैदल आते तो निम्नलिखित स्थान हमें पड़ते। उनका विवरण नीचे दिया जाता है।

१—हुसंगाबाद से आगे ६ मील पर रंढ़ाल घाट है। प्राचीन काल में यहाँ अच्छा नगर रहा होगा। बहुत से मन्दिरों के खँड-हर मिलते हैं। यहाँ से ६ मील आगे २—केवलारी संगम है। कोकसर नाम का घाट है। यहाँ पर श्रीगौरीशंकर ब्रह्मचारीजी की समाधि है। इन्होंने ही श्री नर्मदाजी की परिक्रमा का विशेष प्रचार किया। इनकी एक जमात थी, जिसमें हाथी, घोड़े तथा सैकड़ों साधु महात्मा तथा परिक्रमा करने वाले यात्री रहते थे। ये सदा नर्मदाजी की परिक्रमा ही किया करते थे।

सबसे पहिले श्री स्वामी कमल भारतीजी महाराज ने नर्मदा जी की परिक्रमा के लिये साधुओं की जमात की स्थापना की थी। उस जमात के साथ उन्होंने नर्मदाजी की तीन परिक्रमायें की। श्री ब्रह्मचारी गौरीशङ्करजी महाराज उनकी जमात में भण्डारी का काम करते थे तथा उनके साधक शिष्य थे। पीछे भारतीजी

मण्डलेश्वर के समीप मर्कटी संगम पर अपना आश्रम बनाकर रहने लगे। पीछे मर्कटी आश्रम को छोड़कर इन्दौर जिले में ओंकारेश्वर के समीप चौबीस अवतार नामक स्थान पर अपना नवीन आश्रम बनवाकर रहने लगे। सन् १९१२ में चौबीस अवतार आश्रम पर सौ वर्ष से भी ऊपर की आयु में उन्होंने अपने इस पाञ्चभौतिक शरीर का परित्याग कर दिया। तीन परिक्रमा करने के पश्चात् उन्होंने अपनी जमात का सर्वाधिकार श्री ब्रह्मचारी गौरीशङ्करजी महाराज को प्रदान किया। ब्रह्मचारीजी बड़े तपस्वी तेजस्वी थे। उन्होंने जमात की बहुत वृद्धि की। इनकी जमात में सैकड़ों साधु महात्मा रहते थे, साथ ही हाथी, घोड़े, ऊँट, गाड़ियाँ तथा झण्डे निशान रहते थे। इन्होंने नर्मदा किनारे गायत्री के पुरश्चरण किये और जीवन भर नर्मदाजी की परिक्रमा ही करते रहे। इन्होंने स्थान-स्थान पर परिक्रमा वालों के लिये सदावर्त का प्रबन्ध कराया। इनकी सिद्धि की बहुत-सी कथाएँ प्रचलित हैं। घृत घटने पर नर्मदाजी के जल से ही पूड़ियाँ छनवाना। द्रव्य न रहने पर नर्मदाजी से द्रब्य प्राप्त कर लेना। कहते हैं इन्हें शूलपाणि की झाड़ियों में चिरजीवी अश्वत्थामाजी के दर्शन हुए थे। नर्मदाजी इन्हें सिद्ध थीं। जीवन भर परोपकार तथा साधु सेवा ही करते रहे। सम्वत् १९४४ वि० माघ शुक्ला ९ को यहाँ कोकसर में ही उन्होंने समाधि ले ली। यहाँ पर उनकी छोटी-सी समाधि बनी हुई है। श्री गौरीशङ्करजी ब्रह्मचारी के पश्चात् फिर कई महन्त हुए। उन्होंने कुछ दिन जमात चलायी। फिर शनैः-शनैः काल के प्रभाव से जमात समाप्त हो गई। जैसा श्री ब्रह्मचारी गौरीशङ्करजी महाराज का नर्मदा खण्ड में अमर यश है, उसके अनुरूप उनकी समाधि तथा आश्रम नहीं है। समय का प्रभाव है। 'कालस्य कुटिला गतिः'

३—कोकसर से १ मील आगे टिघरिया में गोमुखाघाट है।

यहाँ गोकर्णेश्वर शिवजी का स्थान है। समीप ही पटे घाट पर भी मन्दिर है। यहाँ से चार मील आगे ४—नानपा घाट है और नानपा घाट से १ मील आगे ५—कुलेरा घाट है। यहाँ हथेड़ (हत्याहरण) नदी श्री नर्मदा जी में आकर मिली हैं। इसकी कथा इस प्रकार है कि जब महाभारत के पश्चात् अपने ही कुल गोत्र के बन्धुओं की हत्या के कारण पांडवों के दैवी अस्त्र सत्वहीन हो गये तो उन्होंने यहाँ नर्मदाजी में स्नान किया। इससे उनकी हत्या निवारण हो गई। तभी से इस संगम का नाम हत्या हरण हो गया। यहीं पर द्रोपदीजी से मिलने रुक्मिणीजी आई थी। इस-लिये यहाँ जो नर्मदाजी में कुण्ड है, उसका नाम लक्ष्मी कुण्ड हो गया। यहाँ पर कुछ दिनों आकर पांड़वों की माताजी कुन्तीजी ने निवास किया था। इसलिये उनके नाम से कुन्तीपुर यहाँ गाँव है। उसी का अपभ्रंस कुलेरा नामक ग्राम अवस्थित है।

६—कुलेरा से १ मील दूर आँवरीघाट है। कहते हैं यहाँ पांडव लोग वनवास के समय कुछ काल रहे थे और उन्होंने हस्तिनापुर नाम का ग्राम बसाया था।

७—आँवरी घाट से ३ मील आगे भोला ग्राम के निकट इन्दना संगम है। यहाँ चतुर्मुखाघाट है। चतुर्मुख शिवजी का मन्दिर है। स्थान की शोभा अपूर्व है। नर्मदाजी में यहाँ विपुल जलराशि दृष्टिगोचर होती है।

८—इन्दना संगम से ५ मील आगे बावरीघाट है और यहाँ से ६ मील आगे ९—भिलाउ घाट है। यहाँ शिवजी तथा रामजी के मन्दिर हैं। यहाँ से ६ मील आगे १०—गोंदा घाट के पास गंजाल संगम है। यहाँ गंजेलेश्वर शिवजी का मन्दिर है।

इस सम्बन्ध की स्कन्द पुराण में कथा है। कन्यापुर के सोम-वंशी महाराज हरिकेश के पुत्र चक्रवर्ती महाराज देवानीक हुए।

एक समय महाराज देवानीक मल्लिकार्जुन के समीप अलिका देवी के दर्शनों को गये। वहाँ सूर्यग्रहण के समय राजा ने एक लाख गौएँ ब्राह्मणों को दान कीं तथा वहाँ विशाल यज्ञ प्रारम्भ किया। उस समय यज्ञ की अग्नि प्रबल वेग से प्रज्वलित हुई। उसने यज्ञशाला को, गौओं को तथा दश सहस्र ब्रह्मचारियों को भस्म कर दिया। इससे राजा को बड़ा दुःख हुआ। वह भी परिवार सहित अग्नि में भस्म हो जाने को प्रवृत्त हुआ। इस पर प्रजाजनों ने कहा—आप अभी अग्नि में प्रवेश न करें। मुनियों से इसका प्रायश्चित्त पूछें। मुनियो ने बताया—तुम प्रयागराज, काशी, गङ्गासागर संगम आदि तीर्थों की यात्रा करो। फिर एक करोड़ आहुति का हवन करो। १० लक्ष गायत्री जप, १० सहस्र गौदान, दस सहस्र सुवर्ण मुद्रा दान करो तुम्हारा मङ्गल होगा। तब राजा ने ऐसा ही किया। किन्तु राजा का पातक पूर्ण रूप से नष्ट नहीं हुआ। तब राजा नर्मदा परिक्रमा करते हुए यहाँ आये, यहाँ त्रिवैंणी संगम में स्नान करते ही राजा के सब पातक नष्ट हो गये और वे विशुद्ध बन गये। यहाँ छोटी-सी पापनासिनी गंजाल नदी है, जो गरमी में सूख जाती है उसका नर्मदाजी में संगम है एक दूसरी गोमती नदी भी यहाँ आकर मिली हैं। इसलिये यहाँ त्रिवैंणी संगम हो गया है। यहाँ से लगभग एक मील दूर पर ११—गंगेसरी हैं। यहाँ स्वामी अमृत भारतीजी की समाधि है।

१२—गंगेसरी से ६ मील आगे छीपानेर घाट है और यहाँ से ५ मील दूर पर १३—जलोदाघाट है, यहाँ हरिहरेश्वर शिवजी का मन्दिर है। यहाँ श्रीरतीराम बाबाजी की समाधि है। जो १००-१२५ वर्ष पूर्व हुए थे।

१४—जलोदाघाट से १॥ मील आगे गोयदाघाट है। शिव

जी तथा रामजी के मन्दिर हैं। यहाँ से ७ मील आगे मनोहरपुर ग्राम के पास १५—बाकुल नदी का संगम है। यहाँ से थोड़ी ही दूर पर हँड़िया ग्राम है जिसमें सिद्धनाथजी का मन्दिर है। यहाँ नर्मदाजी स्नान करके हमने यहाँ से १३ मील दूर हरदा में रात्रि विश्राम किया।

नर्मदाजी के किनारे-किनारे सीधे आते तो हुसंगाबाद से हँड़िया हमें लगभग ५४ मील (७२ किलो मीटर) पड़ती। हम पक्की सड़कों होकर आये थे। अतः हमें १०० किलोमीटर पड़ी। दूसरे दिन हमें हरदा से चलकर ओंकारेश्वर तक जाना है, इसका विवरण अगले अध्याय में पढ़िये।

छप्पय

चलो हुसंगाबाद नरमदापुरतै आगे।
फेरि घाट रंढाल कोकसर आगे लागे॥
है संगम जहँ केक-लारि ब्रमचारि समाधी।
गौरीशंकर सन्त नरमदा महिमा बाँधी॥
घाट गोमुखा तैं चलो, घाट नानपा कुलेरा।
अम्बारी पुनि इन्दना, तप कीयो जहँ कबीरा॥
घाट इन्दना बढ़ो बाबरीघाट पधारो।
भिलाड़्या पुनि घाट, राम शिव मूर्ति निहारो॥
गोंदागाँव समीप नदी गंजाल सु-संगम।
मिलै गोमती जहाँ, त्रिवैणी थली मनोरम॥
छीपानेर सुघाट जहँ, संगम बाकुल अति सुखद।
हँड़िया नाभी नर्मदा, सिद्धनाथ शङ्कर बरद॥

—

हँड़िया से ओंकारेश्वर

(१०)

नमोऽस्तु ते पुण्यजले नमो मकरगामिनि।
नमस्ते पापमोचिन्यै नमो देवि वरानने ॥*

छप्पय

देवि! नर्मदे! करन कृतारथ जग तुम आईं।
अमृत सरिस जल धार अवनिपै आइ बहाईं॥
आवैं जे जन सरन न तिनि तन अघ रहि जावैं।
करिकें तव जल-पान नहीं पुनि यमपुर जावैं॥
करि पावन पय प्रवाहित, मकर चढ़ीं जग फिरति हो।
पाप पहाड़नि फोरिकें, निरमल जन मन करति हो॥

त्रितापों से संतप्त प्राणियों को शान्ति प्रदान अमृतोपम पय ही कर सकता है। जो प्राणी सूर्य की तीक्ष्ण किरणों से विकल हैं, वे माँ की शीतल गोदी में जाकर अवगाहन करें। स्नेह सलिल में डुबकियाँ लगावें तो उन्हें परम शान्ति मिलेगी। मरणशील प्राणियों को मृत्यु के मुख से निकालकर अमर बनाने की शक्ति भगवती नर्मदा के अमृतोपमपय में ही है। रेवा माँ शरण में

---

* हे पावन पय प्रवाहित करने वाली माँ! तुम्हें नमस्कार है। हे मकर पर चढ़कर चलने वाली जननि! तुम्हें नमस्कर है। हे पापों के पहाड़ों को चकनाचूर करने वाली देवि! तुम्हें प्रणाम है। हे कमल के सदृश सुन्दर आननवाली भगवती! तुम्हें नमस्कार है।

आये हुए सभी प्राणियों को परमपद प्राप्ति कराने में सहायक बनती है। सब प्रपञ्चों का परित्याग करके जो एकमात्र माता की ही शरण में आ जाय, जो अहंकार को पी जाय। मानापमान को सम समझकर निर्मान मत्सर हो जाय, अपने में दीनता धारण कर ले तो कुपुत्र होने पर भी जननी उसे अपना ही लेती हैं और उसको भवसागर के पार पहुँचा देती हैं।

फाल्गुन शुक्ला चतुर्थी (२ मार्च) को हम सब लोग हँड़िया के समीप हरदा से प्रातः रसगुल्लाओं का—जो भक्तों द्वारा भक्ति-भाव से लाये गये थे—सभी लोग जलपान करके ओंकारेश्वर की ओर बढ़े। आज सबसे अधिक दूरी की यात्रा करनी थी हरदा से करुगाँव, काँकरिया, हिवाला, मांडला, बाफला, मुहाल, पाखरती, महापुरा चलकर हरसद में पहुँचे, हरसद से छनेरा, जागी लाड़ा, गंगाद्वार नदी, रजूर और आशापुर से खँडवा में पहुँचे।

वहाँ लोगों ने पहिले से ही बहुत भारी स्वागत सत्कार का प्रबन्ध कर रखा था। बहुत भारी धर्मशाला थी, उसी में सभी के ठहरने की सुन्दर व्यवस्था थी। खंडवा मध्य रेलवे का प्रसिद्ध जंकसन है। दिल्ली से जो बम्बई को गाड़ी जाती है, कलकत्ता से जो बम्बई को जाती है उस पर खंडवा स्टेशन पड़ता है, हम अनेकों बार खंडवा होकर गये हैं। जब इन्दौर के गीताभवन के उत्सव में जाते हैं तब खंडवा ही उतरते हैं। यहाँ इन्दौर से गाड़ी मँगा लेते हैं वैसे खंडवा से भी इन्दौर अजमेर को पश्चिम रेलवे की छोटी लाइन जाती है। ओंकारेश्वर यहाँ से जाते हैं तो इसी छोटी लाइन पर मोरटक्का स्टेशन है। यहाँ से ओंकारेश्वर सात मील हैं।

खंडवा में मध्यान्ह का भोजन करके वहाँ से चल दिये, देशगाँव सनावद होते हुए श्री ओंकारेश्वर में पहुँच गये। आज मार्ग

में बहुत बड़ा तूफान आँधी पानी आया। यात्रा का यथार्थ आनन्द तो आज ही आया। यात्रा में जब तक कोई कष्ट विपत्ति न आवे तब तक यात्रा क्या ? बोरे की भाँति लदे हुए चले गये। सनावद में तथा मार्ग के ग्रामों में लोगों ने हार्दिक स्वागत किया। सब ग्रामों में कुछ-कुछ देर रुककर उनके स्वागत सत्कार को स्वीकार करते हुए रात्रि में ओंकारेश्वर मान्धाता पहुँचे। वहाँ हम अहल्या-वाई होलकर न्यास के कार्यालय में ठहरे। बहुत ऊँचे पर पुराने ढंग का भवन है। वहाँ से नर्मदा जी का ओंकारेश्वर का मान्धाता पर्वत का दृश्य अत्यन्त ही मनोरम दिखायी देता है। ओंकारेश्वर नर्मदा जी के मध्य में हैं दोनों ओर धारायें हैं। परिक्रमा वाले नर्मदा को पार नहीं करते अतः ओंकारेश्वर के दर्शनों से वे वंचित रह जाते हैं। इसी लिये नियम है कि नर्मदा की पूरी परिक्रमा करके फिर उन्हें ओंकारेश्वर के दर्शन अवश्य करने चाहिये तभी नर्मदा परिक्रमा पूरी मानी जाती है।

इसी लिये परिक्रमा के पश्चात् जब हम मार्गशीर्ष में इन्दौर के गीता भवन में गीता जयन्ती के उत्सव पर गये थे तो खंडवा से ओंकारेश्वर आये। वहाँ ओंकारेश्वर के दर्शन पूजनादि करके ओंकारेश्वर मान्धाता पर्वत की नौका द्वारा परिक्रमा भी की।

ओंकारेश्वर

ओंकारेश्वर में द्वादश ज्योतिर्लिङ्गों में से यहाँ दो ज्योतिर्लिङ्ग हैं। एक ओंकारेश्वर तो बीच नर्मदा में हैं और अमलेश्वर इस पार हैं। ओंकारेश्वर के दो भाग हैं। एक तो विष्णुपुरी ओंकारेश्वर दूसरे शिवपुरी ओंकारेश्वर। विष्णुपुरी में अमलेश्वर हैं और शिवपुरी में ओंकारेश्वर हैं पहिले विष्णुपुरी का वृत्तान्त सुनिये।

मोरटक्का स्टेशन से ओंकारेश्वर मान्धाता ७ मील है, ओंकारेश्वर में जहाँ आप वाहन से उतरेंगें घाट तक भी पक्की सड़क

है। बड़े सुन्दर पक्के घाट बने हैं। मार्ग में ही अमलेश्वर शिवका मन्दिर है। अहल्यावाई होलकर की ओर से यहाँ नित्य, मृत्तिका के अठारह सहस्र शिवलिंग बनाकर उनका पूजन करके विसर्जित किये जाते हैं। सात पंडित इस कार्य के निमित्त नियुक्त हैं। अहल्यावाई इतनी धर्मात्मा थीं कि भारतवर्ष के प्रायः समस्त तीर्थों में उन्होंने कुछ-न-कुछ धर्म का कार्य किया है। काशी में अहल्याघाट प्रसिद्ध है, वहाँ और भी मन्दिर आदि धार्मिक कार्य हैं। हमारे प्रयाग के दारागंज में अहल्यावाई धार्मिक ट्रस्ट है। जिसमें अभी तक धार्मिक अनेक कार्य होते रहते हैं।

इस देश में न जाने कितने राजे-महराजे हुए वे जग के भोग-भोगकर परलोकवासी बन गये। उनका कोई नाम तक नहीं जानता। किन्तु हमारी इन्दौर की अहल्यावाई का नाम जन-जन के जिह्वाओं पर नाच रहा है।

विष्णुपुरी में धर्मशालायें हैं, अहल्यावाई का अन्नक्षेत्र है। अमलेश्वर शिवजी का पत्थर के खंभों का बना सुन्दर मंडप है। हमने कई बार अमलेश्वर शिवजी के दर्शन किये हैं। बड़ी भव्य शिवलिङ्ग है। विधिवत् पूजा होती है। ओंकारेश्वर का जो मान्धाता पर्वत है वह पर्वत स्वयं ओंकार का ही स्वरूप है। ऐसी कथा है कि पहिले पर्वतराज विन्ध्याचल ओंकार चक्र में शिवजी की लिङ्ग बनाकर पार्थिव पूजन किया करते थे। शकरजी उनकी पूजा से प्रसन्न हुए और साक्षात् प्रकट होकर वर माँगने को कहा। विन्ध्य पर्वत ने कहा—"भगवन्! यदि आप मुझ पर प्रसन्न हैं तो मैं यही चाहता हूँ कि आप इसी स्थान पर सदा सर्वदा निवास करें।"

शिवजी ने तथास्तु कहा। उसी समय वहाँ दो शिवलिङ्ग प्रकट हो गये। ओंकार मन्त्र से जो विन्ध्य पूजा करते थे उनसे तो ओंकारेश्वर शिवलिङ्ग हुए और पार्थिव से अमलेश्वर प्रकट

हुए। यहाँ समीप में ही कपिलधारा है, उसका जल गोमुख द्वारा नर्मदा जी में गिरता है उसे कपिलधारा संगम कहते हैं कपिल-धारा के दूसरी ओर ब्रह्मपुरी है। शिवपुरी विष्णुपुरी और ब्रह्म-पुरी तीनों ही ब्रह्मा, विष्णु और महेश देवों की पुरी हैं। पुराणों में इस सम्बन्ध की कथा है—

सृष्टि के आदि कल्प के सत्ययुग में स्वायंभुव मनु के काल में असुरों ने देवताओं को पराजित किया। दैत्य दानवों के भय से समस्त देवता इस ओंकारेश्वर क्षेत्र में आकर तपस्या करने लगे। इससे शिवजी प्रसन्न हो गये। उन्होंने ब्रह्माजी को आज्ञा दी कि तुम दैत्य दानवों का संहार करो।

ब्रह्माजी ने कहा—"भगवन्! इन्हें मारने की मुझमें सामर्थ्य नहीं है। इनके भय से मुझे वेदों का विस्मरण हो गया है।"

ब्रह्माजी की यह बात सुनकर उन्होंने एक हुँकार की। उस हुँकार से अतल, वितलादि सातों पातालों का भेद हुआ। उसी समय एक परम दिव्य तेजस्वी शिवलिङ्ग उस पर्वत में प्रकट हो गया। उसके आदि अन्त का कुछ भी पता नहीं था उस अनादि अनन्त शिवलिङ्ग में से एक वाणी प्रकट हुई। वह वाणी कह रही थी—"हे ब्रह्मदेव! अब आप निर्भय हो जाओ और अपनी विस्मृत हुई वेद विद्या को पुनः ग्रहण करो तथा इन समस्त दानवों का संहार करो।"

इस लिङ्ग वाणी को सुनकर ब्रह्माजी निर्भय हो गये, उन्होंने पुनः वेदविद्या को ग्रहण किया और उन्हीं वेद मंत्रों द्वारा दानवों का संहार किया। फिर ब्रह्माजी ने भगवान् रुद्र के निमित्त रौद्री इष्टि की। इससे समस्त देवगण परम प्रमुदित हुए। उन्होंने उस ओंकारेश्वर शिवलिङ्ग का पूजन किया, स्तुति की। इस लिङ्ग के दर्शन करने से समस्त पाप भस्म हो जाते हैं। कल्प के अन्त में समस्त देवगण इसी ओंकारमय शिवलिङ्ग में विलीन हो जाते हैं।

क्योंकि ओंकार ही गायत्री का तथा समस्त वेदों का जनक है। ओंकार, त्रिगुण, त्रिदेव, त्रिलोक तथा त्रिभुवन का स्वरूप है यहाँ करोड़ों तीर्थ हैं १—ओंकारेश्वर, २—अमलेश्वर, ३—केदारनाथ, ४—महाकालेश्वर तथा ५—सिद्धेश्वर ये पाँचों एक ही हैं। जैसे महाकालेश्वर में क्षिप्रा गंगा है वैसे ही यहाँ कावेरी गंगा है। वैसे कावेरी गंगा का संगम तो ओंकारेश्वर से दो मील पहिले सत-मात्रा खल घाट में हुआ। फिर भी कावेरी का जल नर्मदा में मिलने पर भी अपना अस्तित्व पृथक् ही रखता है। वह जल एक मील तक नर्मदा जी में साथ आता है। मान्धाता पर्वत के निकट उत्तर की ओर कावेरी पृथक् हो जाती है। मान्धाता की परिक्रमा करके आगे पुनः नर्मदा जी में मिल जाती हैं। इन्हीं कावेरी के कारण ओंकारेश्वर द्वीप, टापू अथवा वेट बन गया है और पूरा पर्वत ओंकार का स्वरूप बन गया है। लोगों का कहना है। सातमात्रा खलघाट में जहाँ कावेरी प्रथम नर्मदा जी में मिलती हैं, वहाँ कोई कावेरी जी के नाम से नारियल चढ़ाता है तो वह नारियल नर्मदा में बहता-बहता दक्षिण की धारा में न जाकर उत्तर की ओर जो मान्धाता की परिक्रमा को कावेरी की धारा जाती है, उसी में बह कर जायगा। जहाँ कावेरी का दुबारा नर्मदा में संगम हुआ है वहाँ से पूरे ओंकार मान्धाता पर्वत की तीन मील की नौका द्वारा परिक्रमा होती है, बड़ा ही मनमोहक दृश्य है। हमने तो नौका द्वारा दो बार इस परिक्रमा को किया है। कैसी अद्भुत छटा है, वह तो अवर्णनीय है, लेखनी द्वारा इसका वर्णन किया ही नहीं जा सकता। नर्मदी जी के इस पार अमलेश्वर घाट से चाहें विष्णुपुरी घाट से नौका में बैठिये अथवा उस पार शिवपुरी घाट से बैठिये। नौका पहिले प्रवाह के साथ चलेगी। दोनों ओर महात्माओं के आश्रम हैं। दक्षिण तट पर संन्यासियों के आश्रम हैं। आगे खेड़ापति हनुमान् जी तथा

केदारेश्वर महादेव हैं। आगे कावेरी का दूसरा संगम मिलता है। वहाँ से नौका कावेरी में फिर उलटी चलती है। हम दूसरी बार अब के जब गये थे तो कावेरी में बहुत ही अल्प जल था। सब यात्रियों को उतरना पड़ा था। दोनों ओर के अरण्य की छटा चित्त को बलात् हरण करने वाली थी। समीप ही रणमुक्तेश्वर शिव का मन्दिर है। उलटे प्रभाव में पूर्व की ओर लौटने में नौका को अत्यन्त कठिनाई का सामना करना होता है। नीचे बड़े-बड़े पहाड़ों के खण्ड, जल थोड़ा कठिनता से नौका बढ़ती है। आगे गौरी सोमनाथजी का मन्दिर है कावेरी के दक्षिण तट पर। मन्दिर को जाना हो तो नौका से उतर कर २५० सीढ़ी चढ़कर दर्शन करके पुनः नौका में लौट आइये। मन्दिर में सोमनाथजी की बड़ी लिङ्ग है। आगे सिद्धेश्वर महादेव जी का प्राचीन मन्दिर है। सिद्धेश्वर से उस पार कावेरी के दूसरे तट पर जैनियों का मन्दिर सिद्धवर कूट है। कावेरी से जल ले जाने को सीढ़ियाँ बनी हैं, पानी कल के द्वारा ले जाया जाता है आगे चलकर कावेरी की वह धारा है, जो नर्मदा जी से पृथक् होकर मान्धाता पर्वत को द्वीप बनाती है। फिर नौका नर्मदा जी के प्रवाह में आ जाती है, अब शिवपुरी पहुँचने में विलम्ब न होगा, क्योंकि धारा का प्रवाह सीधा बहाव की ओर है। आगे पश्चिम की ओर जब घूमेंगे तो भृगुपतन पहाड़ी पड़ती है। पहिले ऐसा नियम था कि जब क्रिया-कर्म करने में संन्यासी असमर्थ हो जाय तो वह पहाड़ से कूद कर अपने शरीर का अन्त कर दे। इसी का नाम भृगुपात है। पहिले यहाँ से मुक्ति की इच्छा से बहुत से लोग कूदकर अपने प्राण विसर्जन करते थे। अब यह प्रथा समाप्त हो गयी है। अब फिर लौटकर ओंकारेश्वर मन्दिर के नीचे पक्के घाट पर आ गये। वहाँ से सीढ़ियाँ चढ़कर श्री ओंकारेश्वर के मन्दिर को जाते हैं। सीढ़ियों के आस-पास फूल, प्रसाद, नारियल तथा कंठी, माला

चर्खों आदि की दुकानें हैं छोटा-मोटा बाजार ही है। मन्दिर का द्वार उत्तर की ओर है। आस-पास कई मन्दिर हैं। भगवान् शंकर का मन्दिर गुंबज से हटकर है, मूर्ति बनायी हुई नहीं है स्वाभाविक है। परिक्रमा के समय तो हमने दर्शन किये ही नहीं थे। दुबारा जब गये थे तब पुजारियों ने त्रिठाकर विधिवत् पूजा करायी। शिवलिङ्ग के चारों ओर जल भरा रहता है। यहाँ मन्दिर में श्री पार्वती जी की, पंचमुखी गणेशजी की, श्री शुकदेव जी की तथा मान्धातेश्वर की, लिङ्ग रूप में मूर्तियाँ हैं। दूसरी मंजिल पर महाकालेश्वर शिवजी हैं। आस-पास में श्री अविमुक्तेश्वर, ज्वालेश्वर, केदारनाथ, गणेशजी तथा देवी आदि के छोटे-बड़े मन्दिर हैं।

मन्दिर के समीप ही मान्धाता पर्वत पर मन्दिर के समीप ही राजा का महल है। पहिले यहाँ का राजा नाथू भील था। लगभग ८०० वर्ष पहिले श्री भरतसिंह चौहान ने इस टापू को भील से छीन लिया। ये राजा भिलाला जाति के हैं। अब तक इनकी ३०-३२ पीढ़ी बीत चुकीं। ये राजा ही मन्दिरों का सम्पूर्ण प्रबन्ध करते थे और इसकी समस्त आय के अधिकारी थे। अब तो राजा रहे ही नहीं। समस्त राज्य नष्ट हो गये। राजा का महल तो खड़ा है राजवंश के लोग इधर-उधर नौकरी चाकरी करते हैं।

इस पर्वत का नाम मान्धाता क्यों पड़ा। इसकी भी कथा है। मान्धाता चक्रवर्ती राजा थे इनका एक नाम त्रसद्दस्तु है। ये इक्ष्वाकु वंशीय राजा थे। श्री मद्‌भागवत के नवम स्कन्ध के छटे अध्याय में इनकी कथा है। इनके पिता का नाम युवनाश्व था। उनके कोई सन्तान नहीं थी। अतः वे अपनी सौ रानियों के सहित वन में चले गये। वहाँ ऋषियों ने पुत्र कामना के हेतु इन्द्र जिसके प्रधान देवता हैं ऐसा यज्ञ कराया। उन्होंने कलश के जल को पुत्र की कामना से अभिमन्त्रित करके यज्ञशाला में रख दिया और सोचा था—कल इसे राजा की बड़ी रानी को पिलायेंगे।

दैवयोग से राजा को रात्रि में बड़ी प्यास लगी। ऋषिगण तो सब सो रहे थे, राजा इधर-उधर जल खोजने लगे। यज्ञशाला में जल से भरा अभिमन्त्रित कलश रखा था। राजा ने देखा जल बड़ा ठंडा है, वे उसे पी गये। प्रातःकाल जब जल की ऋषिगण खोज करने लगे तब पता चला उसे तो राजा पी गये। तब ऋषियों ने कहा—'अहो दैवबलं बलम्' भगवान् का बल ही वास्तविक बल है। अब तो राजा के ही उदर से बच्चा होगा। ऐसा ही हुआ। राजा की दाहिनी कोख को फाड़कर पुत्र उत्पन्न हुआ वह पुत्र दूध के लिये रोने लगा। तब ऋषियों ने कहा—"यह बालक किसका दूध पियेगा ?" तब यज्ञ के अधिष्ठातृ देव इन्द्र ने कहा—"मान्धाता—यह मेरा पियेगा।" यह कहकर इन्द्र ने अपनी अमृतमयी तर्जनी उँगली उसके मुख में डाल दी। बालक प्रसन्न हो गया। इनके पिता महाराज युवनाश्व की भी मृत्यु नहीं हुई। इन्हीं महाराजा मान्धाता की ५० कन्याओं का पाणिग्रहण वृन्दावन के समीप सुनरख के रहने वाले महर्षि सौभरि मुनि ने किया।

महाराज मान्धाता ने यहीं नर्मदा किनारे इस पर्वत पर घोर तपस्या करके शिवजी को प्रसन्न किया और यही वरदान मांगा कि आप सदा सर्वदा यहीं निवास करें। तभी से यह पर्वत उन्हीं के नाम से मान्धाता पर्वत विख्यात हो गया।

आप पूछेंगे कि आपने ओंकारेश्वर का इतने विस्तार से वर्णन क्यों किया ? बात यह है कि नर्मदा क्षेत्र में ओंकारेश्वर सर्वश्रेष्ठ तीर्थ हैं। जैसे हमारे यहाँ भागीरथी गंगा के तीन स्थान सर्वश्रेष्ठ माने जाते हैं—

सर्वत्र सुलभा गंगा त्रिषुस्थानेषु दुर्लभा।
हरिद्वारे प्रयागे च गंगासागरसंगमे॥

गंगाजी तो सभी स्थानों में जहाँ-जहाँ से प्रवाहित हुई सुलभ हैं, किन्तु हरिद्वार में, तीर्थराज प्रयाग में और गंगासागर संगम

में अत्यन्त दुर्लभ हैं। इन तीन स्थानों का विशेष माहात्म्य है। इसी प्रकार नर्मदा जी के भी तीन स्थानों का विशेष माहात्म्य है।

सर्वत्र सुलभा रेवा त्रिषुस्थानेषु दुर्लभा।
ओंकारेऽथ भृगुक्षेत्रे तथा रेवोरिसंगमे॥

नर्मदा जी वैसे तो सभी स्थानों में सुलभ हैं किन्तु तीन स्थानों में दुर्लभ हैं। एक तो ओंकारेश्वर में जहाँ नर्मदाजी कावेरी संगम है, दूसरे जहाँ नर्मदा का समुद्र से संगम है भृगुक्षेत्र (भड़ौच) में और तीसरा कर्नाली रेवोरि नदी जहाँ नर्मदा में मिली हैं चांदोद में। इसी लिये ओंकारेश्वर का कुछ विशेषरूप से वर्णन किया, फिर भी बहुत ही संक्षेप में किया। विस्तार से वर्णन तो कोई कर ही नहीं सकता। क्योंकि यहाँ करोडों तीर्थों का निवास बताया है।

यदि हम हँड़िया से नर्मदा किनारे-किनारे पैदल यात्रा करें तो हमें कौन-कौन से स्थान पड़ेंगे इसका विवरण नीचे दिया जाता हैं ओंकारनाथ की जो शूलपाणि की झाड़ी बोली जाती है, वह यहीं से आरम्भ हो जाती है।

१—हाँ तो हँडिया से ८ मील आगे चलकर जंगल के मार्ग से उचावन घाट पड़ता है। यहाँ नर्मदा जी की दो धारायें हो गयी हैं। बीच में छोटा-सा टापू निकल आया है कहते हैं—यहाँ उच्चैश्रवा नाम के ऋषि ने तपस्या की थी। नर्मदा जी की छटा का तो कहना ही क्या?

२—उचान घाट से ६ मील आगे जोगाकिलाघाट है। यहाँ भी नर्मदा जी की दो धारायें हैं। बीच में जो टापू है, उसी में किसी प्राचीन राजा का किला है। सुनते हैं, यहाँ किसी योगी ने घोर तपस्या करके माताजी से इच्छित वर प्राप्त किया था, तभी से इसका नाम जोगा किला पड़ा गया।

३—जोगाकिला से ५ मील आगे अजनाल संगम है। मार्ग

सब झाड़ी पर्वत और बीहड़ वन का है। अजनाल संगम से ७ मील आगे लीलधा के समीप। ४—माचक संगम है। यहाँ से १ मील आगे। ५—पुण्यघाट तीर्थ है।

वसिष्ठ संहिता में इसकी कथा है। गौतम ऋषि की पत्नी अहल्या के साथ इन्द्र ने छल करके कुकृत्य किया। इससे ऋषि ने इन्द्र को भी शाप दिया और अहल्या को भी शाप देकर दक्षिण दिशा में नासिक में आकर तपस्या करने लगे। उसी समय बारह वर्ष का घोर अकाल पड़ा। तब गौतम जी ने सभी ऋषि मुनियों को आश्रय दिया। जितने भी वहाँ आ जायँ सबको यथेष्ट भोजन कराते थे। रात्रि में धान बो देते। उनके तप के प्रभाव से रात्रि में वे उगकर पक जाते। चाहें जितने भी आ जाओ, सबका यथेष्ट भोजन मिलता। अकाल जब समाप्त हुआ। तब उन लोगों ने सोचा—"ऋषि को कुछ लांछन लगाकर चलना चाहिये।" यह सोचकर उन्होंने एक माया की गौ बनाकर उनके द्वार पर खड़ी कर दी। प्रातः जब उन्होंने द्वार खोला तो गौ गिर पड़ी और मर गयी।

तब सबने कहा—"इन्हें तो गौ हत्या लगी है, अब हम इनके आश्रम में नहीं रहेंगे।"

ऋषि के प्रायश्चित्त पूछने पर सबने कहा—"यदि उत्तर की गंगा की भाँति तुम दक्षिण में भी वैसी ही गंगा ले आओ तो गो हत्या के पाप से छूट जाओगे। गौतम ऋषि ने इसे स्वीकार किया। उन्होंने घोर तप करके शिवजी को प्रसन्न किया। शिवजी ने कहा—"तुम्हें गोहत्या नहीं लगी है, वह तो माया की गौ थी।"

ऋषि ने कहा—"इसे तो मैं भी जानता हूँ, वह माया की गौ थी, किन्तु मैंने सब ऋषियों के सम्मुख गंगा लाने का वचन दिया है उसे आप पूरा करें।"

तब शिवजी ने अपनी जटा से बाल उखाड़कर दिया कि वहाँ

इस बाल से गंगाजल छिड़क देना। मुनि ने ऐसा ही किया और वहीं से गोदावरी गंगा प्रकट हो गयी। तभी गौतम महामुनि ने वहाँ त्रिम्बकेश्वर शिवजी की स्थापना की। उन्हीं गौतम महामुनि ने यहाँ नर्मदा किनारे श्री गौतमेश्वर शिवजी की स्थापना की। यहाँ के गौतमेश्वर के शिवजी के दर्शनों का फल, त्रिम्बकेश्वर शिवजी के दर्शन का समान फल है।

दूसरी कथा यह है कि पांडवों ने बनवास के समय नर्मदा जी के उत्तर तट पर धर्मपुरी बसाई थी और यहाँ दक्षिण तट पर बहुत भारी पुण्य के कार्य किये थे, तभी से इस घाट का नाम पुण्यघाट पड़ गया है। यहाँ स्नान दानादि का अनन्त गुणा माहात्म्य है। यहाँ बहुत से प्राचीन मन्दिर जीर्णशीर्ण अवस्था में पड़े हैं।

६—पुण्यतीर्थ से एक मील पश्चिम मानधार है। यहाँ नर्मदा जी का प्रपात है। ऊँचे से नर्मदा जी गिरती हैं। यहाँ मान्धाता तीर्थ है। कहते हैं महाराज मान्धाता ने यहाँ तप किया था। यहाँ सोमवती अमावस्या तथा भाद्रपद की अमावस्या को मेला लगता है।

७—पुण्यतीर्थ से ९ मील आगे बलकेश्वर घाट है कहते हैं महाराज बलि ने यहाँ तप किया था। उन्हीं के नाम से यहाँ बलकेश्वर शिवजी का मन्दिर है। यहाँ से आगे नर्मदा किनारे-किनारे मार्ग अत्यन्त विकट है। ५०० फुट ऊँची पहाड़ियाँ हैं, मार्ग भी कँकरीला पथरीला है, भोजनादि का समान भी मिलना कठिन है। घोर जंगल है। यहाँ का जंगल वन विभाग द्वारा रक्षित है। अतः प्रायः सभी यात्री यहाँ से नर्मदा के तट के मार्ग को छोड़कर ऊपर के मार्ग से जाते हैं। किन्तु ऊपर के माग में तीन दिनों तक नर्मदा जी के दर्शन नहीं होते। तीन दिन के लिये

उन्हें नर्मदा जी का जल साथ ले जाना पड़ता है। जिनका आग्रह नर्मदा जी के तट ही तट होकर जाने का होता हैं, उन्हें रक्षित जंगल के अधिकारियों से आज्ञा लेनी पड़ती है। बिना आज्ञा के कोई उस विकट बीहड़ और घोर अरण्य के मार्ग से नहीं जा सकता। अतः हम ऊपर के सुविधा जनक मार्ग का ही वर्णन करेंगे।

८—बलकेश्वर से ३ मील आगे बलड़ी स्थान है, यहाँ से नर्मदाजी ३ मील पड़ती हैं, यह ग्राम हरसूद वाली सड़क पर है।

९—बलड़ी ग्राम से लगभग ९ मील पर छोटातवा संगम है यह बीजलपुर ग्राम के समीप है। यहां से भी श्री नर्मदा जी लगभग ४ मील पड़ती हैं। इससे आगे ७ मील पर १०—बलवाड़ा ग्राम है, यहाँ से भी नर्मदा जी ५ मील पड़ती हैं। यहाँ से ११ मील आगे ११—पुनासा ग्राम पड़ता है। नर्मदा जी यहाँ से ५ मील हैं जहाँ धावड़ी कुंड तीर्थ नर्मदा जी में हैं। पुनासा से ७ मील की दूरी पर १२—वायफल ग्राम हैं। यहाँ से ९ मील आगे १३—सातमात्रा तीर्थ है। कोटखेड़ा के समीप पुराने किले के खंडहर है।

यहाँ पर (१) वाराही, (२) चामुंडा, ३—ब्रह्माणी, (४) वैष्णवी, (५) इन्द्राणी, (६) कौमारी और (७) माहेश्वरी इन सात माताओं के मन्दिर हैं। इसी लिये सप्तमातृ का (सात माता) कहलाता है। सप्तमातृकाओं के अतिरिक्त भी यहाँ भैरवनाथ, गणेशजी हुलकादेवी, महावीर, वागेश्वरी आदि मूर्तियाँ हैं यहाँ से ओंकारेश्वर चार मील हैं।

१४—सतमात्रा से २॥ मील आगे कावेरी संगम है यहाँ कुवेर भण्डारी तीर्थ है। यहाँ कावेरी गङ्गा नर्मदा में मिलती तो हैं, किन्तु वे अपना पृथक् अस्तित्व रखती हुई मान्धाता पर्वत के किनारे एक डेढ़ मील नर्मदाजी के साथ चलकर फिर उत्तर की ओर

पृथक् हो जाती हैं। इन्हीं के कारण ओंकारेश्वर का पर्वत द्वीप या वेट बन जाता है। लगभग एक मील जाकर मान्धाता के छोर पर वे पुनः नर्मदा में मिल जाती हैं। उसे कावेरी का दूसरा संगम कहते हैं। पहिला जो कुवेर भण्डारी तीर्थ के समीप का संगम है, उसका बहुत बड़ा माहात्म्य है। उसे तीर्थराज प्रयाग के गङ्गा-यमुना संगम के सदृश माना जाता है। यहाँ कुवेरजी ने तपस्या करके यक्षों के राजा होने का वर प्राप्त किया था। कावेरी संगम और ओंकारेश्वर के बीच में ही चार तीर्थ और हैं। १५—वाराही संगम, १६—चंडवेगा संगम, १७—एरंडी संगम और १८—पितृ तीर्थ तथा ब्रह्मतीर्थ इनकी भी संक्षेप में कथा सुनिये। बराही गङ्गा की उत्पत्ति जब भगवान् विष्णु ने वराह अवतार धारण किया तब श्रम के कारण उनके शरीर में स्वेद (पसीना) आ गया। उसी से वाराही गङ्गा प्रकट हुई। वे यहाँ नर्मदाजी में मिली हैं यह भी परम तीर्थ है। इस संगम में स्नान, दान ब्रह्म-भोज का अत्यन्त फल है।

चंडवेगा संगम की कथा यह है कि स्वारोचिष मन्वन्तर में चन्डसेन नाम के सूर्यवंश में अयोध्या के राजा हुए। उनकी बुद्धि मलिन थी। वे कामी थे और ब्राह्मणों से द्वेष भी करते थे। एक समय वे आखेट करने वन में गये। वहाँ शांडिल्य महामुनि का आश्रम था। महर्षि बड़े तपस्वी थे, उनकी धर्मपत्नी का नाम सौदामिनी था। वह रूप लावण्य में अद्वितीय थी। वह सौन्दर्य अनुपमा थी। महाराज चन्डसेन उसके रूप लावण्य को देखकर उस पर आसक्त हो गये। वे उस ऋषि पत्नी के समीप जाकर कहने लगे—सुन्दरी! मैं अयोध्या का राजा हूँ, मेरा अपार वैभव है, तुम मेरी स्त्री बन जाओ। मेरे महलों में रहो। वहाँ अनन्त ऐश्वर्य का मनमाने भोगों का भोग करो। यहाँ वन में इस बूढ़े ऋषि के पास क्या रखा है। यह तुम्हारे अनुरूप पति नहीं है।"

सौदामिनी ने कहा—"राजन् ! मैं तो अपने पति के अधीन हूँ, आप उन्हीं के समीप जाइये वे जो कहेंगे वही मैं करूँगी।"

यह सुनकर राजा ऋषि के समीप गये और बोले—"विप्र-वर ! यह परम सुन्दरी ललना ललाम अमूल्य रत्न है, यह आपके योग्य नहीं है। यह तो राजमहल को शोभित करने योग्य ललना रत्न है। इसे आप मुझे दे दें। इसके बदले में मैं आपको यथेष्ट धन दूँगा। उससे आप दूसरा विवाह कर लेना।"

राजा की बात सुनकर महर्षि हँसे और बोले—"राजन् ! तुम्हारी इच्छा धर्मानुकूल नहीं है। तुम इस इच्छा का परित्याग कर दो।"

राजा तो कामान्ध हो रहा था। उसने ऋषि की बात पर ध्यान नहीं दिया। उसे अनसुनी करके उसने सौदामिनी को बल-पूर्वक पकड़कर अपने साथ ले जाना चाहा। सौदामिनी ने जब देखा राजा अनर्थ करने पर तुल गया है तो उसने राजा को शाप दिया—"हे राजा ! तू चांडाल जैसा बर्ताव कर रहा है, जा, चांडाल हो जा।"

इतना सुनते ही राजा की आकृति चांडालों जैसी हो गई। जब वह लौटकर राजधानी में आया तो कोई उसे स्पर्श नहीं करता था, सभी उसका तिरस्कार करने लगे। सर्वत्र यह बात फैल गई कि राजा ऋषि पत्नी के शाप से चांडालता को प्राप्त हो गया है। महलों में गया तो रानियों ने भी उसका अभिनन्दन नहीं किया। मन्त्रीगण, ब्राह्मण वर्ग सभी असमञ्जस में पड़ गये। तब मन्त्री तथा ब्राह्मण मिलकर राजा को अपने कुलगुरु वसिष्ठ के समीप ले गये। राजा ने अपना पाप उनको कह सुनाया।

सब सुनकर महर्षि वसिष्ठ ने कहा—"राजन् ! ऋषि पत्नी के शाप को अन्यथा करने की हममें सामर्थ्य नहीं है। आप ऋषि

पत्नी सौदामिनी की ही शरण में जाइये। वे ही चाहें तो आपको शाप मुक्त कर सकती हैं।"

यह सुनकर राजा ऋषिपत्नी सौदामिनी की शरण में गया और उनके चरणों में प्रणाम करके दीनता के साथ अपने अपराध के लिये क्षमा याचना की।"

इस पर ऋषि पत्नी ने कहा—"राजन्! मैं तो पतिव्रता हूँ। मेरे पति की शरण जाइये वे क्षमा कर देंगे तो क्षमा ही है।"

यह सुनकर राजा, महर्षि शांडिल्य के समीप गया और उनसे क्षमा याचना की।

सब सुनकर शांडिल्य मुनि ने कहा—"राजन्! आप हमारे पिता मार्कण्डेय मुनि के समीप जाइये। वे ही क्षमा कर सकते हैं।"

शांडिल्य मुनि की आज्ञा से राजा महर्षि मार्कण्डेय मुनि की सेवा में समुपस्थित हुए और अपना पाप उन्हें कह सुनाया।

सब सुनकर महर्षि मार्कण्डेयजी बोले—"राजन्! नर्मदाजी में चन्डवेग नदी जहाँ मिली हैं। उसके संगम पर आप चण्डि-केश्वर शिव की आराधना कीजिये। तभी आप इस पाप से मुक्ति पा सकेंगे।"

महर्षि की आज्ञा पाकर राजा ने ऐसा ही किया और चण्ड-वेग संगम में स्नान तथा चण्डकेश्वर की आराधना से वे पाप मुक्त हो गये। इसलिये यह तीर्थ बड़े-बड़े पापों का नाश करने में समर्थ है।

इस तीर्थ के समीप ही एरंडी नदी का संगम है। प्राचीन-काल में भद्र और रुद्र इन दो गन्धर्वों ने एरंडी संगम पर एरं-डेश्वर शिवजी की आराधना की थी। उन्होंने ही यहाँ भद्रेश्वर शिवजी की स्थापना की। यहाँ पितरों को पिंडदान दिये जाते हैं। गया के सदृश परम पावन तीर्थ माना गया है इसी के समीप पितृतीर्थ अथवा ब्रह्मतीर्थ है। इस तीर्थ की स्थापना महर्षि अत्रि

के पुत्र दुर्वासा मुनि ने की यहाँ एरंड मुनि ने तपस्या की। इस स्थान पर पितृ श्राद्ध तथा पिण्डदान का अनन्त माहात्म्य है।

इससे दो डेढ़ मील आगे ओंकारेश्वर शिवजी का परम पवित्र तीर्थ है। जिसका वर्णन हम पीछे कर ही चुके हैं।

ओंकारेश्वर मान्धाता क्षेत्र में जो मार्कण्डेय शिला है उसके समीप ही स्वामी मायानन्दजी सरस्वती का आश्रम है। स्वामीजी ने नर्मदा की परिक्रमा करने वालों के लिये बड़े परिश्रम से "नर्मदा पञ्चाङ्ग" पुस्तक का निर्माण किया है। प्रथम खण्ड में पहिले उन्होंने अमरकंटक के तीर्थों का, नर्मदाजी की उत्पत्ति का वर्णन करके, नर्मदा परिक्रमा में आने वाले दोनों तटों के तीर्थों की संख्या तथा किस तीर्थ में कितने तीर्थों का माहात्म्य है यह बताया है। फिर अमरकंटक से विमलेश्वर और विमलेश्वर से अमरकंटक के समस्त स्थानों के नाम, पहिले से दूसरा स्थान कै मील है, कहाँ कौन-सी नदी का संगम है। किस तीर्थ में कै दिन रहना चाहिये। इसकी विषय सूची दी है। फिर नर्मदाजी किस राज्य में कै मील बही हैं उसका वर्णन है। फिर नर्मदा तीर्थ के सुन्दर नगरों का वर्णन है। फिर नर्मदा तट पर कहाँ-कहाँ कब-कब कौन-सी तिथियों में मेले होते हैं, उन्हें गिनाया है। फिर कुछ अपने बनाये पदों का पौराणिक स्तोत्रों का सुन्दर संग्रह करके प्रथम खण्ड समाप्त किया है। द्वितीय खण्ड में नर्मदाजी के दक्षिण तट के तीर्थों का तथा तृतीय खण्ड में उत्तर तट के तीर्थों का वर्णन किया है। २६४ पृष्ठ की बहुत ही उपयोगी पुस्तक है। उन्होंने स्वयं दो बार नर्मदाजी की पैदल परिक्रमा की है। पहिली परिक्रमा में स्थान-स्थान पर ठहरकर उनके विवरण, दूरी आदि लिखे हैं। चित्र लिये हैं। दूसरी परिक्रमा में पुनः उनका आवश्यक संशोधन किया है। इस प्रकार पुस्तक बहुत ही उपयोगी बन गई है।

आपका जन्म सम्वत् १९२५ में ग्वालियर में हुआ आप बाल्यकाल से ही मेधावी थे। इनका पूर्व काल का नाम रामचन्द्र लक्ष्मण देसाई था। गीता के दिव्य दृष्टि ज्ञान की इन्हें जिज्ञासा



श्री १०८ स्वामी मायानन्द जी महाराज

हुई। आपने सम्वत् १९६६ में काशी के परम विद्वान् स्वामी विशुद्धानन्दजी से संन्यास दीक्षा ली। तब से आपका नाम स्वामी मायानन्दजी सरस्वती हुआ। आपने सम्पूर्ण देश में घूम-

घूमकर दिव्य दृष्टि और धर्म का प्रचार किया। इन्होंने हिन्दी संस्कृत तथा मराठी में और भी बहुत से ग्रन्थों का निर्माण किया। जिनमें गीतोपनिषद्, चमत्कार-निर्णय, नर-नारायण, सर्वाङ्ग योग आदि मुख्य हैं। मराठी तथा हिन्दी में इन्होंने कवितायें भी की हैं। सन् १९३४ में आप परम धाम को पधार गये।

छप्पय

रिद्धनाथ करि दरस चलो हँड़िया तैं आगे।
घाट उचान न्हाय सघन बन बीहड़ लागे॥
जोगा किला लखाय बढ़ो अजनाल सुसंगम।
माचक संगम निरखि पुण्यवर घाट मनोरम॥
बलकेश्वर वर घाट है, बलड़ी छोटा तवा तहँ।
बलवाड़ा अरु पुनासा, ग्राम बायफल निकट जहँ॥

सप्त मातृका तीर्थ सात माता इत निबसें।
भैरव वर हनुमान, अनेकनि मन्दिर बिकसें॥
है काबेरी नदी भयो संगम सुयथारथ।
सुर कुवेर भण्डारि मनोहर सुन्दर तीरथ॥
वाराही संगम जहाँ, मिलीं चंडवेगा तहाँ।
एरंडी संगम विमल, ओंकारेश्वर शिव जहाँ॥

—:०:—

ओंकारेश्वर से खरगौंन

(११)

नमोऽस्तुते पुण्यजलाशये शुभे
विशुद्धसत्त्वे सुरसिद्धसेविते।
नमोऽस्तु ते तीर्थगणैर्निषेविते
नमोऽस्तु रुद्राङ्ग समुद्भवे वरे ॥*

(स्कन्दपुराणे)

छप्पय

कल कल रव करि बहो हरो विपदा भय भारी।
गिरि वन तोरति चलो सघन बन बिचरन वारी॥
थावर जङ्गम जीव जननि! जे तव तट निबसें।
तव वर जल करि पान त्यागि तनु सुरपुर प्रविसें॥
सुर नर मुनि सेवित शुभे! शङ्करतनया नाम है।
अरुन वरन वर युगल पद, पदुमनि माहिँ प्रनाम है॥

कलियुग में ध्यान, योग, यज्ञयाग तथा अन्य साधन तो कठिन हैं। समय के प्रभाव से न तो वैसी पवित्रता है, न प्रज्ञा है और वैसे उपकरण साधन हैं। इस युग में तो दो ही साधन सर्वसुलभ

---

* हे शुभे! तुम पुण्य जल प्रवाहित करने वाली हो तुम्हें नमस्कार है। हे सुरसिद्धों द्वारा सेवित विशुद्ध सत्त्व वाली देवि! तुम समस्त तीर्थों द्वारा भी सेवनीया हो तुम्हें प्रणाम है। हे वरे! तुम श्री शिवजी के अंग द्वारा उत्पन्न हुई हो। तुम्हारे पाद पद्मों में पुनः पुनः प्रणाम है।

सर्वोपयोगी और सर्वसुलभ हैं। एक तो भगवत् भक्ति भगवन्नाम का स्मरण तथा दूसरे तीर्थों की यात्रा वैसे सहजा वृत्ति को सर्वोत्तम साधन बताया है। बिना किसी प्रयास के चित्त की वृत्तियाँ सहज रूप में भगवान् में लग जायँ। यह सत्ययुग का साधन है। सत्ययुग में सभी प्राणी सत्त्व प्रधान होते हैं, उनकी संसारी वस्तुओं में ममता नहीं होता। वे योगक्षेम के लिये प्रयत्न नहीं करते, प्रकृति दत्त पदार्थों से अपना निर्वाह करते हैं उनकी स्वाभाविक सहज वृत्ति भगवान् में ही लगी रहती है।

दूसरा साधन है योगधारणा। यम नियमादि अष्टाङ्गयोग द्वारा चित्त को शुद्ध करके समाधि में भगवत् रस का पान करना। या बड़े-बड़े यज्ञ यागादि द्वारा भगवान् की आराधना करना। यह त्रेता युग की साधना है।

तीसरी साधना है, देवताओं की पूजा। भगवत् विग्रहों की अपनी सामर्थ्य के अनुसार चौसट प्रकार से, षोडष प्रकार से, पञ्चोपचार से पूजा अर्चा करना। महाराजों की भाँति ठाट-बाट से शास्त्रीय विधि द्वारा भगवान् की सेवा करना। यह प्रधानतया द्वापर की उपासना है।

चौथी साधना है, तीर्थों में भगवत् बुद्धि से भ्रमण करना, तीर्थों का सेवन करना और भक्ति भाव से भगवान् के नामों का, गुणों का कीर्तन करना। वास्तव में कलियुगी प्राणी यही कर सकते हैं। भगवान् न तो किसी एक स्थान में बँधे हैं, न किसी एक साधन में बँधे हैं। वे तो सर्वव्यापक हैं, सबमें समान रूप से ओत-प्रोत हैं, जो उन्हें जिस प्रकार से जिस भावना से भजता है, वे उसे उसी भावना से वैसा ही फल देते हैं। सर्वत्र भगवान् को देखना। सबमें उन्हीं का रूप देखकर भगवत् बुद्धि से सबको प्रणाम करना यही भगवत् भक्ति है। तीर्थों में जाकर हम यही करते हैं। जल में, थल में, नदी में, पर्वत में भगवत्

बुद्धि रखकर उनकी पूजा करते हैं। उन्हें प्रणाम करते हैं। यही बात श्रीमद्भागवत में महाराज विदेहजन के पूछने पर योगेश्वर कवि ने कही है। वे कहते हैं—"राजन्! देखो, यह आकाश है, यह सरसर करके चलती हुई भीतर बाहर की वायु है, यह जो सबमें व्याप्त तथा प्रज्वलित अग्नि है, यह जो प्राणियों के शरीरों में, कूप बाबरी में, नदियों में, तथा समुद्रों में भरा हुआ जल है, यह जो गन्धवती पृथ्वी है, ये जो चमकते हुए ग्रह, नक्षत्र तारे हैं। ये जो समस्त स्थावर जङ्गम प्राणी हैं, ये जो दशों दिशायें हैं, ये जो वृक्ष, वनस्पति, नदी, पर्वत हैं, ये सब-के-सब भगवान् के शरीर हैं, इन सबमें अन्तर्यामी रूप से भगवान् बैठे हुए हैं। इन सब रूपों में भगवान् प्रत्यक्ष प्रकट होकर बैठे हुए हैं। जो भागवत धर्मों का पालन करने वाले भगवत् भक्त हैं, वे उनके सम्मुख जो भी कोई आता है। चाहे वह जड़ हो या चैतन्य हो, स्थावर हो जंगम हो, प्राणी हो, अप्राणी हो। उसे ही अनन्यभाव से भगवान् की भावना से प्रणाम करते हैं।❀

यह कौन नहीं जानता ये जल को बहाने वाली नदियाँ हैं, सभी देखते हैं, मन्दिरों में पाषाण की, काष्ठ की, मृत्तिका आदि की मूर्तियाँ हैं, यह कौन नहीं जानता ये वृक्ष हैं, पहाड़ हैं। किन्तु इनमें भगवत् भावना करके, इनकी भगवत् बुद्धि से सेवा पूजा अर्चा करना यही तीर्थ यात्रा का स्वरूप है। सबमें भगवत् बुद्धि

❀ खं वायुमग्निं सलिलं महीं च
ज्योतींषि सत्त्वानि दिशो द्रुमादीन्।
सरित्समुद्रांश्च हरेः शरीरम्
यत् किञ्च भूतं प्रणमेदनन्यः॥
(श्री० भा० ११ स्क० २ अ० ४१ श्लो०)

करके सबके सामने नत मस्तक होना यही तीर्थ भ्रमण का लक्ष्य है।

फाल्गुन शुक्ला पंचमी (३ मार्च) को हम लोग श्रीअमलेश्वर शिवजी के दर्शन करके मोटरों द्वारा चल दिये। खरगाँव, जुलत्रानिया तथा राजपुर होते हुए चले। मार्ग में खरगोंन में दोपहर का भोजन था। आज हमें कसरावद पहुँचना था, किन्तु यहाँ के भक्तों के अत्यन्त आग्रह के कारण रात्रि में भी यहीं रुकना पड़ा। यहाँ रात्रि में रासलीला हुई। और सभा सत्सङ्ग हुआ। आज बहुत ही न्यून यात्रा रही। लगभग ५०-६० किलोमीटर की। मार्ग में हमें ये मुख्य-मुख्य स्थान पड़े अमलेश्वर, बड़ूसा, बेड़िया, भीकनगाँव, अहीरखेड़ा, भोगाँव, बेदाँबानदी, शाहपुरा, सुखाला, कुडिया इत्यादि।

यदि हम नर्मदा किनारे-किनारे श्रीओंकारेश्वर से चलते तो हमें मार्ग में जो स्थान घाट पड़ते उनका विवरण नीचे दिया जाता है। खेरियाघाट तक तो नरसिंहपुर जिला था। इसके आगे हुसङ्गाबाद जिला आया वह पुनघाट तक चला। पुनघाट से आगे नेमाड़ जिला आ गया। ओंकारेश्वर नेमाड़ जिले में ही है।

१—ओंकारेश्वर से ८ मील आगे खेड़ीघाट है, नर्मदाजी के किनारे-किनारे ऊपर पक्की सड़क है, जो मोरटक्का स्टेशन तक जाती है। ओंकारेश्वर को आने वाले यात्री इसी मोरटक्का स्टेशन पर उतरते हैं। मोरटक्का से एक मील आगे खेड़ीघाट है। कुछ परिक्रमा वाले नर्मदाजी के किनारे-किनारे नीचे से भी आते हैं। नीचे आने वाले को निरन्तर नर्मदा मैया के दर्शन होते हैं। ओंकारेश्वर की झाड़ी इस पार की यहाँ समाप्त होती है। यहाँ राजराजेश्वर का मन्दिर है पुरानी धर्मशाला है। यहाँ नर्मदाजी पर रेल का पुल है इन्दौर से हम इसी घाट पर स्नान करने आते थे।

२—खेड़ीघाट से आगे ८ मील पर गौमुखा घाट है। यहाँ पर नीलकण्ठेश्वर शिवजी का मन्दिर है नीचे नील गंगा का कुंड है। सुनते हैं महारानी अहल्याबाई ने इनका जीर्णोद्धार कराया था। यह नील गंगा कुण्ड से गौमुख द्वारा नर्मदाजी में जल आता है, यहाँ के स्नान का श्राद्ध तर्पण का बहुत अधिक माहात्म्य है।

३—गोमुखा घाट से ३ मील आगे काकरिया नाम का ग्राम है। इस ग्राम से कुछ आगे नर्मदा के बीच में एक चबूतरे पर गंगेश्वर शिवजी विराजमान हैं। यहाँ की ऐसी कथा है कि इस स्थान पर नर्मदाजी के तट पर महर्षि मातङ्गजी तपस्या करते थे। एक समय कुछ ऋषिगण महर्षि के समीप आये। उन आगत अतिथियों का महर्षि ने स्वागत सत्कार करना चाहा।

ऋषियों ने कहा—"हम तो पहिले गंगा स्नान करेंगे, तब आपका आतिथ्य स्वीकार करेंगे।" यहाँ गंगा कहाँ ? यहाँ तो नर्मदाजी थीं। किन्तु ऋषि ने अपने तपः प्रभाव से गंगाजी का आवाहन किया। यहाँ नर्मदाजी की दो धारायें हैं दोनों पश्चिम की ओर प्रवाहित होती हैं, ऋषि ने अपने तपोबल से नर्मदाजी के प्रवाह को बीच में पूर्व दिशा की ओर परिवर्तित कर दिया। अतः यहाँ वैसे तो नर्मदाजी अपने दोनों किनारों पर पश्चिम की ओर प्रवाहित होती हैं। किन्तु बीच में इस चबूतरे के दोनों ओर बड़े बेग से पूर्व की ओर बहती हैं। वहाँ पर नर्मदाजी में गंगा प्रकट हो गयीं। ऋषियों ने श्रीगंगाजी में स्नान करके मातङ्ग मुनि का आतिथ्य ग्रहण किया।

४—गंगेश्वर काकरिया से ५ मील आगे रावेरखेड़ी ग्राम है। इस ग्राम के ही समीप पेशवाओं की धर्मशाला तथा घाट है। यहाँ पर प्रथम बाजीराव पेशवा की समाधि है। पेशवाओं ने जब अपने राज्य का विस्तार किया था, तब सर्वप्रथम उत्तर भारत को

जीतने के लिये इसी घाट से नर्मदाजी को पार किया था। उसके स्मारक स्वरूप यहाँ श्रीरामेश्वरजी का मन्दिर है और पेशवाओं की धर्मशाला है। यहाँ से सनावद रेलवे स्टेशन १२ मील है। मन्दिर तथा धर्मशाला जीर्णशीर्ण दशा में हैं कौन इनका जीर्णोद्धार करावे ?

५—रावरखेड़ी घाट से लगभग एक मील आगे खड़क नदी का सङ्गम है। खड़क सङ्गम से ५ मील आगे मरदाना ग्राम के समीप ६—मोरध्वज तीर्थ है। कहते हैं पहिले यह मोरध्वज राजा की राजधानी थी, जिसने तीर्थराज प्रयाग में आकर प्राण त्याग किये थे। किले के खंडहर अभी तक विद्यमान हैं। एक गुफा में महाराजा मयूरध्वज के सिंहासन के चिन्ह बताये जाते हैं महारानी अहल्याबाई का बनवाया पक्का घाट है तथा मयूरेश्वर शिवजी का मन्दिर है।

७—मोरध्वज तीर्थ से ५ मील आगे तेलियाभट्या ग्राम के समीप सातपीपली घाट है। इसे गोधारी घाट भी कहते हैं। इस सम्बन्ध की एक कथा है प्राचीन काल में एक महात्मा यहाँ निवास करते थे। वे बड़े कर्मकांडी थे। एक बार उन्होंने बड़ा यज्ञ किया। सुनते हैं उस यज्ञ की भस्मी अभी तक निकलती है। एक समय एक ब्राह्मण इनके समीप आया। उसने बड़ी दीनता से महात्माजी से प्रार्थना की—भगवन् ! मुझे ब्रह्म हत्या लग गयी है, कोई ऐसा उपाय बताइये जिससे मेरी ब्रह्म हत्या छूट जाय।"

महात्माजी ने कुछ सोचकर उसे एक पीपल का डंडा दिया और कहा—"देखो, इस डंडे को लेकर तुम समस्त तीर्थों में जाना। स्वयं तीर्थ स्नान करके इस डंडे को भी स्नान कराना। जहाँ इस डंडे में हरे अंकुर उत्पन्न हो जायँ, वहीं समझना मेरी ब्रह्म हत्या छूट गयी।"

ब्राह्मण महात्मा की बात सुनकर समस्त तीर्थों में गया। वह जहाँ जाता था, वहीं उस तीर्थ में डंडे को स्नान कराता किन्तु कहीं भी उस डंडे में अंकुर उत्पन्न नहीं हुआ। लौटकर वह पुनः यहाँ नर्मदा के किनारे आया। जैसे ही उसने नर्मदाजी में स्नान करके इस डंडे को स्नान कराया वैसे ही उसमें से सात अंकुर फूट पड़े। तब उसने दान धर्म, ब्राह्मण भोजन कराया उसकी ब्रह्महत्या छूट गयी। पहिले यहाँ सात पीपल के वृक्ष थे। अब उनमें से एक ही शेष रह गया है।

अच्छा, इसे गौधारी घाट क्यों कहते हैं ? तो सुनो, इस तीर्थ में एक गौ का उद्धार हुआ था तभी से इसका नाम गौ-उद्धारी (गौधारीघाट) पड़ गया। यहाँ भी स्नान, दान तथा ब्राह्मण भोजन का बड़ा माहात्म्य है।+

८—सातपीपलाघाट से ६ मील आगे लेपाघाट है। यहाँ वेदा नदी आकर नर्मदाजी में मिलतीं हैं। सङ्गम के समीप ही दो तीर्थ हैं। एक तो सारस्वत तीर्थ दूसरा मरकटी तीर्थ। अब आप इन दो तीर्थों के सम्बन्ध की पौराणिक कथायें सुनिये। पहिले सारस्वत तीर्थ की ही कथा सुनें—द्वापर युग के द्वितीय चरण में सरस्वती अथवा ब्राह्मी-वेदा-का यहाँ सङ्गम हुआ है। यहाँ पर मंकणक ऋषि शिवजी की आराधना करते थे। चिरकाल तक आराधना करने के कारण शिवजी की कृपा से उन्हें विश्वरूप दर्शन हुआ। अब उनकी समदृष्टि हो गयी। वे सब में सर्वत्र विश्वरूप को ही देखने लगे। वे आनन्द में मग्न होकर नृत्य करने लगे। उन्हें सर्वत्र विश्वरूप के ही दर्शन होते थे। उनका चित्त विश्वमय हो गया था, इसलिये उनके नृत्य के साथ सम्पूर्ण विश्व नृत्य करने लगा। तब समस्त देवता घबराये और ब्रह्माजी की शरण में गये।

+ (रे० खं० ४४ अ०)

ब्रह्माजी ने कहा—"भाई, वह ऋषि तो शिव भक्त है, उनके कहने से ही वह मान सकता है। अतः हम सब मिलकर शिवजी के समीप चलें।" यह कहकर ब्रह्माजी सब देवताओं सहित शिवजी की सेवा में समुपस्थित हुए। उन्होंने सब समाचार सुनाकर प्रार्थना की—भगवन्! समस्त जगत् नृत्य कर रहा है। यदि मंकणक महर्षि इसी प्रकार नृत्य करते रहे तो विश्व का कार्य कैसे चलेगा? आप उन्हें नृत्य करने से रोकिये।"

यह सुनकर शिवजी समस्त देवताओं को साथ लेकर मंकणक महर्षि के समीप गये। वे निरन्तर नृत्य करने में ही तल्लीन थे। शङ्करजी ने पूछा—"मुनिवर! आप क्यों नृत्य कर रहे हैं? इस पर महर्षि ने कहा—"आप कौन हैं? मैं तो अपने शरीर में सम्पूर्ण विश्व को मानकर आनन्द के कारण ही नृत्य कर रहा हूँ।"

यह सुनकर शिवजी ने अपने अँगूठे से ताड़न किया, जिससे उनके शरीर से भस्म-ही-भस्म निकलने लगी। तब ऋषि ने शिवजी को प्रणाम किया, उनकी स्तुति की और यहाँ मंकणेश्वर शिवजी की स्थापना की।❀

अब वेदासङ्गम मर्कटेश्वर तीर्थ की भी कथा को श्रवण कीजिये। पूर्वकाल में यहाँ एक बानरी मर्कटी रहती थी। एक दिन बानरी चंचलता वश नर्मदा के किनारे एक बाँस के झुण्ड को तोड़ने लगी। फटे बाँस के बेग से उसका शिर बास में उलझ गया और वह मर गयी। उसका धड़ तो नर्मदाजी के जल में गिर गया। किन्तु शिर बाँस के ढूह में उलझा रह गया। हड्डियाँ नर्मदाजी में गिर गयीं थीं, उसी के पुण्य प्रभाव से वह महाराज सत्यसेन की धर्मपत्नी हुई। उनकी पट्टरानी बनी। उसका नाम शृङ्गार बल्लरी हुआ। उसका सम्पूर्ण शरीर तो बहुत ही सुन्दर तथा दिव्य था, किन्तु मुख उसका बन्दरी के सदृश था।

❀ (रे० खं० ४४ अ०)

एक समय महाराज सत्यसेन अपनी पट्टरानी शृंगार बल्लरी को साथ लेकर आखेट के लिये वन में गये। संयोग की बात कि आखेट करते-करते महाराज नर्मदा किनारे यहाँ वेदा के संगम पर आ गये। राजा ने अपनी रानी से कहा—तुम तब तक यहीं वन विहार करो, मैं आखेट करने सघन वन में जा रहा हूँ।" यह कहकर रानी को वहीं छोड़कर राजा चला गया। नर्मदाजी का किनारा, वेदा का संगम, फल पुष्पों से नमित वृक्ष, छोटी-छोटी पर्वत श्रेणियाँ अलौकिक दृश्य था। रानी आनन्द में भरकर इधर-उधर टहलने लगी। टहलते-टहलते सामने बासों के झुण्ड में चली गयी। वहाँ जाते ही उसे पूर्वजन्म की स्मृति हो आयी। मैं पहिले यहीं बानरी थी। इसी बांस के झुण्ड के दो बाँसों के फटने से मेरा धड़ नर्मदाजी में गिर गया था सिर इसी बाँस के झुण्ड में उलझा रह गया था। रानी ने ध्यान से देखा वहाँ बाँसों में उसके सिर की सूखी हड्डियाँ उलझी हुई थीं। रानी ने अपने हाथ से उन हड्डियों को निकालकर नर्मदाजी में प्रवाहित कर दिया। हड्डियों के नर्मदाजी में पड़ते ही रानी का मुखमण्डल चन्द्रमा के समान दिव्य हो गया। अब वह स्वर्गीय अप्सराओं के सदृश दिखायी देने लगी। इतने में ही महाराज भी आखेट से लौटकर आ गये। अपनी रानी को स्वर्गीय अप्सरायों के सदृश देखकर, उसके सौन्दर्य माधुर्य्य तथा लावण्य युक्त मुखमण्डल को निहार कर, परम चकित हुए और पूछा—"तुम्हारा यह मुख इतना सुन्दर कैसे हो गया ?"

तब रानी ने अपने पूर्वजन्म का सब वृत्तान्त बताया। मैं पहिले यहीं बानरी थी। बानरी चञ्चलता के कारण मैं बाँसों से खेलने लगी। सहसा दो बाँसों की रगड़ से बाँस फटने से मेरा सिर बासों के बीच में भिँच गया। इससे धड़ तो नर्मदाजी के परम पावन पय में पड़ गया। इससे वह तो दिव्य हो गया मैं

महारानी बन गयी। किन्तु सिर यहीं उरझा रह गया। अतः मेरा सिर बानरी का-सा ही बना रहा। आज यहाँ आकर मुझे पूर्व-जन्म की सब स्मृति हो आई। मैंने अपने सिर की सूखी हड्डियाँ श्री नर्मदाजी के दिव्य पावन पय के प्रवाह में प्रवाहित कर दीं। प्रवाहित करते ही मेरा मुखमण्डल चन्द्रमा के सदृश पावन बन गया।" राजा यह सुनकर परम प्रमुदित हुए उसी दिन से यह वेदा सङ्गम मर्कटतीर्थ के नाम से प्रसिद्ध हो गया।[1]

९—वेदा सङ्गम मर्कटतीर्थ से ४ मील आगे मांडव्याश्रम है। यहाँ पर मांडव्य ऋषि ने तप किया था। यहाँ पर विशोक संगम है और विशोकेश्वर शिवजी का मन्दिर है। यहीं पर विभाण्डक मुनि ने भी तपस्या की थी। यहां पर वसिष्ठ पत्नी अरुन्धती, ब्रह्मापत्नी सावित्री तथा कश्यप पत्नी दिति आदि देवपत्नियों, ऋषि पत्नियों ने तपस्या करके सिद्धि प्राप्त की थी, यह परम पावन तीर्थ है, यहाँ पर सिद्ध तथा विश्वेदेव आदि सदा निवास करते हैं।[2]

१०—माण्डव्याश्रम से दो मील आगे स्वर्णदीप तीर्थ है। इस घाट का नाम नवाड़ी टोला घाट है। यहाँ शालिवाहनेश्वर शिवजी का मन्दिर है। इसके समीप ही हिरण्यगर्भा नदी का श्रीनर्मदाजी के साथ सङ्गम है। यह परम पावन तीर्थ है। यज्ञ गर्भेश्वर शिवजी का सानिध्य है। यहाँ ऋषिगण, देवगण नित्य स्नान के निमित्त आते हैं। यहाँ कार्तिकी अमावास्या, चैत्र की पूर्णिमा को तथा प्रति मास की चतुर्दशी अमावास्या को स्नान, दान, तर्पण तथा पिण्डदान का माहात्म्य है।[3]

११—स्वर्णदीप तीर्थ से ६ मील दूर बलगाँव घाट तीर्थ है। स्वर्णद्वीप तीर्थ से बलगाँव घाट तक नर्मदाजी की कई धारायें हो

१. (स्क० पु० रे० खं० ९ अ०) २. (रे० खं० ४२ अ०)
३. (रे० खं० ४२ अ०)

गयी हैं। इसी को १२—सहस्त्रधारा कहते हैं। उन्हीं धाराओं में से एक धारा पूर्व वाहिनी भी है। परशुरामजी ने सहस्त्रबाहु के सहस्रों वीरों का यहीं नाश किया था। यह स्थान अत्यन्त रमणीक तथा दर्शनीय है।

१३—सहस्त्रधारा से ६ मील आगे खलघाट है। यहाँ पर साटक नदी का संगम है। यहाँ नर्मदाजी के पाषाण में ६० शिव-लिङ्ग खुदी हुई हैं। इसीलिये इसका नाम साठक लिङ्गी तीर्थ है। आगरा से जो बम्बई को पक्की सड़क जाती है। वह यहीं नर्मदा को पार करती है। नर्मदाजी पर १५ फुट ऊँचा पक्का पुल है। कहते हैं ब्रह्माजी ने इसी स्थान पर तप किया था।

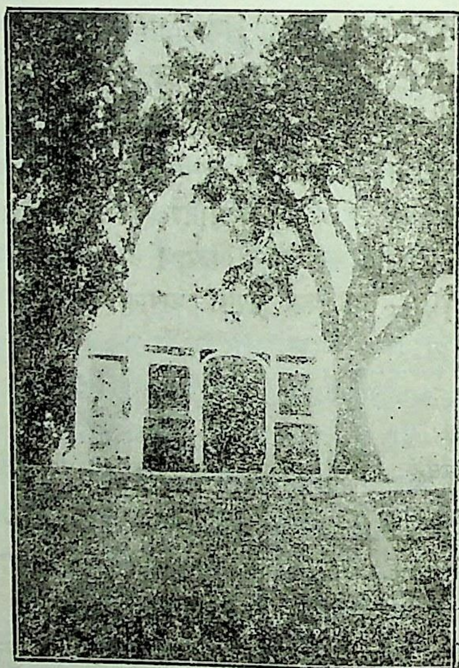
आज हम लोगों ने लगभग ७० किलोमीटर की यात्रा की। खलघाट, ओंकारेश्वर से ७५ किलोमीटर ही है। इस प्रकार हमने ओंकारेश्वर से खलघाट का वर्णन किया। अब खलघाट से आगे राजघाट, बड़वानी तक का वर्णन अगले अध्याय में किया जायगा।

छप्पय

ओंकारेश्वर तीर्थ देखि अमलेश्वर लखिकें।
आगे खेड़ीघाट गोमुखाघाट निरखिकें॥
फिर राबेरहु गाँम खडकसङ्गममें आओ।
मरदानाके निकट तीर्थ मोरध्वज न्हाओ॥
सातपीपलीके निकट, सारस्वत शशि अति सुखद।
मर्कटतीर्थ समीप ही, वैदासंगम पुण्यप्रद॥

लेपाघाट नहाय चलो रेवातट भाई।
मुनि माडव्यनिबास विशोकेश्वर दिखलाई॥

स्वर्णादीप वर तीर्थ नबाड़ीटोला पुर है।
आगे पुनि बलगाँम सहसधारा तीरथ है॥
रेवा धार अनेक इत, अद्‌भुत माँको ठाट है।
साटकसंगम साठ शिव, अति समीप खलघाट है॥



नर्मदा तट के एक घाट का दृश्य

खरगौंन से बड़वानी

(१२)

नमोऽस्तुते देवि समुद्रगामिनि
नमोऽस्तुते देवि वरप्रदे शिवे।
नमोऽस्तु लोकद्वयसौख्यदायिनि
ह्यनेक भूतौघ समाश्रितेऽनघे ॥*

(स्कन्द पुराणे)

छप्पय

भगवति! रेवे! चलीं अमरकंटकतैं लघु अँग।
बढ़त बढ़त बढ़ गई लई लघु सरिता बहु सँग॥
रेवासागर मिलीं क्षेत्र भृगु पावन कीन्हों।
करो जननि निष्पाप सबनिकूँ सुख अति दीन्हों॥
लोक और परलोकमें, शरनागतकूँ देउ सुख।
आवैं तव तट जीव जे, काटो तिनके पाप दुख॥

तीर्थ शब्द का अर्थ है जिसके द्वारा पापादिकों से तरा जाय (तरति पापदिकं यस्मात्) जितने भी जलाशय हैं सभी तीर्थ हैं।

---

* हे समुद्र को जाने वाली देवि! तुम्हें नमस्कार है। हे वरदान देने वाली देवि! हे कल्याण करने वाली देवि! तुम्हें नमस्कार है। हे इस लोक तथा परलोक दोनों लोकों में सुख देने वाली देवि! हे अनेक प्रकार के प्राणियों से प्रशंसित पापरहित देवि! तुम्हें बारम्बार प्रणाम है।

स्वयं जल का ही नाम तीर्थ है। जलों में उत्तरोत्तर श्रेष्ठ हैं, जैसे कूप जल से वापी का, उससे तालाब का, उससे देवताओं ऋषियों के बनाये तीर्थ स्थानों का, उससे गङ्गाजी का जल महातीर्थ है। इन तीर्थ स्थानों में जो ऋषि, महर्षि, साधु महात्मा जाकर निवास करते हैं, इससे तीर्थ का तीर्थत्व बढ़ जाता है। परम भागवत महात्माओं के निवास से उनके स्नान से तीर्थ महातीर्थ बन जाते हैं। जब विदुरजी तीर्थ यात्रा करके हस्तिनापुर में लौटे तब धर्मराज युधिष्ठिर ने कहा—"चाचाजी ! आप किन-किन तीर्थों में गये ? किन-किन मुख्य तीर्थों का आपने सेवन किया ? अजी, आपको तीर्थों से क्या लेना ? आप जैसे परम भगवत् भक्त स्वयं ही तीर्थ स्वरूप हैं आप लोग तो तीर्थों को भी महातीर्थ बनाने के निमित्त तीर्थों का सेवन करते हैं। बात यह है कि पापियों के स्नान करने से तीर्थ पापमय बन जाते हैं। जब भगवत् भक्त उनमें स्नान करते हैं तो तीर्थों के समस्त पाप नष्ट हो जाते हैं, क्योंकि भक्तों के हृदय में सदा पापों को नाश करने वाले गदाधर भगवान् वास करते हैं,* जहाँ परम भागवतों ने गोता लगाया वहाँ उनके हृदय में बैठे भगवान् भी गोता लगाते हैं तो जैसे सूर्य के उदय होते ही समस्त अन्धकार भाग जाते हैं उसी प्रकार भक्तों के हृदय में बैठे भगवान् ने जहाँ गोता लगाया, तहाँ तीर्थों के सभी पाप भाग जाते हैं, वे पुनः निष्पाप हो जाते हैं। इसीलिये तीर्थों में भी उन तीर्थों का विशेष माहात्म्य है, जहाँ किसी ऋषि मुनि सन्त महात्मा ने निवास किया हो।

हाँ, तो हम लोग फाल्गुन शुक्ला षष्ठी (४ मार्च) को खरगौन से चलकर कसरावद में आये। पहिले कसरावद में ही रात्रि

---

* भवद् विधा भागवतास्तीर्थभूताः स्वयं विभो।
तीर्थीकुर्वन्ति तीर्थानि स्वान्तस्थेन गदाभृता ॥
(श्री० भा० १ स्क० १३ अ० १० श्लोक)



सीधवा में श्रीब्रह्मचारीजी श्रीहनुमानजी की स्थापना करके बनवासी छात्रों के लिये छात्रावास का ब्रह्मचारीजी, सभारम्भ मञ्च पर बैठे दायीं ओर से श्रीस्वामी प्रत्यक्षानन्दजी उनके साथी महात्मा, सियाराम, बङ्गाली स्वामी, व्यासजी, आचार्यजी

पृष्ठ १५४

विश्राम की बात थी, किन्तु खरगौंन वालों के अत्यन्त आग्रह के कारण वहीं रात्रि में रहे। प्रातः खरगौंन से चलकर कसरावद होते हुए जुलवानिया, राजपुर होते हुए पलसद में आये। बीच में अंजड़ में पाठ पूजन तथा भोजन हुआ। रात्रि में बड़वानी में आये। बड़वानी वालों ने नर्मदा यात्रियों का गाजे बाजे के साथ भव्य स्वागत किया। नर-नारियों की अपार भीड़ थी। मार्ग के प्रायः प्रत्येक ग्राम के भाइयों ने स्वागत-सत्कार का अपूर्व प्रबन्ध कर रखा था। बड़वानी में आकर सभा हुई। रासलीला मण्डली द्वारा रासलीला हुई और फिर सबने विश्राम किया। पहिले बड़वानी में राजाओं का राजधानी थी। अब तो सब राज्य ही नष्ट कर दिये गये। उनके उत्तराधिकारी धर्महीन हुए। जिन्होंने राज्यों की ओर से होने वाले धर्म, कर्म, पूजा-पाठ सभी बन्द कर दिये। कालस्य कुटिला गतिः। मार्ग में हमें ये मुख्य स्थान पड़े कुंडा नदी, मेनगाँव, सैलानी, गोपालपुरा कसरावद, खलघाट, कोही, डोकरी, कुआ, बेदावा, ब्राह्मण गाँव, तलबाड़ा, बहालो नदी, बड़वानी।

अच्छा तो अब चलिये पैदल। यदि नर्मदा किनारे-किनारे पैदल परिक्रमा करें तो मार्ग में कौन-कौन स्थान पड़ेंगे इसका वर्णन आगे किया जायगा।

१—हाँ, तो आप खलघाट पहुँच गये थे। जहाँ साटक नदी का संगम है और साठलिङ्गी तीर्थ है। खलघाट से ७ मील चलकर वर्खडसंगम है, जहाँ ग्यारहलिङ्गी तीर्थ है। पुनघाट तक तो हुसंगाबाद जिला था। उसके आगे रावेरखेड़ी तक नेमाड़ का जनपद था। इसके आगे सहस्रधारा तक इन्दौर जनपद है। खलघाट 'धार' जनपद में है। खलघाट से ७ मील कठोरा ग्राम है। कठोरा घाट के सामने ही धर्मपुरी द्वीप है।

२—कठोरा ग्राम से ६ मील आगे ब्राह्मण ग्राम है, जहाँ

ब्रह्मावर्त तीर्थ है। यहाँ फिर १०-११ मील के लिये इन्दौर जनपद आ जाता है। ब्राह्मण ग्राम इन्दौर जिले में ही है। इस क्षेत्र का नाम ब्रह्मावर्त क्यों पड़ा ? इसकी रेवा खण्ड में कथा है कि यहाँ ब्रह्माजी सदा निवास करते हैं। नर्मदजी के पवित्र क्षेत्र में जहाँ ब्रह्माजी तपस्या करते हैं, वहाँ ब्रह्मेश्वर (गुप्तेश्वर) नाम के शङ्करजी हैं। यह ब्रह्मावर्त क्षेत्र परम पावन क्षेत्र माना जाता है। यहाँ रुद्र भगवान् की आराधना का अत्यधिक माहात्म्य है। यहाँ ब्रह्मा, विष्णु और महेश तीनों ही देवों का निवास माना जाता है। यहाँ पितृ तर्पण तथा ब्रह्मभोज का सबसे अधिक माहात्म्य है। यहाँ सदाचारपूर्वक किये हुए जप का कई गुणा फल होता है।※

समीप ही पत्रेश्वर (सुखेश्वर) शंकरजी हैं। भगवान् पत्रेश्वर की स्थापना चित्रसेन गन्धर्व के पुत्र ने की। इस सम्बन्ध की एक कथा है—चित्रसेन गन्धर्व देवराज इन्द्र का परम मित्र था। चित्रसेन का पुत्र पत्रेश्वर अत्यन्त ही सुन्दर था। वैसे गन्धर्वगण और विद्याधर उपदेवों में सबसे अधिक सुन्दर होते हैं, किन्तु पत्रेश्वर तो सभी गन्धर्वों से भी अधिक सुन्दर था।

एक दिन इन्द्र तथा अपने पिता चित्रसेन के साथ पत्रेश्वर शिवजी की सभा में गये। उस समय शिवजी की सभा में स्वर्ग की परम सुन्दरी अप्सरा मेनका नृत्य कर रही थी। मेनका के सौन्दर्य माधुर्य तथा लावण्य को देखकर पत्रेश्वर अत्यन्त काम पीड़ित होकर उन्मत्त हो उठा। देवराज इन्द्र ने जब उसे कामोन्मत्त होते देखा तो उन्होंने उसे शाप दिया—"तैंने यह मर्त्यधर्मा मनुष्य के समान आचरण किया है, जा, तू अब मर्त्यलोक में निवास करेगा।"

※ (रे० खं० ५४ अ०)



सेंधवा में

श्री ब्रह्मचारीजी के साथ बङ्गाली स्वामी

पृष्ठ १५६

इन्द्र का शाप सुनते ही पत्रेश्वर का कामज्वर कर्पूर के समान उड़ गया। वह अत्यन्त ही भयभीत हुआ तथा विनयावनत होकर देवराज इन्द्र के चरणों में गिर गया और अत्यन्त ही विनीत भाव से उनसे बार-बार क्षमा याचना करने लगा।

उसकी प्रार्थना से द्रवित होकर इन्द्र ने कहा—"देखो, भैया! मर्त्यलोक में तो तुम्हें जाना ही पड़ेगा, किन्तु मर्त्यलोक में शिव-तनया श्री नर्मदाजी हैं, उनकी महिमा अपार है। तुम उनके तट पर बारह वर्ष तक ब्रह्मचर्यव्रत धारण करके शिवजी की आराधना करो। तुम्हारा कल्याण होगा और तुम सभी प्रकार के पापों से मुक्त हो जाओगे।

देवराज इन्द्र की इस आज्ञा को शिरोधार्य करके पत्रेश्वर ने यहाँ अपने नाम से शिवजी की स्थापना करके बारह वर्ष तक निरन्तर शिवजी की आराधना की, जिससे वह शाप के भय से विमुक्त होकर पुनः गन्धर्वलोक को चला गया।[1] यहाँ पितरों के निमित्त श्राद्ध, तर्पण तथा ब्रह्मभोज का अत्यधिक फल है। यहाँ पक्का घाट है। यहाँ से कुछ दूर पीछे बुराढ़ नदी का संगम है।

३—ब्राह्मण गाँव से ७ मील आगे मारू की चिचली नामक ग्राम है। इसके पास में देव नदी का संगम है। यहाँ से ३ मील आगे ४—लोहारया घाट है। यह बड़वानी जनपद में है। इन्दौर जिला यहाँ से समाप्त हो जाता है। यहाँ से दो मील आगे पहाड़ पर पांडवों के यज्ञ का स्थान है। वनवास के समय यहाँ पांडवों ने यज्ञ किया था। सुनते हैं, अब भी यहाँ यज्ञ की भस्म निकलती है। पर्वत पर नर्मदेश्वर, वरुणेश्वर तथा शिवयोगेश्वर आदि के मन्दिर हैं।[2]

५—लोहारयाघाट से ३ मील आगे केसरपुरा नाम का ग्राम

---

१. (रे० खं० ५४ अ०) २. (रे० खं० ५० अ०)

है, यहाँ नाहिली नदी का संगम है। यहाँ से १ मील आगे ६—मोहिपुरा ग्राम है। यहाँ सहस्त्रयज्ञाख्य तीर्थ है। प्राचीन काल में यहाँ भार्गव ऋषि निवास करते थे, उन्होंने यहाँ सहस्त्र यज्ञों को देखा था, इसीलिये इसका नाम सहस्त्र यज्ञाख्य तीर्थ है। यहाँ भी देव कर्म तथा पितृ कर्मों का बड़ा माहात्म्य है।[1]

७—सहस्त्र यज्ञाख्य तीर्थ से २ मील आगे दत्तवाड़ा घाट है। यहाँ पर कपालमोचन तीर्थ है। यहाँ कपालेश्वर शिवजी की आराधना का बहुत अधिक माहात्म्य है।[1] यहाँ से ३ मील आगे ८—छोटा वर्धा घाट है। यहाँ पर अग्नि तीर्थ है पूर्वकाल में यहाँ रहकर अग्निदेव ने घोर तपस्या करके सिद्धि प्राप्त की थी।[1] यहाँ से ५ मील आगे ९—पिपलोद घाट है। जहाँ पर सुसार नदी का संगम है। इससे ३ मील आगे १०—कसरावद घाट है, जहाँ सहस्त्र यज्ञ तीर्थ है यहाँ पर दक्ष प्रजापति के पुत्रों ने दिव्य सहस्त्र वर्षों तक तपस्या की और सहस्त्र यज्ञ किये जिससे उन्हें परम सिद्धि प्राप्त की। यहाँ पर किये हुए कर्मों का अन्य स्थान के किये हुए कर्मों से शतगुणा फल होता है। यहाँ भी श्राद्ध, तर्पण तथा ब्रह्मभोज का अत्यधिक माहात्म्य बताया है।[2]

११—कसरावद घाट से ३ मील आगे राजघाट है यहाँ पर रोहिणी तीर्थ है। इसका नाम रोहिणी तीर्थ क्यों पड़ा ? इस सम्बन्ध की भी एक कथा है—

प्राचीन काल में यहाँ पर एक निषाद जाति की महिला ने तपस्या की थी। पुण्य तीर्थ में तपस्या के प्रभाव से यहाँ शरीर त्यागकर वह गौरीजी की सखी बन गई। फिर भाग्य से वह दक्ष

१. (रे० खं० ४५ अ०) २. (रे० खं० ४७ अ०)

प्रजापति की पुत्री रोहिणी बन गई। दक्ष प्रजापति ने अपनी सत्ताईस कन्याओं का विवाह अत्रि पुत्र चन्द्रमा के साथ किया। इनमें रोहिणी चन्द्रमा की सबसे प्यारी पत्नी थी। उसने यहाँ नर्मद तट पर तपस्या की और इस तीर्थ की स्थापना की। यहाँ जो स्त्रियाँ सदाचारपूर्वक रहकर तपस्या करती हैं, उनकी समस्त कामनायें पूर्ण होती हैं। उन्हें सात जन्मों तक अखण्ड सौभाग्य की प्राप्ति होती है। इसे बावन गङ्गाघाट भी कहते हैं। ॐ यहाँ बड़वानी महाराज का बनवाया हुआ दत्तात्रेय मंदिर है। बड़वानी नगर यहाँ से ३ मील है। यहाँ से बड़वानी तक पक्की सड़क है। हमने रात्रि में बड़वानी में ही विश्राम किया था और इसी घाट पर सबने स्नान किया था।

बड़वानी पहिले राज्य था। सुन्दर नगर है। यहाँ के राजा के महल, बगीचे दर्शनीय हैं, धर्मशाला भी है। प्राचीन महल में चम्पा की बावड़ी प्रसिद्ध स्थान है। पहिले राजा धर्मात्मा होते थे। उनका अधिकांश धन धर्म में ही व्यय होता था। यहाँ भी गणेशजी, वाणी विनायकजी, कालिका माताजी, अगस्त्य मुनि तथा तुलसीकृत गोपल मन्दिर आदि के १२ मन्दिर हैं।

पहिले राज्य की ओर से नर्मदा परिक्रमा करने वाले यात्रियों की समुचित सेवा होती थी। राजघाट के सामने उस पार में चिखलदा घाट है। यहीं से शूलपाणि की ८० कोस वाली कठिन झाड़ी है। जहाँ अन्न का अभाव है। नर्मदा किनारे रहने वाले वनवासी कोल भील यात्रियों को लूट लेते हैं। इसलिये यात्री यहाँ से अन्नादि का प्रबन्ध करके बड़ी सावधानी से चलते हैं, हमने तो ऐसा सुना था कि चिखलदा घाट में किसी सेठ की ओर से ऐसा प्रबन्ध है कि वे यात्रियों के सब सामान को अपनी नौका पर रखा लेते हैं और जहाँ शूलपाणि की कठिन झाड़ी

ॐ (रे० खं० ५१ अ०)

समाप्त होती हैं, यात्री घूमकर यहाँ आते हैं तब उनका सामान वह पहुँचा देते हैं। पता नहीं अब ऐसी व्यवस्था है या नहीं।

बनवासी कोल भील नर्मदा के किनारे-किनारे रहते हैं। पहिले ये जङ्गली कन्द मूल फल तथा मांस पर ही निर्वाह करते थे। अब तो वे छोटे-छोटे गाँव बनाकर रहने लगे हैं और खेती भी करने लगे हैं। ये अब भी तीर कमान लिये रहते हैं, ये निशाना लगाने में बड़े दक्ष होते हैं। लक्ष्यभेदी बाण छोड़ते हैं। लकड़ी आदि काटने को कुल्हाड़ी भी रखते हैं। परिक्रमा वाले यात्रियों पर सामान देखते हैं तो उसे लूट लेते हैं। जिन पर कुछ सामान नहीं होता ऐसे साधुओं को खाने के लिये अन्न भी दे देते हैं। पहिले तो बहुत ही लूट-पाट होती थी। अब तो बहुत कम हो गई है। फिर भी लूट-पाट तो चलती ही है।

महाराष्ट्र के एक सज्जन ने पैदल नर्मदा परिक्रमा की थी। उन्होंने उस पर एक बड़ी अच्छी रोचक पुस्तक लिखी है। अपने संस्मरणों में एक स्थान पर इस शूलपाणि की झाड़ियों के सम्बन्ध में लिखा था—मुझे पहिले ही लोगों ने डरवाया था कि वहाँ बनवासी भील लूट लेते हैं किन्तु मेरे पास लूटने योग्य कोई वस्तु ही नहीं थी। एक कमण्डलु था और लँगोटी। एक स्थान में मैं बैठा था कि तीर कमान बाँधे एक भील आया और मेरे कमण्डलु को उठा लिया। मैंने कहा—"भाई! मैं साधु हूँ, कमण्डलु ले जाओगे तो मैं पानी किससे पीऊँगा ?"

तब उसने कमण्डलु रख दिया। मेरे पास आकर बैठ गया। मैंने कहा—"भाई ! तुम लोग परिक्रमा वाले यात्रियों को लूटते क्यों हो ?"

उसने कहा—"हम यहाँ जङ्गलों में, वन पर्वतों में रहते हैं। खायँ क्या ? नर्मदा मैया भेज देती है इसलिये हम लूट-पाटकर अपना काम चलाते हैं। वे लोग तो नीचे जाकर और सामान प्राप्त कर

लेंगे। नर्मदा मैया हमारे ही लिये भेजती है। जिन पर कुछ नहीं होता, उन्हें हम यथाशक्ति कुछ दे भी देते हैं।"

तब मैंने कहा—"हमें भूख लगी है, कुछ खाने को दोगे ?"

उसने कहा हम तो मांस खाते हैं, कौए का मांस खाओगे ?"

मैंने कहा—"भाई ! मांस तो हम नहीं खाते।"

तब वह हमें गाँव में ले गया और मक्का के भुट्टे भूनकर दिये।"

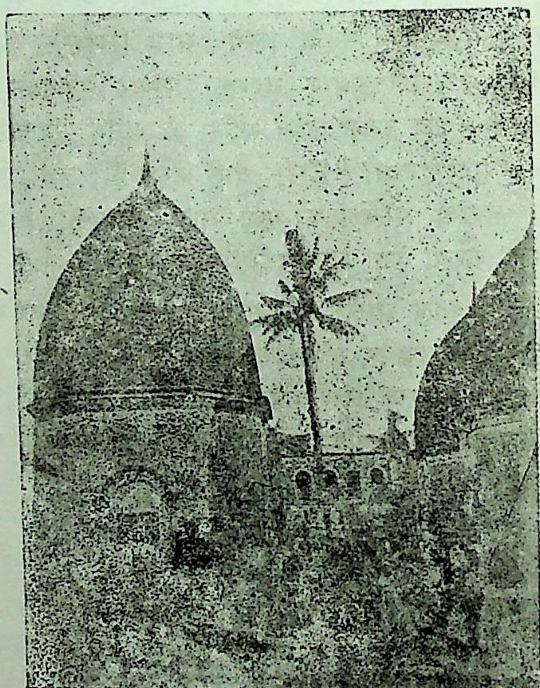
लूटने-पाटने की घटनायें अब भी होती हैं। हमें भी लोगों ने बहुत डराया। वहाँ भील तीर कमान बाँधे आते हैं लूट लेते हैं। मैंने इन्दौर के आयुक्त (कमिश्नर) श्री राजकुमार खन्ना से कहा। वे हमारे पुराने भक्त हैं। उनके लिये हमारे सिरमौर की राजमाता के भाई महाराज कुमार नरेन्द्र शमशेर राणाकी लड़की शैला विवाही है। जब उनसे कोल भीलों के लूटने की बात कही तो वे बोले—"महाराजजी ! कैसी बातें करते हैं। जहाँ भी कहीं ऐसा होगा। सशस्त्र पुलिस की एक गाड़ी आपकी मोटरों के आगे एक पीछे करवा दूँगा। आप निश्चिन्त रहें।"

हमें तो कहीं कोल भीलों ने लूटा-पाटा नहीं, मिले तो बहुत। लौटते समय अलीराजपुर से पहिले कुछ उन्होंने पत्थर आदि चलाये। उसका विवरण उस पारकी परिक्रमा में करेंगे। अब आप आगे बड़वानी से तलौंदा तक की यात्रा का विवरण अगले अध्याय में पढ़ें।

छप्पय

धार राज्य खलघाट नदी साटक को संगम।
फेरि कठोराघाट बरखड़ी संगम उत्तम॥
धर्मपुरीको द्वीप देइ उस पार दिखाई।
आगे ब्राह्मण गाँव तीर्थ ब्रह्मात्रत भाई॥

जनपद पुनि इन्दौर है, है बुराढ़ संगम बिकट ।
देवनदी संगम विमल, मारुकि चिचलीके निकट ॥
पुनि लोहरऱ्या घाट जिला बड़वानी मनहर ।
केशरपुरा सुगाँम नाहिली संगम सुन्दर ॥
मोहिपुरामें तीर्थ सहस यज्ञाख्य कहायो ।
मोचन तीर्थं कपाल घाट दतबाड़ा आयो ॥
छोटा वर्धा घाट है, पिपलोदे कसरोद पुनि ।
राजघाट तीरथ परम, जहाँ नहायें महामुनि ॥



नर्मदा तट के एक घाट का दृश्य

बड़वानी से पानसेमल

[१३]

सरिद्वरे पापहरे विचित्रिते
गन्धर्वयक्षोरगसेविताङ्गे ।
सनातनि प्राणिगणानुकंपिनि
मोक्षप्रदे देवि विधेहि शं नः ॥*

छप्पय

सब सरितनिमें श्रेष्ठ सकल सुख सम्पति दैंनी ।
काटो पाप पहाड़ जननि तुम पैंनी छैंनी ॥
तप थल तव तट उभय उरग, सुर, नर मुनि सेवैं ।
लेवैं सब अघ मेंटि अन्तमें पर पद देवैं ॥
सबपै अनुकम्पा करो, तव पय अमृत समान है ।
भवभयहारी जननि तव-चरननि माहिँ प्रनाम है ॥

हम संसारी लोग तो अपने पापों का क्षय करने के निमित्त तीर्थों की यात्रा करते हैं। क्योंकि अन्य क्षेत्रों में किये हुए पाप तो तीर्थों में जाने से नष्ट हो जाते हैं। किन्तु जो तीर्थों में जाकर भी पाप करते हैं, उनके पाप तो वज्रलेप हो जाते हैं, इसलिये

* हे सरित् प्रवरे ! तुम समस्त पापों को हरण करने वाली हो। हे देवि ! हे विचित्रिते ! तुम गन्धर्व, यक्ष उरगों से सेवित अंग वाली हो। हे सनातनि ! तुम समस्त जीवों पर दया करने वाली हो। हे मोक्षप्रदे ! आप हमारा कल्याण करो।

तीर्थों में कभी भूलकर भी पाप न करने चाहिये। यद्यपि काशी में मरने से मुक्ति बतायी है, किन्तु वह कब होगी जब तुम पाप रहित होकर सदाचार का पालन करते रहोगे तब। यदि काशीजी में जाकर भी तुम पाप करोगे तो तुम्हें भैरव यातना सहनी पड़ेंगी। वहाँ दण्डपाणी भैरवजी इसीलिये रहते हैं जो काशी में रहकर भी पाप कर्म करेगा उसे दण्डपाणि भैरवयातना देंगे। वह भैरवयातना नरक की यातना से भी अधिक दुखदायी है। अतः तीर्थों में जाकर पूर्वकृत पापों का ही प्रायश्चित्त करे तीर्थों में पाप न करे।

अच्छा हम लोग तो पापक्षय के निमित्त तीर्थ यात्रा करते हैं, किन्तु सन्त, महात्मा, त्यागी, विरागी, सिद्ध तथा तपस्वी लोग तीथ यात्रा क्यों करते हैं? इसका उत्तर भगवान् की स्तुति करते हुए प्रचेताओं ने दिया है। प्रचेता कह रहे हैं—"भगवन्! आपके जो परमप्रिय भक्तजन हैं, वे पैदल-पैदल तीर्थों में इसलिये घूमते हैं कि तीर्थों में जो पापियों का पाप एकत्रित हो जाता है। वह पाप नष्ट हो जाय। तीर्थ निष्पाप बन जायँ। वे तो तीर्थों को पवित्र करने के उद्देश्य से पैदल-ही-पैदल विचरण किया करते हैं। ऐसे भगवत् भक्तों का यदि समागम हो जाय तो फिर कहना ही क्या है। संसार से भयभीत हुए प्राणियों को भला ऐसे भक्तों का दर्शन सत्संग किसे रुचिकर न होगा?" *

तो हाँ, अब बड़वानी से आगे की यात्रा का वृत्तान्त सुनिये। नर्मदा यात्रा में मध्य प्रदेश और गुजरात दो ही प्रान्त प्रधान रूप से पड़ते हैं। नर्मदा जी के दोनों तटों पर इन्हीं दो प्रान्तों के स्थान है। कुछ भाग महाराष्ट्र के खानदेश का भी पड़ता है। वह

* तेषां विचरतां पद्भ्यां तीर्थानां पावनेच्छया।
भीतस्य किं न रोचेत तावकानां समागमः।।
(श्री० भा० ४ स्क० ३० अ० ३७ श्लोक)

२५।३० मील का ही है। बड़वानी और राजपिप्पला जिलों के बीच में एक छोटी-सी पट्टी महाराष्ट्र की आती है, उस पट्टी के बीच में भी गुजरात का कुछ भाग है।

हम लोग फाल्गुन शुक्ला सप्तमी (५ मार्च) को बड़वानी से भोजन आदि से निवृत्त होकर चले। आज हमें तलौंदा पहुँचाना था, बीच में पानसेमल पड़ता था। पानसेमल वालों ने स्वागत सत्कार का बड़ा भारी प्रबन्ध कर रखा था। जब हम वहाँ पहुँचे, तो लोगों ने कहा—"तलौंदा में ठहरने आदि की व्यवस्था नहीं। आप यहीं विश्राम करें। यह स्थान तो मध्यप्रदेश में है, इससे कुछ ही दूरी पर महाराष्ट्र प्रान्त की सीमा है। यहाँ बहुत से मारवाड़ी हैं। इसलिये हम लोग रात्रि में पानसेमल में ही रह गये। हम तो एक सेठ के चीनी के कारखाने में जो बन्द पड़ा था ठहरे और सब लोग धर्मशाला में ठहरे। वहाँ के भक्तों ने तत्काल बहुत-सा दूध मँगाकर समस्त यात्रियों को यथेष्ट दूध पिलाया। रात्रि में रासमंडली की रासलीला का बड़ा भारी आयोजन उन लोगों ने किया। बड़ा भारी सामयाना लगाकर पंडाल बनाया। दर्शनार्थियों की अपार भीड़ थी। आस-पास के गाँवों के सहस्रों नर-नारी आ गये थे। शंकरलीला का आयोजन था। कुछ देर तक भाषण हुए। फिर लीला आरम्भ हुई। झाँकी के पश्चात् ज्योंही लीला आरम्भ होने वाली थी कुँवरपाल जी शंकर बने बैठे थे। तभी वर्षा होने लगी। सभी गुड़ गोबर हो गया। वर्षा के कारण लीला बन्द हो गयी। प्रातःकाल वहाँ के भक्तों ने कहा—तलौंदा में कोई भोजन का प्रबन्ध न होगा। अतः उन लोगों ने सबके लिये पूड़ी साग बनवाकर हमारे साथ रख दिया। मार्ग में हमें ये मुख्य स्थान पड़े बुजुर्ग, राजपुर, जुलवानिया, गोई नदी, बुधगाँव, तलौंदा आदि।

अच्छा यदि राजघाट (बड़वानी) से नर्मदा किनारे-किनारे

पैदल परिक्रमा करें तो कौन-कौन से स्थान पड़ेंगे इसका विवरण आगे दिया जाता है।

१—राजघाट से ६ मील दूरी पर मेघनाद तीर्थ है। इस तीर्थ का नाम मेघनाद तीर्थ कैसे पड़ा। इस सम्बन्ध की रेवा खण्ड में कथा है। त्रेतायुग में महर्षि पुलस्त्य का पौत्र रावण हुआ। वह परम शिव भक्त था। उसने विन्ध्याचलाधिपति मयासुर दानव की पुत्री मन्दोदरी से विवाह किया। उसके एक पुत्र हुआ। उसने जन्मते ही मेघ के समान नाद किया, इससे उसका नाम मेघनाद रखा गया। पिता के सदृश वह भी शिव भक्त था। उसने भी विन्ध्यपर्वत पर घोर तपस्या करते हुए शिवजी की आराधना की उसके तप से तुष्ट होकर आशुतोष भगवान् उसके सम्मुख प्रकट हुए। और वर माँगने को कहा—मेघनाद ने यही वर माँगा—"मैं आपकी सेवा में ही सदा संलग्न रहूँ।"

इससे प्रसन्न होकर शिवजी ने उसे पूजा के निमित्त अपने दो शिवलिंग दिये। मेघनाद उन्हें लिये हुए आकाश मार्ग से प्रसन्नतापूर्वक लंकापुरी को जा रहा था। जब इस स्थान से नर्मदा जी को पार करने लगा तब उसके हाथ से एक शिवलिङ्ग छूटकर नर्मदाजी की धारा में गिर पड़ा। इसे नर्मदा जी की कृपा ही समझकर उसने उसी स्थान पर शिवलिङ्ग की स्थापना की। तभी से इसका नाम मेघनाद तीर्थ विख्यात हुआ। यहाँ भी श्राद्ध, तर्पण, ब्रह्मभोज का अन्य स्थानों से शतगुणा माहात्म्य बताया गया है।*

२—मेघनाद तीर्थ से २ मील चलकर आगे भौंती ग्राम का घाट है गोई या गोयद (गौर वार्ता) नदी का संगम है। जब चतुर्दशी मंगलवार के दिन पड़ती है, उसका यहाँ बड़ा माहात्म्य है।

* (रेवा खण्डे ५६ अध्याय)

यहाँ पर अनंगेश्वर शिवजी का स्थान है। यहाँ स्नानादि तथा अपने स्वधर्मानुसार कर्म करने से सहस्र धेनु दान का माहात्म्य बताया है। इसे मनोरथ तीर्थ भी कहते हैं।×

३—भौंतीघाट से ३ मील आगे बीजासेनतीर्थ है, इस तीर्थ का नाम बीजासेन तीर्थ क्यों पड़ा इस सम्बन्ध की भी वसिष्ठ संहिता में कथा है।

रावण शिवजी का परम भक्त था। एक बार उसने एकादश रुद्रों का तथा एकादश रुद्राणियों का भक्तिभाव सहित पूजन किया। इससे समस्त रुद्राणी अत्यधिक प्रसन्न हुईं। उन्होंने रावण से वरदान माँगने को कहा। प्रतीत होता है, रावण की सहस्रों पत्नियाँ थीं। उनसे एक लाख पुत्र, सवा लाख नाती हो गये थे। अब ऐसा अनुमान होता है कि वह परिवार नियोजन करना चाहता होगा। अतः उसने रुद्राणियों से यही वर माँगा कि "मुझे ऐसी कन्या प्रदान करें, जो सब स्त्रियों के गर्भ को भक्षण किया करे।" रुद्राणी तो वचन बद्ध थीं, अतः उन्होंने बीजासेन नामवाली रुद्राणी दी। वह सभी स्त्रियों के गर्भ का नाश करने लगी। लंका में तब से बालक होने बन्द हो गये होंगे। जब श्री रामचन्द्रजी ने रावण का वध कर दिया, तब शङ्करजी ने बीजासेनी को वहाँ से बुला लिया और आज्ञा दी—तुम यहाँ नर्मदा किनारे रहकर तपस्या करो। और गर्भ नाश के स्थान में गर्भ रक्षा किया करो। तभी से बीजासेनी यहाँ रहकर तपस्या करने लगी। यह तीर्थ इसी कारण उसी के नाम से बीजासेन तीर्थ के नाम से प्रसिद्ध हो गया। जो स्त्रियाँ स्नान, दान ब्रह्मभोजन आदि सत्कर्म करती हैं, उनका कभी गर्भ नाश नहीं होता।❀

४—बीजासेन तीर्थ से ५ मील आगे हिरण्यफाल घाट है।

× (रे० खं० ४० अ०) ❀ (रे० खं० ४८ अ०)

यहाँ नर्मदा चट्टानों में होकर नीचे गिरती हैं। यहाँ उनकी बहुत-सी धारायें हो गयी हैं। और वे ऊँचाई से गिरने के कारण तीव्र गति से प्रवाहित होती हैं। लगभग एक मील के पश्चात् वे सब धारायें मिलकर फिर एक धारा हो जाती है। सुनते हैं यहाँ का दृश्य अत्यन्त रमणीक है। यहाँ हिरण्याक्ष ने तपस्या की थी इसीलिये उसी के नाम से यह हिरण्यतीर्थ कहलाता है।

५—हिरण्यफाल से १० मील आगे खारच्याकी चौकी है। यह स्थान दर्शनीय है। यहाँ से ७ मील आगे ६—बहादल नदी संगम है। समीप ही बहादल नाम का ग्राम भी है। दोनों ओर पर्वतों की छटा निराली है। घोर जंगल का मार्ग है।

७—बहादलनदी संगम से १० मील आगे मुचेगाँव है। इसके समीप ही नकटा की चौकी है। यहाँ उदीसंगम है। पास ही सादरी ग्राम है। यहाँ से पश्चिमी खान देश जिला आ जाता है।

अब आप आगे पानसेमल से आगे राजपिप्पला का वृत्तांत श्रवण कीजिये।

छप्पय

राजघाटतैं चलो तीर्थ-वर मेघनाद है।
भौतिघाट पुनि गोइनदी संगम सुघाट है॥
फिरि है बीजासेन तीर्थ हू हिरनफाल है।
खारच्याचौकी घाट बहादल नदी घाट है॥
मुचेगाँम ऊदी नदी-सङ्गम सदरी गाम है।
मध्य प्रदेश समाप्त पुनि, खानदेश पुनि नाम है॥

—::—

पानसेमल से राजपिप्पला

(१४)

महागजौघैर्महिषैर्वराहैः
संसेविते देवि महोर्मिमाले ।
नताःस्म सर्वे वरदे सुखप्रदे
विमोचयास्मान्पशुपाश बन्धनात् ॥*
(स्कन्द पुराणे)

छप्पय

पतितनि पावन करो हरो दुख वाधा जननी ।
छेदन करि पशु पाश, मातु तुम भवभय हरनी ॥
गज वराह अरु महिष वन्य पशु तव तट निवसें ।
सुधा सरिस जल पान करें पय परसें हरषें ॥
देवि नर्मदे शर्मदे, मेकलतनया नाम है ।
श्री शिवशङ्कर अङ्गजा, तव पद पदुम प्रनाम है ॥

हमारे यहाँ तैंतीस कोटि देवता हैं, उनमें पाँच मुख्य हैं । हम स्मार्त लोग शिव, शक्ति, सूर्य, गणेश और विष्णु इन पंचदेवों के उपासक हैं । ये पाँच देव पृथक्-पृथक हों सो बात नहीं । एक ही

---

* बड़ी-बड़ी लहरों वाली हे देवि ! बड़े-बड़े गजों के समूहों द्वारा, जङ्गली भैसों द्वारा तथा बड़े-बड़े बराहों द्वारा आप संसेवित हैं । वर प्रदान करने वाली तथा सुख देने वाली हे देवि ! हमें पशुपाश बन्धनों से मुक्त कर दीजिये । हम सब आपको बारम्बार नमस्कार करते हैं ।

रूप के पाँच भेद हैं। किसी की भी उपासना करो उसी एक परब्रह्म को प्राप्त होगे। जैसे विभिन्न नदियाँ हैं, वे घूम-फिरकर समुद्र में ही जाकर मिल जाती हैं। इसी प्रकार किसी भी देवता को नमस्कार करो वह केशव भगवान् के ही पास पहुँच जायगी। इसीलिये किसी भक्त ने कहा है—कोई लोग तो निराकार ब्रह्म की उपासना करते हैं, और कोई राम कृष्ण आदि अवतारों के रूप में नराकार ब्रह्म की उपासना करते हैं, किन्तु हम तो त्रितापों से सन्तप्त हैं। ताप से सन्तप्त प्राणी के लिये नीर ही एकमात्र आश्रय हैं, अतः हम अपने तापों को शांत करने नीराकार ब्रह्म की जो द्रव रूप में ब्रह्म बह रहा है। उसी की उपासना करते हैं। श्रीगंगाजी विष्णुपादाब्ज सम्भूता हैं। उनके चरणों से निकली हैं। चरणों से क्या निकली हैं नारदजी के सुमधुर संगीत को सुनकर स्वयं साक्षात् परब्रह्म ही पिघलकर ब्रह्मद्रव के रूप में गङ्गाजी बन गयीं। इसी प्रकार स्वयं साक्षात् शङ्करजी ही जब ताण्डव नृत्य में तल्लीन हो गये तो उनके श्रीअङ्ग से स्वेदरूप में भगवती नर्मदाजी प्रकट हो गयीं। अतः नर्मदाजी में और शङ्करजी में कोई भी भेद नहीं। नर्मदाजी की उपासना शङ्करजी की ही उपासना है। नर्मदा का प्रत्येक कङ्कड़ शङ्कर स्वरूप है। इसीलिये श्रीमद्भागवत में कमलयोनि भगवान् ब्रह्मा परब्रह्म परमात्मा की स्तुति करते हुए कहते हैं—"हे प्रभो ! आपका जो सद् मार्ग है, वह अन्य किसी भी उपाय से नहीं जाना जा सकता। उसके जानने का एकमात्र उपाय यही है कि आपके नाम, रूप, लीला और धाम सम्बन्धी गुणों का निरन्तर श्रवण करता रहे। आपके निवास के अनेक स्थान बताये जाते हैं किन्तु वास्तव में आप उन्हीं मनुष्यों के हृदय के कमल में निवास करते हैं, जो हृदयकमल भक्तियोग के द्वारा परिशुद्ध हो गया हो। हे पुण्यश्लोक प्रभो ! आपके भक्त अनेक प्रकार के हैं। मुंडे-मुंडे मति भिन्ना वाले हैं उनकी रुचियाँ

भी भिन्न-भिन्न प्रकार की होती हैं किन्तु आप इतने दयालु हैं कि आपके जो-जो भक्त जिस-जिस भावना से आपका चिन्तन करते हैं उन परम भागवत भक्तों पर अनुग्रह करने के निमित्त आप वही-वही रूप धारण कर लेते हैं। + अतः नर्मदा भक्तों के लिये नर्मदा केवल जल ही नहीं है। वह स्वयं साक्षात् पिघला हुआ जल रूप में परब्रह्म ही है।

हाँ तो फाल्गुन शुक्ला अष्टमी (६ मार्च) को प्रातः हम पानसेमल से चले। अमरकंटक से अब तक हम मध्यप्रदेश में ही चलते रहे। आज मध्यप्रदेश को कुछ दिन के लिये छोड़ना है, जब तक लौटकर इसके सम्मुख आ जायँ। अब आगे महाराष्ट्र प्रान्त है। मार्ग में महाराष्ट्र की चौकी थी। हमारी कई बसों ट्रक का अनुमति पत्र (लाइसेंस) मध्य प्रदेश का ही था। वहाँ चौकी पर सबको रोका गया। जब उन्हें यह पता चला कि ये हमारी नर्मदा यात्रा के वाहन हैं तो उन्होंने कुछ भी नहीं कहा। ठेकेदारों ने भी एक स्थान को छोड़कर कहीं भी प्रवेश शुल्क नहीं लिया। अब हम लोग ताप्ती नदी के किनारे पहुँच गये। यहाँ का दृश्य अत्यन्त ही मनोहर है। पहाड़ों को काटकर भगवती ताप्ती मन्द-मन्द गति से बह रही हैं। ऊपर टीले पर श्रीकेदारेश्वर और अमलेश्वर के मन्दिर हैं। यह स्थान यहाँ का परम पावन तीर्थ है। जैसे नर्मदा परिक्रमा करके पुनः ओंकारेश्वर का दर्शन करना आवश्यक होता है, वैसे ही इस प्रान्त में काशी गया की यात्रा करके यहाँ केदारेश्वर की यात्रा किये बिना काशी गया की यात्रा सफल

+ त्वं भावयोगपरिभावितहृत्सरोज
आस्से श्रुतेक्षितपथो ननु नाथ पुंसाम्।
यद् यद्धिया त उरुगाय विभावयन्ति
तत्तद्वपुः प्रणयसे सदनुग्रहाय॥
(श्री० भा० ३ स्क० ९ अ० ११ श्लोक)

नहीं मानी जाती। सभी ने ताप्ती में स्नान किया और सबका तो भोजन पानसेमल वालों ने बाँध ही दिया था। हमारा फलाहार यहाँ केदारेश्वर मन्दिर के बरामदे में बना। यहीं भगवान् की पूजा की। यहाँ के पुजारी पुजारिनि ने बहुत शिष्टता का व्यवहार किया। यह स्थान महाराष्ट्र प्रान्त में है। बहुत से महाराष्ट्रीय यात्री भी आ गये थे। सभी ने बड़ी श्रद्धा भक्ति प्रदर्शित की। स्नान, पूजा-पाठ, भोजनादि करके पुनः यात्रा आरम्भ की। आज लोगों ने बहुत ही डरा दिया था कि यह मार्ग सघन घोर जङ्गलों का है। यहाँ भील अवश्य ही लूट लेंगे। किन्तु हम सब तो भगवान् के भरोसे चले थे। "जाके रथ पै केशो। ताकूँ कौन अँदेशो।"

वास्तव में मार्ग अत्यन्त ही घने जङ्गलों और सघन वनों में होकर था। दृश्य अत्यन्त ही सुन्दर, गाँवों का कहीं नाम भी नहीं। आगे चलकर तलौंदा ग्राम मिला। कल यहीं ठहरने की बात थी। हम कुछ देर इस गाँव में रुके रहे। लोगों से न पहुँचने के लिये क्षमा याचना करें। किन्तु कोई व्यक्ति आया ही नहीं। हमने लोगों से पूछा भी—कल यहाँ नर्मदा की परिक्रमा के यात्रियों के ठहरने का कहीं प्रबन्ध था ? किसी ने कुछ बताया ही नहीं। कोई राम राम नर्मदे हर करने भी नहीं आया। हमने सोचा—अच्छा हुआ जो कल हम यहाँ नहीं आये। धरकूँच धर मञ्जिल आगे चलते ही गये, चलते ही गये। बाँस के वनों की शोभा अपूर्व थी। मनुष्य के दर्शन की कौन कहे गन्ध भी नहीं थी। आगे बुढ़ियापाड़ा या और कोई बड़ा ग्राम पड़ा। वहाँ एक पुलिस वाले ने पूछा—"प्रभुदत्त ब्रह्मचारी कौन हैं ? लोगों ने मुझे बता दिया। तब उसने कहा—थानेदार साहब आपको बुला रहे हैं।" मैंने हँसकर कहा—"क्या हमारा वारंट है ?" उसने कहा—"नहीं-नहीं, वे दर्शन करना चाहते हैं।"

तब मैंने कहा—"तो उन्हें यहीं बुलाओ।" वे सुनते ही दौड़े आये। प्रणाम करके बड़ी नम्रता से बोले—"कल मैं गिरनारी बाबाजी के पास गया था। वे आपके दर्शन करना चाहते हैं। उनको दर्शन देते हुए जाइयेगा।"

मैंने पूछा—"उनका स्थान कहाँ है ?"

वे बोले—"राज पिप्पला से आगे नर्मदा जी के तट पर ही है, आगे आपको ले जाने को आदमी मिलेंगे।"

श्रीगिरनारी बाबा हमारे कानपुर के अकबरपुर के ही थे। बहुत बाल्यकाल में ही घर छोड़कर चले गये थे। बहुत दिनों तक अहमदाबाद में आश्रम बनाकर रहे। उनके आश्रम में हमने १०८ श्रीमद्भागवत सप्ताह भी कराये। राजा भैया उसमें प्रधान व्यास थे। फिर वे बहुत दिनों तक आकर हमारे झूसी आश्रम में भी रहे। श्रीमद्भागवत के अत्यन्त प्रेमी हैं। हमसे अत्यन्त स्नेह रखते हैं। झूसी से चले जाने के पश्चात् उनका कुछ समाचार नहीं मिला। उड़ता हुआ समाचार मिला था कि अहमदाबाद के आश्रम को बेचकर वे नर्मदा किनारे भागवत गुफा बनाकर रहने लगे हैं। स्वभाव उनका उग्र है, बिना गाली के बात नहीं करते। वैसे अच्छे साधक उपासक हैं। ८०-८५ वर्ष के लगभग उनकी आयु है। मैं भी उनसे मिलने को उत्सुक था। आगे राजपिप्पला से इधर ही पत्थरों की चट्टानें लगी थीं। पता चला नर्मदाजी पर जो बाँध बँध रहा है उसी के लिये ये पत्थर हैं। वहीं एक साधु मोटर लिये खड़ा था। आकर उसने प्रणाम किया। मैंने पूछा—"तुम कौन हो ? उसने बताया—मैं गिरनारी बाबा का शिष्य हूँ उन्होंने प्रार्थना की है, जाते समय हमारे यहाँ होकर जायँ।" मैंने पूछा—"के वर्ष से तुम उनके साथ हो ?"

उन्होंने बताया—"तीन वर्ष से।"

मैंने कहा—"यह असम्भव है, कोई उनके पास तीन वर्ष रह ही नहीं सकता।"

यह सुनकर वे हँसने लगे और बोले—"महाराज! सभी लोग आश्चर्य करते हैं कि मैं कैसे इतने दिन टिक गया। परन्तु मैं तो गुरु मानकर सब उनकी बात सह लेता हूँ।"

मैंने कहा—"आज तो हम राजपिप्पला में रहेंगे। कल तुम आना हम उनके पास चलेंगे।" उन्होंने कहा—"मैं भी आपके साथ ही रहूँगा। नहीं वे मुझसे बिगड़ेंगे कि साथ लेकर क्यों नहीं आया।"

विश्व हिन्दु परिषद् मध्य प्रदेश के श्री लक्ष्मीनारायण गुप्ताजी हमारे साथ भेड़ाघाट से ही थे वे ही सब लोगों से मिलते थे। राजपिप्पला में जो पंडितजी विश्व हिन्दु परिषद् के अध्यक्ष थे। उनके घर गये। उन्होंने बड़ा ही स्वागत-सत्कार किया बोले—"महाराज! हमें तो आज ही आपके आने का समाचार मिला इससे कुछ स्वागत-सत्कार का प्रबन्ध न कर सके। अब सब हो जायगा।" यह कहकर उन्होंने हमें तो अपने घर में ही ठहराया। अन्य लोगों के लिये एक बहुत बड़ी बाड़ी में प्रबन्ध किया। जिसमें विवाहों में बरातें आकर ठहरती हैं। सहस्रों आदमी उसमें ठहर सकते थे। वहीं सब ठहरे, वहीं रासलीला हुई। पंडितजी का पूरा परिवार बड़ा भक्त था। वे उस पार में जो गरुड़ेश्वर तीर्थ स्थान स्वामी वासुदेवानन्द सरस्वती द्वारा दत्तात्रेय का मन्दिर है वहाँ के न्यासी (ट्रष्टी) भी हैं। लौटते समय गरुड़ेश्वर में भी आने को उन्होंने कहा। राजपिप्पला में हम सब लोग बड़े आनन्द से रहे।

राजपिप्पला की जो राजमाता हैं, वे हमारे पन्ना महाराज की लड़की हैं। सिरमौर की राजमाता जब हमारे यहाँ रहा करती थी, तब वे आती थीं। उनसे इनका अत्यन्त स्नेह था। मैंने पुछ-

वाया वे राजमाता कहाँ हैं ? तब लोगों ने बताया—"महाराज ! वे तो यहाँ का सब बेच-बाचकर पन्ना में रहने लगीं।" हाय ! इन राजवंशों की कैसी दुर्दशा हो गई ? सैकड़ों पीढ़ियों से जो प्रजा के शासक थे, वे आज बेघर-बार हो गये। जो रानियाँ असूर्यम्पस्या कहलाती थीं। जिन्हें सूर्य भी नहीं देख सकता था आज वे रिक्सों में साधारण स्त्रियों की भाँति घूम रहीं हैं। पटेल ने सब राज्य लेते समय बचन दिया था—उनके वंशजों को निर्वाह के लिये सेवा निवृत्त धन (पेंसिन) मिलती रहेगी। कुछ दिन के पश्चात् क्रूर शासकों ने वह भी बन्द कर दी। जो तिकड़म करके एक बार भी संसद सदस्य या विधान सभा सदस्य बन जाते हैं उन्हें तो जीवन भर सेवा निवृत्त द्रव्य (पेंसन) मिले। किन्तु जिनके सैकड़ों पूर्वजों ने शासन किया है उनके वंशज मारे-मारे फिरें, यह कैसी विधि की विडम्बना है। 'कालस्य कुटिला गतिः।' मुसलमान बादशाहों के वंशजों को अँगरेजों ने अभी तक पेंसन दी थी, चाहें वे सैकड़ों हो गये हों, चाहें वे इक्का हाँकते हों। चाहें दो रुपये ही मिलते हों फिर भी वे अपने को शाही वंशज और शाही पेंसिन के अधिकारी मानकर गर्व का अनुभव करते हैं। ये प्रजातन्त्र कहलाने वाले शासक तो कुछ वर्ष भी न निभा सके।

हाँ, तो राजपिप्पला एक बड़ा प्रतिष्ठित राज घराना था। बहुत बड़ा राज्य था। इसके समीप एक छोटा-सा कांटी राज्य था। कांटी राज्य में तो नर्मदाजी कुछ ही बही हैं। राजपिप्पला में तो शूलपाणि से लेकर नौगवाँ तक १४४ मील बही हैं। इसके पश्चात् ही भड़ौच जिला आ जाता है। मोटर मार्ग से हमें ये गाँव पड़े थे। ब्राह्मणपुरी, चासोली, शहादा, मनसूद, केदारेश्वर, ममलेश्वर, ताप्ती नदी, बोदा, तलौदा, कबली, कोसई' खापर, दोरआवा, गंगापुर, मंडला, साग, सालदह, कंकाला, ढुँढियापाड़ा,

साँवलकुटी, घंटोली, गाजर कोटा, फूलसर, पनगा, बीताड़ी, मोजा, खुटाआँवा, विराल खाड़ी, आमली, गाडेत, मान्डण, डकेली, बेज, बेखाड़ी, पाडादेरा, पाडर आश्रम, जीतगढ़, सुन्दर पुर, पोयचाघाट, हनुमन्तेश्वर आदि-आदि।

हाँ तो यदि हम भुचेगाँव उदी संगम से नर्मदा किनारे-किनारे पैदल चलें तो मार्ग में कौन-कौन से स्थान पड़ेंगे, उसका विवरण निम्न प्रकार है।

१—भुचेगाँव उदी संगम से दमखेड़ा ६ मील है। यह स्थान महाराष्ट्र प्रान्त के पश्चिम खानदेश में है। यहाँ खाड़ा नदी का संगम है। राजघाट (बड़वानी) से ही शूलपाणि की झाड़ी आरंभ हो जाती है, ये सभी स्थान पहाड़ों तथा घोर जङ्गलों के बीच में हैं। यदि धार्मिक भावना न होती तो कोई भी पुरुष इन स्थानों में पैदल जाने का साहस न करता। किन्तु न जाने कितने वर्षों से नर्मदा परिक्रमा के यात्री इन स्थानों की धूलि फाँकते हुए अपने को कृतकृत्य समझते हैं।

२—दमखेड़ा से ४ मील आगे पेंडरा ग्राम है, इसके सामने ही उस पार हापेश्वर का मन्दिर है, पेंडरा से ८ मील आगे ३—डेहरी संगम है परिक्रमा वालों का कहना है कि ऐसा कठिन मार्ग नर्मदा यात्रा में कहीं भी नहीं है। काँटेदार झाड़ियाँ, पत्थरों के टुकड़े, कँकरीली पथरीली भूमि परिक्रमा वासी नर्मदे हर करते हुए कठिनता से इस मार्ग को पार करते हैं।

४—हेडरी संगम से ८ मील आगे सिन्दूरी संगम है। यह स्थान पहिले कांटी राज्य में था। यहाँ आकर पश्चिम खानदेश जिले की सीमा समाप्त होती है।

५—सिंदूरी संगम से आगे घोर जङ्गलों पर्वतों और झाड़ियों को पार करते हुए १० मील पर शूलपाणेश्वर तीर्थ है। शूलपाणि

की अत्यन्त दुर्गम कठिन झाड़ी इन्हीं शूलपाणि भगवान् के नाम से प्रसिद्ध है। इस क्षेत्र का अनन्त माहात्म्य है। नर्मदा क्षेत्र के समस्त तीर्थों में महातीर्थ तथा समस्त श्रेष्ठ तीर्थों में महाश्रेष्ठ तीर्थ है। परिक्रमा वालों का कहना है, यहाँ का दृश्य परम अलौकिक है। इस तीर्थ का वर्णन वायु पुराण के रेवा खण्ड में ६३ अध्याय से ७३ अध्याय तक ११ अध्यायों में वर्णित है तथा स्कन्द पुराण के रेवा खंड में भी ८५वें अध्याय से ९१ अध्याय तक ६ अध्यायों में वर्णित है। इस स्थान का शूलपाणि नाम क्यों पड़ा इसकी अत्यन्त संक्षेप में कथा बताते हैं—

ब्रह्माजी के पुत्र कश्यप हुए उनकी पत्नी दिति से दैत्य, दानव, असुर हुए। उनमें एक अन्धक नामक असुर था। वह दैत्यों का अधिपति था। उसने चार सहस्र वर्षों तक घोर तप किया। एक सहस्र वर्ष तक तो उसने भगवती भागीरथी के तट पर धूम्र पान करके तपस्या की। एक सहस्र वर्ष पर्यन्त एक पैर पर निराहार खड़ा रहा। एक सहस्र वर्ष तक पञ्चाग्नि तापता रहा और एक सहस्र वर्ष पर्यन्त योगाभ्यास में रत रहा। इस प्रकार का घोर तप आज तक किसी ने भी नहीं किया था। घोर तपस्या के प्रभाव से उसके मस्तक से धूआँ निकलने लगा। वह धूआँ विश्व में व्याप्त हो गया। जब वह धूआँ कैलास में पहुँचा तब भगवती पार्वतीजी ने शिवजी से पूछा—"प्राणनाथ! यह धूआँ कैसा है, कहाँ से यहाँ आ गया?"

तब शिवजी ने कहा—"देवि! अन्धकासुर चार सहस्र वर्षों से घोर तप कर रहा है, उसी के मस्तक से यह धूम्र निकलकर विश्व में व्याप्त हो गया है।"

पार्वतीजी ने कहा—"भगवन्! आपने उस असुर को वरदान क्यों नहीं दिया?"

शिवजी बोले—"देवि ! मैं समाधि में स्थित था। इसलिये भूल गया।"

पार्वतीजी ने कहा—"तो भगवन् ! अब तो उस असुर को वरदान दीजिये अब उससे अधिक परिश्रम न कराइये।"

शिवजी ने कहा—"अच्छी बात है, चलो हम दोनों ही उसके पास चलें और उसे वरदान दें।"

यह कहकर शिवजी पार्वतीजी को साथ लेकर चल दिये और उस असुर के समीप पहुँचे। वह तप में तन्मय हो रहा था। शिवजी ने उसे चैतन्य कराया और कहा—"दैत्यराज ! मैं तुम्हारे तप से प्रसन्न हूँ, तुम जो चाहो सो वर माँग लो।"

पार्वती सहित शिवजी को अपने सम्मुख समुपस्थित देखकर कर दैत्य के रोम-रोम खिल उठे। उसने शिवजी को प्रणाम करके कहा—"हे देवाधिदेव ! यदि आप मुझ पर प्रसन्न हैं तो मुझे यही वर दीजिये कि मेरे सम्मुख जो भी आवे उसी का पराभव हो जाय। मुझसे कोई भी जीत न सके।"

शिवजी ने कहा—"भाई ! यह तो तुम असम्भव वर माँग रहे हो। इसके अतिरिक्त कोई और वर माँगो।"

तब दैत्य ने कहा—"प्रभो आप सब कुछ देने में समर्थ हैं।"

शिवजी ने कहा—"भाई ! असम्भव वर मत माँगो। मैं ऐसा वर नहीं दे सकता।"

यह सुनकर दैत्य अत्यन्त दुखी हुआ। उसे मूर्छा आ गई। वह अचेत होकर गिर पड़ा। उसकी ऐसी दशा देखकर देवी पार्वतीजी को दया आ गई और शिवजी से बोलीं—"प्राणनाथ ! दैत्य जो वर माँगता है, वही दे दीजिये। देखिये यह कितना दुखी हो रहा है।"

तब शिवजी ने दैत्य को चैतन्य किया और बोले—"अच्छा तुम श्रीविष्णु को छोड़कर और सबको पराजित कर सकोगे।"

यह सुनकर दैत्य अत्यन्त ही प्रसन्न हुआ। इसके अनन्तर वह शिवजी को प्रणाम करके अपनी राजधानी में चला गया। शिवजी के वरदान के कारण उसने तीनों लोकों को जीत लिया। इन्द्र का इन्द्रासन तथा उसकी स्त्री को भी छीन लिया। देवताओं को भाँति-भाँति का कष्ट देने लगा। तब सब देवता मिलकर भगवान् विष्णु की शरण में गये। भगवान् ने कहा—"जिसे शिव जी ने वर दे दिया है उसे मैं कैसे मार सकता हूँ। शिवजी ही कुछ कर सकते हैं।"

भगवान् ने शिवजी को प्रेरित किया। शिवजी की शरण में देवता गये। शिवजी ने पार्वतीजी से कहा—"प्रिये! मैंने तुमसे पहिले ही कहा था, इसे ऐसा वर देना उचित नहीं। अब बताओ क्या करें?"

पार्वतीजी ने कहा—"भगवन्! ऐसा कीजिये, जिससे त्रिलोकी का भी कल्याण हो और उसका भी कल्याण हो।"

भगवान् विष्णु की प्रेरणा से दैत्य का अभिमान और अत्यधिक बढ़ गया। उसने युद्ध के लिये शिवजी को भी ललकारा। शिवजी को क्रोध आ गया और उससे घोर युद्ध किया। अन्त में शिवजी ने अपने त्रिशूल को उसके शरीर में भेद किया। अब तो दैत्य का सब मद उतर गया। उसने बड़ी नम्रता से अनेक स्तोत्रों द्वारा शिवजी की स्तुति की। आशुतोष औघड़दानी भगवान् भोलेनाथ उसकी स्तुति से प्रसन्न हुए उसे अपना स्वरूप प्रदान किया और उसे अपने गणों में सम्मिलित कर लिया। असुर का तो कल्याण हो गया। किन्तु शिवजी के त्रिशूल में जो दैत्य का रक्त लग गया था वह नहीं छूटा। इससे शिवजी चिंतित हुए।

उन्होंने समस्त देवताओं से कहा—"यह असुर था तो क्या हुआ, था तो यह ब्रह्माजी का पौत्र। इसके रक्त से मेरा त्रिशूल

अशुद्ध हो गया है, इसकी शुद्धि होनी चाहिये।" यह कहकर वे देवताओं को साथ लेकर समस्त तीर्थों में गये, किन्तु वह रक्त कहीं भी नहीं छूटा। तब नर्मदाजी के दोनों तटों के तीर्थों में उसे धोया, फिर भी रक्त के काले दाग नहीं छूटे। जब ये इस स्थान में भृगु पर्वत पर आये। यहाँ आकर उन्होंने अपने हाथ से (पाणि से) त्रिशूल को पर्वत पर मारा। इससे पर्वत पाताल में घुस गया और शूल में लगे रक्त के दाग छूट गये। जहाँ पर त्रिशूल मारा था, वहाँ से सरस्वती गंगा प्रकट हो गयीं। वे जाकर नर्मदाजी में मिल गयीं। जहाँ शूल मारा था वहाँ कुण्ड बन गया। वह कुण्ड सर्वदा नर्मदाजी में रहता है। उसका नाम चक्र तीर्थ है।

यहाँ पर ब्रह्माजी का स्थापित किया हुआ ब्रह्मेश्वर लिङ्ग है, इसके दक्षिण में शेषशायी भगवान् विष्णु हैं। यहाँ एक सौ आठ क्षेत्रपाल नित्य निवास करते हैं। यह नर्मदा किनारे सबसे श्रेष्ठ तीर्थ है। यहाँ किये हुए दान, पुण्य, जप, तप, श्राद्ध तथा ब्रह्म-भोज का अनन्त गुणा फल बताया है। यह तीर्थ पाँच कोस में स्थित है। नर्मदाजी के दक्षिण तट पर भृगु पर्वत पर स्थित इस तीर्थ की महिमा अनन्त है। इसी के समीप रुद्रकुण्ड है। समीप ही मार्कण्डेय मुनि की गुफा है। इससे कुछ दूर पर रणछोड़जी का मन्दिर है। ७—समीप ही चक्रतीर्थ है। यहाँ तक शूलपाणेश्वर तीर्थ की पञ्चक्रोशी मानी जाती है। ये समस्त तीर्थ शूलपाणेश्वर क्षेत्र के अन्तर्गत ही हैं।

८—भृगुपर्वत शूलपाणेश्वर से ३ मील आगे चलकर मोखड़ी ग्राम है। यहाँ मोक्षगंगा का संगम है, एक छोटा-सा जल प्रपात है। परिक्रमा करने वालों का कहना है कि यहाँ का दृश्य अत्यन्त ही मनोहर है।×

× (रे० खं० ७६ अ०)

९—मोक्षतीर्थ से ४ मील आगे उलूकतीर्थ है। रेवाखण्ड में इस तीर्थ की कथा इस प्रकार है। पूर्वकाल में एक उल्लू इस स्थान में नर्मदा तट की एक गुफा में निवास करता था। उसे यहाँ रहते-रहते एक सहस्र वर्ष हो गये। वहाँ के कौए उससे द्वेष करते थे, किन्तु उनको पता नहीं चलता था, उल्लू किस स्थान पर रहता है। बहुत खोज करते-करते उन कौओं ने उल्लू की गुफा का पता लगा लिया। वे उससे द्वेष तो करते ही थे। वे सब मिल-कर अपनी-अपनी चोंचों में जंगल से लकड़ियाँ ले आये और उन लकड़ियों से उन्होंने उल्लू की गुफा का मुख बन्द कर दिया और कहीं से जलती लकड़ी लाकर उन लकड़ियों में आग लगा दी। आग की लपट लगते ही उल्लू वहाँ से निकला। आग में निकलने से उसके पंख तथा शरीर जल गया। उसी अवस्था में वहाँ जले हुए शरीर से कुण्ड में आकर गिर गया। वहाँ आकर उसकी मृत्यु हो गयी। श्रीनर्मदाजी के उस परम पावन कुण्ड में मृत्यु होने से–उसी पुण्य प्रभाव से–वह काशी का राजा हुआ। और जाति स्मर हुआ। उसे अपने पूर्वजन्म की सभी बातें स्मरण थीं। इसलिए वह इस स्थान को खोजते-खोजते यहाँ आ पहुँचा। यहाँ आकर उसने जप, तप यज्ञादि शुभ कर्म किये। इसी कारण उसने परम सिद्धि प्राप्त की। यह सिद्धि देने वाला स्थान है। यहाँ पर अनेकों ने सिद्धि प्राप्त की है।❀

१०—उलूक तीर्थ से ४ मील आगे गोराघाट है। पहिले तो यह छोटा-सा साधारण गाँव था। किन्तु सरकारी नर्मदा बाँध योजना के कारण अब यह समस्त आधुनिक सुविधाओं से युक्त एक छोटा-मोटा नगर बन गया है। 'गोरा कालोनी' के नाम से नर्मदा बाँध कर्मचारियों के लिये अच्छी वस्ती बन गयी है।

❀ (वा० रे० खं० ७७ अ०)

नादोत से गोराघाट तक पक्की सड़क है। यहाँ से राजपिप्पला दश बारह मील है। वहाँ जाने के लिये पक्की सड़क है। यदि यह बाँध बँध जायगा तो नर्मदा किनारे के बहुत से मन्दिर तीर्थ जल-मग्न हो जायेंगे। राजपिप्पला में जो विश्व हिन्दु परिषद् के अध्यक्ष हैं। उन्होंने मुझसे कहा था—हम लोगों ने मोटर द्वारा जाकर देखा बहुत से मन्दिर डूब जायँगे। हम जब गये थे, तब बाँध की तैयारियाँ हो रही थी। बहुत दूर-दूर से पत्थर एकत्रित किये जा रहे थे।

११—उलूक तीर्थ से ४ मील आगे पिप्पल्लाद आश्रम नाम का तीर्थ है। बीच में भैरवझाप तथा गोराघाट पड़ते हैं। नादोद से गोराघाट तक पक्की सड़क है, यहाँ से एक मील पिपरिया ग्राम है। यहीं पिप्पलाद तीर्थ है। यहाँ पिप्पलाद महर्षिजी ने शिवजी की आराधना की थी। उनकी आराधना से प्रसन्न होकर शिवजी ने उन्हें दर्शन दिया और वर माँगने को कहा। महर्षि ने शिवजी से प्रार्थका की—"प्रभो ! यदि आप प्रसन्न हैं तो मैं आपसे यही वर माँगता हूँ कि आप यहाँ सर्वदा निवास करें।" शिवजी ने तथास्तु कहकर ऋषिजी की प्रार्थना स्वीकार की। यहाँ शिवजी का नित्य निवास है। अष्टमी तथा चतुर्दशी को यहाँ स्नान दानादि का बड़ा माहात्म्य है। यहाँ शूलपाणि की कठिन झाड़ी समाप्त हो जाती है।×

१२—पिप्पलाद तीर्थ से लगभग दो मील आगे इन्द्रवाणो ग्राम है यहाँ शक्रतीर्थ है। इसके सामने उस पार गरुड़ेश्वर स्थान है, इसका वर्णन लौटते समय उस पार की परिक्रमा में करेंगे। इन्द्रवाणो ग्राम में शक्रतीर्थ है। यहाँ इन्द्र ने तपस्या की थी। बात यह थी कि एक जृम्भासुर नाम का दैत्य था। उसने तपस्या करके

× (रे० खं० ८० अ०)

इतनी शक्ति प्राप्त कर ली थी कि स्वर्ग से इन्द्र को युद्ध में हराकर वह स्वयं इन्द्र बन गया था। इन्द्रासन छिन जाने के कारण इन्द्र ने यहाँ नर्मदा किनारे आकर घोर तप किया तथा शिवजी की आराधना की। उसकी तपस्या से आशुतोष भगवान् भोलेनाथ प्रसन्न हुए और उन्होंने वर माँगने को कहा। इन्द्र ने विनीत भाव से कहा—"प्रभो! मुझे ऐसी शक्ति दीजिये, जिससे मैं अपने शत्रु को जीत सकूँ।" इन्द्र की प्रार्थना पर भगवान् शङ्कर ने उन्हें एक शक्ति प्रदान की। उसी शक्ति से देवेन्द्र ने जृम्भासुर का वध किया। और अपने नाम से शक्रेश्वर शिवलिंग की स्थापना की यहाँ कार्तिक की बैकुण्ठ चतुर्दशी को स्नान का बड़ा माहात्म्य है।※

१३—शक्रेश्वर से लगभग डेढ़ मील आगे रावेर ग्राम है। उसके समीप ही व्यासेश्वर तथा वैद्यनाथ हैं। भगवान् वेदव्यास जी शूलपाणेश्ववर की यात्रा के निमित्त आये थे। उन्होंने यहाँ कुछ दिन निवास किया और अपने नाम से व्यासेश्वर शिवलिङ्ग की स्थापना की। व्यासेश्वरजी के पूर्व भाग में वैद्यनाथजी हैं। यहाँ देवताओं के वैद्य अश्विनीकुमारों ने वैद्य विद्या की प्राप्ति के निमित्त घोर तप किया था। वैद्य विद्या प्राप्त होने पर उन्होंने अपने नाम से वैद्यनाथ शिवजी की स्थापना की। वैद्य विद्या के प्राप्त करने वालों को यहाँ वैद्यानाथजी के दर्शन अवश्य करने चाहिये। इस स्थान में ओषधि दान का बड़ा माहात्म्य है। यहाँ पर स्नान, दान, जप, तप का अनन्त फल है।×

१४—व्यासेश्वर रावेर से दो मील दूर आनन्देश्वर तीर्थ है यह स्थान रावेर और सूरजगाँव के मध्य में है। रेवाखण्ड में इस तीर्थ की जो कथा है उसे श्रवण कीजिये। असुर तो शरीर को ही सब

※ (रे० खं० ८२ अ०) × (रे० खं० ८४ अ०)

कुछ मानते हैं, वे कामी होते ही हैं। एक बार चन्द्रपीड़, जृम्भासुर तथा सुरान्तक आदि असुरों ने सोचा—शिवजी की जो धर्मपत्नी पार्वतीजी हैं, वे अत्यन्त सुन्दरी हैं, इसलिये उनका हरण करना चाहिये। ऐसी कुमन्त्रणा करके वे शिवजी के समीप पहुँचे। शङ्करजी ने उनकी दुर्भावना को समझकर उनसे युद्ध किया। निरन्तर सौ वर्षों तक युद्ध होता रहा किन्तु वे दुष्ट इतने बलवान् थे कि शिवजी उनका वध न कर सके। तब शिवजी ने माता पार्वतीजी की ओर देखा। माता पार्वतीजी ने कहा--"प्राणनाथ ! आप अपने दिव्य त्रिशूल द्वारा इनका वध करें।" माताजी का सम्मति मानकर शिवजी न अपने त्रिशूल द्वारा सबका वध किया।

इस पर समस्त देवताओं ने भगवान् शङ्कर का अभिनन्दन किया। उनकी भूरि-भूरि स्तुति तथा प्रशंसा की। इस पर शिवजी आनन्द में विभोर होकर भैरव का रूप धारण करके अपने गणों के सहित तांडव नृत्य करने लगे। और अपने आप ही आनन्द में मग्न होकर अपने लिङ्ग की स्थापना की। वे ही आनन्देश्वर शिवलिंग के नाम से विख्यात हुए। यहाँ शिवजी की पूजा करने से सन्तान शतायु होती है। चैत्र की त्रयोदशी को यहाँ पितरों का श्राद्ध करने का बड़ा माहात्म्य है।÷

१५—मातृतीर्थ—सूरजवर ग्राम से लगभग एक मील पूर्व दिशा में मातृतीर्थ है। इसकी भी रेवाखण्ड में कथा है—"इस स्थान पर सप्तमातृकाओं ने घोर तपस्या करके शिवजी की आराधना की इससे शिवजी उन पर प्रसन्न हुए और वरदान माँगने को कहा। मातृकाओं ने विनीत भाव से कहा—"भगवन् ! जिस स्थान में आप प्रसन्न होकर प्रकट हुए वह पुण्य तीर्थ बन जाय।

÷ (रे० खं० ८६ अ०)

और वहाँ आपकी स्थिति सदा रहे शिवजी ने तथास्तु कहकर इसे स्वीकार किया। तब सप्तमातृकाओं ने अपने-अपने अंश की स्थापना की। नवदुर्गाओं की नवमी के दिन यहाँ देवियों के पूजन का बड़ा माहात्म्य है। स्त्रियों को पुत्र प्राप्ति, सौभाग्य प्राप्ति के लिये मातृकाओं का पूजन करना चाहिये।×

१६—सूरजवर ग्राम के पूर्व में एक नर्मदा तीर्थ है। इसकी कथा इस प्रकार है—"सत्ययुग में एक सूर्यवंशी दशरथ नाम के राजा थे। उनके कुछ शत्रु राजाओं ने मिलकर उनके राज्य पर चढ़ाई की। महाराज ने बड़ी वीरता से उनका सामना किया, ढाई वर्षों तक युद्ध होता रहा। वे कई राजा थे। महाराज दशरथ अकेले थे। इतने दिनों तक युद्ध होने के कारण राजा के समस्त सैनिक मर गये द्रव्यकोष समाप्त हो गया। तब वे अपने किले के गुप्त मार्ग से स्त्री पुत्रों के सहित राजधानी छोड़कर भाग गये। वे जंगलों में मारे-मारे भटकते फिरे। संयोग की बात जंगलों में राजा कहीं गये थे। उनके स्त्री पुत्र मार्ग भूलकर राजा से पृथक् हो गये। राजा ने बहुत ढूढ़ा किन्तु उनका कहीं पता नहीं चला। तब राजा अत्यन्त दुखी होकर नर्मदाजी के किनारे आये। दुःख के कारण उन्होंने आत्म हत्या करने का निश्चय किया। वे अपने हाथ पैर बाँधकर नर्मदाजी के दह में कूद पड़े। उस समय नर्मदा-जी ने स्वयं ही प्रकट होकर उन्हें जल से बाहर कर दिया और धैर्य बँधाते हुए कहा—"राजन्! ऐसा साहस मत करो।" यह कहकर नर्मदाजी ने एक मणि तथा एक लकड़ी दी और कहा—इनके द्वारा तुम्हारी मनोकामना पूर्ण होगी। जब तुम्हें पुनः राज्य ऐश्वर्य की प्राप्ति हो जाय तब तुम इन्हें मेरे जल में प्रवाहित कर देना। नर्मदाजी से इन वस्तुओं की प्राप्ति से राजा को परम प्रस-

× (रे० खं० ८७ अ०)

न्नता हुई। उन्होंने वहाँ नर्मदाजी की मूर्ति की स्थापना की और फिर अपनी राजधानी को गये। वहाँ उनके शत्रु स्वयं ही पराजित होकर भाग गये। उनके स्त्री बच्चे भी भटकते हुए वहाँ आ गये। और उन्हें पुनः पूर्ववत् धन, धान्य, राज्य तथा ऐश्वर्य की प्राप्ति हो गयी। राजा ने नर्मदा तट पर आकर नर्मदाजी का पूजन अर्चन किया। और उनकी जैसी आज्ञा थी उसका पालन किया। तभी से यह नर्मदा तीर्थ विख्यात हुआ। यह तीर्थ राजाओं को राज्य ऐश्वर्य, धन धान्य प्राप्त कराने वाला है। यहाँ दान, धर्म, ब्रह्मभोज आदि का बड़ा माहात्म्य है।*

१७—सूरजवर ग्राम के पश्चिम में डेढ़ मील पर एक मुंडेश्वर नामक तीर्थ है। शिवजी के जो रुंड-मुंड नामक प्रख्यातगण हैं। उनमें से मुंड नामक गण ने इस शिवलिंग की स्थापना की थी। इसके सम्बन्ध की कथा इस प्रकार है—एक बार शिवजी कहीं जा रहे थे, उन्होंने पार्वतीजी की रक्षा के निमित्त मुंड को नियुक्त किया और आज्ञा की—"यहीं रहना सावधानी के साथ सुरक्षा में तत्पर रहना।" ऐसा कहकर शिवजी चले गये। मुंड वहीं पार्वतीजी की की सुरक्षा में बैठा रहा। उसी समय वन में जंगली हाथियों के दो दलों में युद्ध छिड़ गया। मुंड कुतूहल वश अपने कर्तव्य को भूलकर हाथियों के युद्ध को देखने चला गया और बड़ी देर तक युद्ध को देखता रहा।

संयोग की बात उसी बीच शिवजी लौटकर स्थान पर आ गये। वहाँ मुंड को अनुपस्थित देखकर वे क्रुद्ध हुए उसी समय मुंड भी आ गया। शिवजी ने उससे पूछा—"तू अपने कर्तव्य से विमुख क्यों हुआ रे? कहाँ चला गया था?"

मुंड ने हाथ जोड़कर दीनता से कहा—"प्रभो! मैं कुतूहल वश हाथियों का युद्ध देखने चला गया था।"

---

* (रे० खं० ८७ अ०)

शिवजी ने कहा—"अपने कर्तव्य का ध्यान न रखकर साधारण मानव की भाँति तू कुतूहल वश अपने कार्य को भूल गया। जा तू मनुष्य हो जा।

इस पर मुंड बहुत गिड़गिड़ाया बार-बार क्षमा याचना करने लगा।

इस पर पार्वतीजी को दया आ गयी। वे शिवजी से बोलीं—"प्राणनाथ ! प्राणी ही तो हैं, साधारण-सी भूल है इसे क्षमा कर दीजिये।"

इस पर शिवजी ने कहा—"मेरा वचन कभी अन्यथा नहीं हो सकता। यह मनुष्य योनि में जन्म तो लेगा ही किन्तु वहाँ भी ब्राह्मण वंश में जन्मेगा। इसे वहाँ भी अपने स्वरूप का ज्ञान बना रहेगा और नर्मदाजी के तट पर जाकर तपस्या करेगा। वहाँ यह अपने नाम से मेरी लिंग की स्थापना करेगा, इससे मनुष्य योनि से छूटकर पुनः अपने पद को प्राप्त कर लेगा।"

यह सुनकर मुंड को सन्तोष हुआ। वह मनुष्य योनि में ब्राह्मण कुल में उत्पन्न हुआ। यहाँ नर्मदा किनारे घोर तपस्या करते हुए मुंडेश्वर शिवलिंग की स्थापना करके पुनः अपने पद को प्राप्त हुआ। तभी से यह मुंडेश्वर तीर्थ रेवातट पर विख्यात हुआ।×

१८—मुंडेश्वर से लगभग डेढ़ मील दूर रामपुरा नामक ग्राम है, उसके पूर्व में अनडवाही संगम है। अनडवाही नदी यहाँ आकर नर्मदाजी में मिली हैं। इस सम्बन्ध की कथा इस प्रकार है—शिवजी और पार्वतीजी रात्रि में शयन कर रहे थे। द्वार पर नन्दीश्वर पहरा दे रहे थे। उसी समय दैत्यों ने वहाँ आकर उपद्रव करना आरम्भ कर दिया। नन्दीश्वर ने बहुत समझाया—"भग-

× (रे० खं० ८८ अ०)

वान् इस समय आराम कर रहे हैं, तुम लोग उपद्रव मत करो।" किन्तु वे माने ही नहीं। दोनों में युद्ध छिड़ गया। नन्दीश्वर ने अपने सींगों के प्रहार से सभी दैत्यों को मार गिराया। रात्रि भर नन्दी का दैत्यों के साथ घमासान युद्ध होता रहा। सभी दैत्य मर गये। नन्दीश्वर के खुरों से वहाँ एक बड़ा भारी गड्ढा हो गया। उसी गड्ढा से यह अनडवाही नदी निकल पड़ी। रात्रि भर युद्ध करने से नन्दीश्वर के शरीर से जो श्वेद (पसीना) निकला वह इस नदी के जल के साथ बहकर नर्मदाजी में मिल गया। देवताओं ने नन्दी की इस वीरता के उपलक्ष में वृष्टि की। इससे नन्दीश्वर का क्रोध शान्त हो गया।

१९—अनडवाही नदी के पश्चिम भाग में भीमेश्वर नाम का तीर्थ है। इसकी कथा इस प्रकार है। सत्ययुग में चन्द्रवंशी भीम नाम के एक बड़े ही प्रतापी राजा हुए हैं। पांडवों में का भीम चन्द्र-वंश में तीसरा भीम है। इनसे पूर्व इस वंश में भीम नाम के दो और राजा हो चुके हैं। यह प्रथम भीम की कथा है। एक समय महाराज भीम मृगया के निमित्त अपनी सेना सहित नर्मदाजी के सघन बनों में गये। नर्मदा तट पर पहुँचकर उन्होंने स्नान दानादि समस्त धार्मिक कृत्य किये। नित्य कर्मों से निवृत्त होकर राजा एक वट वृक्ष की सघन छाया में विश्राम करने लगे। उनके साथी दूसरे स्थान पर ठहरे थे। राजा सुखपूर्वक लेटे हुए थे, उसी समय वे क्या देखते हैं कि नर्मदाजी के जल में से एक परम रूप लावण्यवती युवती सोलहों श्रृङ्गार किये हुए राजा के समीप आकर खड़ी हो गयी। राजा ने बड़े सम्भ्रम के साथ नम्रतापूर्वक पूछा—"देवि ! तुम कौन हो ? यहाँ सघन वन में एकाकी क्यों विचरण कर रही हो ?"

देवी ने कहा—"राजन् ! मैं साक्षात् नर्मदा ही हूँ। नर्मदा नदी की अधिष्ठातृ देवी हूँ।"

राजा ने विनयावत होकर कहा—"देवि ! आपका स्वागत है। मेरा अहो भाग्य है, जो आपके दर्शन हुए। आपने किस कारण कष्ट किया ? मेरे योग्य कोई सेवा हो तो बताइये।"

नर्मदाजी ने कहा—"राजन् ! मैं आपसे विवाह करना चाहती हूँ।"

राजा ने आश्चर्यचकित होकर कहा—"देवि ! आप कैसी बात कर रही हैं। आप साक्षात् शिवजी की पुत्री हैं। देवता, यक्ष, गन्धर्व, सिद्ध, ऋषि मुनि आपकी पूजा करते हैं। आप त्रैलोक्य पूज्या हैं। मैं तो एक साधारण मनुष्य हूँ। मेरे साथ आपका विवाह कैसे सम्भव हो सकता है ?"

नर्मदा जी ने कहा—"राजन् ! विधि का ऐसा ही विधान है। देवताओं के कार्य के निमित्त समय-समय पर मुझे ऐसा ही करना पड़ता है। इस समय हिरण्यकशिपु का पौत्र गगनप्रिय नामक एक महाबलशाली दैत्य हो गया है। वह और किसी से मारा नहीं जा सकता। आपके सकास से जो मुझ में पुत्र होगा वही उसका वध कर सकेगा। ऐसा ही ब्रह्माजी ने पहिले से ही विधान बना रखा है, अतः देव कार्य के लिये आप मेरे प्रस्ताव को स्वीकार करें। पुत्र उत्पन्न हो जाने पर मैं पुनः अपने यथार्थ स्वरूप में मिल जाऊँगी।"

दैवेच्छा समझकर राजा भीम ने नर्मदा जी से विवाह किया और उनके गर्भ से दुःशमन नामक पुत्र उत्पन्न हुआ। इसी सम्बन्ध की कल्पान्त भेद से एक दूसरी भी कथा है। राजा भीम के ही साथ नर्मदा जी का विवाह क्यों हुआ ? ये भीम पूर्व जन्म में कौन थे ? इस सम्बन्ध की भी कथा सुनिये—एक समय समस्त देवगण मिलकर शिवजी की पूजा करने गये। सबने बिधि विधान पूर्वक विश्वेश्वर भगवान् विश्वनाथ की प्रेमपूर्वक पूजा की। भगवान् भवानीपति के दाहिनी ओर उनकी सर्वाङ्ग सुन्दरी पुत्री

नर्मदा जी भी बैठी हुई थी। देवता में जो अग्निदेव बैठे हुए थे उनका मन नर्मदा जी के दिव्य रूप लावण्य को देखकर मुग्ध हो गया। उनके मन में कामवासना जाग्रत हो गयी। सर्वान्तर्यामी सर्वेश्वर शिवजी अग्नि के मनोभाव को समझ गये। उन्होंने अग्निदेव को शाप दिया—"तैंने यह मानवी चेष्टा की है, अतः तू मनुष्यलोक में जाकर मानवी योनि में जन्म लेगा।"

यह सुनकर अग्निदेव के छक्के छूट गये। उन्होंने विनीत भाव से शिवजी की प्रार्थना की, नाना स्तोत्रों से उनकी स्तुति की। इस पर आसुतोष भगवान् शंकर प्रसन्न हो गये और बोले—"अग्निदेव ! मेरा वचन कभी अन्यथा नहीं हो सकता। तू मनुष्य योनि में जन्म तो अवश्य लेगा, किन्तु वहाँ भी तू भीम नाम से चक्रवर्ती राजा होगा। और यह नर्मदा उस जन्म में तेरी पत्नी होगी। उसके गर्भ से तेरा एक बहुत प्रतापशाली पुत्र होगा। वह देवताओं का कार्य करेगा। तब तेरी मुक्ति हो जायगी। तू पुनः अपने पूर्व पद पर प्रतिष्ठित हो जायगा।"

यह सुनकर अग्निदेव को सन्तोष हुआ। वे ही अग्निदेव भीम नाम के चन्द्रवंश में राजा हुए और उनका विवाह नर्मदाजी के साथ हुआ। उन्हीं से दुःशमन पुत्र हुआ जिन्होंने देवताओं को सङ्कट से छुड़ाया।

देवताओं पर क्या सङ्कट आ पड़ा ? इस सम्बन्ध की भी कथा सुनिये। हिरण्यकशिपु के पुत्र प्रह्लाद हुए। प्रह्लाद के पुत्र विरोचन। विरोचन के पुत्र शोणितपुर के अधीश्वर वाणासुर हुए और वाणासुर का पुत्र गगनप्रिय हुआ। उसने घोर तपस्या की। उसकी तपस्या से प्रसन्न होकर ब्रह्माजी उसके सम्मुख प्रकट हुए और उससे वरदान माँगने को कहा।

गगनप्रियासुर ने कहा—"प्रभो ! यदि आप मुझ पर प्रसन्न हैं तो मुझे अजर-अमर होने का वरदान दीजिये।"

ब्रह्माजी ने कहा—"देखो, भैया! जो उत्पन्न हुआ है, उसे एक दिन मरना ही होगा। इसलिये अमर होने का वर तो मैं दे नहीं सकता। इसके अतिरिक्त जो तुम वर माँगोगे उसे मैं तुम्हें दूँगा।"

तब असुर ने कहा—"तब भगवन्! मुझे एक ऐसा रथ दीजिये, जिसकी अव्याहत गति हो, जो सर्वत्र सञ्चार कर सके और देवता, असुर तथा मनुष्य इन सबको मैं पराजित कर सकूँ। ब्रह्माजी ने तथास्तु कहकर इसे स्वीकार कर लिया।

अब तो गगनप्रिय का अभिमान अत्यधिक बढ़ गया। उसने त्रैलोक्य को अपने वश में कर लिया। देवताओं को पराजित करके उसने उन्हें स्वर्ग से भगा दिया और स्वयं इन्द्र बन बैठा। देवता बड़े दुखी हुए और वे सब मिलकर ब्रह्माजी की शरण में गये और अपना दुःख उन्हें सुनाया। ब्रह्माजी ने कहा—"भैया! ऐसे रोने-धोने से काम नहीं चलेगा पुरुषार्थ करो।"

देवताओं ने कहा—भगवन्! क्या पुरुषार्थ करें। उसके सम्मुख हमारी कुछ चलती ही नहीं।"

ब्रह्माजी ने कहा—"पुरुषार्थ से सब कुछ प्राप्त हो सकता है। देखो, छोटे से पाँच वर्ष के ध्रुव ने पुरुषार्थ से ही तपस्या करके ध्रुव पद की प्राप्ति कर ली। यह असुर मेरे वरदान के कारण देवता दानव, मनुष्य तथा अन्य किसी से मर नहीं सकता। हाँ राजा भीम जब शिव-पुत्री नर्मदाजी से विवाह कर लेंगे तब उनके गर्भ से जो पुत्र पैदा होगा वही इसे मार सकता है। उसका नाम होगा दुःशमन। वह पूर्व जन्म में वरुण का पुत्र था उसका नाम था पुष्कर। किसी कारणवश इन्द्र उस पर क्रुद्ध हो गये और उन्होंने उसे शाप दिया—"जा तू मनुष्य योनि में जन्म ग्रहण कर।"

उसकी अनुनय विनय पर इन्द्र ने कहा—"मनुष्य योनि में तो तुझे जन्म लेना ही पड़ेगा, किन्तु तू महाराजा भीम के द्वारा

सरित् प्रवरा नर्मदा से उत्पन्न होगा। तू शूरवीर तपस्वी और धर्म परायण होगा। तेरे द्वारा देवताओं का बड़ा उपकार होगा।” वही वरुण का पुत्र पुष्कर नर्मदा में उत्पन्न हो गया है। उसका नाम दुःशमन है, उसके द्वारा ही गगनप्रिय मारा जायगा।”

ब्रह्माजी की बात सुनकर देवगण तपस्या करने चले गये। इधर महाराज भीम के द्वारा नर्मदा में दुःशमन का जन्म हुआ। जब वह १६ वर्ष का हुआ तो उसने नर्मदा किनारे जाकर घोर तपस्या की। उसकी तपस्या से भवानीपति भगवान् भूतनाथ उसके सम्मुख प्रकट हुए और उसे आशीर्वाद दिया कि तेरे द्वारा गगनप्रिय असुर मारा जायगा। तब वह शोणितपुर में गया और युद्ध में गगनप्रिय का वध किया।❀ उन्हीं दुःशमन के पिता महाराज भीम के नाम से भीमेश्वर शिव हैं।

२०—भीमेश्वर की बगल में ही अर्जुनेश्वर नामक शिवलिङ्ग है उसकी कथा इस प्रकार है--हयहयकुल में महाराजा सहस्रबाहु बड़े ही प्रभावशाली शूरवीर बलवान् नृपति हुए। उनकी राजधानी नर्मदा तट पर माहिष्मती पुरी थी। वे परम शिवभक्त थे। एक समय की बात है कि लङ्काधिपति रावण नर्मदा किनारे तपस्या कर रहा था। यह वहाँ पहुँचा। दोनों में घोर युद्ध हुआ। सहस्रार्जुन ने रावण को जीतकर उसे अपनी राजधानी में लाकर बन्दी बना लिया। ऐसा तो वह बली था। दत्तात्रेयजी की कृपा से उसे अनेक सिद्धियाँ प्राप्त थीं, वह सर्वगामी था, जहाँ चाहे वहीं जा सकता था। एक बार सहस्रार्जुन आखेट करते-करते भीमेश्वर पर जा पहुँचा। वहाँ जाकर जब उसने महाराज भीम के साथ नर्मदा के विवाह की बात सुनी तो उसने स्वयं भी नर्मदा जी से विवाह करने की इच्छा प्रकट की और वाण फेंककर उनके

❀ रे० खण्ड—८८ अ०।

प्रवाह को रोकना चाहा तब ब्राह्मणों ने ऐसा करने से रोका और कहा—"नर्मदाजी तो शिवपुत्री हैं, दिव्य चिन्मयी हैं। तुम अपनी मनोकामना की पूर्ति के निमित्त शिवजी की आराधना करो।"

ब्राह्मणों की बात मानकर वह रेवातट पर रहकर शिवजी की आराधना करने लगा। इसकी तपस्या से प्रसन्न होकर शिवजी इसके सम्मुख प्रकट हुए और वर माँगने को कहा।

सहस्रार्जुन ने कहा—"मेरा विवाह नर्मदाजी से करा दें।"

तब शिवजी ने समझाया—"देखो, तुम हमारे पुत्र हो। नर्मदा हमारी पुत्री है, इसलिये विवाह नहीं हो सकता। तुम और कोई वर माँगो।"

तब सहस्रार्जुन ने कहा—"यह जो मेरी स्थापित अर्जुनेश्वर नामक शिवलिङ्ग है, इसकी जो भक्त प्रेम से पूजा करे उसके समस्त मनोरथ पूर्ण हो जायँ।" शिवजी ने तथास्तु कहकर इसे स्वीकार कर लिया। तभी से इस तीर्थ का अधिक माहात्म्य बढ़ गया। जो यहाँ रहकर शिवजी की आराधना करता है और श्रद्धा से स्नान, दान तथा ब्राह्मण भोजन कराता है उसे अग्निष्टोम नामक यज्ञ का फल मिलता है ❀।

२१—अर्जुनेश्वर के समीप ही धर्मेश्वरजी का स्थान है। इसकी कथा नारदीय पुराण आदि अन्य पुराणों में तो विस्तार के साथ वर्णन की गयी है। यहाँ संक्षेप में इसका वर्णन है। प्राचीन काल में रुक्माङ्गद नाम के एक परम भगवत् भक्त वैष्णवाग्रणी राजा थे। वे हरिबासर-एकादशी व्रत के कट्टर पक्षपाती थे। समस्त प्रजा के लोगों से कठोरता के साथ एकादशी का व्रत कराया करते थे। यहाँ तक कि हाथी, घोड़ा आदि पशुओं को भी

❀ रे० खण्ड ८६ अ०

उस दिन आहार नहीं देते थे। उनके प्रभाव से सातों द्वीपों के नर-नारी एकादशी व्रत करने लगे। जो एकादशी व्रत करता है, वह नरक में कभी जा ही नहीं सकता। अतः नरक खाली हो गया। वहाँ कोई जाता ही नहीं था। इससे धर्मराज (यमराज) बड़े चिन्तित हुए। वे शिवजी के समीप गये और बोले—"भगवन ! मुझे किसी अन्य पद पर प्रतिष्ठित कर दीजिये।"

शिवजी ने पूछा—"क्यों क्या बात है ?"

तब धर्मराज ने कहा—"महाराज रुक्माङ्गद के धर्म के कारण सभी लोग वैकुण्ठ जाते हैं। मेरे लोक में कोई आता ही नहीं। मेरा लोक खाली हो गया है। मैं खाली बैठा रहता हूँ। अतः मुझे कोई दूसरा कार्य सौंपा जाय।"

यह सुनकर शिवजी हँसे और बोले—"धर्मराज ! इसका उपाय हो रहा है। कुछ काल में महाराजा रुक्माङ्गद वैकुण्ठवासी हो जायँगे। तब तुम्हारा कार्य पुनः चालू हो जायगा। तब तक तुम नर्मदा किनारे रहकर तपस्या करो।" शिवजी की आज्ञा मानकर धर्मराज वहाँ धर्मेश्वर शिवलिङ्ग की स्थापना करके तपस्या करने लगे। तभी से यह धर्मेश्वर नाम से तीर्थ विख्यात हो गया। यहाँ जप, तप, व्रत अनुष्ठानादि करके अनेक पुरुषों ने सिद्धि लाभ की है। यहाँ पृथ्वी दान का बड़ा माहात्म्य है।*

२२—यहाँ से कुछ ही दूर रामपुरा के समीप नर्मदाजी के जल में लुकेश्वर नाम का स्थान है। इसकी कथा इस प्रकार है—एक पृष्ठ (भस्मासुर) नाम का दैत्य था। उसने नर्मदा तट पर रहकर शिवजी की उग्र आराधना को। इसकी तपस्या से प्रसन्न होकर शिवजी उसके सम्मुख प्रकट हुए और उससे वर माँगने को कहा। दैत्य ने कहा—"हे देवाधिदेव ! यदि आप मुझ पर

* रे० खण्ड ६० अ०

प्रसन्न हैं तो मुझे यही वरदान दीजिये कि मैं जिस-जिसके सिर पर हाथ रखूँ वह भस्म हो जाय। शिवजी तो उसे वर देना नहीं चाहते थे, किन्तु पार्वतीजी को दया आ गयी। उन्होंने शिवजी से वरदान देने का आग्रह किया। शिवजी ने पार्वतीजी के कहने से उसे वर दे दिया। अब क्या था वह तो पार्वतीजी के रूप लावण्य को देखकर उनके ऊपर आसक्त हो गया। उन्हें लेने की इच्छा से उसने सबसे पहिले अपने वरदाता शिवजी पर ही हाथ रख कर अपने वरदाता की सत्यता की परीक्षा करनी चाही। उसके इस दुष्ट विचार को नन्दीश्वर समझ गये, वे उससे युद्ध करने लगे। नन्दी अपने सींगों से उस पर प्रहार करने लगे। बड़ी देर तक दोनों में घनघोर युद्ध होता रहा। शिवजी समझ गये, नन्दी इस दुष्ट से जीत नहीं सकते। वे पार्वतीजी के सहित दक्षिण दिशा की ओर भागे।

उस दुष्ट का उद्देश्य नन्दी को मारने का तो था नहीं। वह तो पार्वतीजी को लेना चाहता था शिवजी को भस्म करके। अतः वह नन्दी को छोड़कर शिवजी के पीछे भागा। अवसर पाकर नन्दी भी भागकर शिवजी के समीप पहुँच गये और पार्वतीजी सहित उन्हें अपनी पीठ पर चढ़ाकर दौड़ने लगे। वह दुष्ट दैत्य भी नन्दी के पीछे-पीछे भागने लगा। शिवजी जहाँ-जहाँ जाते वह उनके पीछे ही लगा फिरता था। सब देवता शिवजी के इस सङ्कट को देखकर घबरा गये। जब नारदजी को इसका पता लगा तो वे दौड़े-दौड़े विष्णु भगवान् के समीप गये और उनको सब समाचार सुनाकर बोले—"भगवन्! भगवान् भोलेनाथ अपने भोलेपन से भारी विपत्ति में फँस गये हैं, उनकी रक्षा कीजिये।"

तब भगवान् तुरन्त शिवजी के पास आकर धीरे से बोले—

"बाबा ! तुम नर्मदाजी के जल में लुक जाओ। इस दैत्य से मैं निपट लूँगा।"

भगवान् की बात मानकर शिवजी नर्मदाजी के जल में लुक (छिप) गये। तब भगवान् विष्णु ने परम सुन्दरी मोहिनी का रूप धारण कर लिया और अपने पतले-पतले ओठों में रस भर कर कोकिल कण्ठी वाणी में कहा—"दैत्यराज ! कहाँ दौड़े जा रहे हो, तनिक विश्राम तो कर लो।"

पार्वतीजी से भी सुन्दरी नारी की वीणा विनिन्दित वाणी श्रवण करके दैत्य खड़ा हो गया।"

उससे मोहिनीजी बोली—"क्यों भागे जा रहे हो ?"

तब दैत्य ने कहा—"शिवजी ने मुझे वरदान दिया है कि मैं जिसके भी सिर पर हाथ रखूँगा वह भस्म हो जायगा। अतः पार्वती को पाने की इच्छा से मैं शिवजी को ही भस्म कर पार्वती को ग्रहण करूँगा।"

यह सुनकर मोहिनी हँस पड़ीं और बोली—"छीः-छीः ! इतने बड़े दैत्यराज होकर उन भूत प्रेतों के स्वामी की बातों में आ गये। वे तो जाने क्या बकते रहते हैं। फिर तुम्हारे पास सिर नहीं है क्या ? पहिले परीक्षा कर लो। आओ मेरे साथ नृत्य करो।"

असुर मोहिनो के चक्कर में फँस गया। मोहिनी नाचने लगी। वह भी साथ-साथ नाचने लगा। बोलीं—"हाथ उठाओ। सिर की ओर करो।" बोलो गरम लगता है ? उसने कहा—नहीं। अच्छा और नीचा करो। ऐसे नीचा करते-करते उसके सिर पर हाथ रखा दिया। वह वहीं भस्म हो गया। तब भगवान् विष्णु शिवजी के समीप गये और हँसकर बोले—"भोले बाबा ! ऐसा वर किसी को मत दिया करो।" नर्मदाजी के जल में जहाँ शिवजी लुके थे, वहीं लुकेश्वर तीर्थ प्रसिद्ध हुआ।

तब से शिवजी सब देवताओं के सहित यहाँ नर्मदा जल में रहते हैं। यहाँ भजन-पूजन करने से सर्व कर्म सिद्ध होते हैं।[1]

२३--लुकेश्वर से कुछ ही दूर पर धनेश्वर नाम का तीर्थ है। इसकी कथा इस प्रकार है। लोकपाल धन के स्वामी कुबेर ने जब सुना कि यहाँ आकर शिवजी लुके (छिपे) थे और यह सिद्धि देने वाला स्थान है तो उन्होंने लङ्का की प्राप्ति के निमित्त यहाँ रहकर घोर तपस्या की और अपने नाम से धनेश्वर शिवलिङ्ग की स्थापना की। इसके समीप ही इन्द्रद्रोण है। यहाँ अनेक राजाओं ने बहुत-से यज्ञ किये थे। उनकी सुगन्धित भस्म यहाँ से अब तक निकलती है।[2]

२४--धनेश्वर के समीप ही जटेश्वर तीर्थ है। भस्मासुर यहीं से शिवजी की पीछे पड़ा था। तब शिवजी की जटा खुल गयी थी, इसी कारण यह जटेश्वर तीर्थ प्रख्यात हुआ। पार्वतीजी द्वारा यह तीर्थ निर्मित हुआ। यहाँ स्नान, दान, पूजा, पाठ और शङ्कर पूजन का बड़ा माहात्म्य है।[3]

२५--जटेश्वर तीर्थ के समीप ही मङ्गलेश्वर तीर्थ है। इसकी कथा इस प्रकार है--मङ्गल पृथ्वी के पुत्र हैं। उन्होंने यहाँ आकर १०० वर्ष पर्यन्त शिवजी की उपासना की और अपने नाम से मङ्गलेश्वर नाम की शिवलिङ्ग की स्थापना की। इनकी तपस्या से प्रसन्न होकर शिवजी ने इन्हें दर्शन दिये और वर माँगने को कहा। तब मङ्गल ने कहा--"प्रभो ! यदि आप प्रसन्न हैं तो मुझे ग्रहों में स्थान मिले और आपके चरणों की भक्ति मेरे हृदय में सदैव बनी रहे।" शिवजी ने तथास्तु कहकर यही वर दिया। जिस दिन चतुर्दशी मङ्गलवार को पड़े उस दिन यहाँ के दर्शनों

---

१. रे० खण्ड ६१ अ० २. रे० खण्ड ६२ अ० ३. रे० खण्ड ६२ अ०

का बहुत बड़ा माहात्म्य है। अङ्गार चतुर्थी को पूजन करके दान ब्रह्मभोज कराने से ग्रह पीड़ा नहीं होती।[१]

२६--मङ्गलेश्वर से लगभग एक मील की दूरी पर गोपारेश्वर तीर्थ है। यह तीर्थ गुवार नामक ग्राम के सन्निकट है। इसकी कथा इस प्रकार है कि एक स्वर्ग की कामधेनु गौ घूमती-घूमती यहाँ आ गयी। नर्मदा तट पर ऐसा सुन्दर स्वच्छ मनोरम स्थान देखकर यहाँ तपस्या करने लगी। तपस्या करते-करते उसके मन में सङ्कल्प हुआ कि मैं अपने दुग्ध से शिवजी का अभिषेक करूँ। ऐसा सङ्कल्प होते ही उसकी नाभि से शङ्करजी प्रकट हुए। कामधेनु ने प्रसन्नता के साथ शिवजी का अभिषेक किया। इस पर शिवजी प्रसन्न हुए और कामधेनु से वर माँगने को कहा। तब गौमाता ने कहा--"प्रभो! मुझे यह वरदान दीजिये, मैं यथा नाम तथा गुण वाली हो जाऊँ। सभी की कामनाओं की पूर्ति कर सकूँ।" शङ्करजी ने तथास्तु कहकर उनकी इच्छा पूर्ति की। यहाँ शिवजी का अभिषेक करने से सभी कामनाओं की पूर्ति होती है। पर्वों पर यहाँ कामधेनु आती है। कार्तिक कृष्णा चतुर्दशी को यहाँ का विशेष माहात्म्य है।[२]

२७--गोपारेश्वर तीर्थ से दो मील आगे सहराव ग्राम के समीप शङ्खचूड़ेश्वर तीर्थ है यहाँ पर शङ्खचूड़ नाग ने चिरकाल तक तपस्या की और अपने नाम से शिवलिङ्ग की स्थापना की। यहाँ शङ्करजी का घृत तथा दुग्ध से अभिषेक करने का बड़ा माहात्म्य है। सर्प दंश से जो मर जाते हैं उन पितरों का यहाँ तर्पण करने से वे अकाल मृत्यु के दोष से मुक्त हो जाते हैं।[३]

२८--शङ्खचूड़ेश्वर के समीप ही बद्री केदारनाथ तीर्थ है। इस सम्बन्ध की कथा इस प्रकार है--पहिले जो लोग बद्री केदार

---

१. रे० खण्ड ६२ अ० २. रे० खण्ड ६२ अ० ३. रे० खण्ड ६६ अ०

नाथ की यात्रा को जाते थे उन्हें पर्वतों की चढ़ाई के कारण तथा हिम–बर्फ–के कारण बड़ा कष्ट होता था। बहुत से वृद्ध नर-नारी तो मर ही जाते थे। यह देखकर विभांडक, कपिल तथा च्यवन आदि महर्षियों ने यहाँ रेवातट पर रहकर घोर तपस्या की। उनकी तपस्या से प्रसन्न होकर भगवान् केदारनाथ प्रकट हुए और ऋषियों से वरदान माँगने को कहा। ऋषियों ने विनम्रता के साथ कहा—"प्रभो ! आप तो पहाड़ की बर्फ से ढकी चोटी पर निवास करते हो। वृद्ध पुरुषों को वहाँ पहुँचने में बड़ा कष्ट होता है। अतः आप यहाँ निवास करें और यहाँ रह कर मनुष्यों के मनोरथों को पूर्ण करें।" शिवजी ने तथास्तु कहकर इसे स्वीकार किया। तब से केदारनाथजी यहाँ स्थित रहते हैं। यहाँ माघ, कार्तिक और आश्विन की अष्टमी चतुर्दशी का बड़ा माहात्म्य है। यहाँ दान पुण्य तथा वेद का पारायण करना चाहिये।×

२९—बद्री केदारनाथ तीर्थ के समीप ही पाराशरतीर्थ है। यहाँ पराशर मुनि ने पुत्र की कामना से शिव पार्वतीजी की आराधना की थी। इनकी तपस्या से प्रसन्न होकर शङ्करजी पार्वती के सहित प्रकट हुए और इनसे वरदान माँगने को कहा। तब ऋषि ने कहा—"प्रभो ! मुझे विद्वान्, ज्ञानवान् प्रभाशक्ति सम्पन्न पुत्र की प्राप्ति हो।"

तब पार्वतीजी ने कहा—"तुम्हें अपनी पत्नी से पुत्र की प्राप्ति न होगी। शिवजी से वर माँगो इससे तुम्हें ऐसे पुत्र की प्राप्ति होगी।" शिवजी के वरदान से ही शिवस्वरूप अभाल लोचन शम्भु श्री व्यासदेवजी का जन्म हुआ। तभी से यह पाराशरतीर्थ विख्यात हुआ। यहाँ हरगौरा पूजन का विशेष माहात्म्य है।

× (रे० खं० अ० ९६)

विशेषकर माघ, चैत्र, वैशाख, श्रावण तथा मार्गशीर्ष की नवमी चतुर्दशी का विशेष फल है।[१]

३०—पाराशरतीर्थ से आगे भीमेश्वरतीर्थ है इसकी कथा इस प्रकार है। एक समय मुद्गल आदि कई ऋषियों ने मिलकर भीमव्रत किया, जिसे रोद्रव्रत भी कहते हैं। इस व्रत के प्रभाव से शिवजी प्रसन्न हुए और उन्होंने प्रकट होकर ऋषियों से वरदान माँगने को कहा। तब ऋषियों ने कहा—"प्रभो! यहाँ सदा सर्वदा आपकी सन्निधि रहे और आप यहाँ भीमव्रत करने वाले को मनोवांछित फल दें।" शिवजी ने यही वर दिया। यहाँ भीमव्रत तथा गायत्री के अनुष्ठान का बहुत माहात्म्य है। यहाँ ओंकार का विधिवत् ध्यान करने से मुक्ति की प्राप्ति होती है। चतुर्दशी रविवार को दान पुण्य ब्रह्मभोज का अत्यधिक माहात्म्य है।[२]

भीमेश्वरतीर्थ के सन्निकट ही तेजोनाथ अथवा वैद्यनाथ तीर्थ है इसकी कथा कैलास पर स्थित शिवजी ने अपने पुत्र कार्तिकेय-जी से इस प्रकार कही—"जब प्रलयकाल समाप्त हुआ तब ब्रह्माजी को आकाशवाणी हुई कि 'तुम सृष्टि कार्य आरम्भ करो।"

अब ब्रह्माजी सोचने लगे—"मैं किस प्रकार सृष्टि आरम्भ करूँ।" ब्रह्माजी इसी प्रकार सोच में मग्न थे कि उनके ललाट से तुरन्त तेजोमय शङ्करजी प्रकट हो गये। ब्रह्माजी आश्चर्यचकित हो गये। तब शङ्करजी कहा—"हे ब्रह्मदेव मैं स्वयं प्रकट होकर आपके सम्मुख समुपस्थित हूँ। आज्ञा कीजिये। यह कहकर शङ्करजी रोने लगे।"

तब ब्रह्माजी ने कहा—"तुम उत्पन्न होते ही रोने लगे, इससे तुम्हारा नाम रुद्र होगा। तुम सृष्टि करो।"

---

१. (रे० खं० ७६ अ०) २. (रे० खं० ६७ अ०)

ब्रह्माजी के ऐसा कहने पर रुद्रदेव ने अपने समान पाँच सौ करोड़ रुद्रगण उत्पन्न किये। वे विकराल वेष वाले परस्पर ही लड़ने लगे।

तब ब्रह्माजी ने कहा—"रुद्रदेव ! दया करो ऐसी रौद्री सृष्टि से कार्य नहीं चलेगा। यह आपकी ही सृष्टि रहे।" तब ब्रह्माजी ने पृथ्वी की रचना की जिससे समस्त चराचर सृष्टि उत्पन्न हुई। ब्रह्माजी के ललाट से जो तेज प्रकट हुआ था। वे ही तेजोनाथ के नाम से संसार में विख्यात हुए।÷

यहाँ तेजोनाथजी में रहकर गरुड़जी ने भी पन्द्रह सहस्र वर्ष तपस्या की थी। उसकी कथा इस प्रकार है--एक समय भगवान् विष्णु क्षीरसागर में शेष की शैया पर सुख से शयन कर रहे थे। उनकी नित्य शक्ति भगवती लक्ष्मीजी शनैः-शनैः उनके चरणों को चाप रहीं थीं। अन्य ऋषि मुनि उनकी स्तुति कर रहे थे। भगवान् के समीप ही गरुड़जी विराजमान थे। गरुड़जी के मन में अपने बल का कुछ अहंकार उत्पन्न हो गया। वे सोचने लगे— "देखो, मैं कितना बलशाली हूँ। त्रैलोक्य को अपने में धारण करने वाले भगवान् विष्णु को मैं धारण करता हूँ। भगवान् मेरे अधीन हैं वे मेरे बिना कहीं जा नहीं सकते।" घट-घट की जानने वाले सर्वान्तर्यामी भगवान् समझ गये कि गरुड़ को अपने बल का अभिमान हो गया है। पतन के लिये अभिमान से बढ़कर कोई दुर्गुण नहीं। उत्थान के लिये नम्रता, दीनता, शील से बढ़-कर कोई सद्गुण नहीं। गरुड़ के गर्व को मुझे दूर करना चाहिये। यह सोचकर भगवान् ने अपने अँगूठे से गरुड़जी के शरीर को दबा दिया। इसी से गरुड़जी घबरा गये। वे रक्त की बमन करने लगे। तब हँसकर भगवान् ने कहा—"गरुड़जी !

÷ (रे० खं० ६८ अ०)

मेरे बोझ को संसार में कौन सहन कर सकता है। यह तो मैंने तुम्हारे गर्व को खर्व करने के निमित्त तुम्हें दृश्य दिखाया है। ऐसा गर्व होना अज्ञान का द्योतक है। अब तुम ज्ञान प्राप्ति के निमित्त नर्मदा तट पर जाकर तपस्या करो। जब शरीर तपस्या के क्लेश से कष्ट सहन करेगा तभी तुम्हारा अज्ञान नष्ट होगा।"

तब गरुड़जी ने विनोत भाव से पूछा—"प्रभो ! रेवातट पर मैं किस स्थान पर तपस्या करूँ ?"

इस पर भगवान् ने बताया—"वहाँ तेजोनाथ नामक तीर्थ है, वहीं तपस्या करने से तुम्हें तेज की, ज्ञान की प्राप्ति होगी।"

भगवान् की आज्ञा पाकर गरुड़जी ने यहाँ पन्द्रह सहस्र वर्षों तक तपस्या करके सिद्धि प्राप्त की। उन्हें पूर्ण ज्ञान की उपलब्धि हुई। इस तीर्थ में गोदान, भूमिदान, कन्यादान, ग्रन्थदान आदि का बड़ा माहात्म्य है।*

इस तीर्थ में सुरवैद्य अश्विनीकुमारों ने भी एक सहस्र वर्ष तक तपस्या की थी उसकी कथा इस प्रकार है—"वाराह कल्प में ब्रह्माजी ने पूर्व की भाँति सृष्टि आरम्भ की। तब विवस्वान्–सूर्य–के बडवा–रूपा मूर्ति से अश्वनीकुमारों का जन्म हुआ। ब्रह्माजी ने कहा—तुम लोग सबकी व्याधियों का हरण किया करो। तुम देवताओं के वैद्य होगे।"

ब्रह्माजी की आज्ञा होने पर ये लोग चिन्तित हुए कि हम किस प्रकार सबकी व्याधियों का हरण करें। इसी चिन्ता में मग्न होकर ये पृथ्वी पर परिभ्रमण करने लगे। घूमते-घूमते एक दिन इन्हें देवर्षि नारद के दर्शन हुए। नारदजी ने इनसे इनकी चिन्ता का कारण पूछा, तब इन्होंने बताया। ब्रह्माजी ने हमें व्याधि हरण की आज्ञा दी है, हम कैसे प्राणियों की व्याधि हरण में समर्थ हो सकें ?

---

* (रे० खं० ६६ अ०)

तब नारदजी ने कहा—"देखो, हम तुम्हें उपाय बताते हैं। तुम श्री नर्मदाजी के तट पर चले जाओ। वहाँ तेजोनाथ नामक तीर्थ स्थान है। वहाँ जाकर शिवाराधना पूर्वक तपस्या करो। तुम व्याधि हरण में समर्थ हो जाओगे। शिवजी की कृपा से तुम्हें परम सिद्धि प्राप्त हो जायगी।"

नारदजी की आज्ञा से इन्होंने यहाँ तेजोनाथ में रहकर एक सहस्र वर्ष पर्यन्त घोर तपस्या की। इनकी तपस्या से प्रसन्न होकर भगवान् भूतनाथ भवानीपति इनके सम्मुख प्रकट हुए और वर माँगने को कहा।

तब अश्विनी कुमारों ने कहा--"प्रभो! हम समस्त व्याधियों को हरण करने में सामर्थ्यवान् हों। ऐसा हमें वरदान दीजिये।"

तब शिवजी ने तथास्तु कहकर इन्हें मनोवांछित वरदान दिया। तभी से ये तीनों लोकों में वैद्यराज के नाम से प्रसिद्ध हो गये। इसीलिये तेजोनाथजी को वैद्यनाथ भी कहते हैं। यहाँ शिव-जी की सन्निधि में तपस्या करने और शिवाराधन करने से रोगों से निवृत्ति होती है। वैद्य यहाँ आकर जप-तप और पूजन करें तो उन्हें वैद्य विद्या में परमसिद्धि प्राप्त हो सकती है। सूर्य तथा चन्द्र ग्रहण के समय यहाँ स्नान पूजन करने से समस्त बड़े-बड़े तीर्थों के स्नान का फल प्राप्त होता है। यहाँ अष्टमी तथा चतुर्दशी को स्नान का विशेष माहात्म्य है।❀

३१—भीमेश्वर तीर्थ से दो मील आगे तेजोनाथ है। तेजो-नाथ के समीप ही बाँदरिया ग्राम में बानरेश्वर तीर्थ है। इसकी कथा इस प्रकार है—बानरों के राजा सुग्रीव ने भगवान् की रावणवध के युद्ध में सहायता की थी। रावण का वध करके जब भगवान् पुष्पक विमान से अयोध्या को आने लगे तब मार्ग में

❀ (रे० खं १०० अ०)

उन्होंने नर्मदाजी के दर्शन करके तेजोनाथ तीर्थ की बड़ी प्रशंसा की। तब बानरराज सुग्रीव ने ब्रह्महत्या के पाप से निवृत्त होने के निमित्त यहाँ घोर तपस्या की और सभी बानरों ने मिलकर यहाँ बानरेश्वर शिवलिंग की स्थापना की। यहाँ के दर्शन से समस्त कामनायें पूर्ण होती हैं।×

३२—बानरेश्वर के समीप ही ब्रह्मेश्वर तीर्थ है। यह बहुत ही प्राचीन सर्वश्रेष्ठ तीर्थ है। प्रत्येक कल्प में यह भिन्न भिन्न नामों से विख्यात होता है। जैसे प्रथम कल्प में इसे ब्रह्माजी ने प्रकट किया इसलिये इसका नाम ब्रह्मेश्वर प्रकट हुआ। द्वितीय कल्प में भगवान् विष्णु के तप करने से इसका नाम चक्रेश्वर हुआ। तृतीय कल्प में इन्द्र ने यहाँ तपस्या करके सिद्धि प्राप्त की इसलिये इसका नाम शक्रेश्वर हुआ। चतुर्थ कल्प में यमराज ने सहस्र वर्ष तप किया इससे इसका नाम धर्मेश्वर तीर्थ हुआ। पंचम कल्प में लोकपाल वरुण ने तप किया इससे इसका नाम वरुणेश्वर हुआ। छटे कल्प में धन के अधिष्ठातृदेव कुबेरजी ने तप किया इसलिये इसका नाम धनेश्वर हुआ। सातवें कल्प में मार्कण्डेय ऋषि ने यहाँ तप किया, इसलिये इसका नाम कुंभेश्वर हुआ शनिश्चर ने भी यहाँ अपने क्रोध को शान्त करने के निमित्त बृहस्पतिजी की आज्ञा से तप किया और अपने नाम से शनिश्चर की स्थापना की। इनके दर्शन से शनि आदि ग्रहों की शांति होती है। नासिक के कुम्भ का फल यहाँ के दर्शन से मिलता है श्रावण के शनिवार का यहाँ विशेष माहात्म्य है। यहाँ दान धर्म वेदपाठ से शिवजी प्रसन्न होते हैं।❀

३३—ब्रह्मेश्वर तीर्थ के समीप ही रामेश्वरतीर्थ है। यहाँ रावण

× (रे० खं० अ० १०१) ❀ (रे० खं १०३ अ०)

के वध के पश्चात् ब्रह्महत्या के शमनार्थ श्रीरामचन्द्रजी ने तपस्या की थी। अतः उनके नाम से रामेश्वर लिंग है। लक्ष्मणजी के नाम से लक्ष्मणेश्वर है, जीमूत द्वारा स्थापित मेघेश्वर है यहाँ अप्सरा तीर्थ भी है। मस्त्यक मुनि द्वारा स्थापित मच्छकेश्वर भी यहीं हैं। यहाँ स्नान दान पूजनादि से समस्त कर्म फलदायी होते हैं।÷

३४—ब्रह्मेश्वर आदि तीर्थ जीगोर ग्राम के समीप हैं जीगोर से ४ मील दूर कठोरा नाम का ग्राम है उसके समीप हनुमन्तेश्वर तीर्थ है। इसकी कथा इस प्रकार है—लङ्का युद्ध में हनुमानजी ने रावण के पुत्रों को मारा था। रावण ब्राह्मण था। अतः ब्रह्महत्या से छूटने के लिये श्रीरामचन्द्रजी ने तथा समस्त वानरों ने लक्ष्मणजी ने तपस्या की थी। श्रीरामचन्द्रजी ने कहा—"हनुमानजी! तुमने भी तो रावण के पुत्रों को मारा है, तुम्हें भी तो ब्रह्महत्या का पाप लगा है। तुम भी रेवातट पर जाकर शिवजी की आराधना करो। ब्रह्महत्या निवारणार्थ तपस्या करो।"

हनुमानजी ने कहा—"अजी, महाराज! मैं क्या तपस्या करूँ? मैं तो उड़कर अभी कैलाश जाता हूँ, शङ्करजी से जाकर वैसे ही अपराध क्षमा करा सकता हूँ।

श्रीरामचन्द्रजी ने कहा—"जैसी तुम्हारी इच्छा।"

यह सुनकर हनुमानजी उड़कर कैलाश पर्वत पर पहुँचे। वे शिवजी के दर्शनों को जाने लगे तो द्वार पर बिराजमान नन्दीश्वर ने पूछा—"हनुमान्जी! कहाँ जा रहे हो?"

हनुमाजी ने कहा—"शिवजी के दर्शनों को जा रहे हैं।"

नन्दीश्वर ने कहा—"आप भीतर नहीं जा सकते।"

÷ (रे० खं १०३ अ०)

हनुमानजी ने कहा—"क्यों भाई ! क्या बात है। शिवजी तो सबके हैं।"

नन्दी ने कहा—"देखो जी, शिवजी सबके हैं, यह तो सत्य है। किन्तु तुमने रावण के लड़कों को मारा है। लङ्का जलाई है, तुम्हें ब्रह्महत्या लगी है। जब तक तुम नर्मदा किनारे जाकर तपस्या करके अपने पाप को नहीं छुड़ा लेते तब तक तुम शिवजी के दर्शनों के अधिकारी नहीं हो सकते।"

यह सुनकर हनुमानजी लौटकर फिर रामचन्द्रजी के समीप आये। और सब वृत्तान्त सुनाया। तब रामचन्द्रजी ने कहा—"भैया ! हम तो तुमसे पहिले ही कह रहे थे, अब तुम रेवातट पर जाकर तपस्या करो।"

श्रीरामचन्द्रजी की आज्ञा से हनुमानजी यहाँ आये और घोर तपस्या करके ब्रह्महत्या का प्रायश्चित्त करके पाप से छूटे। उनके नाम से ही समीप के ग्राम का नाम कपिस्थितापुर पड़ा। उन्हीं के नाम से इस तीर्थ का नाम हनुमन्तेश्वर पड़ा। यहाँ हनुमत् कवच का पाठ करने का विशेष माहात्म्य है।

हम जब पानसेमल से चले थे तो आज नर्मदा स्नान नहीं हुआ था। राजपिप्पला में पहुँचे। हमने पूछा—नर्मदाजी यहाँ से कितनी दूर हैं। तब लोगों ने बताया पोयचा में नर्मदाजी हैं उसके सामने चाँदोद नगर है। तब हमारी मोटर और टण्डनजी की मोटर दोनों राजपिप्पला से चल पड़े। पोयचा ग्राम के समीप ३५--पूर्तिकेश्वर महादेवजी का प्राचीन मंदिर है। यहाँ पूर्वकाल में जाम्बवान, सुषेण तथा नील ने तपस्या की थी। उनके शस्त्र प्रहार से जो व्रण (घाव) हो गये थे वे अच्छे हो गये। नर्मदाजी के तट पर ही यह ग्राम है। उस पार चांदोद के पक्के मकान तथा पूरा नगर दीखता है। नर्मदा में स्नान करके हम हनुमन्तेश्वर के दर्शनों को गये। सड़क से लगभग दो मील है, बहुत छोटी, बीहड़ वन में

कच्ची सड़क है। मन्दिर बड़ा विशाल सुन्दर है। प्राचीनकाल में किसी राजा ने बनवाया था। घाट भी सुन्दर है। वर्षाकाल में नर्मदजी मन्दिर के पास आ जाती हैं। यहाँ महन्त गृहस्थ हैं। हमारे पास के ही निकले। भूसी से जो काशी को सड़क जाती है। उसी के रहने वाले थे। उन्होंने बड़ा आदर सत्कार किया। फिर हम उन्हें साथ लेकर राजपिप्पला आ गये। रात्रि में रासलीला देखी। रात्रि भर वे हमारे पास रहे। इस प्रकार आज की यात्रा राजपिप्पला में समाप्त हुई।

छप्पय

मुचेगाँवतें चलो फेरि दमखेड़ा आओ।
पेंडरा डेहरी नदी सिंदुरीसंगम न्हाओ॥
शूलपाणि गुज़रात देवरणछोड़ निहारो।
राजपीप्पला जिला मोखड़ी झरना प्यारो॥
पुनि उलूकवर तीर्थ है, शूलपाणि झाड़ी गयी।
गोराघाट पिपरीया, शक्रतीर्थ यात्रा भयी॥

आनन्देश्वरतीर्थ फेरि सूरजवर सुन्दर।
रामपुरा मँगरोल मङ्गलेश्वर गुबार वर॥
शङ्खचूड़ सहराव तूमड़ी अरु बाँदरिया।
वैद्यनाथ जीगौर हनुमतेश्वर अति बढ़िया॥
पूतेश्वर शिव पोयचा, सम्मुख ही चाँदोद है।
राजपिप्पला तक सुखद, यात्रा मन अति मोद है॥

—:०:—

राजपिप्पला से विमलेश्वर

(१५)

पापैरनेकैरशुभैर्विवद्धा।
भ्रमन्तितावन्नरकेषु मर्त्याः।
महानिलोद्भूततरंगभूतम्
यावत्तवांभो न हि संस्पृशन्ति ॥*

(स्क० पु०)

छप्पय

भटकि रह्यो जिह जीव न जानैं कबतैं माता!
नाना नरकनि पर्‌यो मिल्यो नहिँ भवभय त्राता ॥
भ्रमत भ्रमत तव तीर भाग्यवश यदि आ जावै।
करि दरसन सुख पाइ सिहावै भाग्य सरावै ॥
सुधा सरिस पय पान करि, निरमल जलमें न्हाइगो।
तो सब बन्धन मुक्त ह्वै, भव-सागर तरि जाइगो ॥

सच्चिदानन्द स्वरूप परमात्मा का यह जीवात्मा अंश है। यह आनन्द से उत्पन्न हुआ है और आनन्द में ही रहना चाहता

---

* हे माँ नर्मदे ! ये जो अनेकों पापों तथा अशुभ कर्मों से निबद्ध प्राणी हैं, वे तभी तक नरकों में परिभ्रमण करते रहते हैं, जब वे वायु के वेग से बड़ी हुई तरल तरङ्गों में उठे हुए आपके निर्मल जल का स्पर्श नहीं करते। जहाँ आप के जल का स्पर्श किया नहीं कि उनका नरक परिभ्रमण समाप्त हो जाता है।

है, किन्तु भवाटवी में आकर यह पथभ्रमित हो गया है, अपने गन्तव्य मार्ग को भूल गया है। अनात्म में आत्म बुद्धि कर ली। नाना व्याधियों के मन्दिर इस शरीर को ही इसने सब कुछ समझ लिया है। इस शरीर को जो अनित्य और क्षणभंगुर है उसे यह शब्द, रूप, रस, गन्ध और स्पर्शादि विषयों से सुखी करना चाहता है। अनित्य धन, ऐश्वर्य, अधिकार पाकर प्रमत्त बन जाता है, भला बताओ व्याधियों के मन्दिर इस शरीर को क्या ये विषय सुखी कर सकते हैं ? कदापि नहीं। हमने तो जितने धनी, ऐश्वर्यशाली और अधिकारारूढ़ व्यक्ति देखे, सब-के-सब महादुखी, चिन्तित, भयभीत और चंचल चित्त वाले देखें। मैं ऐसा हूँ, मैं वैसा हूँ, मैं यह कर डालूँगा। मैं उसे नष्ट कर दूँगा, मेरे सामने वह क्या है, ऐसे मैं-मैं करने वाले हमने रोते हुए, फाँसी पर लटकते हुए, आत्महत्या करते हुए ही देखे। डूबने के लिये अभिमान और उबरने के लिये दीनता यही दो निश्चित सिद्धान्त हैं। अतः प्रह्लाद जी ने नृसिंह भगवान् की स्तुति करते हुए कहा है—"भगवन् ! ये जो शब्द, रूप, रस, गन्ध और स्पर्शरूपी विषय हैं, इनकी बातें केवल सुनने में ही सुखद लगती है, वास्तव में इनमें सुख नहीं। जैसे चमकीली बालू को दूर से देखकर प्यासा हरिण पानी समझकर प्रसन्न होता है, किन्तु दौड़कर उसके समीप जाता है तो निराश होता है, वह तो मृगतृष्णा थी वह जल नहीं था, जल का आभास था। और इन विषयों को जिस शरीर से भोगना चाहता है वह तो अगणित रोगों का उद्गम स्थान है। व्याधियों का मन्दिर है, रोम-रोम में रोग भरे पड़े हैं। तो कहाँ तो ये मिथ्याभोग और कहाँ यह रोगों से जर्जरित शरीर। लोग इन दोनों की क्षणभंगुरता और असारता जानते हैं। जगत् प्रसिद्ध हैं। फिर भी जीव की मूढ़ता देखिये जान बूझकर भी इन विषय भोगों से विरक्त नहीं होता। अत्यन्त कठिनता से प्राप्त होने वाले—सम्पूर्ण भोग

भी नहीं–भोगों के नन्हें-नन्हें मधुविन्दुओं से अपनी कामना की अग्नि को बुझाने की चेष्टा करते हैं, इन अनित्य क्षणभंगुर भोगों को भोगकर आनन्दित सुखी होना चाहते हैं। कैसी भारी मूर्खता है।* तनिक धन एकत्रित हुआ, कुछ विषय भोग जुट गये तो अभिमान में चूर होकर सबको तुच्छ समझने लगता है। अभि-मान का पुञ्ज बन जाता है। यही पतन है। यदि किसी तरह साधु संग से तपस्या से अभिमान नष्ट हो जाय, नम्रता आ जाय तो वह सुखी हो जाता है अमृतपान करता रहता है।

नर्मदा किनारे अहल्यावाई की राजधानी महेश्वर में एक अहल्यावाई धार्मिक न्यास (ट्रस्ट) है, उसके एक अधिकारी मेरे पास आये थे। उन्होंने बताया कि एक दिन मैं नर्मदा किनारे बैठा था। तभी एक भद्रपुरुष नर्मदा परिक्रमा करते हुए हमारे समीप आये, देखने में कोई वे बहुत प्रतिष्ठित सम्मानित व्यक्ति प्रतीत होते थे। मैंने कहा—"कोई सेवा बताइये ?" उन्होंने कहा—"मुझे भिक्षा दीजिये।" मैंने कहा—"मेरे यहाँ भोजन कीजिये।" उन्होंने कहा—"नहीं, मैं तो कई स्थानों से भिक्षा लेकर ही पाता हूँ। नर्मदाजी की परिक्रमा कर रहा हूँ।"

पीछे उनसे बातें हुईं तो पता चला वे बम्बई के बहुत बड़े व्यापारी हैं। उनकी स्त्री, बच्चे मोटर से उनसे मिलने आये। तब उन्होंने बताया—मेरे पास अत्यधिक धन होने से मेरा अभि-मान बढ़ गया था। बड़ी अशान्ति मन में रहती थी, क्रोध भी

---

* कुत्राशिषः श्रुतिसुखा मृगतृष्णिरूपा।
क्वेदं कलेवरमशेषरुजां विरोहः॥
निर्विद्यते न तु जनो यदपीति विद्वान्।
कामानलं मधुलवैः शमयन् दुरापैः॥
(श्री० भा० ७ स्क० ९ अ० २५ श्लोक)



श्री गिरनारी बाबाजी के आश्रम में श्री ब्रह्मचारीजी के साथ भक्तगण
दायें से कुर्सी पर श्री गिरनारी बाबा दूसरी कुर्सी पर श्री ब्रह्मचारीजी खड़े हुए अन्यान्य भक्तगण, पृष्ठ २११

करना पड़ता था। इसलिये अभिमान को दूर करने को ही मैंने नर्मदा जी की परिक्रमा आरम्भ कर दी। पैदल परिक्रमा करने वाला कैसा भी हो उसे कोई सामान नहीं रखना पड़ता। भिक्षा माँगकर निर्वाह करना पड़ता है। अपने हाथ से भोजन बनाकर एक बार पाना पड़ता है। इस प्रकार पैदल चलने से भिक्षा पर निर्वाह करने से मेरा अभिमान बहुत कम हो गया है।

हमने तो पैदल यात्रा की नहीं, भिक्षा भी नहीं माँगी। स्वयं बनाया भी नहीं। सर्वत्र स्वागत-सत्कार और स्वागत ही अर्जित किया। जिससे अभिमान घटने की अपेक्षा और बढ़ता है। इसलिये हमारी नर्मदा परिक्रमा नहीं हुई केवल "नर्मदा-दर्शन" हुआ। नर्मदा स्नान, नर्मदा जलपान तथा नर्मदा तीर निवासी पुण्यात्माओं का दर्शन सत्सङ्ग मात्र ही हुआ। न होने से इतना ही अच्छा है।

हाँ तो फाल्गुन शुक्ला नवमी (७ मार्च) को प्रातःकाल हम लोग राजपिप्पला से चले। हमारे कुछ साथी जैसे पं० शिवराम पटेल उनके परिवार वाले रात्रि में नर्मदा किनारे पाणेथा ग्राम के पास गिरनारी बाबा के ही यहाँ जाकर रहे। हमारी और मोटरें तो सीधी सड़क द्वारा गयीं। हम लोग नर्मदा किनारे पाणेथा के समीप गिरनारी बाबा के यहाँ उनके शिष्य के साथ गये। गिरनारी बाबाजी ने हमारे स्वागत-सत्कार का बड़ा भारी विस्तृत प्रबन्ध कर रखा था। समीप के ही ग्राम के सैकड़ों नर-नारी आबाल वृद्ध स्वागत के लिये एकत्रित थे। गाजे-बाजे के साथ स्वागत-सत्कार किया गया कीर्तन हुआ प्रवचन हुए। उनकी भागवत गुफा देखी स्थान बड़ा रमणीक था। नर्मदाजी नीचे ही बह रही थीं। बताते थे बाढ़ में पूरा आश्रम डूब गया था। ५-६ बड़ी सुन्दर-सुन्दर गौएँ थी। उनके हृष्ट-पुष्ट बच्चे बड़े ही मन-मोहक थे। गौओं को देखकर बड़ी प्रसन्नता हुई।

वहाँ से विमलेश्वर जाने वाली सड़क पर आये। विमलेश्वर वहाँ से ५०-६० किलोमीटर ही है। हम लोग अङ्कलेश्वर आये। यहाँ रामकुण्ड प्रसिद्ध तीर्थ है। उसके दर्शन स्पर्श करके शिवजी के दर्शन किये। यहाँ बहुत से पैदल परि-मा करने वाले मिले। यहाँ नर्मदाजी पर पुल है। अङ्कलेश्वर से नान्दोद तक रेलवे सड़क है बहुत अच्छा स्थान है। यहाँ से हाँसोट तक पक्की सड़क है। अङ्कलेश्वर में श्री रङ्ग अवधूत महाराज जी के एक गृहस्थ भक्त हैं। श्री रङ्ग अवधूतजी बहुत दिनों तक उनके घर में रहे। उन्होंने हमारे आगमन की बात सुनी तो वे हमारी प्रतीक्षा करते रहे। किन्तु हम यहाँ से दर्शन करके हँसोट होकर विमलेश्वर पहुँच गये। जहाँ से हमें रेवा-सागर को पार करना था। पीछे वे गृहस्थ भक्त सपरिवार विम-लेश्वर आये। उनकी तीन पुत्रियाँ थीं, पूरा परिवार परम सात्विक सुशिक्षित था। वे पुनः हमें अपने यहाँ अङ्कलेश्वर ले गये। जब हम लौटकर भड़ौच आये तब भी वे सपरिवार भड़ौच में आये थे। विमलेश्वर छोटा-सा ग्राम है, वहाँ न रहने का कोई स्थान है न धर्मशाला। हम तो पंचायत के एक घर में रहे। और लोग इधर-उधर गृहस्थों के घर में रहे। विमलेश्वर का मन्दिर भी टूटा-फूटा जीर्ण-शीर्ण दशा में है। यात्रियों के पार जाने का भी कोई प्रबन्ध नहीं ८-८ १०-१० दिनों तक प्रतीक्षा करनी पड़ती है। तब कहीं जाकर नौकायें मिलती हैं। इतने बड़े इस तीर्थ की ऐसी दुर्दशा देखकर दुःख हुआ। रात्रि में हम यहीं रहे। रासलीला हुई। आज तक इस गाँव में वृन्दावन की रासलीला मण्डली कभी नहीं आयी। गाँव के लोग जानते भी नहीं थे। वृन्दावन की रासलीला मण्डली आई है। यह सुनकर आस-पास के बहुत से नर-नारी एकत्रित हुए। सभी ने बड़ी शांति से लीला देखी। हमें आते समय मार्ग में ये मुख्य-मुख्य स्थान पड़े राजपिप्पला, कर्जन नदी, राणीपारा, वीरपुर, तरोणा, कुमसगाँव।

यदि हम नर्मदा किनारे-किनारे पैदल परिक्रमा करें तो हमें कौन-कौन से तीर्थ पड़ेंगे। इसका विवरण आगे देते हैं। हाँ तो पीछे हम हनुमन्तेश्वर और पोयचा तक का वर्णन कर चुके अब आगे की कथा सुनिये।

१—जाम्बवान् सुषेण और नील द्वारा पोयचा ग्राम में जो पूतिकेश्वर शिव हैं, वहाँ से तीन मील आगे नलेश्वर तीर्थ है। श्रीरामचन्द्रजी की सेवा में जो नील और नल स्थापत्य विद्या के आचार्य वानर थे, जिन्होंने सागर पर सेतु बनाया था। उनमें से नल नामक वानर ने अनेकों वानरों के सहित ब्रह्महत्या मिटाने को यहाँ तप किया था और अपने नाम से नलेश्वर शिवलिङ्ग की स्थापना की यहाँ तपस्या करने का बड़ा माहात्म्य है यहाँ पर अनेकों पुरुषों ने सिद्धि प्राप्त की है। माघी पूर्णिमा को यहाँ का विशेष माहात्म्य है।*

२—नलेश्वर तीर्थ से तीन मील आगे रुण्डग्राम के समीप करंज्या नदी का संगम है जिसे नागवा नदी भी कहते हैं। संगम के समीप ही नागेश्वर तीर्थ है यहाँ कभी नागेश्वरनाथ का मन्दिर रहा होगा। अब तो वह टूट-फूट गया है। यहाँ वासुकी नाग ने तपस्या की थी। इसकी कथा इस प्रकार है—शिवजी के सिर पर सरत् प्रवरा गंगाजी तो सदा विराजमान ही रहती हैं। एक बार पार्वतीजी के मन में ईर्ष्या उत्पन्न हुई कि यह नदी सदा शिवजी के सिर पर ही चढ़ी रहती है। इसे शिवजी ने न जाने क्यों सिर पर चढ़ा रखा है। शिवजी से तो प्रत्यक्ष में कुछ कहा नहीं।

एक दिन शिवजी से कहा—"महाराज ! ताण्डव नृत्य कीजिये।" शिवजी ताण्डव नृत्य के लिये सदा तैयार ही रहते हैं।

---

* (रे० खं० १४४ अ०)

अतः उन्होंने ताण्डव नृत्य किया। नृत्य के समय गंगाजल नीचे गिरने लगा। शिवजी के शरीर पर सर्प तो सदा लिपटे ही रहते हैं। पार्वतीजी ने वासुकी नाग से कहा—"तू इस गंगाजल को पीता जा।" माता की आज्ञा से वासुकी गंगाजल पीता गया। गंगाजी को यह बुरा लगा। उन्होंने वासुकी को शाप दिया—"तू शिवजी की सेवा से पतित हो जा।"

इस पर वासुकी ने गंगाजी की बहुत अनुनय विनय की। तब गंगाजी ने कहा—"तू विन्ध्याचल की तलहटी में जाकर तपस्या कर शिवजी की आराधना करने से तुझे पुनः अपना स्थान प्राप्त हो जायगा।"

माता गंगाजी की आज्ञा पाकर वासुकी ने यहाँ आकर अपने नाम से शिवलिङ्ग की स्थापना करके घोर तपस्या करी। इससे शिवजी उसके सम्मुख प्रत्यक्ष प्रकट हुए और उसे आज्ञा दी—तैंने जो गंगाजल पान किया है इसे नर्मदाजी की करंजतरुनी गुफा में उगल दे और नर्मदाजी में स्नान कर। इससे तुझे पूर्व स्थान की प्राप्ति हो जायगी। वासुकी ने ऐसा ही किया। उसने करंजतरुनी गुफा में गंगाजी को उगल दिया। वही करंज्या वासुकी नाग से उगली नागवा नदी हो गई। जो नर्मदाजी में आकर मिल गई। उसमें वासुकी नाग ने स्नान किया, इससे वह पाप रहित हो गया। उस संगम के समीप ही शिवजी ने जलक्रीड़ा की। इसलिये वह स्थान रुद्रकुंड प्रसिद्ध हुआ। वह कुण्ड नर्मदाजी के भीतर है। अष्टमी, चतुर्दशी का यहाँ विशेष माहात्म्य है।*

३—नागेश्वर से कुछ ही दूर पर शुकेश्वर तीर्थ है यहीं कर्णेश्वर, मार्कण्डेश्वर तथा रणछोरजी आदि तीर्थ हैं। व्यास पुत्र

---

* (वा० पु० रे० खं० १०८ अ०)

श्रीशुकदेवजी ने यहाँ पर सौ वर्ष पर्यन्त तपस्या की। इनकी तपस्या से शंकरजी प्रसन्न होकर इनके सम्मुख प्रकट हुए और वरदान माँगने को कहा। तब शुकदेवजी ने कहा—"मेरा पुनर्जन्म न हो, आपके चरणों में भक्ति तथा योग शक्ति मुझे प्राप्त हो। और आप यहाँ सदा सर्वदा विराजमान होकर भक्तों की मनोकामना पूर्ण करें।" शिवजी ने तथास्तु कहकर ये सब वरदान दिये।[1] शुकेश्वर का विशाल मन्दिर टीले पर है। सीढ़ियाँ चढ़कर जाना पड़ता है मंदिर की मरम्मत आदि की व्यवस्था उचित प्रकार से नहीं है।

४—यहीं पर समीप में-नर्मदाजी के बीच में द्वीप में-मार्कण्डेश्वर तीर्थ है। उसकी कथा इस प्रकार है। यहाँ व्यास तीर्थ है। भगवान् वेदव्यासजी यहीं कुछ दिन निवास करते थे। एक समय चिरजीवी भगवान् मार्कण्डेयजी व्यासजी के दर्शनों के निमित्त यहाँ पधारे। स्थान सुन्दर देखकर कुछ दिन रह गये और अपने नाम से शिवलिङ्ग की स्थापना की। शिवजी की कृपा से यहाँ पूजन भजन करने से मनोकामना पूर्ण होती है।[2]

५—शुकेश्वर से चार मील आगे एक और मार्कण्डेश्वर तीर्थ है। उसकी कथा इस प्रकार है—कोई महात्मा मृग शरीर धारण करके नर्मदा किनारे विचरण कर रहे थे। किसी राजा ने उन्हें मृग ही मानकर अपने वाण से उनका वध कर डाला। जब उसे मालूम हुआ कि ये तो मृग वेष में ऋषि थे तो पाप के प्रायश्चित्त निमित्त वह राजा मार्कण्डेय मुनि की सेवा में गया। वहाँ उसने आठ दिन निवास किया। मुनि की आज्ञा से वह समस्त तीर्थों की यात्रा के निमित्त पृथ्वी पर भ्रमण करता रहा, किन्तु उसके

---

१. (वा०पु० रे० खं० ११७ अ०) २. (वा० पु० रे० खं० ११८ अ०)

मन में नर्मदाजी सदा बसी रहीं। अतः वह लौटकर नर्मदा किनारे आया और नागेश्वर पहुँचकर करंज्या का स्नान किया, तब उसका चित्त शुद्ध हो गया। पापरहित बन गया। तब उसे शिवजी ने ज्ञान दिया। यहाँ सभी कर्मों की सिद्धि होती है। अष्टमी का यहाँ विशेष माहात्म्य है।❀

६—मार्कण्डेय तीर्थ से एक मील आगे ओरी ग्राम के निकट कोटिनार में कोटेश्वर तीर्थ है। इसकी कथा इस प्रकार है—यह त्रेतायुग की बात है एक बार त्रेतायुग में दश वर्षों तक वर्षा नहीं हुई। सब देशों से भाग-भागकर करोड़ों नर-नारी यहाँ कोटिनार पुर में आ गये। यहाँ आकर करोड़ों पुरुषों ने अपने घोर सङ्कट के विमोचन निमित्त भगवान् कोटेश्वर की स्थापना करके उनकी पूजा की। इससे शिवजी ने सभी की रक्षा की। यहाँ स्नान दान पितृ तर्पणादि का अनन्त माहात्म्य है।❀

७—कोटेश्वर से ३ मील आगे मुकटेश्वर तीर्थ है। उसकी कथा इस प्रकार है—दक्ष प्रजापति को शिवजी ने प्रजापतियों का सभापति बनवा दिया। तब उन्हें बड़ा अभिमान हो गया। प्रयागराज के प्रजापतियों के सत्र में दक्ष सभापति बनकर मण्डप में आये। सब लोग तो उनके आने पर उठकर खड़े हो गये। किन्तु ब्रह्माजी और शिवजी अपनी पीठ पर बैठे ही रहे। इस पर दक्ष ने शिवजी को यज्ञों में भाग न देने का शाप दिया। दक्ष ने ही यज्ञ आरम्भ किया। उसमें सबको बुलाया किन्तु शिव पार्वती को नहीं बुलाया। पार्वजी हठ करके बिना बुलाये अकेली ही चली गयीं। वहाँ शिवजी का भाग न देखकर उन्होंने योगाग्नि में अपने शरीर को भस्म कर दिया। नारदजी से यह सब समाचार सुनकर शिवजी ने क्रोध करके वीरभद्र को उत्पन्न किया। उसने

❀ (वा० पु० रे० खं० ११६ अ०)

जाकर दक्ष के यज्ञ को विध्वंस कर दिया। फिर देवताओं की प्रार्थना पर शिवजी कैलाश से आये। दक्ष यज्ञ को पूर्ण करके आप नर्मदा किनारे सीधे चले आये। कैलास से आते समय वे अपना मुकुट भूल आये थे। पीछे से उनके गण मुकुट लेकर नर्मदा तट पर पहुँचे। वहाँ उन्होंने देखा शिवजी तो वहाँ हैं नहीं, उनके स्थान पर एक दिव्य लिङ्ग है। तब गणों ने उसी लिङ्ग को मुकुट धारण कराया। इसीलिये मुकुटेश्वर के नाम से विख्यात हुए।[१]

८—मुकुटेश्वर सिसोदरा ग्राम के समीप हैं, उस ग्राम से थोड़ी ही दूर पर कांदरोल ग्राम है उसके समीप स्कन्देश्वर शिव हैं, यहाँ शिवजी के पुत्र षडानन-स्कन्द-कार्तिक स्वामी ने एक सहस्र वर्ष पर्यन्त तपस्या की थी। उन्होंने अपने नाम से स्कन्देश्वर शिवलिङ्ग की स्थापना की थी। ये समस्त देवताओं के सेनापति थे। यहाँ का बड़ा महात्म्य है।[२]

९—स्कन्देश्वर से आगे कासरोला ग्राम है, इसके समीप ही नर्मदेश्वर हैं। इसकी कथा इस प्रकार है। एक समय ब्रह्माजी ने यहाँ पर एक बहुत बड़ा यज्ञ किया। उसमें देवता, असुर, गन्धर्व, नाग, वृक्ष, नदियाँ, समुद्र सभी आये। यज्ञ बड़ी धूम धाम से हुआ। सब ऋषि मुनि उपस्थित थे। वहाँ मार्कण्डेय मुनि भी थे। देवता और ऋषियों में चर्चा होने लगी कि समस्त नदियों में भागीरथी गंगा श्रेष्ठ हैं। ब्रह्माजी ने गंगाजी को छोड़कर यहाँ नर्मदा तट पर ही यज्ञ क्यों किया ?

इस पर सभी मौन हो गये। समस्त सरिताओं के स्वामी समुद्र भी वहाँ उपस्थित थे। तब उन्होंने समस्त नदियों में पातक नाश करने की शक्ति देखी। उस सबमें नर्मदाजी ही श्रेष्ठ

---

१. (रे० खं १२० अ०) २. (रे० खं० १२३ अ०)

ठहरीं। औरों में स्नान दानादि करने पाप नष्ट होते हैं। नर्मदाजी के तो दर्शन मात्र से पाप नष्ट हो जाते हैं। ऐसा निश्चय होने पर देवताओं ने नर्मदाजी पर पुष्पों की वर्षा की। उस समय सभी ने बड़े प्रेम से नर्मदाजी में स्नान किया।

समस्त ऋषि मुनि तो नर्मदाजी में स्नान कर रहे थे, किन्तु मार्कण्डेय मुनि नर्मदा तट पर चुपचाप खड़े थे।

तब नर्मदा मैया ने ही मार्कण्डेय मुनि से पूछा—"मुनिवर! समस्त ऋषि मुनि मुझमें स्नान कर रहे हैं आप स्नान क्यों नहीं करते?"

मार्कण्डेय मुनि ने कहा—"माँ! जब तुम्हारे दर्शनों से ही मुक्ति प्राप्त हो जाती है तो न जाने स्नान से क्या फल होगा?" मैं मुक्ति के अतिरिक्त कुछ नहीं चाहता। इसीलिये स्नान नहीं कर रहा हूँ।[१] यह सुनकर नर्मदाजी प्रसन्न हुयीं। सभी देवता ऋषि मुनियों ने मिलकर श्री नर्मदेश्वर की स्थापना की। तभी से यह तीर्थ प्रसिद्ध हुआ। यहाँ पौष कृ० पंचमी का तथा वैशाख मास के स्नान का विशेष माहात्म्य है।[२]

१०—नर्मदेश्वर के समीप ही ब्रह्मेश्वर तीर्थ है और पास में ही ब्रह्मशिला तीर्थ है। इसकी भी कथा सुनिये—प्राचीन काल में एक सबल नाम के राजा थे। उनके महावित्त और घातकी नाम के दो पुत्र हुए। दोनों ही परम पराक्रमी तथा बलवान् थे। महावित्त के उसी के समान बहुत से पुत्र हुए। पुत्रों के भी पुत्र हुए। उसके वंश की बहुत वृद्धि हुई, किन्तु घातकी के कोई सन्तान नहीं हुई। उसने बहुत काल तक नर्मदा किनारे संतान के निमित्त

---

१. सर्वे मज्जन्ति मुनयः त्वं कथं नैव मज्जसि ?
नर्मदे ! तव दर्शनान्मुक्ति न जाने स्नानजं फलम्।

२. (रे० खं १२७ अ०)

बहुत यज्ञ, दान तथा तपादि किये। किन्तु उसकी मनोकामना पूर्ण नहीं हुई। उसी समय लोकपितामह ब्रह्माजी वहाँ तपस्या करने पधारे।

घातकी को तप करते हुए देखकर ब्रह्माजी ने उससे पूछा—"राजन्! तुम किसलिये तप कर रहे हो?"

घातकी ने कहा—"भगवन्! मेरे कोई सन्तान नहीं है, इसलिये पुत्र प्राप्ति हेतु मैं यहाँ तपस्या कर रहा हूँ।"

तब ब्रह्माजी ने उसे बहुत पुत्र होने का वरदान दिया और उस तीर्थ का नाम ही राजा के नाम से घातकी तीर्थ रख दिया। ब्रह्माजी ने सृष्टि वृद्धि हेतु यहाँ तपस्या की और जो यज्ञ किया उस यज्ञ की वेदी ही शिला बन गयी। वह शिला ही ब्रह्मतीर्थ है। यहाँ पुत्र कामना हेतु तप करने का माहात्म्य है। वैशाख महीने में स्नान करने का विशेष फल है।[1] ब्रह्मशिला से दो मील आगे वाल्मीकेश्वर तीर्थ है। यहाँ महर्षि वाल्मीक जी ने तपस्या करके आदि काव्य वाल्मीक रामायण की रचना की। उन्होंने आदि कवि का पद प्राप्त किया। यह स्थान वराछा ग्राम के संनिकट है।[2]

११—वाल्मीकेश्वर तीर्थ से एक मील आगे कोटीश्वर तीर्थ है। इसकी कथा इस प्रकार है—हमारे शिवजी तो औघड़दानी हैं। एक बार वे कापालिक वेष में कपाल हाथ में लेकर भिक्षा के निमित्त निकले। नर्मदा किनारे आकर उनके हाथ से कपाल गिर गया। शिवजी उसे उठाने लगे, वह उठे ही नहीं वहीं-चिपक गया-जम गया। अब शिवजी चिन्तित हुए उसे खोदकर निकालने का उद्योग करने लगे। लोगों ने समझाया भी—"महाराज!

---

१. (रे० खं १२७ अ०) २. (रे० खं १२८ अ०)

क्यों इसके पीछे व्यर्थ परिश्रम कर रहे हैं ?" किन्तु बड़ों की बड़ी बात होती है, शिवजी माने ही नहीं।

इतने में ही कहीं से घूमते-घामते श्री नारदजी वहाँ आ पहुँचे। शिवजी की ऐसी लीला देखकर बहुत हँसे और बोले—"महाराज ! यह क्या कौतुक कर रहे हैं ?"

शिवजी ने कहा—"हमारा कपाल जम गया है, इसे खोदकर निकाल रहे हैं।"

नारदजी ने कहा—"अजी, महाराज ! क्या आप इस छोटी-बात के लिये परिश्रम कर रहे हैं। आप कैलास चलिये सब निकल आवेगा।"

नारदजी का इतना कहना था कि शिवजी वहाँ से तुरन्त अंतर्धान हो गये। अब कपाल के स्थान से तुरन्त वहाँ एक दिव्य शिवलिङ्ग प्रकट हुआ। नारदजी ने सब लोगों से कहा—"अरे, तुम सब लोग बड़े भाग्यशाली हो ये कपालेश्वर शिवजी प्रकट हो गये। इनका पूजन करो।"

नारदजा की आज्ञा पाकर करोड़ों लोगों ने उनका पूजन किया, इसलिये वे कोटेश्वर के नाम से विख्यात हुए। इनके दर्शन पूजन से सब सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं।*

१२—कोटेश्वर से एक मील आगे पंचमुखी हनुमानजी हैं। इससे कुछ ही दूरी पर १३—तारकेश्वर हैं।

१४—तारकेश्वर से लगभग डेढ़ मील आगे इन्द्रकेश्वर तीर्थ है। इसकी कथा इस प्रकार है—जब देवगुरु वृहस्पति का इन्द्र ने गर्व के कारण सम्मान नहीं किया तो वृहस्पतिजी देवताओं को छोड़कर चले गये। पुरोहित के बिना काम कैसे चले इसलिये भगवान् की आज्ञा से त्वष्टा के पुत्र विश्वरूप को देवताओं ने

* (रे० खण्ड १२८ अ०)

अपना पुरोहित बना लिया। वह भीतर-ही-भीतर असुरों का भी भला करने लगा। तब इन्द्र ने उनका वध कर दिया। इस पर क्रुद्ध होकर त्वष्टा मुनि ने यज्ञ के द्वारा वृत्रासुर को उत्पन्न किया। वह भी लड़कर इन्द्र के हाथों मारा गया। अब इन्द्र को ब्रह्म-हत्या लगी। ब्रह्महत्या के निवारणार्थ इन्द्र सभी तीर्थों में गये किन्तु उनकी ब्रह्महत्या छूटी नहीं। तब उन्होंने नर्मदा किनारे यहाँ आकर दस सहस्र वर्षों तक तपस्या की। तब ब्रह्माजी यहाँ आये और उस ब्रह्महत्या के चार भाग किये। एक भाग जल को दिया। इसलिये जल को उँगली से हिलाकर तब स्नान करे। (२) दूसरा भाग पृथ्वी को दिया। इसलिये पृथ्वी पर जो भी शुभ कार्य करे पहिले गोबर से लीपकर करे। (३) तीसरा भाग स्त्रियों को दिया। वह मासिक धर्म के रूप में हैं इसलिये रजस्वला का स्पर्श न करे। (४) चौथा भाग उन नाम के ब्राह्मणों को दिया जो कृषि कर्म करके, गौ आदि बेचकर, रस बेचकर तथा भृत्य कर्म करके अपनी आजीविका चलाते हैं ऐसे ब्रह्म बन्धुओं से शुभ कार्य न करावे।"

जब इन्द्र ब्रह्महत्या के दोष से मुक्त हो गये तब शिवजी की आज्ञा से उन्होंने अपने नाम से इन्द्रकेश्वर शिवजी की स्थापना की। जिनके दर्शन स्पर्श पूजन से और यहाँ तप करने से ब्रह्म-हत्यादि पापों से छूट जाते हैं।+

१५—इन्द्रकेश्वर से चार मील आगे वीरमग्राम में वाल्मीकेश्वर तीर्थ है। गोदावरी से लौटकर महर्षि वाल्मीकजी ने यहाँ बालू के शिवलिङ्ग की स्थापना की। यहाँ से ३ मील आगे सरसाड नामक ग्राम के समीप १६—देवेश्वर तीर्थ है, इन्द्र की

+ (रे० खण्ड १३१ अ०)

ब्रह्महत्या निवारण करने देवाधिदेव विष्णु जब आये तो उन्होंने इस शिवलिङ्ग की स्थापना की। इन्द्र ने भी यहाँ तप किया था।*

१७—देवेश्वर तीर्थ के सन्निकट ही बड़वाना ग्राम में शक्र-तीर्थ है। ब्रह्माजी के वरदान से जृम्भासुर ने जब इन्द्र से स्वर्ग का राज्य छीन लिया था। तब इन्द्र ने राज्य प्राप्ति हेतु यहाँ तपस्या की थी।

१८—शक्रतीर्थ से तीन मील आगे करसनपुरी नामक ग्राम के समीप नागेश्वर तीर्थ है—महर्षि कश्यप की विनता और कद्रू दोनों पत्नियों में उच्चैश्रवा के रङ्ग के ऊपर वाद विवाद हुआ। विनता ने उसका रङ्ग सफेद बताया और कद्रू ने काला। वास्तव में उसका रङ्ग सफेद ही था। तब कद्रू ने अपने पुत्र नागों से कहा—तुम उच्चैश्रवा के शरीर से लिपटकर उसे काला कर दो।" इसे कुछ नागों ने नहीं माना तो कद्रू ने शाप दिया तुम अग्नि में जलकर भस्म हो जाओ। तब नागों ने यहाँ शिव जी की आराधना की अपने नाम से नागेश्वर शिवलिङ्ग की स्थापना करके वे शाप मुक्त हो गये। यहाँ नागपंचमी का बड़ा माहात्म्य है यहाँ सर्प भय नहीं रहता है। यहाँ से लगभग एक मील पर ही १९—गोतमेश्वर, २०—अहिल्येश्वर, २१—रामेश्वर और २२—मोक्षेश्वर तीर्थ हैं।

गोतमेश्वर तीर्थ में अहल्या के उद्धार के पश्चात् महर्षि गौतम ने यहाँ तपस्या की थी, रामेश्वर तीर्थ में गोदावरी की यात्रा से लौटते समय श्रीरामचन्द्रजी ने यहाँ शिवलिङ्ग की स्थापना की। उनके पुत्र लव और कुश ने भी यहीं शिवलिङ्ग स्थापित की, मोक्ष तीर्थ में स्वायम्भुव मनु ने तपस्या की, अनेक ऋषियों ने यहाँ

---

* (रे० खण्ड १३१ अ०)

तपस्या करके मोक्ष पायी। यहाँ उपनिषदों तथा श्रीमद्भगवत् गीता के पाठ का अत्यधिक माहात्म्य है।[१]

२३—मोक्षतीर्थ से कुछ ही दूरी पर सिद्धेश्वर तीर्थ है। यह स्थान टोटीदरा ग्राम के समाप में है। यहाँ लोकपितामह भगवान् ब्रह्माजी ने यज्ञ करके शिवलिङ्ग की स्थापना की। यहाँ तप करने से सर्व कर्मों की सिद्धि होती है।

२४—सिद्धेश्वर तीर्थ से एक मील आगे तरशाडी ग्राम में तापेश्वर तीर्थ है। इस तीर्थ की कथा इस प्रकार है—प्राचीन काल में देवशिरा नाम के एक ऋषि थे। उन्होंने इस स्थान में रहकर घोर तपस्या की। उनकी तपस्या से प्रसन्न होकर स्वयं साक्षात् शङ्करजी उनके सम्मुख प्रकट हुए और वर माँगने को कहा। ऋषि ने कहा—भगवन्! मुझे इद्रासन की प्राप्ति हो जाय।"

शिवजी ने कहा—"अजी, ऋषि होकर तुम यह क्या तुच्छ वर माँग रहे हो, राज्य की इच्छा तो अज्ञानी लोग करते हैं। कोई दूसरा वर माँगिये।"

ऋषि ने कहा—"अच्छा तो मुझे ब्रह्माजी की आयु के सदृश आयु की प्राप्ति हो।"

इस पर शिवजी ने उन्हें ऐसा ही वरदान दिया और कहा—"तुम्हारी आयु ब्रह्मा के सदृश होगी और तुम्हारे वंश में जो भी होंगे, वे सब-के-सब विद्वान् होंगे। यह तपस्या का स्थान है, यहाँ सूर्यदेव की उपासना तथा गायत्री का अनुष्ठान करने से सिद्धि प्राप्त होती है। इस स्थान पर अष्टमी, चतुर्दशी, रविवार, संक्रान्ति, ग्रहण तथा व्यतीपात आदि पुण्य तिथियों में स्नान दान का विशेष माहात्म्य है।[२]

---

१. (रे० खं० १३१ १३२ अ०) २. (रे० खं० १३६ अ०)

२५—तापेश्वर से दो मील आगे सिद्धेश्वर तीर्थ है यहाँ पर बहुत पहिले नाविक नाम के नामी नरपति थे। उन्हें दान देने में बड़ा आनन्द आता था। यहाँ पर उन्होंने इतना अधिक दान दिया कि उसकी गणना ही नहीं हो सकती। दान देने से ही उन्होंने सिद्धि प्राप्त की। उन्हीं की पुण्य स्मृति में यह सिद्धेश्वर तीर्थ प्रसिद्ध हुआ। यहाँ दान पुण्य करने से उसका अनन्त गुणा फल होता है। इसके समीप में ही २६—वारुणेश्वर तीर्थ है। यहाँ वरुणजी ने पुत्र प्राप्ति हेतु तपस्या की थी, जिससे उनके पुष्कर नामक पुत्र हुआ। इस तीर्थ का भी विशेष माहात्म्य है।❀

२७—वारुणेश्वर तीर्थ से चार मील आगे पोरा ग्राम में पराशरेश्वर तीर्थ है। वसिष्ठजी के पुत्र शक्ति हुए, शक्ति के पुत्र पराशर मुनि हुए। उन्होंने यहाँ पुत्र प्राप्ति के निमित्त तपस्या की, जिससे उनके सौ पुत्र हुए।

२८—पोरा ग्राम के पराशरेश्वर तीर्थ से तीन मील आगे लाडवा ग्राम है। यहाँ एक प्राचीन वट का वृक्ष है। यहीं कुसुमेश्वर तीर्थ है। जिसे कुसुमायुधेश्वर भी कहते हैं। शिवजी ने इसी स्थान पर कसुमायुध कामदेव को भस्म किया था। अशरीरी होकर भी कामदेव ने यहाँ सौ वर्षों तक तपस्या की। उसकी तपस्या से ब्रह्माजी प्रसन्न हुए और उसे सिद्धि प्राप्त हुई। यह परम पावन सिद्धिदाता तीर्थ है। यहीं पर कुण्डलेश्वर नामक गुप्त तीर्थ है।

२९—लडवा ग्राम के कुसुमेश्वर से दो मील आगे कलकलेश्वर तीर्थ है। इसकी कथा इस प्रकार है—अन्धकासुर का जब शिव जी द्वारा वध हो गया, तब देवताओं ने इस स्थान पर गायन

❀ (रे० खं० १३६ अ०)

चाद्य द्वारा शिवजी की बहुत स्तुति की। बहुत बड़ा आनन्दोत्सव किया। तभी आकाशवाणी हुई कि इस तीर्थ का नाम कलकलेश्वर होगा। जब रेवासागर संगम में ज्वार भाटा आता है तो उसका जल यहाँ तक आता है। यहाँ से नर्मदाजी के जल में खारापन आ जाता है। कलकलेश्वर से लगभग एक मील पर रेल का एक स्टेशन है। जिसका नाम "नर्मदा रीवर साइड" है। अंकलेश्वर से नान्दोद तक रेलवे लाइन गई है। वहीं अंकलेश्वर से एक छोटी लाइन "नर्मदा रीवर साइड" को गई है। परिक्रमावासी यहीं से नर्मदा किनारा छोड़कर सड़क-सड़क आगे को जाते हैं।*

३०—कलकलेश्वर से आगे चार मील पर सांजा ग्राम के समीप संगमेश्वर तीर्थ है। इसकी भी कथा सुनिये। यहाँ शिवजी विराजते हैं। एक बार रावण शिवजी के दर्शनों के निमित्त यहाँ आया। संयोग की बात उसी समय रावण के भाई लोकपाल कुबेरजी भी वहाँ शिवजी के समीप बैठे थे। वरुणजी का मधु से भरा कमण्डलु उनके समीप रखा था। रावण जो वेग के साथ आया तो उसके पैरों की धमक से कुबेर का मधु भरा कमण्डलु उलट गया। उसी से मधुमती गङ्गा प्रकट हो गयीं। ये गङ्गा विन्ध्य पर्वत से निकलकर यहाँ आयीं और नर्मदाजी में उनका संगम है। कहते हैं अब तक यहाँ की भूमि मधु के रंग की है। कुबेरजी ने यहाँ शिवलिङ्ग की स्थापना की जो संगमेश्वर के नाम से विख्यात हुए।

३१—संगमेश्वर के समीप ही एक दूसरा बड़ा मोटा सांजा ग्राम है। उसके निकट अनर्केश्वर शिवजी हैं। इनकी भी कथा सुन लीजिये—नित्य-नित्य एक ही काम करने से ऊब हो जाती है। इच्छा होती है इसे छोड़कर कोई दूसरा कार्य करें। यम-

* (वा० रे० खं० १४० अ०)

राज भी लोगों को दण्ड देते-देते ऊब गये। वही नरक में पापियों की हाय-हाय। वही नित्य सबको मारना ताड़ना। इस काम से ऊबकर वे यहाँ नर्मदा किनारे आकर घोर तपस्या करते रहे। नरक का कार्य कोई अर्यमा पितर देखते रहे होंगे। तीन वर्ष के पश्चात् शिवजी इनके सम्मुख प्रकट हुए और पूछा—"यमराज! क्या चाहते हो?"

यमराज ने कहा—"भगवन्! नित्य प्रति प्राणियों को दण्ड देते-देते मेरा मन ऊब गया है, अब मेरे स्थान पर किसी अन्य की नियुक्ति कर दीजिये। मुझे इस कार्य से विमुक्त कर दिया जाय।"

शिवजी हँस पड़े और बोले—"क्यों बात क्या है, ऐसे निराश क्यों हो गये?"

यमराज ने कहा—"भगवन्! नित्य जीवों को कष्ट देने से मुझे पाप नहीं लगेगा क्या?"

शिवजी ने कहा—"भैया! तुम किसी को द्वेषवश तो दण्ड देते नहीं हो। जिसके जैसे कर्म हैं, उन्हें उनके कर्मानुसार तुम फल देते हो। तुम तो अपने कर्तव्य मात्र का पालन करते हो। तुम्हें पाप क्यों लगेगा? तुमने अच्छा किया जो यहाँ रहकर तपस्या की अब अपने कर्तव्य कर्म का निष्काम भाव से पालन करो और जो तुम्हारी कोई इच्छा हो वह बताओ।"

तब यमराज ने कहा—"भगवन्! यह मेरा स्थापित शिव-लिंग 'अ-नरकेश्वर के नाम से विख्यात हो। जो कोई कार्तिकी चतुर्दशी को यहाँ आकर पूजन आराधना करे उसे नरक नहीं जाना पड़े।" शिवजी ने तथास्तु कहकर उनकी प्रार्थना को स्वीकार किया। यहाँ नरक चतुर्दशी को स्नान, दान, पूजा, पाठ का विशेष माहात्म्य है।*

* (रेवा खण्डे १४४ अध्याय)

३२—अ-नरकेश्वर से कुछ ही दूर पर नर्मदेश्वर तीर्थ है। उसकी कथा इस प्रकार है—जब संगमेश्वर के समीप शिवजी कुबेरजी के निमित्त प्रकट हुए। तब संगमेश्वर की स्थापना के निमित्त आगत देवता, यक्ष, किन्नरादिकों ने आनन्द के साथ नर्मदाजी में स्नान किया और जलक्रीड़ा की। तब सबने नर्मदेश्वर नामक शिवलिंग की स्थापना की। उसी समय निम्बभद्र नामक यक्ष ने निम्बभद्रपुर नामक नगर बसाया। यह भी एक पुण्य तीर्थ है।

३३—अ-नरकेश्वर और नर्मदेश्वर के समीप ही एक सर्पेश्वर तीर्थ है। गरुड़जी का तो आहार ही सर्प हैं। जब वे सर्प कुल के नाश पर ही उतारू हो गये, तब रमणक द्वीप से धनञ्जय नामक सर्प अपने बहुतसे साथियों के साथ यहाँ नर्मदाजी के निकट आकर छिप गये और यहाँ सर्पेश्वर शिवलिंग की स्थापना करके तपस्या में निमग्न हो गये। शिवजी के भय से गरुड़जी नहीं आ सके। इन सर्पों ने शंकरजी की कृपा से परम सिद्धि प्राप्त की। यहाँ पर सर्पों का भय मिट जाता है। शिवजी पर पुष्प चढ़ाने का अनन्त माहात्म्य है।[१]

३४—सर्पेश्वर के समीप ही उचडिया नामक ग्राम है। उस ग्राम की सीमा पर ही एक मोक्ष तीर्थ—यह गुप्त तीर्थ है। यहाँ सप्तर्षियों ने सिद्धि प्राप्त की है। सहस्रों महर्षियों ने मिलकर इसकी स्थापना की। यहाँ पर तपस्या करने से अनेक पुरुषों को ज्ञान प्राप्त हुआ और ज्ञान के द्वारा उनकी मोक्ष हुई।[१]

३५—मोक्ष तीर्थ से एक मील आगे ग्वाली नामक ग्राम के समीप गोपेश्वर तीर्थ है। इसकी भी कथा सुन लीजिये—प्राचीन काल में एक पुण्डरीक नामक गोप निवास करता था। उसके

---

१. (रे० खण्ड १४५ अ०)

पास दश लाख गौएँ थीं। वह बड़ा ही धार्मिक तथा शिव भक्त था। शिवजी ने कामधेनु के साथ आकर इसकी भाँति-भाँति से परीक्षा की। परीक्षा में यह पूर्ण सत्यनिष्ठ सिद्ध हुआ। तब शिवजी उसे अपने कैलास पर ले गये और उसे अपने गणों में सम्मिलित कर लिया। तभी से यह तीर्थ गोपेश्वर के नाम से प्रसिद्ध हुआ। यहाँ दान धर्म तथा दुग्ध दान का विशेष माहात्म्य है।[१]

३६—गोपेश्वर से लगभग मील भर की दूरी पर मार्कण्डेश्वर तीर्थ है। पुण्डरीक भक्त पर कृपा करने जब शङ्करजी प्रकट हुए तब शिवजी के दर्शनों के निमित्त यहाँ मार्कण्डेयजी पधारे। उन्होंने प्रेम सहित शिवजी की अर्चना वन्दना की और कुछ काल यहाँ पर निवास किया। पुनः लोक कल्याण के निमित्त शिवलिंग की स्थापना की तभी से यह तीर्थ उन्हीं के नाम से मार्कण्डेय तीर्थ विख्यात हुआ।[१]

३७—मार्कण्डेश्वर तीर्थ ग्वाली ग्राम से तीन मील आगे गुमानदेव हैं। अंकलेश्वर से जो नादोद के लिये छोटी लाइन गई है उसका गुमानदेव रेलवे स्टेशन है। यहाँ हनुमानजी का मन्दिर है। ऐसी प्रसिद्धि है कि यहाँ पहिले गोपाल लोग शक्ति पूजा करते थे। उन ग्वारियों में एक गुमान नाम का ग्वाला था वह इस स्थान का मुख्य सेवक था। इस स्थान पर एक गौ नित्य प्रति आकर दूध की धारा चढ़ाया करती थी। उसी स्थान पर एक सियार आकर मल त्याग करता था। यह जानकर ग्वालाओं ने उसे मारना चाहा। तभी गुलाबदास नाम के वैष्णव महात्मा ने उन्हें ऐसा करने से रोका और यहाँ देवता की आराधना करने लगे। तभी उन्होंने गुमानदेव हनुमानजी की स्थापना की। स्थान सुन्दर है। बड़ौदा के दीवान गोपाल राव ने यहाँ मन्दिर तथा

१. (रे० खं० १४५ अ०)

धर्मशाला का निर्माण कराया है। यहाँ इन हनुमानजी की बहुत मानता है। भक्तों को मनोकामनायें पूर्ण होती है। श्रावण महीने के प्रत्येक शनिवार को यहाँ मेला लगता है। कार्तिकी पूर्णिमा को भी यहाँ बड़ा मेला लगता है इसके आस-पास उचेड़िया, छोटा सांजा, कपल साड़ी, सुलतानपुरा तथा रानीपुरा आदि ग्राम हैं। ये हनुमानजी गुमान–अहंकार–को नष्ट करते हैं, इसलिये गुमान देव कहलाते हैं।

३८—गुमान के समीप नौगँवा और सामोर ग्राम के बीच नागतीर्थ है। यहाँ पर औदुम्बर नाग ने अपने वंश की बृद्धि हेतु १२ वर्ष तपस्या की थी। उसी ने अपने नाम से इस नागतीर्थ का निर्माण किया। यहाँ उदुम्बर नदी (उमरावती) उत्पन्न हुई हैं। अश्विन शुक्ला पंचमी का तथा रविवार का विशेष माहात्म्य है। यहाँ वन्ध्या स्त्री आकर पूजन अर्चन करे तो उसका वन्ध्यापन छूट जाता है, सन्तति की प्राप्ति होती है।+

३९—गुमानदेव से लगभग एक मील आगे सांबादि तीर्थ है। इसकी भी कथा सुनिये। भगवान् श्रीकृष्णचन्द्रजी की पत्नी जाम्बवती में साम्ब नाम का पुत्र उत्पन्न हुआ। वह अत्यन्त ही सुन्दर था उसके सौन्दर्य को देखकर औरों की तो बात ही क्या उसकी विमातायें भी मुग्ध हो जाती थीं। जब भगवान् को यह बात मालूम हुई तो उन्होंने उसे शाप दिया—"जा तेरे शरीर में कुष्ट हो जाय।" इस पर साम्ब बड़ा दुखी हुआ। तत्काल उसके शरीर में कुष्ट उत्पन्न हो गया। अतः उसने यहाँ नर्मदा किनारे रहकर छैः महीने तक सूर्य की उपासना की बहुत-सा दान किया और धर्म के सब कार्य किया। इससे वह रोग मुक्त हो गया। सूर्य की उपासना करने से इसे सौरतीर्थ भी कहते हैं यहाँ

+ (रे० खण्ड १४५ अ०)

तपस्या करने से रोगी रोगमुक्त होकर निरोग बन जाता है। यहाँ पर सप्तमी तथा रविवार को स्नान, दान, ब्रह्मभोज तथा गीतादि धर्म ग्रन्थों के दान का विशेष माहात्म्य है। यह परम पावन तीर्थ माना जाता है।[१]

४०—सांबादि तीर्थ से एक मील आगे अंदाड़ा ग्राम के निकट सिद्धेश्वर तीर्थ है। यहाँ दक्ष के पुत्रों ने तथा और भी अनेक ऋषि महर्षियों ने तपस्या करके सिद्धि प्राप्त की है। यहाँ सिद्धेश्वर नाम की शिवलिंग है।

समीप में ही सिद्धेश्वरी देवी का भी मन्दिर है। इस देवी की स्थापना भी उन्हीं महर्षियों ने लोक के कल्याण के निमित्त की थी। यहाँ भी संगम है यहाँ अष्टमी चतुर्दशी तथा नवमी को सिद्धेश्वरी देवी का दर्शन पूजन करने से मनोकामना की सिद्धि होती है। यहाँ कुमारियों के भोजन कराने का विशेष माहात्म्य है।[१]

४१—सिद्धेश्वर तीर्थ के समीप ही मांडवा ग्राम के सन्निकट मार्कण्डेय स्थान है। मार्कण्डेयजी इस तीर्थ के सम्बन्ध में बताते हुए कहते हैं—मैंने सत्ययुग में दक्षिण पर्वत के सन्निकट दण्डकारण्य में दस सहस्र वर्ष पर्यन्त तपस्या की तथा सिद्ध संतों की सेवा की। पुनः नर्मदाजी के तट पर समस्त सिद्ध सन्तों द्वारा स्थापित इस सिद्धेश्वर तीर्थ में आया। यहाँ सम्पूर्ण ऋषि मुनियों ने प्राणियों के निस्तार हेतु एक कुंड का निर्माण किया। पुनः उस कुंड के जल को अपने कमंडलु में भरा। मैंने सौ वर्ष पर्यन्त यहाँ तपस्या की। तब भगवान् ने मेरे ऊपर कृपा की। श्रीलक्ष्मीनारायण तथा पार्वती सहित शिवजी प्रत्यक्ष मेरे सम्मुख प्रकट हुए और उन्होंने मुझे अजर-अमर होने का वरदान दिया। दोनों ने मुझसे पुनः

१. (रे० खण्ड १४६ अ०)

वरदान माँगने को कहा। तब मैंने विनती की—"प्रभो! यदि आप मेरे ऊपर प्रसन्न हैं तो मेरे द्वारा स्थापित इस मार्कण्डेय तीर्थ में सदा सर्वदा निवास करें और भक्तों की मनोवांछित कामनाओं को पूर्ण करते रहें। यहाँ आषाढ़ शुक्ला एकादशी देवशयनी को तथा कार्तिक शुक्ला देवोत्थापिनी और शिवरात्रि का विशेष माहात्म्य माना जाता है।[१]

४२—सिद्धेश्वर तीर्थ से दो मील आगे अंकलेश्वर तीर्थ है। जिसे मांडव्येश्वर तीर्थ भी कहते हैं[१] यहाँ रामकुंड सुप्रसिद्ध तीर्थ है। इसकी कथा इस प्रकार है—प्राचीन काल में यहाँ देवराज नाम के बड़े धर्मात्मा राजा थे। वे भगवती के बड़े भक्त थे। उनके कोई सन्तान नहीं थी। उन्होंने भगवती जगदम्बा की आराधना की। भगवती की कृपा से उनके एक कन्या हुई। उसका नाम कुमुदिनी था। वह कन्या क्या थी साक्षात् सावित्री का अवतार ही थी। उसका सौन्दर्य माधुर्य लावण्य अनुपम था।

एक दिन कुमुदिनी जल क्रीड़ा कर रही थी उसी समय शङ्कर नाम का दैत्य वहाँ आया। कन्या के सौन्दर्य को देखकर दुष्ट दैत्य विमुग्ध हो गया और वह पक्षी का रूप रखकर उसे हरण करके आकाश मार्ग से ले गया। बेचारी कुमारी रोती चिल्लाती जा रही थी। मार्ग में महर्षि माडव्य का आश्रम पड़ा। राजकुमारी ने अपने कुछ आभूषण आश्रम में फेंक दिये। माडव्य महर्षि नेत्र बन्द करके तपस्या में तल्लीन थे। उन्हें पता ही नहीं था, क्या हुआ और किसने आभूषण फेंक दिये। इधर राजकुमारी को ढूढ़ते-ढूढ़ते राजकर्मचारी माडव्य ऋषि के आश्रम पर आये। वहाँ राजकुमारी के आभूषणों को देखकर उन्हें महर्षि के ऊपर शङ्का हुई। महर्षि को सावधान करके उन्होंने पूछा—"महात्माजी! ये आभूषण कहाँ से आये?"

---

१. (रे० खण्ड १४७ अ०)

ऋषि ने कहा—"भैया ! हमें तो मालूम नहीं। हम तो यहाँ तपस्या करते हैं।"

राजकर्मचारियों को ऋषि के ऊपर सन्देह हुआ। उन्होंने अपना सन्देह राजा के सम्मुख जाकर व्यक्त किया। राजा तो दुखी था ही उसने विना सोचे विचारे ऋषि को शूली पर चढ़ा दिया। महर्षि शूली पर चढ़े रहे किन्तु मरे नहीं।"

महर्षि के लघु भ्राता को राजा के इस अन्याय पर बड़ा क्रोध आया। उन्होंने हाथ में जल लेकर राजा को सर्वनाश का शाप देना चाहा। यह देखकर शूली पर से ही माण्डव्य ऋषि बोले—"अरे, भाई ! यह क्या करते हो। राजा को शाप मत दो। यह तो हमारे किसी पूर्व जन्म का पाप है, उसका फल भोग रहे हैं।" उसी समय वहाँ घूमते-घामते सप्तर्षि भी आ गये। और भी ऋषि मुनि आ गये। वे महर्षि को शूली से उतारने का आग्रह करने लगे।

महर्षि ने कहा—"मुनियो ! अवश्यमेव भोक्तव्यं पूर्वकर्म शुभाशुभम्। प्रारब्ध कर्मों का तो भोग से ही क्षय होता है। अतः मुझे पूर्व कृत पाप का फल भोगने दीजिये। मुझे शूली से उतारने का प्रयत्न न करें।"

ऋषि की ऐसी बात सुनकर दैवेच्छा समझकर ऋषि मुनि चले गये। माण्डव्य मुनि पूर्ववत् शूली पर चढ़े ही रहे उसी समय शाण्डिली नाम की सती अपने कोढ़ी पति की इच्छा समझकर उसे वेश्या के समीप ले जा रही थी। अन्धेरे में उसे दीखा नहीं, उसका शरीर ऋषि के लटके हुए पैर से भिड़ गया। ऋषि को बड़ा कष्ट हुआ। वे चिल्लाने लगे। उनकी चिल्लाहट सुनकर आस-पास के ऋषि एकत्रित हो गये। उनके भाई ने जब सुना तो उन्होंने क्रोध में भरकर तुरन्त शाप दे दिया कि जिसके

शरीर से मेरे भाई के पैर का स्पर्श हुआ है। उसकी सूर्योदय होने पर मृत्यु हो जाय।"

यह सुनकर कोढ़ी का काम तो कर्पूर की भाँति उड़ गया। वह घबराकर बोला—"देवि ! मुझे अब लौटाकर घर ले चलो। सूर्योदय होते ही मेरी मृत्यु हो जायगी।

यह सुनकर शान्ति के साथ सती बोली—"आप घबड़ाइये नहीं। सूर्य उदय ही न होगा। आप मेरे सतीत्व की सामर्थ देखिये।"

सती के प्रभाव से छैः महीने तक सूर्य उदय ही नहीं हुआ। समस्त देव, ऋषि तथा पितृ कर्म बन्द हो गये। देवता दौड़े-दौड़े ब्रह्माजी के पास गये। ब्रह्माजी समस्त देवता ऋषि मुनियों के सहित शाण्डिली के समीप गये और उसे आश्वासन दिया। तेरे पति को हम जिला देंगे। तब सूर्य का उदय हुआ। सती का पति मरकर क्षण भर में ही निर्मल सुवर्ण के समान दिव्य स्वरूप रखकर जीवित हो गया। उसी समय वह दैत्य उस राजकुमारी को लेकर वहाँ आ पहुँचा और आकर उसने कहा—"मुझे एक ऋषि का शाप था कि तू दैत्य हो जा।" मेरी अनुनय-विनय पर उन्होंने कहा—जब तू पक्षी रूप से राजकन्या का हरण करेगा, तब तू शाप से मुक्त जायगा।" इसलिये यह राजकन्या विशुद्ध है। इसके चरित्र में किसी प्रकार का लांछन नहीं है। ऐसा कहकर दैत्य अन्तर्धान हो गया।"

यह समाचार राजा ने सुना तो उसने ऋषि से बारम्बार अपने अपराध के लिये क्षमा याचना की। सब ऋषि मुनियों ने महर्षि को शूली से उतारा राजा ने अपनी कुमुदिनी कन्या ऋषि को अर्पण कर दी। तभी से यह माण्डव्य तीर्थ यहाँ प्रसिद्ध हो गया। पहिले कभी नर्मदाजी यहीं बहती थीं। अब तो यहाँ से ३-४ मील दूर चली गयी हैं। माण्डव्य ऋषि के भाई ने जो

राजा को शाप देने को जल लिया था। उसे समुद्र में डाल दिया। उसी का काल कूट विष हो गया।[१] यहीं अंकलेश्वर में एक देवखात–रामकुण्ड–है। जब समस्त देवता तथा ऋषिगण शांडिल्य को वरदान देने आये थे तब सबने मिलकर इस देवखात–रामकुण्ड तीर्थ–का निर्माण किया। यहाँ पितरों सहित समस्त देवता निवास करते हैं। आश्विन की चतुर्दशी को यहाँ स्नान करने से प्रयागराज के स्नान का फल मिलता है। सूर्य तथा चन्द्रग्रहण में यहाँ के स्नान का बड़ा माहात्म्य है, कुरुक्षेत्र के स्नान के समान फल बताया है। यहाँ पर धर्म, कर्म, पूजा पाठ सभी कर्म स्थायी होते हैं।[२]

४३—रामकुण्ड के समीप ही अक्रूरेश्वर तीर्थ है। इसकी भी कथा को दत्तचित्त होकर श्रवण कीजिये–लङ्कापति रावण के दूसरे भाई कुम्भकरण का एक पुत्र था। उसका नाम था अक्रूर। वह अन्य राक्षसों की भाँति क्रूर नहीं था। वह भगवत् भक्त था और अपने चाचा विभीषण के साथ ही सदा सर्वदा रहता था। जब श्रीरामचन्द्रजी के द्वारा रावण के कुल का नाश हो गया तो इसे बड़ी ग्लानि हुई। यह लंका छोड़कर यहाँ नर्मदाजी किनारे पर आकर घोर तप करने लगा। उसने अपने नाम से शिवलिंग स्थापित करके सौ वर्षों तक शिवजी की दत्तचित्त होकर आराधना की। इसकी भक्ति से प्रसन्न होकर शिवजी इसके सम्मुख प्रकट हुए और वरदान माँगने को कहा—"तब इसने यही वर माँगा कि मेरी भगवान् विष्णु के चरणों में सदा अहैतुकी भक्ति बनी रहे।" शंकरजी ने तथास्तु कहकर इसे भगवत् भक्ति का शुभाशीर्वाद दिया। यहाँ का भी विशेष माहात्म्य है।[३]

१. (रे० खं० १६५, १६६ अ०) २. (रे० खं १६७ अ०)
३. (रे० खं १६८ अ०)

४४—अक्रूरेश्वर तीर्थ से ८ मील आगे बलाबल कुण्ड है। जिसे सूर्यकुण्ड भी कहते हैं। यहाँ पर चतुर्भुज नीलकण्ठ शिवजी और नर्मदा मैया की मूर्ति है। यहाँ के कुण्ड में सदा बुलबुला शब्द होता रहता है। इसीलिये इसे बलबलाकुंड कहते हैं। प्राचीन काल में जब महर्षि कश्यप ने प्राणियों को नाना रोगों से ग्रस्त देखा, तब जीवों पर दया करने के हेतु शिवजी का धन्वन्तरि रूप में स्मरण किया। कश्यपजी पर दया करने को कपर्दीकामारि धन्वन्तरि रूप में समुद्र से उत्पन्न हुए और कश्यपजी से बोले— "मैं तुम पर प्रसन्न हूँ वरदान माँगो।"

तब कश्यपजी ने कहा—"भगवन्! आप मुझे वैद्य विद्या का उपदेश दें। मैं सभी प्राणियों की पीड़ा को हरण करने में समर्थ होऊँ।"

शिवजी ने तथास्तु कहकर उनकी मनोकामना पूर्ण की। तभी इस तीर्थ का निर्माण हुआ। ×

४५—बलबलाकुण्ड से ४ मील आगे सहजोत ग्राम के समीप सिद्धरुद्रेश्वर तीर्थ है। यह परम पावन तीर्थ है। इसकी भी कथा सुनिये। एक वार विष्णु भगवान् में और ब्रह्माजी में कौन बड़ा है इस विषय को लेकर वादाविवाद हुआ। उस समय ब्रह्माजी के पाँच शिर थे। ब्रह्माजी ने कहा--"मेरे पाँच शिर हैं। मैं ही समस्त सृष्टि का सृजन कर्ता हूँ। मैं ही सबसे बड़ा हूँ।"

इस पर भगवान् विष्णु ने कहा—"तुम तो मेरी नाभि कमल से उत्पन्न हुए हो समस्त सृष्टि का पालन मैं करता हूँ, अतः मैं सबसे बड़ा हूँ। उनमें इस प्रकार वाद-विवाद हो ही रहा था कि उनके मध्य में परमज्योतिर्मय आदि अन्त से रहित एक शिवलिंग प्रकट हुई। वहाँ से वाणी हुई। जो इस शिवलिंग का आदि अन्त जान ले वही बड़ा।

× (रे० खं १६७ अ०)

इस पर भगवान् विष्णु गरुड़ पर चढ़कर उसका आदि देखने नीचे गये और ब्रह्माजी हंस पर चढ़कर अन्त देखने ऊपर गये। सहस्रों वर्षों तक विष्णु भगवान् खोजते रहे किन्तु उसके आदि का पता नहीं चला। इधर ब्रह्माजी भी सहस्रों वर्षों तक उसका अन्त खोजते रहे किन्तु उन्हें अन्त नहीं मिला। दोनों लौटकर आये।

शिवजी ने विष्णु भगवान् से पूछा—"तुम्हें इस ज्योतिर्लिङ्ग के आदि का पता चला?"

भगवान् विष्णु ने कहा—"नहीं, मुझे तो इसके आदि का पता नहीं चला।"

तब फिर उन्होंने ब्रह्माजी से पूछा—"तुम्हें इसके अन्त का पता चला?"

ब्रह्माजी ने कहा—"हाँ, मैंने तो इसके अन्त का पता लगा लिया।" (झूठी साक्षी देने को केतकी और कामधेनु को भी अपनी ओर मिलाकर उन्हें प्रस्तुत किया)।

शिवजी समझ गये ये असत्य भाषण कर रहे हैं, अतः क्रुद्ध होकर उन्होंने ब्रह्माजी का पाँचवा शिर अपने नखों से काट लिया।"

काट तो लिया, किन्तु वह ब्रह्माजी का कपाल शिवजी के हाथ में चिपट गया। ब्रह्महत्या उनके पीछे लगी। शिवजी संसार के समस्त तीर्थों में घूमते रहे, किन्तु ब्रह्महत्या ने उनका पीछा नहीं छोड़ा। जब वे नर्मदाजी के इस देवखात–कुंड–में आये तो उनकी ब्रह्महत्या छूट गयी। कपाल गिर गया तभी से यह तीर्थ परम पावन माना जाने लगा। यहाँ कुंड में स्नान करने से सभी पाप छूट ज़ाते हैं। यहाँ अष्टमी चतुर्दशी के स्नान का विशेष माहात्म्य है। विशेषकर माघ मास की अष्टमी चतुर्दशी का तो अत्यधिक

माहात्म्य है। यहाँ पर सिद्धरुद्रेश्वर कुंड है। सिद्धरुद्रेश्वर, सिद्धनाथ दत्तात्रेयजी के मन्दिर हैं।÷

४६—सिद्धरुद्रेश्वर तीर्थ से दो मील आगे मांटियर ग्राम के समीप वैद्यनाथ तीर्थ है। पिछले स्थानों से तो नर्मदा दूर पड़ जाती हैं किन्तु वैद्यनाथजी के तो प्रायः समीप ही हैं। यहाँ से पास ही एक प्रसिद्ध तीर्थ ४७—सूर्यकुण्ड है। उसकी भी कथा सुन लीजिये—महर्षि कश्यपजी की दिति पत्नी में दैत्य हुए और अदिति में आदित्य-सूर्य-हुए। सूर्य का नाम विवस्वान् था। उनका विवाह विश्वकर्मा की पुत्री संज्ञा के साथ हुआ। विवस्वान् से संज्ञा में तीन सन्तानें हुईं। एक वैवस्वत मनु, दूसरे यम और तीसरी यमुना नाम्नी कन्या। सूर्यनारायण का तेज अत्यधिक था, उसे संज्ञा सहन न कर सकी। उसने सूर्यदेव से प्रार्थना की—"आपका तेज असीम है, मैं उसे अधिक सहन करने में असमर्था हूँ, अतः मुझे आज्ञा दीजिये मैं अपने पिताजी के यहाँ जाकर रहूँ।"

यह सुनकर सूर्यदेव ने कहा—"यह कैसे हो सकता है। बच्चों की देख-रेख कौन करेगा ?"

यह सुनकर संज्ञा उस समय तो शान्त हो गयी किन्तु उसके लिये सूर्य का तेज सहन करना असह्य हो गया। एक दिन उसने सूर्य से छिपकर अपनी छाया को सजीव बना लिया। और छाया से कहा—"देख, तू यहीं रहना, सूर्यनारायण को यह मत बताना कि यथार्थ संज्ञा नहीं उसकी छाया हूँ।"

छाया ने कहा—"जब तक मृत्यु संकट नहीं आवेगा, तब तक तो बताऊँगी नहीं। जब मेरे सिर पर मृत्युसंकट आ जायगा तब तो मुझे बताना ही पड़ेगा।"

÷ (वा० रे० खं० १६८ अ०)

संज्ञा ने कहा—"अच्छी बात है, यह कहकर वह अपने पिता विश्वकर्मा के घर चली गयी। विश्वाकर्मा ने पूछा—"तू अकेली कैसे चली आयी ?"

तब इसने बताया उनका तेज मैं सहन नहीं कर सकती।

विश्वकर्मा ने कहा—"सयानी लड़की को अधिक दिनों तक पिता के घर नहीं रहना चाहिये। तू वहीं चली जा।"

पिता की बात सुनकर वह चली तो गयी किन्तु सूर्यनारायण के यहाँ न जाकर घोर वन में चली गयी। अपने पतिव्रत की रक्षा के निमित्त उसने घोड़ी का रूप रख लिया। घोड़ी बनकर वन में चरती रहती समय को बिताती रहती।

इधर सूर्यनारायण संज्ञा की छाया को ही संज्ञा समझ रहे थे। उसके भी तीन सन्तानें हो गयीं। पहिला सावर्णी मनु, दूसरे शनिश्चरदेव और तीसरी तापी नदी।

संज्ञा के पुत्र यमराज क्रोधी स्वभाव के थे। छाया अपनी सन्तानों को तो बहुत अधिक प्यार करे, अच्छी-अच्छी वस्तुएँ खाने को दे। संज्ञा के पुत्रों की उपेक्षा कर दे। इस प्रकार का पक्षपात पूर्ण वर्ताव देखकर यमरामज को क्रोध आ गया। उन्होंने क्रोध में भरकर छाया को मारने के लिये पैर उठाया। इस पर छाया ने यमराज को शाप दे दिया।

तब यमराज ने अपने पिता को सब वृत्तान्त बताकर कहा—"पिताजी ! प्रतीत होता है यह हमारी यथार्थ माता नहीं। माता अपने पुत्र को शाप कभी नहीं देती।"

तब सूर्यदेव ने उसे धमकाकर डाँटते हुए पूछा—तब उसने सब समाचार सत्य-सत्य बता दिये।

अब सूर्यदेव को संज्ञा की चिन्ता हुई वे अपनी ससुराल विश्वकर्मा के यहाँ गये। और जाकर संज्ञा के सम्बन्ध के सभी समाचार पूछे।

विश्वकर्मा ने कहा—"हाँ वह आयी तो थी किन्तु मैंने फिर उसे तुम्हारे पास ही भेज दिया था।"

सूर्यनारायण ने कहा—"अच्छी बात है, मैं उसे खोजता हूँ।" यह कहकर वे संज्ञा को खोजने गये। देखा वह घोर अरण्य में घोड़ी बनी घूम रही है, तब सूर्यनारायण ने भी घोड़ा का रूप रख लिया। वहीं अश्विनीकुमारों का जन्म हुआ। तब सूर्यनारायण संज्ञा को लेकर विश्वकर्मा के समीप आये। विश्वकर्मा ने एक आदित्य के बारह आदित्य बना दिये और सूर्यनारायण का तेज भी कम कर दिया। इससे सूर्यनारायण को ग्लानि हुई, उन्होंने यहाँ नर्मदा किनारे आकर दस सहस्र वर्ष तक तप किया। इससे प्रसन्न होकर शिवजी ने इन्हें पुनः तेज प्रदान किया और वरदान दिया कि आपके इस सूर्य कुण्ड में स्नान करके जो लोग जप, तप, यज्ञ, पूजा पाठ दान आदि शुभ कर्म करेंगे वे सब कर्म पूर्ण सफल होंगे। यहाँ रविवार को स्नान का विशेष माहात्म्य है। यदि सप्तमी रविवार को पड़ जाय तो उसका और भी अत्यधिक माहात्म्य है, यहाँ ब्रह्मभोज तथा गायत्री पुरश्चरण विशेष फल-दायक होता है।×

४८—सूर्यकुण्ड के समीप ही मातृका तीर्थ है। इसकी कथा इस प्रकार है, जब देवताओं के कार्य के निमित्त षडानन श्रीस्वामी कर्तिकेय का जन्म हुआ तब ६ कृत्तिकाओं ने उन्हें अपना पुत्र मानकर दूध पिलाया था। किन्तु कृत्तिकाओं के दूध से उनकी तृप्ति नहीं होती थी, उनका पेट नहीं भरता था। तब वे बड़ी चिन्तित हुई इतने में ही वहाँ नारदजी आ पहुँचे। कृत्तिकाओं ने अपनी चिन्ता नारदजी के सम्मुख प्रकट की और अपनी शंका का समाधान पूछा। तब नारदजी ने कहा—"तुम नर्मदा किनारे

× (रे० खं० ४२ अ०)

जाकर तपस्या करो, तभी तुम्हारी मनोकामना पूर्ण होगी।" मातृकाओं ने नारदजी की सम्मति मानकर यहाँ तपस्या की तथा अपने इष्ट की सिद्धि प्राप्त की। और इस तीर्थ में सर्वकर्म सिद्ध होंगे। इस बात का भी वरदान प्राप्त किया।[१]

४९—मातृकातीर्थ से दो मील पर उत्तराज ग्राम के सन्निकट उत्तरेश्वरतीर्थ है। इसकी कथा इस प्रकार है—प्राचीनकाल में एक राजर्षि शशि विन्दु नाम के राजा थे, उनके पुत्र तो लाखों थे, किन्तु कन्या एक ही थी। कन्या बड़ी ही सुन्दरी गुणवती थी उसके लिये महाराज ने बहुत से वर खोजे किन्तु उसके उपयुक्त एक भी वर नहीं मिला। राजा को बड़ी चिन्ता हुई। तब ऋषियों ने कन्या से कहा—"बेटी! तुम तपस्या करो। 'तपसा किं न सिद्धति' तपस्या से कौन-सा ऐसा कार्य है जो सिद्ध न हो।"

ऋषियों की आज्ञा पाकर कन्या यहाँ नर्मदा किनारे आकर तपस्या करने लगी। उसी समय पृथ्वी से स्वयंभूलिंग प्रकट हुआ। और स्वयं साक्षात् शिवजी भी उसके सम्मुख प्रकट हुए। शिवजी ने कहा—"बेटी तुम्हारी तपस्या सफल हुई। महाराज तृण-विन्दु के पुत्र से तुम्हारा विवाह होगा।" शिवजी की वाणी सफल हुई। तभी से यह तीर्थ भक्तों की मनोवांछा को पूर्ण करने लगा।[२]

५०—उत्तरेश्वर के समीप ही सीरा ग्राम में नर्मदेश्वरतीर्थ है। इसकी कथा सुनिये। शिवजी नर्मदाजी के प्रत्येक पत्थर में विराजमान रहकर नाना प्रकार की क्रीड़ाओं को करते रहते हैं। एक बार शिवजी ने एक बृद्ध बैल का वेष बना लिया और नर्मदा जी के किनारे-किनारे विचरण करने लगे। कभी नर्मदाजी के इस तट पर आ जायँ, कभी उस तट पर चले जायँ। इस प्रकार विचरण करते हुए इस सुन्दर स्थान पर आये। नर्मदाजी ने देखा ये

१. (रे० खं० १६५ अ०) २. (रे० खं० १६८ अ०)

तो मेरे पिता शङ्करजी हैं। इसलिये जल में से तुरन्त परम दिव्य सुन्दर स्वरूप धारण करके शिवजी के समीप आईं और उनकी विधिवत् पूजा की।

इनकी पूजा से प्रसन्न होकर शिवजी ने नर्मदाजी से वर माँगने को कहा, तब नर्मदाजी ने यही वर माँगा कि आप इस तीर्थ में सदा विराजमान रहें। और जो भक्त आकर आपकी पूजा करें उनकी मनोकामना पूर्ण करते रहें। शिवजी ने तथास्तु कहकर नर्मदाजी की इच्छा पूरी की।*

५१—नर्मदेश्वर से दो मील आगे मोठिया नामक ग्राम के समीप मातृतीर्थ है। इसकी कथा इस प्रकार है—"पूर्व कल्प में जब ब्रह्माजी को सृष्टि करने की भगवान् की आज्ञा हुई तो उन्होंने सर्वप्रथम मन से ही दश पुत्र पैदा किये। ये ब्रह्माजी के दश मानस पुत्र कहलाते हैं। उन दश में एक दक्ष प्रजापति थे। उन्होंने ५० कन्यायें पैदा की। उनमें से १३ कन्यायें कश्यप महर्षि को दी। कश्यपजी सृष्टि बढ़ाने का उपक्रम करने लगे, तब माताओं ने कहा—भगवन्! तपस्या द्वारा ही सम्पूर्ण कार्य सिद्ध होते हैं, अतः पहिले हमें तप करना चाहिये।" कश्यपजी के अनुमोदन करने पर इन माताओं ने यहाँ नर्मदा किनारे पर आकर एक कुंड बनाया और उस कुंड में नर्मदाजी का जल भर लिया और उसके किनारे पर दिव्य सौ वर्षों तक तपस्या की। यहाँ तपस्या करने से ही उन्हें सिद्धि प्राप्त हुई। तब वे स्थावर जंगम सभी प्रकार के प्राणियों को उत्पन्न करने में समर्थ हुईं और सम्पूर्ण जगत् की मातायें हुईं। यह तीर्थ बहुत ही उत्तम है। यहाँ सभी कामनायें सिद्ध होती हैं। विशेषकर सन्तान की इच्छा वालों को इस मातृ-तीर्थ में स्नान पूजन जप अनुष्ठान करना चाहिये।*

---

* (रे० खं० १६६ अ०)

५२—मातृतीर्थ से दो मील आगे सुप्रसिद्ध हासोट नाम का ग्राम है। उसमें हंसेश्वरतीर्थ है। उसकी कथा सुनिये—मनुष्य, पशु, पक्षी, वृक्षादि समस्त प्राणी प्रजापति कश्यपजी की ही सन्तान हैं। कश्यपजी की एक पत्नी से कांतिशिखा नामक हंस हुआ। उसे ब्रह्माजी ने अपना वाहन बना लिया। ब्रह्माजी जब प्रजापति दक्ष के यज्ञ में जाने लगे तो इनके वाहन हंस अपने कर्तव्य से च्युत हो गये। वे शिवगणों से वाद-विवाद करते रह गये। समय पर अनुपस्थित रहे। समय पर अपना वाहन न आवे तो क्रोध आना स्वाभाविक ही है। ब्रह्माजी को क्रोध आ गया उन्होंने कान्तिशिखा हंस को शाप दिया—तू ब्रह्मलोक से च्युत होकर मनुष्य लोक में चला जा।"

यह सुनकर हंस अत्यन्त दुखी हुआ उसने ब्रह्माजी की बहुत अनुनय-विनय की। तब ब्रह्माजी ने कहा—"तू नर्मदा तट पर जाकर तपस्या कर इससे तुझे पुनः ब्रह्मलोक की प्राप्ति हो जायगी।" तब हंस ने ऐसा ही किया। यहाँ हंसेश्वर शिवलिंग की स्थापना करके तपस्या की। जिससे उसे पुनः ब्रह्मलोक की प्राप्ति हुई। तभी से यह तीर्थ हंसेश्वर के नाम से प्रसिद्ध हुआ। यहाँ सभी शुभ कर्म सफल होते हैं।×

५३—हंसेश्वर के समीप हासोट में ही तिलादेश्वर तीर्थ है। इस तीर्थ की भी कथा सुनिये। एक जाबालि नाम के ऋषि थे। संगदोष से दुष्कर्म करने लगे। पीछे उन्हें पश्चात्ताप हुआ। वे अपने पातकों की निवृत्ति हेतु समस्त तीर्थों में घूमे किन्तु उनके पापों का अन्त नहीं हुआ। दैववशात् घूमते-घामते वे रेवातट पर यहाँ आ पहुँचे। यहाँ तप का अत्यन्त माहात्म्य सुनकर केवल तिल खाकर तपस्या करने लगे। वे नित्य प्रति एक-एक तिल घटाते

× (रे० खं० १७५ अ०)

गये और उनके पाप भी तिल-तिल घटते गये। ७२ वर्ष तक इस प्रकार तपस्या करके वे निष्पाप हो गये। उन्होंने तिल खाये थे अतः उनका नाम तिलाद (तिलान् अत्तीति=तिलाद) पड़ गया। इसी अपने नाम से उन्होंने तिलादेश्वर शिवलिंग की स्थापना की। यहाँ तप करने का बड़ा माहात्म्य है।×

५४—तिलादेश्वर से एक मील आगे वासनोली ग्राम में वासवतीर्थ है। जब अष्टवसुओं को पितरों का पृथ्वी पर जन्म लेने का शाप हुआ तो उन्होंने वासवेश्वर शिवलिंग की स्थापना करके इस स्थान पर तपस्या की और उसी से सिद्धि प्राप्त की।×

५५—वासवेश्वर से एक मील पर कतपुर ग्राम के समीप कोटेश्वर नामक तीर्थ है। जिस समय सरित् प्रवरा रेवा का समुद्र से संगम हुआ उस समय उनके दर्शनों को करोड़ों देवता, गन्धर्वादि आये और संगम के दर्शनों से सभी ने सिद्धि प्राप्त की। यहाँ सदा सर्वदा शिवजी का निवास रहता है और यहाँ किये जप, तप, दान, धर्मादि पुण्यकर्मों का करोड़ों गुना फल होता है।×

५६—कोटेश्वर से एक मील आगे अलिकातीर्थ है। गन्धर्वों के राजा चित्रसेन की लड़की की लड़की का नाम अलिका था। उसके पिता का नाम रत्नबल्लभ गन्धर्व था। अलिका स्वेच्छाचारिणी बन गयी। उसने माता-पिता से बिना पूछे ही विद्यानन्द नामक एक ऋषि से विवाह कर लिया। उनके साथ वह दश वर्ष रही। फिर उनको छोड़कर वह अपने पिता के समीप गयी। पिता ने ऐसी पुत्री को अपने पास रखना उचित न समझकर उसे अपने घर से निकाल दिया। अब उसे अपने दुष्कर्मों पर पश्चात्ताप हुआ। वह ब्राह्मणों की शरण में गयी और अपने पाप

× (रे० खं० १७५ अ०)

का प्रायश्चित्त पूछा। ब्राह्मणों ने उसे नर्मदा किनारे तपस्या करने की सम्मति दी। ब्राह्मणों की सम्मति मानकर उसने इस स्थान पर रहकर घोर तपस्या की। अपने नाम से उसने अलिकेश्वर नामक शिवलिंग की स्थापना की। शिवजी की पूजा अर्चा तथा तप के प्रभाव से वह निष्पाप हो गयी। तब वह अपने पिता के घर गयी। अब के पिता ने उसका अत्यधिक आदर किया। यहाँ तपस्या करने से सर्व कर्म सुफल होते हैं।*

५७—अलिकेश्वर तीर्थ से आगे विमलेश्वर तीर्थ है। यह नर्मदाजी के दक्षिण तट का रेवासागर संगम के समीप अन्तिम तीर्थ है। यहाँ बड़े-बड़े पातकी अपने पातकों से विमल बन गये हैं।

१—महर्षि त्वष्टा का पुत्र त्रिशिरा हुआ। जो कुछ दिनों को देवताओं का पुरोहित बन गया था। इन्द्र ने जब देखा यह तो हमारे शत्रु असुरों से मिला है, उनका पक्ष लेता है तो देवेन्द्र ने उसका सिर काट लिया। इससे इन्हें ब्रह्महत्या लगी। इन्द्र ने यहाँ आकर तप किया तो उनका ब्रह्महत्या का पाप यहाँ आकर मिट गया।

सूर्य को जब निज कन्या पर कुदृष्टि करने पर कुष्ट रोग हो गया तो वह भी यहाँ तपस्या करने से मिट गया।

विभाण्डक मुनि के पुत्र शृङ्गीमुनि जब महाराज दशरथ का पुत्रेष्टि यज्ञ कराने आये थे तो बहुत दिनों तक राजगृह में रहने से राज्यान्न खाने से जो दोष लगा था, वह यहाँ तपस्या करने से मिट गया।

कहाँ तक कहें देवता, ऋषि, मुनि, गन्धर्वादिकों को जो भी दोष लगे वे सब यहाँ तपस्या करने से मिट गये। यह बड़ा ही विमल तीर्थ है यहाँ षष्ठी तथा चतुर्दशी के स्नान करने का विशेष

* (रे० खं० १७५ अ०)

माहात्म्य है। यहीं से परिक्रमा के यात्री नौका में बैठकर उस पार जाते हैं। यहाँ दक्षिण तट की परिक्रमा समाप्त होती है उत्तर तट की यात्रा का वृत्तान्त अगले अध्यायों में पढ़िये।

श्लोक

नमः पुण्य जले ह्याद्ये नमः सागरगामिनि।
नमस्ते पाप शमनि ! नमो देवि वरानने॥
नमोऽस्तुते ऋषिगण सिद्धसेविते।
नमोऽस्तु ते शङ्कर देह निस्सृते॥
नमोऽस्तु ते धर्मभृतां वरप्रदे।
नमोऽस्तु ते सर्वपवित्र पावने॥
(मत्स्यपुराणे)

छप्पय

(१)

हनुमन्तेश्वर परसि पोयचा में पुनि आओ।
नलखेड़ी अरु रुण्ड शुकेश्वर ओरी न्हाओ॥
कोटिनार सीसोद जहाँ पै शिव मुकुटेश्वर।
कान्दरोल, इस्कन्द, बराछा बल्मीकेश्वर॥
लिङ्ग कपालेश्वर असा, पञ्चमुखी हनुमान हैं।
तीर्थ तारकेश्वर सुघर, इन्द्रेश्वर भगवान हैं॥

(२)

वैरुगाम गोघाट गुदावरि संगम सुन्दर।
कर्सनपुर भालौद तपेश्वर सिद्धेश्वर वर॥
पराशरेश्वर तीर्थ कलकलेश्वर कुसुमेश्वर।
मधुमति संगम मोक्ष गुमानहु देव सिधेश्वर॥

तीर्थ अङ्कलेश्वर विमल, माराडव ईश्वर कुराड हैं।
सूर्यकुराड हरनर्मदे, उत्तर ईश्वर शम्भु हैं॥

(३)

हंसेश्वरके निकट वासवेश्वर कोटेश्वर।
अलकेश्वर तैं बढ़ौ अन्तमें श्रीविमलेश्वर॥
विमलेश्वर अति विमल नर्मदा अन्त जहाँ हैं।
दक्षिण तटको अन्त नर्मदा मिलीं तहाँ हैं॥
विमलेश्वर तक आइकें, आगेकूँ अब मत बढ़ो।
उत्तरतट हित परिक्रमा, करिबेकूँ नौका चढ़ो॥

प्रार्थना

मातु नर्मदे ! बार-बार चरननि सिर नावैं।
पुण्य जले हे देवि ! आदि सरिता कहलावैं॥
सागर गामिनि ! जननि ! पाप सब समन करावैं।
चन्द्रमुखी ! सुकुमारि चरन तव शीश नवावैं॥
निकसि अमरकंटक चलीं, तोरत फोरत शैल बन।
विमलेश्वर सागर मिलीं, जननि ! जगत तारनतरन॥
तुम्हरी सेवा करें देव, गन्धर्व सकलजन।
यक्ष, नाग किंपुरुष, अप्सरा किंनर ऋषिगन॥
शिवशङ्करकी पुत्रि बनीं तनतैं प्रकटायीं।
प्रानिनि पावन करन जननि ! जगमें तुम आईं॥
जे तव तट वसि तप करहिँ, वर दै तिनि पावन करो।
चरन शरन माँ ! गही तव, अब सबके भवभय हरो॥

••••◉••••

विमलेश्वर में

[१६]

अनेक दुःखौघभयर्दितानाम्
पापै रनेकैरभिवेष्टितानाम् ।
गतिस्त्वमंभोजसमानवक्त्रे
द्वंद्वैरने कैरपि संवृतानाम् ॥*

(स्क० पु०)

छप्पय

जे जन जगके जटिल शोक दुख दोष डरे हैं।
पापपंकमें मग्न विघ्न भयभीत घिरे हैं॥
पाप-पुन्य, सुख-दुःख, पराजय-जय निज-परमति।
जस-अपजस अरु हानि-लाभ द्वन्द्वनितैं पीड़ित॥
इन सब दुखतैं जग दुखित, प्रानिनि की गति एक तुम।
पद्मानना दयामयी, चरन शरन तव गही हम॥

यह जीव न जाने कब से इस भव-सागर में भटक रहा है। कभी डूबता है, कभी उतराता है, समुद्र का खारा पानी मुँह में चला जाता है, दुखी होता है; कभी कोई तृण दिखायी देता है

---

* हे कमल के सदृश मुख वाली माँ ! जो प्राणी अनेकानेक दुखों के समूहों द्वारा भयभीत बने हुए हैं, जो अनेक पापों द्वारा परिवेष्टित हैं—घिरे हुए हैं, जो अनेकों दुख द्वन्द्वों द्वारा संयुक्त हैं, उन सबों की हे जननी ! तुम ही एकमात्र गति हो।

तो उसे ही पकड़कर पार जाना चाहता है, किन्तु तृण के सहारे आज तक कोई पार हुआ है। हाँ डूबते उतराते भाग्यवश उसे कोई दृढ़ नौका दिखायी दे जाती है और वह उसे दृढ़ता से पकड़ लेता है तो उसके सहारे वह पार हो जाता है। इसीलिये भागवत में राजर्षि मुचुकुन्द भगवान् की स्तुति करते हुए उनसे कह रहे हैं—"हे अच्युत ! यह जीव अनादि काल से बार-बार जन्म लेता रहा है और मरता रहा है इस जन्ममरण के चक्कर में भटकता ही रहता है। जब किसी प्रकार इस चक्कर से छूटने का समय सन्निकट आ जाता है, तब उसे सत्संग की प्राप्ति होती है। यह निश्चित बात है कि जिस क्षण प्राणी को सत्संग की प्राप्ति हो जाती है, उसी क्षण सन्तों के जो एकमात्र आश्रय कार्यकारण रूप जगत् के एकमात्र स्वामी आप परमात्मा में जीव की बुद्धि अत्यन्त दृढ़ता से लग जाती है।" जब भवसागर पार होने का समय आता है तो कोई भगवान् का प्यारा आ जाता है तो उसके सहारे इस भवसागर से पार हो जाता है।❀

जीव संसार के दुःखों को जानता है, उसे नित्य देखता है, सुनता है, स्वयं अनुभव करता है। नित्य जीवों को जन्मते देखता है, वृद्ध होते हुए देखता है, नाना प्रकार की विपत्तियों के जाल में लोगों को फँसे हुए देखता है, नित्य प्रति मरते हुओं को देखता है और यह भी जानता है, मुझे भी एक दिन मरना है, फिर अहंता ममता पीछा नहीं छोड़ती। मैं यह हूँ, मैं

❀ भवापवर्गो भ्रमतो यदा भवे-
ज्जनस्य तर्ह्यच्युत सत्समागमः।
सत्सङ्गमो यर्हि तदैव सद्गतौ
परावरेशे त्वयि जायते मतिः॥

(श्रीमद् भा० १० स्क० ५१ अ० ५४ श्लोक)

वह हूँ, मैं यह कर डालूँगा, मैं वह कर डालूँगा। यह मेरी वस्तु है, दूसरा इसे ले लेगा तो मैं उसे मार डालूँगा। जीव यही सोचते-सोचते मर जाता है, भवसागर के पार नहीं जाता। इसी चौरासी के चक्कर में, चक्कर काटता रहता है।

हम लोग फाल्गुन शुक्ला नवमी (७ मार्च) को प्रातः राजपिप्पला से चले लगभग दोपहर के पश्चात् विमलेश्वर पहुँच गये। हम पहिले सुनते रहते थे, जो नर्मदा जी की पैदल परिक्रमा करते हैं, उन्हें हाँसोट में समुद्र पार करने के लिये नौका की चिट्ठी मिल जाती है। विमलेश्वर में सेठों की ओर से नौकायें जहाज लगे रहते हैं, जो परिक्रमावासियों को तुरन्त उस पार पहुँचा देते हैं।

हम यह भी सोचते थे भड़ौंच के पास ही रेवासागर संगम होगा। विमलेश्वर से उस पार पहुँचते ही भड़ौंच नगर होगा। किन्तु हमारी ये दोनों ही बातें भ्रमपूर्ण निकलीं। रेवासागर संगम से भड़ौंच नगर लगभग ४० मील है। इसीलिये हमने भड़ौंच में दो दिन रखें कि इतने बाहनों को जहाज में ले जाने में स्यात् देर लगे।

हाँसौट में अब भी नर्मदा परिक्रमा वालों को समुद्र पार करने की चिट्ठी मिलती है या नहीं। इसका पता तो हमने नहीं लगाया किन्तु विमलेश्वर जहाज की बात तो छोड़ दीजिये एक भी नौका नहीं थी। हमें लोगों ने बताया कि यहाँ कोई स्थायी नौका नहीं रहती। १०।२० दिन में जब बहुत से यात्री इकट्ठे हो जाते हैं, तब एक आध नौका आती है, वह भी यदि वायु अनुकूल हुई तो छूटती है, समुद्र के बीच में ही यदि वायु प्रतिकूल हो गयी तो जब तक वायु अनुकूल न हो समुद्र के बीच में ही रहना पड़ता है। कभी-कभी तो दो-दो तीन-तीन दिन समुद्र के बीच में रहना पड़ जाता है, वहाँ शौच स्नान, भोजन पानी का कुछ भी प्रबन्ध नहीं।

हमने जाते ही सोचा—नौका मिली तो प्रातः उस पार भड़ौंच में जाकर रहेंगे। किन्तु वहाँ तो न नौका, न नौका की छाया। हमारे आदमियों ने भड़ौंच के जिलाधीश से कह रखा होगा। अतः हमारे पहुँचने के कुछ ही देर पश्चात् एक नादिरशाह नाम के तहसीलदार आ गये। उन्होंने कहा—"मुझे जिलाधीश ने भेजा है, आपको पार करने के लिये मैं नौकाओं का प्रबन्ध करूँ।"

हमने कहा—"हम यही चाहते हैं, कल हम किसी प्रकार पार हो जायँ।"

उन्होंने कहा—"मैं ऐसा ही प्रबन्ध करूँगा कि आप कल पार हो जायँ।"

ऐसा कहकर वे अपने कुछ आदमियों के साथ चले गये। और हम लोग निश्चिन्त होकर रासलीला देखकर सो गये।

दूसरे दिन फाल्गुन कृष्णा दशमी (८ मार्च) को हम नौकाओं की प्रतीक्षा करते रहे। कुछ समय के पश्चात् तहसीलदार और भी कुछ अधिकारियों को लेकर आये और बोले—"आपको १० नोकायें चाहिये नौकायें मिल नहीं रही हैं, आप हमें मोटर दीजिये १०।१२ मील से नौकायें लावेंगे।"

हमने तुरन्त उन्हें मोटर दी। वे लेकर चले गये। हमारे सभी बाहन अंकलेश्वर के पुल से पार होकर भड़ौंच होते हुए रेवा-सागर संगम पर पहुँचने थे। हम अपने बाहनों को तभी भेजना चाहते थे, जब नौकायें आ जायँ। किन्तु दिन भर प्रतीक्षा करने पर भी एक भी नौका नहीं आई। अतः दशमी (८ मार्च) को जो हमें भड़ौंच पहुँचना था, उस ।दन भी विमलेश्वर में ही रहे। विमलेश्वर के मन्दिर को देखा वह नाम मात्र का ही मन्दिर था। खपरैल का टूटा-फूटा मकान-सा है इसमें गुफा की भाँति नीचे

शिवजी हैं, उनकी पूजा भी कोई नियमित करता है या नहीं। गुजरात जैसे समृद्ध देश इतने प्रसिद्ध तीर्थ की यह दशा ?

नौका लगने को कोई घाट नहीं। घुटने-घुटने कीच में चलकर बड़ी ही कठिनता से नौका में चढ़ना पड़ता है। रहने का प्रबन्ध नहीं, जल का प्रबन्ध नहीं। एक तालाब है उसी में लोग नहाते हैं। कूआ है, उसका जल भी खारा है। दिन भर नौकाओं की बाट जोहते रहे, किन्तु नौकाओं की छाया भी दिखायी नहीं दी। हताश होकर इस दिन भी हमें विमलेश्वर में ही रहना पड़ा। रात्रि में रासलीला हुई। सब लोग सो गये।

छप्पय

विमलेश्वर वर विमल तीर्थ तप इन्द्र कर्यो है।
त्रिशिरा वधको दोष ब्रह्महत्या निकस्यो है॥
सूर्य, विभांडक, शंभु, ब्रह्म सब छूटे अघतैं।
विमल बने सब यहाँ शम्भु विमलेश्वर तपतैं॥
युग प्रभावतैं तीर्थवर, विमलेश्वर सम बनि गयो।
देखि दुर्दशा देवकी, दुसह दुःख मम मन भयो॥



विमलेश्वर से समुद्र पार करके भड़ौंच में

(१७)

नद्यश्च पूता विमला भवन्ति
त्वां देवि ! संप्राप्य न संशयोऽत्र ।
दुःखातुराणामभयं ददासि
शिष्टैरनेकैरभिपूजितासि ॥*

(स्क० पुराणे)

छप्पय

देवि ! तिहारे उभय परमपावन तट मनहर ।
सरिता संगम करें बनें सब स्वच्छ सुघर वर ॥
जगके जितने जीव फँसे जग–जाल दुखित अति ।
तुम माँ ! तिनिकूँ करो अभय तुम तिनिकी गति मति ॥
जननी ! सबके दुख हरो, करो सुखी बसि तट तरें ।
अज, हरि, हर, सुर, असुर, नर, सब तुम्हरी इस्तुति करें ॥

---

* हे नर्मदे माँ ! तुममें मिलकर नदियाँ विमला बन जाती हैं । हे देवि ! इस बात में तनिक भी सन्देह नहीं है कि उनके मल धुलकर वे स्वच्छ हो जाती हैं ।

हे माँ ! जो प्राणी दुःख से आतुर बने हुए हैं उनका दुःख मेट कर उन्हें अभय प्रदान करती हैं । जननि ! तू अनेकों शिष्ट जनों द्वारा पूजित हो ।

यह संसार एक अपार सागर है, इसे पार करना अत्यन्त ही कठिन है। चौरासी लाख योनियों में से किसी भी योनि द्वारा इसे पार करना सरल नहीं। एक मनुष्य शरीर ही ऐसी योनि है, जो समस्त शुभ कर्मों की प्राप्ति का मूल स्थान है। मनुष्य शरीर एक प्रकार का चौराहा है। इसके द्वारा चाहो तो स्वर्ग को भी जा सकते हो, एक पुण्य रूपी पथ सीधा स्वर्ग को गया है। चाहो तो नरक को भी जा सकते हो, एक पाप रूपी पथ सीधा नरक को गया है। चाहो तो यहाँ के यहीं बिना कहीं गये पुनः जन्म लेकर फिर किसी योनि में आ सकते हो, पुण्य पाप मिश्रित पथ पृथ्वी की ओर सीधा गया है। चाहो तो ज्ञान के द्वारा मुक्ति प्राप्त कर सकते हो 'पाप पुण्य रहित' पथ सीधा मोक्ष की ओर गया है। मनुष्य शरीर के किये हुए कर्म ही हमें संसार-सागर में भ्रमाते रहते हैं। इसीलिये इसे शुभ कर्मों की प्राप्ति का मूल कहा है। ऐसा अत्यन्त दुर्लभ मनुष्य शरीर हमें अनायास–बिना प्रयास के–सुलभ हो गया है। भाग्यवश हमें मिल गया है। मनुष्य शरीर ही इस संसार-सागर से परली पार जाने के लिये एक सुदृढ़ नौका है। इसी शरीर से पार पहुँच सकते हैं। अच्छा नौका तो है किन्तु कोई कान पकड़ने वाला कर्णधार केवट भी तो चाहिये। केवट के बिना केवल नौका क्या कर सकती है ? इस पर कहते हैं, तुम किसी सन्त की शरण–मात्र ग्रहण कर लो। उनके शरणागत हो जाओ। अशरण शरण सन्त शरण ग्रहण मात्र से ही तुम्हारे कर्णधार बन जायँगे। तुम्हारी दृढ़ नौका रूपी देह का पतवार अपने हाथों में लेकर सम्हाल लेंगे। अच्छा, नौका भी सुदृढ़ मिल गयी, पतवार सम्हालने को कर्णधार मल्लाह भी मिल गया किन्तु वायु अनुकूल न हो तो नौका तनिक भी आगे नहीं बढ़ सकती। इस पर भगवान् कहते हैं—"मेरा तुम केवल स्मरण मात्र कर लो प्रेमपूर्वक मेरा नाम भर ले लो। मैं अनुकूल वायु के

रूप में इस नौका को लक्ष्य की ओर आगे बढ़ाने लगता हूँ, मेरा स्मरण मात्र ही अनुकूल वायु है।" देखो तो सही कितनी सुविधायें हैं। सुदृढ़ नौका स्वतः प्राप्त है, शरण होते ही केवट नौका चलाने को पतवार साधने को तैयार है। स्मरणमात्र से ही अनुकूल वायु चलने लगती है इतनी सुविधाओं के रहते हुए भी जो इस मानव देह द्वारा संसार-सागर से उस पार नहीं हो जाता वह तो आत्महा है–अपने हाथों से ही अपनी आत्मा का हनन कर रहा है। आपसे आपही अधः पतन रूपी गर्त की ओर बढ़ रहा है।+

यही बात भगवान् श्रीकृष्णचन्द्रजी ने उद्धवजी से कही है। उद्धवजी ने पूछा—"भगवन् ! इस घोर संसार-सागर में हम डूब रहे हैं, उतरा रहे हैं। पार होने का कोई साधन दिखायी नहीं देता। इस संसार-सागर से कैसे पार पहुँचे ?"

इस पर भगवान् ने कहा—"देखो भैया ! इस संसार-सागर में डूबते-उतराते पुरुषों के लिये एक ही आश्रय है, यदि उन्हें कोई शान्त स्वभाव वाला ब्रह्मवेत्ता सन्त सद्गुरु मिल जाय। वह सन्त ही सुदृढ़ नौका है। डूबते उतराते पुरुष को सुदृढ़ नौका मिल जाय तब तो उसके पार जाने में किसी प्रकार का सन्देह ही नहीं रह जाता।❀

\+ नृदेहमाद्यं सुलभं सुदुर्लभम्
प्लवं सुकल्पं गुरुकर्णधारम्।
मयानुकूलेन नभस्वतेरितम्
पुमान् भवाब्धिं न तरेत् स आत्महा॥
(श्री० भा० ११ स्क० २० अ० १७ श्लोक)

❀ निमज्ज्योन्मज्जतां घोरे भवाब्धौ परमायनम्।
सन्तो ब्रह्मविदः शान्ता नौर्दृढेवाप्सु मज्जताम्॥
(श्री० भा० ११ स्क० २६ अ० ३२ श्लोक)



विमलेश्वर में समुद्र के किनारे जाड़े में ठिठुरते हुए नौका की प्रतीक्षा में बैठे हुए यात्री दायें से राजेन्द्र, मानिक, कम्बल ओढ़े ब्रह्मचारीजी, मँझले, आचार्य राजदेव, इन्दौर के व्यासजी, पृ० २५५

हम लोग रेवासागर में डूबते उतराते तो नहीं थे। किनारे बैठे-बैठे नौका की प्रतीक्षा कर रहे थे। समुद्र की बालू उड़-उड़कर हमारे पाप पूर्ण शरीरों को पावन बनाने के निमित्त रजोभिषेक कर रही थी। न नौका दीखती थी न नौका की छाया।

फाल्गुन शुक्ला एकादशी (९ मार्च) को प्रातः उठे सब चिल्लाने लगे—नौकायें आ गयीं शीघ्र चलो नहीं देरी हो जायगी। वाहन सब पुल द्वारा भेज दिये थे। सामान भी सब बाहनों में गया। स्नान सन्ध्या कुछ नहीं। भोजनों का तो आज प्रश्न ही नहीं था। हरिबासर एकादशी का व्रत जो था। जो न भी रहता था उसे आज विवश होकर व्रत करना पड़ा। और कोई चारा ही नहीं था। लगभग दो मील बालू में कीचड़ में लुड़कते-पुड़कते खिचरते हुए किनारे पर पहुँचे। जिस नौका का लोगों को झंडा दिखायी दिया। वह तो मछली मारों की नौका थी। वह देखते-देखते दूर बहुत दूर समुद्र में चली गयी। हम मृगमरीचिका के हारे मृगों की भाँति बालू फाँकते हुए समुद्र तट पर भगवन्नाम कीर्तन करने लगे। प्रातः ६-७ बजे से बैठे-बैठे आठ बजे, नौ बजे, दस बजे ग्यारह बजे। सब जाड़े, से काँप रहे थे। तहसीलदार ने तथा तहसील के अधिकारियों ने बड़ा परिश्रम किया। हम तो निराश हो गये थे। कुछ ने कहा आज भी यहीं रहना पड़ेगा। हमारा समस्त सामान बाहनों में चला गया। रहेंगे तो कैसे रहेंगे। इसी असमंजस में पड़े थे कि किसी ने सम्वाद दिया—आठ नौकायें आ रही हैं। ४ पूरब से ४ पश्चिम से और थोड़ी ही देर में सचमुच ४ नौकायें आ गयीं। चार के लिये कह दिया गया अब वे नहीं आवेंगी। मल्लाह ३० से अधिक आदमी बिठाना नहीं चाहते। उनको इतनी ही सवारी बिठाने की सरकारी अनुमति थी। हमारे बहुत से आदमी बच गये, अब उन्हें कैसे छोड़ें। घोंटू-घोंटू कीच में सने हुए लोगों को उठा-उठाकर

ऊँची-ऊँची नौकाओं में पटका। उस समय का दृश्य देखते ही बनता था। बहुत से आदमी जो नौकाओं पर नहीं चढ़ सके, निराश हुए चिल्ला रहे थे मल्लाहों ने नौकायें खोल दीं। वे कहने लगे—हमें फाँसी हो जायगी हम ३० से अधिक एक भी आदमी नहीं बिठायेंगे। हमने बहुत कहा—इसका उत्तरदात्त्वि हमारे ऊपर है तुम्हें कुछ भी नहीं होगा। अपना महत्त्व भी बताया किन्तु वे मानें ही नहीं। फिर कुछ शाम से, कुछ दाम से कुछ दण्डादि से उन्हें समझा-बुझाकर उन ४ नौकाओं में ही सबको चढ़ाया। सभी भयभीत थे नौकायें अधिक बोझ से भारी हो गयीं थी। हम यात्रियों से अधिक मल्लाह डरे हुए थे। एक भी दुर्घटना हो जाती तो वे ही पकड़े जाते। भगवान् की दया से वायु अनुकूल थी। बँधे हुए पाल खोल दिये गये वे वायु से भर गये वायु के सहारे नौकायें समुद्र के जल पर सरकने लगीं। १३-१४ मील के समुद्र को पार करना था। समुद्र की उत्ताल तरंगे उठ-उठकर हमारी नौकाओं से टकराने लगीं। कोई-कोई तरंग तो ऐसी आती कि सब यात्रियों के कपड़े भीग जाते, नौका में पानी भर जाता मल्लाह मारे भय के इधर-से-उधर घूमते। नौका के पानी को उलीचते। मन-ही-मन हमें कोसते भी होंगे।

यात्रियों की दशा मत पूछिये। किसी का जी मिचला रहा था, किसी को कै हो रही थी, कोई मारे भय के राम-राम रट रहे थे। कोई गा रहे थे। "भगवान् मेरी नैया उस पार लगा देना। अब तक तो निभाया है, आगे भी निभा लेना।" कोई दूर तक फैले अगाध अथाह समुद्र को देखकर काँप रहे थे, किसी-किसी को वहीं नौका में लघुशंका भी हो गयी थी, इसे देखकर कुछ हँस रहे थे। कुछ रो रहे थे, कुछ गा रहे थे, कुछ चिल्ला रहे थे। अपने राम तो नौका के एक कोंने में पड़े-पड़े सो रहे थे। सोच रहे थे, भगवान् जो भी करेंगे अच्छा ही करेंगे।

वायु जहाँ भी प्रतिकूल हो जाती है, नौका वाले वहीं लंगर डालकर बीच समुद्र में खड़े हो जाते हैं, जब तक अनुकूल वायु नहीं आती तब तक बीच में ही खड़े रहते हैं। प्रतिकूल वायु में चलें तो न जाने कहाँ के कहाँ पहुँच जायँ। कभी-कभी तो दो-दो तीन-तीन दिनों तक नौकायें समुद्र के बीच में खड़ी रखनी पड़ती हैं। कभी ४-५ घण्टे में ही वायु अनुकूल हो जाती है। कभी कोई भाग्यशाली ही ऐसे होते हैं कि आदि से अन्त तक वायु अनुकूल बनी रहे। वायु अनुकूल हो तो वह १३-१४ मील की समुद्र यात्रा ४-५ घण्टे की है। इस अर्थ में तो हम लोग भाग्यशाली ही सिद्ध हुए। हमारे तो आदि से अन्त तक वायु अनुकूल ही रही। लगभग ६ घण्टे में हम सब लोग सकुशल उस पार पहुँच गये। सायंकाल ६। ६॥ बजे हम उस पार रेवासागर संगम को पार करके हरी के धाम में पहुँच गये। हरी के धाम क्या पहुँचे मानों भवसागर पार करके भगवत् धाम में पहुँच गये।

हरी के धाम में स्थान अच्छा है, शिवजी का मन्दिर है। कई नये मन्दिर बने हैं, श्रीशुकदेवजी की मूर्ति स्थापित हुई है। द्वारका के श्रीशङ्कराचार्यजी के करकमलों द्वारा इन मन्दिरों की प्रतिष्ठा हुई थी। अब इसका नाम शुकदेवाश्रम हो गया है।

हरी के धाम में पहुँचकर हम देखते हैं हमारे वाहन नहीं आये। तीनों बसों में से एक भी बस नहीं आयी। न ट्रक आई न ७-८ मोटरों में से कोई मोटर ही आई। हाँ जबलपुर के एक बीड़ी वाले सेठ की मोटर अवश्य पहुँच गयी थी। सेठजी बड़े भक्त थे, वे चाहते थे किसी दिन महाराज हमारी मोटर में बैठें, किन्तु कभी ऐसा अवसर ही नहीं आया। उनकी मोटर में उनकी पत्नी, लड़की, दोहित्र, नौकर ऐसे ६-७ आदमी थे। उनका चालक भी नहीं था। यहीं आकर हमें पता चला भड़ौंच तो यहाँ से

४०-४५ मील है। और २-३ मील का कच्चा मार्ग है। मैंने सेठ-जी से कहा—"सेठजी ! हमें भड़ौंच पहुँचाओगे ?

उनके हर्ष का तो ठिकाना नहीं रहा। बोले—"हाँ, महाराज जी चलिये अभी पहुँचाता हूँ। मेरा चालक नहीं है।"

मैंने कहा—"तुम गाड़ी चलाना नहीं जानते ?"

उन्होंने कहा—"जानता हूँ महाराज।"

तब मैंने कहा—"तुम ही ले चलो, मुझे चिन्ता इस बात की थी कि भड़ौंच में हमने दोपहर को ही पहुँचने का सम्वाद भेज दिया था सहस्रों नर-नारी दोपहर से ही हमारी प्रतीक्षा कर रहे होंगे। हमने सोचा था प्रातः ६ बजे नौकायें आ जायँगी। १०-११ बजे तक पार हो जायँगे। किन्तु नौकायें १२ बजे आईं। प्रातः काल से न किसी ने खाया न नहाया पार होने की प्रतीक्षा में ही घड़ी पल गिनते रहे। मैंने दो तीन लड़के साथ लिये सेठजी ने अपने परिवार वालों को वहीं छोड़ा, जूता भी नहीं पहिने और मोटर लेकर चल दिये। २-३ मील तो कच्चा दगड़ा था। २-३ गाँव भी बीच में पड़े। मार्ग देहाती बहुत तङ्ग किसी प्रकार राम-राम करते पक्की सड़क पर पहुँचे। तब कहीं प्राण-में-प्राण आये। पक्की सड़क पर मार्ग में छोटे-बड़े लखी गाँव आदि बहुत से गाँव पड़े किसी प्रकार रात्रि के ८॥-९ बजे हम भड़ौंच पहुँच गये।

वहाँ के भक्तगण बड़ी उत्सुकता से हमारी प्रतीक्षा कर रहे थे। हमारे लगभग ३०० आदमियों के लिये उन्होंने फलाहार बनवाकर तैयार रख रखा था। एक बहुत बड़ी धर्मशाला में जिसमें बरातें ठहरती हैं, हम सबके ठहरने का, विस्तरों का समुचित प्रबन्ध कर रखा था। रासलीला के लिये मण्डप सजा रखा था। सबके लिये पटरे पत्तलें लगा रखीं थीं। हम शौच स्नान से निवृत्त हुए। रात्रि में नर्मदा स्नान को गये। नर्मदाजी में यहाँ तट तक ज्वार भाटा आ जाता है, अतः नर्मदा जल खारा था। अब

तक हम स्नानादि से निवृत्त हुए तब तक हमारे सभी साथी आ गये। सबका फलाहार हुआ। रासलीला हुई रात्रि के एक दो बजे तक भारी चहल-पहल मची रही। बहुत दूर-दूर के भक्त आ गये थे। उस पार से अंकलेश्वर के सद्‌गृहस्थ जो रङ्ग अवधूत महाराज के भक्त थे अपनी तीनों पुत्रियों पत्नी के साथ आ गये थे। और न जाने कहाँ-कहाँ के भक्त आये थे। रात्रि भर बड़ा आनन्द रहा।

अच्छा, यदि हम विमलेश्वर से भड़ौंच तक परिक्रमा मार्ग से पैदल-पैदल आवें तो मार्ग में कौन-कौन से तीर्थ पड़ेंगे इसका विवरण इस प्रकार है।

विमलेश्वर से 'हरि के धाम' तक तो चाहें पैदल आओ या वाहन से आओ सभी को नौका द्वारा ही हरि के धाम तक आना होगा।

१—हरि का धाम–जहाँ इस पार नौका से उतरते हैं, वहाँ से हरि का धाम लगभग मील भर है रेवासागर संगम यही स्थान है। रेवाजी तो यहाँ से दूर खाड़ी में ही समुद्र से मिल गयी है, किन्तु रेवासागर संगम इसी को कहते हैं। यहाँ समुद्र स्नान करते हुए प्रार्थना करते हैं—"हे समुद्रदेव ! आप सूर्य के तेज हैं, जल ही आपकी देह है भगवान् विष्णु के आप वीर्य हैं और अमृत की नाभि हैं।" मार्कण्डेयजी धर्मराज से कह रहे हैं—"हे पांडु-पुत्र ! इस प्रकार श्रुति के वाक्य को कहकर नदियों के पति समुद्र में स्नान करना चाहिये।× रेवासागर संगम तीर्थ में स्नान का

× अनश्च तेजो हि अपस्य देहो
रेतो हि विष्णोरमृतस्य नाभिः।
एतनब्रुवन् पाण्डव श्रौतवाक्यम्
ततोऽवगाहेत पतिं नदीनाम्॥

बहुत बड़ा माहात्म्य है। इस पवित्र तीर्थ में स्नान करने के निमित्त देवलोक से देवतागण सदैव आया करते हैं यहाँ समुद्र को दर्भ का स्पर्श नहीं कराते हैं। यहाँ का दान पुण्य धर्म कर्म सभी चिरस्थायी हो जाता है।[1]

२—रेवासागर संगम के समीप ही लोहरया ग्राम है उसके निकट जमदग्नि तीर्थ है, यह स्थान ग्राम से बाहर है। कहते हैं जिस समय परशुरामजी शिवजी की तपस्या में तल्लीन थे, उस समय उनके माता-पिता महर्षि जमदग्निजी तथा माता रेणुकाजी यहाँ रहे थे उन्होंने यहाँ रहकर तपस्या की थी। इसलिये इस तीर्थ का विशेष माहात्म्य है।[1]

३—जमदग्नि तीर्थ के समीप ही रामतीर्थ है जब परशुराम-जी ने सहस्रबाहु सहित समस्त क्षत्रियों का विनाश किया था, तब यहाँ भी नर्मदा किनारे आकर माता-पिता की आज्ञा से रक्त द्वारा अपने पितरों का तर्पण किया था। इसीलिये यह स्थान नर्मदा तीर का कुरुक्षेत्र माना जाता है। यहाँ के दान धर्म स्नानादि का फल कुरुक्षेत्र के ही सदृश समझा जाता है।[1]

४—रामतीर्थ से कुछ दूर चलकर लुण्ठेश्वर तीर्थ है इसकी कथा इस प्रकार है। आदि सत्ययुग में जब नर्मदा मैया समुद्र से मिलने आ रहीं थीं तभी दूर से समुद्र ने नर्मदा मैया को आते हुए देखा। ये भी अत्यन्त प्रेम में निमग्न होकर–हर्ष विह्वलित होकर बालुका में लुण्ठन करते हुए–लोटते हुए–नर्मदाजी के समीप पहुँचे। तभी वहाँ एक शिवलिंग प्रकटित हो गया। वहाँ नन्दी खड़े थे उनका किसी कारण से पैर शिवलिंग पर पड़ गया। इससे शिवलिंग गोमुख के आकार के हो गये। तुरन्त नर्मदाजी उस शिवलिंग में प्रवेश कर गयीं। उस शिवलिंग के भीतर के जल का

१. (रे० खं० १७४ अ०)

आचमन करते हैं, इसके पान से सोमपान करने का फल बताया है। यहाँ कार्तिक मास का तथा सभी पूर्णिमाओं का विशेष फल बताया गया है। यहाँ के स्नान दान पुण्य का अक्षय फल बताया है।*

५—लुण्ठेश्वर से समुद्र के किनारे-किनारे ३ मील आगे भूतनाथ नामक स्थान है। शिवलिंग के तीन मन्दिर हैं। किन्तु यहाँ मीठा जल नहीं है। इससे यात्री ठहरते नहीं।

६—भूतनाथ से लगभग तीन मील आगे देज ग्राम के समीप दधीचि ऋषि का आश्रम है, यहाँ दूधनाथ महादेवजी का स्थान है। समीप ही भगवती देवी का मन्दिर है।

७—दूधनाथजी से दो मील आगे अमलेठा नाम का ग्राम है, इसके बीच में ही नीलकंठेश्वर, सोमनाथ और अमियानाथ के मन्दिर हैं, इनके दर्शन करते हुए नर्मदा किनारे-किनारे आगे बढ़ते जायँ।

८—अमलेठा ग्राम से एक मील आगे चन्द्रमौलेश्वर शिवजी का मन्दिर है। कहते हैं कोई चन्द्रसेन नामक राजा हुए थे, उन्हीं के द्वारा स्थापित यह शिवलिंग है।

९—चन्द्रमौलेश्वर से चार मील आगे मुवा ग्राम है यहाँ सोमेश्वर शिवजी का मन्दिर है। इनके दर्शन करते हुए नर्मदा के उत्तर किनारे आगे बढ़ते जायँ।

१०—सोमेश्वर से तीन मील आगे कोल्याद नामक ग्राम है। इसके समीप ही कपिलेश्वर तीर्थ है इसकी कथा इस प्रकार है—एक समय महर्षि कपिल रेवासागर संगम की यात्रा के निमित्त यहाँ आये। शान्त एकान्त मनोरम स्थान को देखकर रम गये

---

* (रे० खं० १७४ अ०)

और तपस्या करने लगे। तपस्या द्वारा उन्हें सिद्धि प्राप्त हुई। यहाँ कपिला गौ के दान का विशेष माहात्य है।

११—कपिलेश्वर के सन्निकट ही एरण्डी नदी का संगम है इसकी कथा इस प्रकार है। प्राचीन काल में एरण्ड नामक एक मुनि थे। उनके कोई सन्तान नहीं थी। अतः सन्तान के निमित्त उन्होंने भगवती जगदम्बा की आराधना की। इससे प्रसन्न होकर भगवती स्वयं ही इनके घर में कन्या रूप से प्रकट हुई। उनका नाम रखा गया एरण्डी। कन्या अत्यन्त ही सुन्दरी सुशीला तथा गुणवती थी। जब वह विवाह के योग्य हुई तो ऋषि ने उसका किसी सुयोग्य वर के साथ विवाह करना चाहा। किन्तु एरंडी ने स्पष्ट कह दिया—"मैं विवाह नहीं करूँगी।" वह अपना घर छोड़कर यहाँ समुद्र के किनारे आकर तपस्या करने लगी। समुद्र ने उसके साथ संगम करना चाहा, तब वह नदी रूप होकर समुद्र मिल गयी। नर्मदाजी पहिले ही समुद्र से मिल चुकी थीं। दोनों का संगम यहीं हुआ। यहाँ पर जो भी एरंडी तथा नर्मदा की पूजा करते हैं उनके मनोरथ सिद्ध होते हैं।×

१२—एरंडी संगम से एक मील आगे बैंगणी ग्राम है उसमें बैजनाथजी का मन्दिर है उससे दो मील आगे १३—कपालेश्वरतीर्थ है। शिवजी जब कपाल को लेकर सब तीर्थों में घूमे तो यहाँ आकर उन्होंने अपना कपाल रख दिया था। यह परम पुण्यप्रद तीर्थ है। यहाँ का शिवलिंग उसी कपाल में से प्रकट हो गया। कपालेश्वर के स्मरणमात्र से अन्न कष्ट नहीं होता।❀

१४—कपालेश्वर के समीप ही मार्कण्डेयश्वर तीर्थ है। यह तीर्थ कुजा ग्राम में है। श्रीनारदजी से नर्मदाजी की तथा शङ्करजी की प्रशंसा सुनकर महर्षि मार्कण्डेय यहाँ पधारे और उन्होंने

× (रे० खं १७३ अ०)

यहाँ पर अपने नाम की लिंग स्थापित की। इसका भी अनन्त माहात्म्य है।*

१५—इसी कुजा ग्राम में तीन शिवलिंग और हैं उनके नाम १–आषाढीश्वर २–शृङ्गीश्वर और ३–बल्कलेश्वर हैं। स्यात् आषाढ़ के मास में शिवजी यहाँ पधारे होंगे, जहाँ पर उन्होंने अपना दंड रखा वहाँ आषाढ़ेश्वर लिंग उत्पन्न हो गया। शिवजी शृंगी बजाते हैं, जहाँ पर उन्होंने अपनी शृङ्गी रखी वहाँ शृङ्गेश्वर शिवलिंग प्रकट हुआ। शिवजी की एक लिंग और प्रकट हुई। शिवजी वहाँ अवधूत दिगम्बर वेष में फिर रहे थे। उसी समय एक वल्कल वस्त्रों का व्यापारी वहाँ आ गया। शिवजी ने कहा—इस "शिवलिङ्ग को तू वल्कल से ढक दे।", उसके पास जितने भी वस्त्र थे सभी उढ़ा दिये किन्तु शिवलिंग इतना बढ़ गया कि वह ढका ही नहीं गया। उसकी भक्ति से शिवजी इतने प्रसन्न हुए कि उसे मालामाल कर दिया। वे ही शिवजी बल्कलेश्वर के नाम से प्रसिद्ध हुए।*

१६—कुजाग्राम के समीप ही कासवा नाम का ग्राम है, उसमें कंथेश्वर तीर्थ है। इसकी कथा इस प्रकार है—नर्मदा तीर का कण-कण कैलाश पति कपर्दी कपाली की क्रीड़ा स्थली है। किसी समय कापलिक वेष में शिवजी अपने भूत-पिशाच, डाकिनी-सांकिनी, योगिनियों के साथ क्रीड़ा करते हुए इस स्थान पर आ पहुँचे। यहाँ उहोंने अपनी कंथा रख दी थी। वहीं शिवलिंग प्रकट हो गया। वे ही कन्थेश्वर के नाम से विख्यात हो गये।*

१७—कंथेश्वर से एक मील आगे मेगाव की खाड़ी में गणिता तीर्थ है। यह भगवती शक्ति की सिद्ध पीठ है। यहाँ पर शिवजी और उनकी शक्ति भगवती सृष्टि के गणित करने के कर्म में

---

* (रे० खं० १७३ अ०)

तल्लीन हो गये। दोनों अपनी-अपनी महिमा का गान करने लगे। अन्त में शिवजी हार गये उन्होंने शक्ति की महिमा की श्रेष्ठता को स्वीकार कर लिया। इसीलिये यह भगवती पराशक्ति की स्थली है। इसकी महिमा सुनकर संख्या करने वाले सांख्य शास्त्री यहाँ आये और उनका भ्रम दूर हुआ। यह बड़ी महिमा वाली शक्ति स्थली है।*

१८—गणितातीर्थ के सन्निकट ही मार्कण्डेश्वर तीर्थ है। दीर्घ-जीवी मार्कण्डेय मुनि की तपस्थली नर्मदाजी ही हैं। स्थान-स्थान पर उनके स्थापित लिंग है। जब रेवासंगम की यात्रा को मार्कण्डेय मुनि वहाँ आये थे, तब बहुत से ऋषियों के साथ उन्होंने यहाँ तपस्या की थी। तब स्वयं साक्षात् शङ्करजी ने प्रकट होकर इन्हें वरदान दिया था। इस तीर्थ में भक्तों की समस्त कामनायें पूर्ण होती हैं।*

१९—मार्कण्डेश्वर से कुछ ही दूर पर मुनाड ग्राम में मुन्या-लय तीर्थ है। प्राचीन काल में समस्त ऋषि मुनियों ने यहाँ एक-त्रित होकर सबने अपना इसे आलय-स्थान-बनाया और सबने मिलकर तपस्या की तभी से यह मुन्यालय तीर्थ प्रसिद्ध हुआ। जो यहाँ शुद्ध चित्त से सदाचारपूर्वक सत्य का आश्रय लेकर तपस्या करता है वह सत्यलोक–मुनियों के लोक–को जाता है।*

२०—मुनाड ग्राम के समीप ही अप्सरेश्वर तीर्थ है। किसी समय सरिद् प्रवरा नर्मदाजी के दर्शनों के लिये स्वर्ग से अनेकों अप्सरायें आयीं। उन सबने बड़ी भक्ति भाव से इस तीर्थ की स्थापना की। यहाँ भक्तिभाव से दान धर्म तपस्या करने से गन्धर्व लोक की प्राप्ति होती है।*

२१—अप्सरेश्वर तीर्थ के समीप ही डिंडीश्वर तीर्थ है।

---

* (रे० खण्ड १७३ अ०)

इसकी कथा सुनिये—एक समय औघड़दानी आशुतोष भगवान् शंकर अपनी डिंडी डमरू बजाते हुए भिक्षुक के रूप में इस ग्राम में आये। यह देखने के लिये कि इस ग्राम के लोगों में प्राणियों के प्रति दया के भाव हैं या नहीं। घर-घर भिक्षा माँगने लगे, किन्तु किसी ने भी इनको भिक्षा नहीं दी। जिस घर में जाते वहाँ भिक्षा न पाते तो वह घर जलने लगता। इस प्रकार ग्राम के बहुत घर जल गये। अब लोगों ने जाना। यह साधु कोप का प्रतिफल है। अतः सब मिलकर साधु की शरण गये और प्रार्थना की। आशुतोष भगवान् उन पर प्रसन्न हुए और उन्हें अपना डमरू दिया कि इसे बजाते जाओ। जिस घर के सम्मुख बजाते वह जैसा का तैसा ही बन जाता। इस प्रकार पूरा-का-पूरा गाँव पूर्ववत बन गया। तभी से यह तीर्थ प्रसिद्ध हुआ। यह डिंडीश्वर स्वयम्भू लिंग है। शिवजी भक्तों की मनोकामना पूर्ण करते हैं।❋

२२—डिंडीश्वर के समीप ही समनी ग्राम में सुन्डीश्वर तीर्थ है। इसकी कथा इस प्रकार है—लीलाधारी शिवजी एक बार गलित कुष्टी विप्र का वेष बनाकर इस स्थान में आये। उस समय एक ब्राह्मण के यहाँ श्राद्ध हो रहा था। बहुत से ब्राह्मण बैठे हुए भोजन कर रहे थे। कोढ़ी रूप में शिवजी ने भी भोजन की याचना की। इस पर यजमान ने तथा श्राद्धीय विप्रों ने उन्हें भोजन नहीं दिया उलटे उनका तिरस्कार किया। निराश होकर वे वन में चले गये। तब सब ब्राह्मणों ने अपनी पत्तलों पर देखा परसे हुए पदार्थों में कीड़े-ही-कीड़े भरे पड़े हैं।

अब तो ब्राह्मण समझ गये उन्होंने यजमान से कहा—"हम लोगों ने जो अतिथि का तिरस्कार किया है, यह उसी का फल है। अतिथि रूप में वे भगवान् ही थे। चलो उन्हें खोजें।" यह

❋ (रे० खण्ड १७३ अ०)

कहकर सब-के-सब वन में उन्हें खोजने चले। बड़ी कठिनता से वे मिले। सब उन्हें सत्कारपूर्वक ग्राम में ले आये। सबने उन्हें प्रेमपूर्वक भोजन कराया और उनकी स्तुति की। तब भगवान् ने कहा—"देखो! जो भूखा अभ्यागत अपने यहाँ आ जाय उसे भोजन देने में बिलम्ब नहीं करना चाहिये। यही सारातिसार उपदेश है।" ऐसा कहकर भोजन करके वे उसी कुष्टी रूप में वहीं निवास करने लगे।

एक बार ग्राम में बनभोज का आयोजन हुआ। सब लोग घर से अच्छे-अच्छे पदार्थ बनाकर बन में खाने के लिये ले गये। शुन्डी रूप में शिवजी वहीं बन में विराजमान थे, तथापि इन लोगों ने उन्हें भोजन के लिये आमन्त्रित नहीं किया। जब ये अपने ही निमित्त बनाये हुए पदार्थों को अपने ही आप खाने को बैठे तो वे सब पदार्थ कृमियुक्त दिखाई दिये। तब सबको बोध हुआ। अब उन शुन्डी रूप शिव के समीप गये। वहाँ जाकर देखते हैं कि शुन्डी तो वहाँ हैं नहीं। एक सुन्दर शिवलिंग वहाँ प्रकाशित हो रही है। सबने मिलकर उसका पूजन किया। तभी से यह तीर्थ शुन्डीश्वर के नाम से प्रसिद्ध हुआ। कार्तिक की पूर्णिमा यदि कृत्तिका नक्षत्र युक्त हो तो उसका यहाँ काशी के सदृश माहात्म्य है। वैसे प्रत्येक अष्टमी और चतुर्दशी का यहाँ स्नान दान का विशेष माहात्म्य है। ×

२३—शुन्डीश्वर से आगे ६ मील पर अमलेश्वर नामक ग्राम है। उसमें अमलेश्वर तीर्थ है। इसकी भी कथा सुनिये—एक बार नाना रूपधारी कौतुकी कैलाशपति शंकर बारह वर्ष के बालक का वेष बनाकर बहुत से बालकों के साथ आँवले के पेड़ के समीप क्रीड़ा करने लगे। आप स्वयं आँवले के पेड़ पर चढ़ गये और आँवला तोड़-तोड़कर चारों ओर फेंकने लगे। बालकों

से कहने लगे—"आँवला बीनो।" बच्चे आँवलों के फलों को बीनने लगे। लड़के जब चारों ओर से आँवले बीनकर सब वृक्ष के नीचे एकत्रित हुए तो वहाँ बेल तोड़ने वाले बालक को न पाकर वृक्ष के नीचे एक शिवलिंग को देखा, तभी से ये अमलेश्वर के नाम से प्रसिद्ध हो गये। यह परम पावन तीर्थ है।×

२४—अमलेश्वर से पाँच मील आगे भारभूतेश्वर तीर्थ है। इसकी भी कथा सुनिये—प्राचीन काल में विद्वान् पंडितों के यहाँ गुरुकुल में विद्यार्थी पढ़ने को आया करते थे। कुछ गुरुकुलों में विद्यार्थी बनी बनाई भिक्षा माँगकर गुरु के अर्पण कर देते थे। कुछ गुरुकुलों के छात्र सूखी भिक्षा माँग लाते और पारी-पारी से भोजन बनाकर सबको पवाते थे। विद्वान् लोग छात्रों को पुत्रवत् पालते थे और प्रेमपूर्वक पढ़ाया करते थे। ऐसे ही एक विद्वान् पंडित विष्णु शर्मा नामक ब्राह्मण यहाँ रहते थे। यह रैवत मन्वन्तर के सत्ययुग के समय की बात है। विष्णु शर्मा के समीप बहुत से विद्यार्थी पढ़ते थे। वे स्वयं शिलोंच्छ वृत्ति से निर्वाह करते। उनके आश्रम के समीप जो भी अतिथि अभ्यागत आ जाता, उसका वे भगवत् बुद्धि से सत्कार करते। अन्न दान से चारों ओर कीर्ति यश फैल जाता है। विष्णु शर्मा की अन्नदान के कारण चारों ओर कीर्ति फैल गई।

एक बार हमारे कौतुकी शंकर उनके यश की ख्याति के निमित्त स्वयं एक बटु विद्यार्थी का वेष बनाकर विष्णु शर्माजी के समीप विद्या पढ़ने की विनय करने लगे। विष्णु शर्मा ने कहा—"देखो, भैया! विद्या गुरु की सेवा से प्राप्त होती है, तुम्हें सेवा करनी होगी।"

शंकरजी ने कहा—"आप जो भी आज्ञा करेंगे मैं वही सेवा करूँगा।"

× इस चिन्ह की सभी कथायें रेवा खण्ड के १७२ अध्याय में है।

इस पर उन्होंने वटु वेषधारी विश्वेश्वर को अपने आश्रम में रख लिया। एक दिन इन शंकर वटु की भोजन बनाने की पारी आई। गुरु सहित और सब विद्यार्थी तो नर्मदा स्नान को चले गये। शंकर वटु भोजन बनाने को रह गये। उन्होंने अपने योग बल से कामधेनु को बुलाया और पल भर में ही नाना प्रकार के व्यञ्जन बनवाकर थालों में परोसकर आसनों के सम्मुख रखकर, ये भी नर्मदा किनारे पहुँच गये।

सब विद्यार्थियों ने कहा—"क्यों भाई! तुम यहाँ कैसे आ गये। भोजन कौन बनावेगा, तुम बड़े कामचोर हो?"

शंकर वटु ने कहा—"तुम्हें आम खाने या पेड़ गिनने?" समय पर तुम्हें भोजन बना बनाया मिलेगा।"

विद्यार्थियों ने कहा—"तुम तो यहाँ चले आये हो। भोजन कौन बनावेगा? समय पर कैसे भोजन मिल जायगा?"

शंकर वटु ने कहा—"बहुत बक-बक करने की आवश्यकता नहीं। यदि जाते ही तुम्हें आसन पर बैठते ही तुरन्त सुन्दर परसा हुआ भोजन न मिले तो तुम मुझे जो चाहो सो दण्ड देना। यदि जाते ही तुरन्त भोजन मिल जायगा तो मैं तुम सबको नर्मदाजी में फेंक दूँगा।" सबने यह बात स्वीकार की। गुरु सहित सब विद्यार्थी आश्रम पर पहुँचे तो क्या देखते हैं। सुन्दर आसन लगे हुए हैं। उनके सामने थालों में भाँति-भाँति के पक्वान्न परसे हुए हैं। सबने प्रेमपूर्वक प्रसाद पाया।

दूसरे दिन सब विद्यार्थियों के साथ शंकर वटु नर्मदा स्नान को गये। स्नान करके बोले—"देखो भाइयो! कल मैंने जो प्रतिज्ञा की थी वह पूरी हो गई। अब मैं तुम सबको नर्मदाजी में फेंकता हूँ।" यह कहकर सबको गठरी (भार) में बाँधकर नर्मदाजी में फेंक दिया और आकर गुरुजी से सब समाचार बता दिया।

गुरुजी ने कहा—"अरे भैया ! यह तो तुमने बहुत बुरा काम किया। तुम्हें ऐसा नहीं करना चाहिये था। सभी को एक गठरी में बाँधकर नर्मदाजी में फेंक दिया। वे सब मर गये होंगे। तुम्हें पाप लगेगा। तब शंकरजी ने अपने योग बल से गठरी में बँधे सभी विद्यार्थियों को गुरु के समीप उपस्थित कर दिया। वे सब-के-सब मृतक थे।"

गुरुजी ने कहा—"जैसा तुमने इन्हें नर्मदाजी से माँग लिया है, वैसे ही इन्हें जीवित भी कर दो, नहीं यहाँ के सब लोग तुम्हें भी मार डालेंगे।"

तब शंकर वटु हँसने लगे और वहीं अन्तर्धान हो गये। जहाँ पर सब मृतक लड़कों की बँधी (भारभूत) गठरी रखी थी, वहाँ एक दिव्य शंकर लिंग प्रकट हो गई और बँधे हुए मृतक छात्र जीवित हो गये। तभी से यह लिङ्ग भारभूतेश्वर के नाम से प्रसिद्ध हो गई। यहाँ के स्नान दान तप से अनेकों हत्यारे हत्या के दोष से मुक्त हो जाते हैं, इस सम्बन्ध की भी एक कथा है। वह इस प्रकार है—

प्राचीन काल में एक व्यापारी नौका के द्वारा जा रहा था। उसी नौका में एक सोमशर्मा नामक ब्राह्मण बैठा था। उसके पास द्रव्य था। उस द्रव्य के लोभ के कारण व्यापारी वैश्य ने उसकी हत्या करके उसका सब द्रव्य ले लिया और उसे मारकर समुद्र में फेंक दिया। ब्रह्महत्या, मित्र द्रोह आदि घोर पापों के कारण मरकर उसे नरकों में अनेक प्रकार की यातनायें भोगनी पड़ीं। फिर पृथ्वी पर कूकर शूकर आदि योनियों में होकर उसे बैल की योनि प्राप्त हुई।

एक राजा के यहाँ बोझ से भरी गाड़ी को खींचने लगा। जब कार्तिकी पूर्णिमा का पर्व आया, तब राजा भारभूतेश्वर तीर्थ में अपने परिवार सहित स्नान करने गाड़ियों में आया। एक

गाड़ी में जुतकर यह बैल भी आया। सबने नर्मदाजी में स्नान किया। इस बैल को भी स्नान कराया। स्नान करते ही इसका शरीर नर्मदाजी में छूट गया और देवदूत इसे वैकुण्ठ लोक ले गये। यह ब्रह्महत्या दोष से निर्मुक्त बन गया। इसी प्रकार इस तीर्थ के माहात्म्य से अनेक प्राणी हत्यादि के दोष से निर्मुक्त हो गये। इस तीर्थ में कार्तिकी पूर्णिमा तथा शिवरात्रि का विशेष माहात्म्य है। वैसे तो प्रत्येक अष्टमी और चतुर्दशी का यहाँ पर्व है। वैशाख मास में अधिक है।[१]

२५—भारभूतेश्वर से कुछ ही दूर पर वरुआ नामक ग्राम में ऋणमोचन तीर्थ है। सभी मनुष्यों पर देवऋण, पितृऋण तथा ऋषिऋण तीन ऋण रहते हैं। यज्ञ द्वारा देवऋण, सन्तान द्वारा पितृऋण और अध्ययन अध्यापन द्वारा ऋषि ऋण से छुटकारा होता है। प्राचीन काल में दुश्चवन नाम के एक राजा थे। उनके कोई सन्तान नहीं थी। अतः पुत्र कामना से उन्होंने यहाँ नर्मदा किनारे आकर तपस्या की। सात महीने पश्चात् शिवजी प्रसन्न हुए और राजा को प्रत्यक्ष दर्शन देकर पुत्र होने का वरदान दिया। तभी राजा तीनों ऋणों से निर्मुक्त हो गया। ऋणों से मुक्त होने की इच्छा से इस तीर्थ में जप, तप, दान धर्म करना चाहिये।[२]

२६—ऋणमोचन तीर्थ के सन्निकट ही टिंबी नामक ग्राम में सुवर्ण विन्देश्वर तीर्थ है। प्राचीन काल में एक धनिक वैश्य ने करोड़ों सुवर्ण के विन्दु यहाँ ब्राह्मणों को दान किये थे इससे उसे वैकुंठ लोक की प्राप्ति हुई। इस तीर्थ में सुवर्ण दान का विशेष माहात्म्य है।[२]

२७—सुवर्ण विन्देश्वर से आधा मील के लगभग एक दशकन्या तीर्थ है। इसकी भी कथा सुनिये—प्राचीन काल में दश

१. (रे० खं० १७१ अ०) २. (रे० खं० १७० अ०)

ब्राह्मण विरक्त वेष से यहाँ नर्मदा किनारे तप कर रहे थे। वे सांख्य शास्त्र के अनुयायी थे। शिवजी भ्रमण करते हुए यहाँ पहुँचे। उनके मनोगत भावों को जानने के लिये उन्होंने अत्यन्त ही सुन्दरी दश कन्यायें बनायीं और स्वयं वृद्ध ब्राह्मण का वेष बनाकर इन तपस्वी ब्राह्मणों के समीप पहुँचे और उनसे कहने लगे—"हे ब्राह्मणो ! मैं बूढ़ा हो चुका हूँ। मेरे दो पत्नियाँ हैं और ये दश कन्यायें हैं। पुत्र कोई नहीं है। इस शरीर का क्या भरोसा मैं इन कन्याओं का विवाह कर देना चाहता हूँ, आप तपस्वी हैं, वैराग्यवान् हैं, आप इन कन्याओं को स्वीकार कर लें तो बड़ी कृपा हो।"

वे प्रकृति पुरुष का विवेचन करते हुए तपस्या कर रहे थे। किन्तु कन्याओं के रूप लावण्य तथा सौन्दर्य को देखकर मुग्ध हो गये और उन्होंने विवाह कर लिया। इस प्रकार इस तीर्थ को स्वयं साक्षात् शंकरजी ने ही निर्माण किया है। जिनका विवाह न होता हो वे यहाँ आकर तपस्या करें उनका विवाह अवश्य हो जायगा।[1]

२८—इस तीर्थ से लगभग एक मील पर भृगुक्षेत्र (भड़ौंच) है। इस क्षेत्र में बहुत से तीर्थ हैं किन्तु ४६ बहुत प्रसिद्ध तीर्थ हैं, उनका अत्यन्त संक्षेप में यहाँ वर्णन किया जाता है।

१—ढोंढेश्वर तीर्थ अथवा क्षेत्रपाल तीर्थ—ढुंढा एक राक्षसी है, जो बच्चों को खाती है। एक दिन ढुंढा एक अग्निहोत्री ब्राह्मण के बालक को खाने के लिये जा रही थी। उसी समय संयोगवश वहाँ देवदूत आ गये। उन्होंने कहा—देखो, आज से इस ग्राम में कभी मत आना। यहाँ ढुंढेश्वर शिवजी हैं। तब ढुंढा ने मान लिया। यहाँ शिवजी के दर्शन करने से ढुंढा राक्षसी का तथा भूत, प्रेत, पिशाचों का भय नहीं होता।[2]

१. (रे० खं० १७० अ०) २. (रे० खं० १६४ अ०)

२—कुररी तीर्थ—प्राचीन समय में एक कुररी का जोड़ा यहाँ नर्मदाजी में गिरकर मर गया। उसे शिवलोक की प्राप्ति हुई।❈

३—ब्रह्मेश्वर तीर्थ—जब ब्रह्माजी को अपूज्य होने का शाप मिला, तब उन्होंने यहाँ तप करके सिद्धि पाई।

४—कोटि तीर्थ—यहाँ नर-नारायण ऋषियों ने तप किया। करोड़ों ऋषियों ने यहाँ कोटेश्वर की स्थापना की।

५—शिखि तीर्थ—महाराज वसु ने सौ वर्ष तक गज की सूँड़ की धारा के समान निरन्तर घृत से यज्ञ किया। इससे अग्नि को मन्दाग्नि हो गयी। यहाँ तप करने से रोग दूर हुआ। यहाँ तप करने से मन्दाग्नि नहीं होती।❈

६—देवतीर्थ—जब भृगुपुत्री लक्ष्मी का नारायण से विवाह हुआ तो उसी उपलक्ष में सब देवों ने देवतीर्थ स्थापित किया।

७—मत्स्येश्वर तीर्थ—मत्स्यावतार में शङ्खासुर को मारने के निमित्त मत्स्य भगवान् ने यहाँ तप किया था।

८—मातृतीर्थ—लक्ष्मीजी के विवाह के उपलक्ष में सभी देवियों ने इस मातृ तीर्थ की स्थापना की।

९—नर्मदेश्वर तीर्थ—भृगुजी ने तपस्या करके नर्मदाजी को प्रसन्न करके इन नर्मदेश्वर की स्थापना की।

१०—बालखिल्य तीर्थ—यहाँ बालखिल्य ऋषियों ने तपस्या करके सिद्धि प्राप्त करके इस तीर्थ की स्थापना की।

११—सावित्री तीर्थ—यहाँ ब्रह्माजी ने सूर्य-पुत्री सावित्री से विवाह करके-तपस्या द्वारा सृष्टि करने की शक्ति पाई।

१२—गोना गोनी तीर्थ—यहाँ शिवजी ने गौरी के साथ विवाह किया। यहाँ विवाह करने से आयुष्मान् सन्तति होगी।

❈ (रे० खण्ड १६४ अ०)

१३—अश्विनी तीर्थ—अश्विनीकुमार वैद्य थे उन्हें देव भाग नहीं मिलता था। यहाँ तप करने से वे देव भाग के भागी बने।

१४—दारुकेश्वर तीर्थ—श्रीकृष्ण के सारथी दारुक ने यहाँ तपस्या करके सिद्धि पाई। अन्य सिद्धों ने भी सिद्धि पाई।

१५—सरस्वती तीर्थ—बृहस्पति सहित सभी देवों ने शंकरजी की आराधना करके यहाँ विद्या प्राप्त की थी।

१६—शूलेश्वर और शूलेश्वरी देवी— मांडव्य ऋषि की शूली पर जो देवी थीं ये वे ही हैं। १०८ माता में से हैं। ब्रह्मभोज का माहात्म्य है।

१७—भृग्वेश्वर तीर्थ—भृगु ऋषि ने दिव्य सहस्र वर्षों तक गायत्री तप द्वारा सिद्धि प्राप्त की। वेदोक्त कर्मों का बड़ा माहात्म्य है।

१८—अट्टहासेश्वर—एक ऋषि तप कर रहे थे। उसके गर्व को देखकर शिवजी ने अट्टहास किया। देवों ने इसे स्थापित किया।

१९—कण्ठेश्वर—ब्रह्म पुत्र कण्ठ ने सब शास्त्र कण्ठस्थ करके दिव्य सौ वर्ष तक तप किया। सिद्धि प्राप्त की। यहाँ सर्व कर्म सिद्ध होते हैं।

२०—भास्कर तीर्थ—महर्षि भृगु ने सूर्य की आराधना करके सिद्धि प्राप्त की। यहाँ प्रत्येक रविवार तथा शुक्ल सप्तमी का माहात्म्य है।

२१—प्रभा तीर्थ—यहाँ सूर्य की प्रभा ने तपस्या की। यहाँ स्नान दान धर्म से चक्षु रोग नष्ट होते हैं।

२२—हंस तीर्थ—यहाँ हंस ने तपस्या करके ब्रह्माजी का वाहन बनने का वर प्राप्त किया।

२३—देवतीर्थ—समस्त देवताओं ने मिलकर इसे स्थापित

किया। यह वैष्णवों का परम तीर्थ है। ग्रहण का विशेष माहात्म्य है।

२४—चौल तीर्थ—लक्ष्मीनारायण के विवाह के अनन्तर जलक्रीड़ा करते हुए चुल्ली फेंकी। देवों ने इसे तीर्थ बनाया।

२५—मूल श्रीपति तीर्थ—भृगु-पुत्री लक्ष्मी को विश्वरूप दिखाकर विष्णु भगवान् ने उसके साथ विवाह किया। पवित्र तीर्थ है।

२६—नारायण तीर्थ—नर-नारायण की तपस्या भङ्ग करने को इन्द्र ने प्रयास किया। सफल न हुए तब नारायण ने यहाँ तप किया।

२७—विश्वरूप तीर्थ—भगवान् नारायण ने भृगुजी को विश्वरूप दिखाकर ज्ञान दिया। यहाँ गीता पाठ का माहात्म्य है।

२८—त्रिविक्रेश्वर तीर्थ—राजा बलि का सर्वस्व हरण करके उसे पाताल भेजा तो फिर उसने यहाँ आकर तप किया।

२९—कपिलेश्वर तीर्थ—कपिलजी ने सब तीर्थों से इस भृगु क्षेत्र की नारदजी से प्रशंसा सुनकर यहाँ तपस्या की है।

३०—सिद्धेश्वर तीर्थ—यहाँ सिद्धेश्वरी देवी है। यह स्वम्भू लिंग है। सिद्धेश्वरी देवी इस क्षेत्र का संरक्षण करती हैं।

३१—द्वादशादित्य तीर्थ—बारह आदियों ने सूर्य पद प्राप्ति हेतु यहाँ तप करके सिद्धि प्राप्त कर ली।

३२—चन्द्रप्रभास तीर्थ—चन्द्रमा ने समस्त सिद्धों के सहित परम प्रसन्नता के साथ स्थापित किया। ग्रहण स्नान का माहात्म्य है।

३३—उत्तीर्ण बराह तीर्थ—पाँचवें कल्प में यहाँ वराह भगवान ने पृथ्वी का उद्धार किया था। ज्येष्ठ शुक्ल ११ का विशेष माहात्म्य है।

३४—सोमेश्वर तीर्थ—सोम का क्षय रोग प्रयाग संगम पर

नष्ट हुआ। फिर सोम ने यहाँ ७ वर्ष तप करके स्वलोक प्राप्त किया।

३५—शालग्राम तीर्थ—नारदजी द्वारा शालग्राम स्थापित है। एकादशी का विशेष माहात्म्य है। वैष्णवों का यह परम तीर्थ है।

३६—ज्वालेश्वर तीर्थ—पृथ्वी पर राक्षसों के उत्पात बढ़ने पर ज्वाला उत्पन्न हुई। राक्षसों का वध करके पृथ्वी में समा गई स्वयम्भू लिङ्ग रह गये।

३७—कनकल तीर्थ—गरुड़जी ने देवी की उपासना करके यहाँ हरि वाहन और पक्षीन्द्र का वर पाया। यह सिद्धदा देवी हैं। सब देवी यहाँ रहती हैं।

३८—एरंडी तीर्थ—एरंड मुनि की पुत्री एरंडी ने तप करके यहाँ सिद्धि प्राप्त की। अब तक वह क्षेत्रपाल के रूप में रहकर क्षेत्र की रक्षा करती हैं।

३९—धूत पाप तीर्थ—नन्दीश्वर ने धूतेश्वरी देवी की स्थापना की। यहाँ शिवजी ने नन्दी से भृगुजी की रक्षा की। यहाँ ब्रह्म-हत्या नष्ट होती है।

४०—केदार तीर्थ—भृगुजी ने ब्राह्मणों की रक्षार्थ इस स्वम्भू लिङ्ग की स्थापना की। यहाँ शिव पूजन का केदारनाथ के समान फल है।

४१—सौभाग्य सुन्दरी देवी—श्रीलक्ष्मीजी १८ दुर्गा, १६ क्षेत्रपाल, ११ रुद्र, १२ आदित्व, १२ गणेश, २१ वसु, ८ नागों सहित यहाँ रहती हैं। यहीं वृषखात कुण्ड है नन्दी के खुर से उत्पन्न हुआ है।

४२—दशाश्वमेध तीर्थ—राजा प्रियव्रत ने यहाँ दश अश्वमेध यज्ञ किये थे। यहाँ सरस्वतीजी रहती हैं। संन्यास लेने का माहात्म्य है।

४३—गौतमेश्वर तीर्थ—गौतम ऋषि ने पुत्रेच्छा से यहाँ

सहस्रों वर्ष तप किया था। कश्यप ऋषि द्वारा प्रशंसित पुण्य तीर्थ है।

४४--गङ्गावाह एवं शङ्खोद्धार तीर्थ—गङ्गाजी यहाँ तप करके निष्पाप हुयीं। यहाँ स्नान करने से सर्व तीर्थमयी गङ्गा का फल मिलता है।

४५—महारुद्र स्थान—सेंधवा देवी एवं शाक्त रूप--यहाँ योगिनी क्रीड़ा करती है। शाक्तकूप में नर्मदा जल है। पुण्य तीर्थ है।

४६--पिंगलेश्वर एवं भूतेश्वर--शिवजी द्वारा और सब ऋषियों द्वारा समस्त तीर्थों के जल से यह तीर्थ स्थापित है।

इस प्रकार भृगुक्षेत्र (भड़ौच) में अनेकों तीर्थ हैं। यहाँ भृगु ऋषि की तपस्थली है। इस नगरी ने संसार के बहुत से उलट फेर देखे हैं। पहिले यह सनातनी आर्य हिन्दु राजाओं की सदा से राजधानी रही। ग्यारहवीं शताब्दी में सिद्धराज जयसिंह ने नर्मदा किनारे बड़ा भारी किला बनवाया था। उसके ध्वंसावशेष अभी तक विद्यमान हैं। फिर मुसलिम शासन आया। बहादुरशाह और औरङ्गजेब ने इस किले का जीर्णोद्धार कराया। सन् १३०० से लगभग साढ़े चार सौ वर्ष यह मुसलमानों के अधीन रहा। अंगरेजी कम्पनी ने उनसे छीन लिया ११ वर्ष उसके अधीन रहा। उनसे मराठों ने छीन लिया। २० वर्ष मराठों के अधीन रहा। मराठों से अंगरेजों ने छीन लिया लगभग १५० वर्षों तक अंगरेजों के अधीन रहा। स्वराज्य होने पर यह भारत सरकार के अधीन है। यहाँ प्रायः नित्य ही ज्वार-भाटा आते हैं और रामपुर ग्राम तक जाते हैं, जो यहाँ से २५ मील होगा। हमने तो रात्रि में स्नान किया। उस समय ज्वार भाटा नहीं था, शान्त जल था। समुद्र के संसर्ग से जल खारा है

हमने तो किनारे पर देवीजी को शिवजी को तथा सभी देवों को प्रणाम किया। रात्रि में विश्राम करके प्रातः आगे को चल दिये।

छप्पय

(१)

विमलेश्वरतें चले नावमें चढ़े सकल जन।
रेवासागर निरखि तरङ्गनि खिन्न भयो मन॥
अति उत्ताल तरङ्ग नावमें चढ़ि चढ़ि आवें।
होवें उलटी खिन्न चित्त मूर्छित ह्वै जावें॥
राम राम कहि पार करि, तेरह मील समुद्र जब।
आये हरिके धाममें, भयो चित्त अति मुदित तब॥

(२)

जमदग्नेश्वर तीर्थ फेरि लुंठेश्वर जाओ।
भूतनाथ, दाधीचि, चन्द्र मौलेश्वर आओ॥
सोमेश्वर कपिलेश कपालेश्वर कण्ठेश्वर।
गणिता तीर्थ अन्हाय अप्सरेश्वर सुन्डेश्वर॥
ऋणमुक्तेश्वर विदेश्वर, दशकन्याको तीर्थ वर।
आओ पुनि भृगुक्षेत्रमें, पुर भड़ौंच आनन्द कर॥

(३)

हैं भड़ौंचमें तीर्थ अधिक छालिस विशेष हैं।
शिव देवी अरु देव सबनिके पृथक क्षेत्र हैं॥
नित्य नरमदा माँहिँ ज्वार अरु भाटा आवें।
खारो पानी तऊ आइ सुर शीश नवावें॥
ये भृगु मुनिके क्षेत्रके, तीर्थ पुण्यप्रद ज्येष्ठ हैं।
रेवातट के तीर्थ सब, शङ्करजी सँग श्रेष्ठ हैं॥

—:०:—

भड़ौंच से बड़ौदा

(१८)

स्पृष्टं करैश्चन्द्रमसोर वेश्च
तदैव दद्यात्परमं पदं तु ।
यत्रोपलाः पुण्यजलाप्लुतास्ते
शिवत्व मायांति किमत्र चित्रम् ॥*
(स्कन्द पुराणे)

छप्पय

सूर्य चन्द्र तव सलिल न पीवें नहीं नहावें ।
परस किरनतैं करें परमपद फिरिहू पावें ॥
तव तटके पाषान सतत जलमें निवसत हैं ।
आठहु पहर नहाँइ निरन्तर पय परसत हैं ॥
यदि वे शिव बनि जात हैं, का अचरजकी बात है ?
तव जल परसत जीव जड़, जग बन्धन कटि जात है ॥

संसार में सत्संग का बड़ा माहात्म्य है । सबसे श्रेष्ठ बात तो यह है कि संसार में किसी का संग न करे निस्संग होकर रहे । किन्तु ? इतने बड़े संसार में प्राणी संग से सर्वथा रहित कैसे रह

---

* माँ ! जब तुमने सूर्य और चन्द्रमा को केवल किरणों से जल स्पर्श करने के कारण परमपद प्रदान कर दिया तो जो पाषाण तुम्हारे जल में सदा ही स्नान करते रहते हैं, उन्हें यदि शिवत्व की प्राप्ति हो जाती है तो इसमें आश्चर्य की कौन-सी बात है ।

सकता है ? यदि संग किये बिना न रह सके तो केवल सज्जनों का ही संग करे। निरन्तर सज्जनों का संग करते-करते कैसा भी जड़ मति क्यों न हो, वह भी सज्जन बन जायगा। पारस का संगम कैसे भी लोहे से हो जाय, वह सोना बना ही देगा, वह लोहा फिर कैसा भी क्यों न हो। पारस तो लोहे को केवल सोना ही बनाकर छोड़ देता है, उस सोने में इतनी शक्ति नहीं होती कि वह दूसरे लोहे को सोना बना सकें। किन्तु साधु पुरुष अपने सत्संगी को सोना ही नहीं बनाते, अपने समान ही पारस बना देते हैं कि वह भी अपने सत्संगियों को अपने समान बना सके। इसीलिये भगवान् कपिल अपनी माता देवहूति से कह रहे हैं— "माँ ! सर्वसंगो से रहित महापुरुष ही साधु होते हैं। तुम्हें उन्हीं साधु-पुरुषों के संग की इच्छा करनी चाहिये क्योंकि वे संग के दोषों को हरने वाले निस्संगता मुक्ति के देने वाले होते हैं।* साधुपुरुषों का जो भी संग करेगा, वही तरन तारन बन जायगा। चैतन्य की बात तो पृथक् रही संग से जड़ भी कल्याणकारी बन जाते हैं। देखो, माता नर्मदा का निरन्तर संग करने वाले पाषाण कंकड़ भी शङ्कर बन जाते हैं। जो नर्मदेश्वर संसार से तारने वाले होते हैं।

फाल्गुन शुक्ला द्वादशी (१० मार्च) को भड़ौंच से प्रातःकाल चले। मोटर के मार्ग से ये ग्राम तथा नदियाँ हमें पड़ीं। बगरुबा, नमीपुर, दयादरा, करवाढ़, झंगार, मॉच, सेगवा, हलदरक, सासरोद, पलोड़, पछिया, पुरार, कोली याद, अरासी, ओसलाभ, भरथान, बेमार, कर्जन नदी, चचरही, थापर, नारेश्वर, वावनिया,

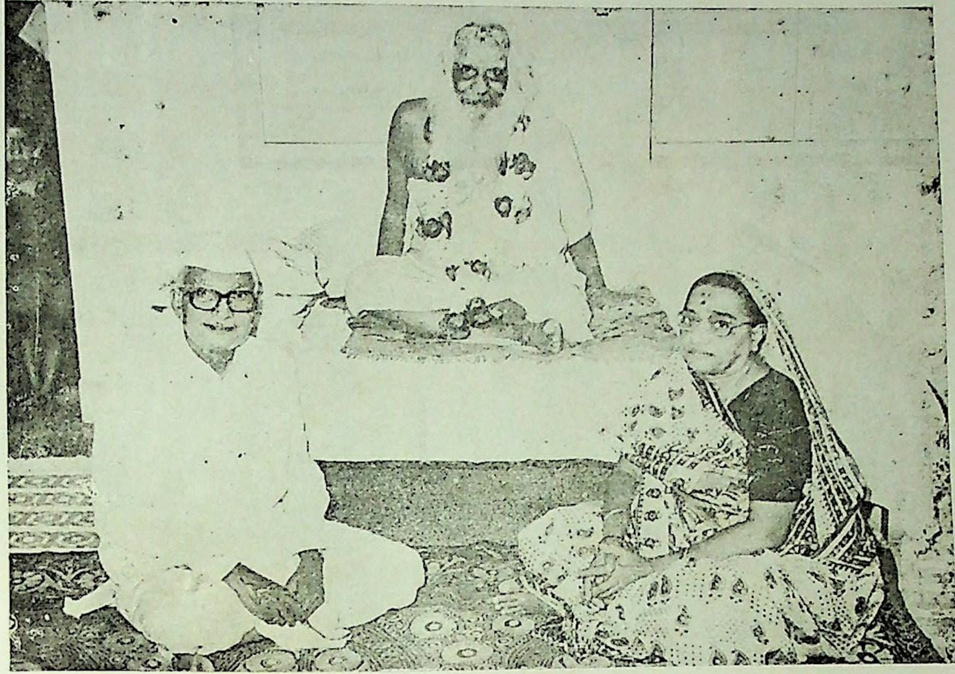
---

* त एते साधवः साध्वि सर्वसङ्गविवर्जिताः।
सङ्गस्तेष्वथ ते प्रार्थ्यः सङ्गदोषहर हि ते ॥
(श्री० भा० ३ स्क० २५ अ० २४ श्लो०)

उत्ताण, साहली, पारसी, भालपुर और मालसर। मालसर में दोपहर का सबका भोजन हुआ।

नर्मदा किनारे मालसर बड़ा ही सुन्दर स्थान है। मालसर के महन्तजी हमारे यहाँ वृन्दावन में चार संप्रदाय आश्रम में बहुत रहते थे। हमसे बड़ा स्नेह रखते थे। चार संप्रदाय के महन्त महामंडलेश्वर रामदास शास्त्री हमारे साथ ही परिक्रमा में थे। मालसर से हमारा पुराना सम्बन्ध है। ये माध्वसम्प्रदायार्तगत चार सम्प्रदाय के महन्त हैं।

इस स्थान को परमहंस श्री माधवदास जी महाराज ने स्थापित किया। आपका जन्म बंगाल में नवद्वीप के आस-पास हुआ था। आपका पूर्वाश्रम का नाम यादव मुख्योपाध्याय था। विवाह का दो बार योग आया। एक बार माताजी का देहान्त हो गया। दूसरी बार पिताजी का। इसलिये फिर आपने विवाह न करने की प्रतिज्ञा की। कुछ दिनों तक सरकारी नौकरी की, फिर आपने ३३ वर्ष की अवस्था में गृहत्याग करके घोड़ाभारा के बड़े अखाड़ा के महन्त गोविन्द दास जी से आपने वैष्णवी दीक्षा लेकर देश का भ्रमण किया। आप सैकड़ों साधुओं को लेकर जमात घुमाने लगे। आपको अन्नपूर्णा की सिद्धि थी। इस प्रकार आप ४०।५० वर्षों तक सम्पूर्ण देश में घूमते रहे। यह नर्मदा जी का तट मालसर उन्हें बहुत प्रिय लगा। यहाँ आकर वे निवास करने लगे। उस समय उनकी अवस्था ८० वर्ष की थी। आपकी ख्याति सर्वत्र फैल गयी। यहाँ उन्होंने सत्यनारायण जी का तथा षड्भुज श्रीचैतन्य महाप्रभु का मन्दिर बनवाया। बढ़ते-बढ़ते यह विशाल आश्रम हो गया। आप हठयोग तथा मन्त्रयोग के भी ज्ञाता थे। लोनावाला योगाश्रम के संस्थापक स्वामी कुवलयानन्द जी आपके ही शिष्य थे। आपने लगभग सवा सौ वर्ष की अवस्था में सम्वत् १९७७ में इस शरीर का त्याग किया। वर्तमान महन्त जी भी बड़े



चाँदौद में श्री बाबूभाई के घर नर्मदा भुवन में
श्री बाबूभाई तथा उनकी धर्मपत्नी सौ० नर्मदा बैन

पृष्ठ २८०

सज्जन साधु सेवी हैं। हमारे सभी यात्रियों का उन्होंने बड़े प्रेम से स्वागत सत्कार किया। वहाँ के आस-पास के तथा बड़ी गौशाला के दर्शन करके हम बड़ौदा के लिये चल दिये। बड़ौदा के परम भक्त बाबू भाई हमारे पीछे चुपचाप लगे थे। उन्होंने विनीत भाव से प्रार्थना की—बड़ौदा जाते समय कुछ देर को मार्ग में चाँदौद मेरे यहाँ चलिये। हमने बहुत मना किया हमारे पास समय नहीं है, किन्तु वे माने ही नहीं। मैं उन्हें पहिचानता नहीं था। किन्तु पीछे पता चला वे हमारी "भागवती कथा" के अनन्य भक्त हैं, सैकड़ों सेट उन्होंने मँगा-मँगाकर लोगों को दिये हैं। उन्होंने अनेकों बार पूरी भागवती कथा के पारायण किये हैं। उनके परिवार के छोटे से बड़े तक स्त्री पुरुष भागवती कथा ही पढ़ते हैं, वे हमें अपने घर चाँदौद ले गये। वहाँ बड़ा स्वागत सत्कार किया। एक सहस्र उन्होंने एक सहस्र उनकी धर्मपत्नी ने भेंट किये। बाबू भाई बड़े ही सरल सज्जन तथा नर्मदा भक्त हैं। चाँदौद जो नर्मदा जी के तीन दुर्लभ स्थानों में से एक है वहाँ बहुत ऊँचे पर नर्मदा किनारे आपका नर्मदा भुवन है। आपके घर का नाम ही नर्मदा-भुवन है। वहाँ से नर्मदा जी की शोभा अपूर्व है। बड़ा ही मनमोहक नयनाभिराम दृश्य है। नर्मदा और ओर नदी का संगम वहाँ से प्रत्यक्ष दिखायी देता है, जिसके लिये कहा गया है—

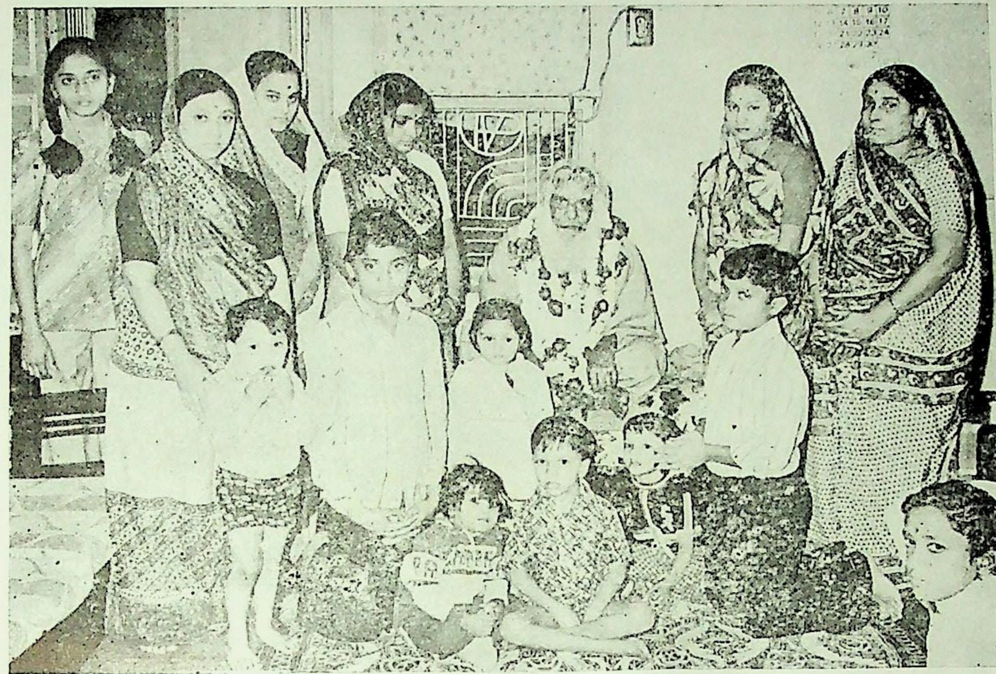
नर्मदा जी तो सभी स्थानों में सुलभ हैं, किन्तु तीन स्थानों में अत्यन्त दुर्लभ हैं। एक तो ओंकारेश्वर में, दूसरे भृगुक्षेत्र (भड़ौंच) में और तीसरे जहाँ ओर नदी और रेवानदी का संगम है। चाँदौद कर्नाली में* इस स्थान को दक्षिण प्रयाग कहते हैं।

---

* सर्वत्र सुलभारेवा त्रिषुस्थानेषु दुर्लभा।
ओंकारेऽथ भृगुक्षेत्रे तथा रेवोरिसंगमे॥

जैसे प्रयागराज में गंगा यमुना संगम तो प्रत्यक्ष है, सरस्वती जी गुप्त हैं। इसी प्रकार यहाँ रेवा और ओर नदी का संगम तो प्रत्यक्ष है। सरस्वती गुप्त हैं। चाँदौद के घाट पक्के हैं। बाबू भाई का नर्मदा भवन बहुत ही ऊँचे पर है। आपकी धर्मपत्नी का नाम भी नर्मदा बैंन है। आप नर्मदा का सेवन करती हैं। घर के सभी लोग अपने व्यापार धन्धे के कारण बड़ौदा रहते हैं, किन्तु आप सदा चाँदोद में ही नर्मदा किनारे निवास करती हैं। इन्हीं के कारण परिवार के लोग बड़ौदा से यहाँ आते हैं। अपने भवन के चारों ओर इन्होंने तुलसी के बिरवे लगा रखे हैं। एक वैष्णव का जैसा सात्विक घर होना चाहिये वैसा इनका घर है। नर्मदा जी के किनारे इतना सुन्दर स्थान देखकर हमको परम प्रसन्नता हुई। पूरा परिवार ही हमें तो भगवत् भक्त लगा। इनके यहाँ साधु सन्त आते ही रहते हैं। अपने यहाँ शीघ्रता में पूजनादि करके उन्होंने फिर कहा—मेरी भाभी भागवती कथा की बड़ी भक्ता हैं पाँच मिनट वहाँ भी होलें। तब हम बड़ौदा में उनके घर गये। वहाँ उनका अंडी के तैल का बड़ा भारी कारखाना है। उनकी भाभी तो हमें देखकर विह्वल हो गयीं। चार सहस्र उन्होंने भी भेंट किये। ये लोग बहुत दिनों से हमें बुलाने को उत्सुक थे। यह संयोग अकस्मात् हो गया।

वहाँ से निवृत्त होकर हम सीधे गान्धी बाड़ी में आये। यहीं हमारे सबका ठहरने का प्रबन्ध था। सबको यथा स्थान ठहराया। हमारे लिये एक नूतन ही भवन बना था, उसमें पहिले ही पहल हम ठहरे। सायंकालीन भोजन के पश्चात् रासलीला हुई तभी बेमार रणछोर आश्रम से पंड़ित व्रजकिशोर जी मिश्र राजा भैया आ गये। उनके छोटे भाई गायक कन्हैयालालजी भी आ गये। रासलीला हुई प्रवचन हुए। रात्रि में सभी ने विश्राम किया। यदि



बड़ौदामें श्री बाबूभाई के परिवार के बच्चों के साथ श्री ब्रह्मचारीजी पृष्ठ २८२

भड़ोंच से नर्मदा किनारे-किनारे चाँदौद तक पैदल आते तो मार्ग में इतने स्थान पड़ते।

१—भृगुक्षेत्र (भड़ौंच) से थोड़ी दूर आगे घोड़ेश्वर तथा वैद्यनाथ तीर्थ है। यहाँ घोड़े के मुख को धारण करके अश्विनी कुमार आये। यहाँ उन्होंने तप करके सिद्धि प्राप्त की। यहाँ वैद्यविद्या फली भूत होती है।*

२—घोड़ेश्वर से कुछ दूर पर तवरा ग्राम के निकट कपिलेश्वर तीर्थ है। सगरपुत्रों को भस्म करने के पातक निवारणार्थ कपिलदेव ने यहाँ तप किया था। ज्येष्ठ शुक्ल १४—अंगार चतुर्थी नवमी, अमावास्या पूर्णिमा को यहाँ का विशेष माहत्म्य है।*

३—कपिलेश्वर के सन्निकट कलोद ग्राम में गोपेश्वर तथा कोटेश्ववर तीर्थ है। मथुरा के नन्द गोप शुक्लतीर्थ दर्शन करके कोटेश्वर आये। प्रति दिन दश करोड़ आक के पुष्पों से शिवजी की पूजा करने से वे शिवजी के गणों में हो गये। उन्हीं के स्थापित ये गोपेश्वर हैं।*

एककोटि ऋषियों ने बाणासुर निर्मित इस कोटेश्वर लिंग का दर्शन करके सिद्धि प्राप्त की। यहाँ गायत्री जप का विशेष माहात्म्य है। वैशाख तथा अधिकमास में यहाँ कोटिलिंग उत्पन्न होते हैं।*

४—कोटेश्वर से ३ मील आगे शुक्लतीर्थ है। इसकी कथा इस प्रकार है—प्राचीन काल में इक्ष्वाकु कुलोत्पन्न अवन्ती नरेश राजर्षि चाणक्य बड़े ही बुद्धिमान तथा पराक्रमी थे। उन्होंने प्रतिज्ञा करली थी कि जिस समय कोई मुझे धोखा दे देगा, उसी समय मैं अपने प्राणों का परित्याग कर दूँगा। इस पर अनेक

---

* (रे० खण्ड १४७ अ०)

देवताओं ने उन्हें धोखा देने की चेष्टा की, किन्तु वे सफल न हो सके।

सुन्द और उपसुन्द नाम के दो भाई दैत्य थे। वे ब्रह्मशाप से कौआ योनि को प्राप्त हो गये थे। उन्होंने किसी प्रकार महाराज चाणक्य को धोखा दिया। अब महाराज को प्राण त्यागना ही था। किन्तु वे ऐसे तीर्थ में प्राण त्यागना चाहते थे, जहाँ प्राण त्यागने से मुक्ति हो। उन्होंने धर्मराज से इस बात की जिज्ञासा की। धर्मराज ने बताया—"जिस तीर्थ में काला सूत शुक्ल वर्ण का हो जाय, वहीं मरने से मुक्ति होगी। महाराज काला सूत लेकर अनेकों तीर्थों में गये, किन्तु वह शुक्ल नहीं हुआ। चलते-चलते महाराज जब रेवा किनारे—इस तीर्थ में आये तो वह काला सूत शुक्लवर्ण का हो गया। तभी से यह शुक्लतीर्थ के नाम से विख्यात हुआ। इस तीर्थ में समस्त तीर्थों का प्रभाव है, ब्रह्महत्या भी नाश हो जाती है। सूर्य-चन्द्र ग्रहण, कार्तिक, वैशाख, आषाढ़ तथा माघ की पूर्णिमा का विशेष माहात्म्य है।×

५—शुक्लतीर्थ के समीप ही हुंकारेश्वर तीर्थ है। इसकी भी कथा सुनिये। प्राचीनकाल में कुछ ब्राह्मण रेवा के तट पर ध्यान पूजन कर रहे थे। नर्मदा जी ने मन में सोचा—देखें इन्हें क्रोध आता है या नहीं। यह सोचकर नर्मदाजी बढ़ने लगीं। इनके टाट कमंडलु पानी में बहने लगे। ब्राह्मणों ने तो कुछ नहीं किया। भगवान् ने ब्राह्मणों की रक्षार्थ हुँकार की। इससे नर्मदा जी एक कोश दूर गयीं। तभी से यह अत्यन्त पवित्र हुँकार स्वामी विष्णुतीर्थ प्रसिद्ध हुआ। इस तीर्थ में सम्पूर्ण धर्म कर्म सफल होते हैं।×

× (रे० खण्ड १४२, १४३ अ०)



बड़ौदा में श्री बाबूभाई के घर पर

बायें से राजा भैया का पौत्र गिरिराज, ब्रह्मचारीजी, राजा भैया   पृष्ठ २८४

६—हुंकारेश्वर से सन्निकट ही रवितीर्थ है। इसकी कथा इस प्रकार है। प्राचीनकाल में सत्ययुग में एक जाबाली नामक बड़े धर्मात्मा थे। उनकी धर्मपत्नी जब मासिक धर्म से निवृत्त हो गयी। तब पुत्रेच्छा से अपने पति के समीप गई। उसके पति ब्राह्मण ने उसका तिरस्कार किया। इससे उसे बड़ी ग्लानि हुई और सौ उपवास करके उसने अपने प्राणों का परित्याग कर दिया। इस पाप के कारण ब्राह्मण के शरीर में कुष्ट हो गया। उसने ब्राह्मणों से प्रायश्चित्त पूछा तो सबने शूल पाणेश्वर जाने को कहा। उस ब्राह्मण ने यहाँ शुक्लतीर्थ के समीप सहस्र वर्षों तक घोर तपस्या करके सूर्यदेव को प्रसन्न करके सिद्धि प्राप्त की। तभी से यह रवि-तीर्थ प्रसिद्ध हुआ। यहाँ आदित्येश्वर में तपस्या करन से सर्व कर्म सफल होते हैं। रविवार का विशेष माहात्म्य है। तप से रोग नाश होते हैं।×

७—रवितीर्थ के समीप भार्गलेश्वर हैं। कश्यप पुत्र भार्गल ने तपस्या करके सिद्धि प्राप्त की, शिवगण बन गया।×

८—भार्गलेश्वर से कुछ ही दूर निकरो ग्राम में श्वेतवाराह तीर्थ है। पृथ्वी का उद्धार करके वाराह भगवान् ने इसे कलियुगी जीवों के उद्धारार्थ बनाया।×

९—श्वेतवाराह तीर्थ के सन्निकट ही अंकोल और लिंकेश्वर तीर्थ हैं। हिरण्याक्ष को मारकर वह वराह भगवान् ने अंकोल वृक्ष के नीचे विश्राम किया। देवों ने लिंकेश्वर की स्थापना करके पूजा की तभी से यह पुण्य तीर्थ हुआ।÷

१०—लिंकेश्वर के समीप ही अंगारेश्वर ग्राम में अंगारेश्वर तीर्थ है। इस तीर्थ को मंगल ने तप करके स्थापत किया। तभी

× (रे० खं० १४१ अ०) ÷ (रे० खं० १३८ अ०)

मंगल ग्रह बने। मंगल की चतुर्थी का माहात्म्य है। मंगल ग्रह शान्ति होती है।÷

११—अंगारेश्वर से आगे धर्मशाला ग्राम में अमाहक (पितृ-तीर्थ है। रामसोम द्वारा स्थापित हैं। अमावास्या को पितरों को पिंड देने का माहात्म्य है। यहीं नर्मदाजी में बह्नितीर्थ है। एवं ब्रह्मशिला है। शुक्ल वस्त्र से तप करने से सौ कन्या दान का फल है।

१२—धर्मशाला से तीन मील आगे रुक्मिणीतीर्थ है। इसके समीप ही १. रामकेशव तीर्थ, २. शिवतीर्थ, ३. जयवाराह तीर्थ और ४. चक्रतीर्थ ये चार तीर्थ और हैं।

१-रुक्मिणी तीर्थ—में श्रीकृष्ण ने रुक्मिणी के साथ विवाह किया था। यह प्रयाग कुरुक्षेत्र तथा प्रभास के सदृश है।

२-रामकेशव तीर्थ—नर-नारायण, राम-कृष्ण तथा सभी अवतारों द्वारा पूजित परम पावन तीर्थ है।

३-शिवतीर्थ—हिरण्याक्ष वध के पश्चात् वाराह भगवान् की यहाँ शिवजी ने स्वयं पूजा की थी।

४-जयवाराह तीर्थ—हिरण्याक्ष को मारकर वराह ने तप किया था।

५-चक्रतीर्थ—हिरण्याक्ष वध करके वराह ने चक्र धोया था।

१३—रुक्मिणी तीर्थ से दो मील नादग्राम में नन्दातीर्थ है। यहाँ नन्दादेवी है। महिषासुर वध के पश्चात् आनन्दित होकर देवी ने यहाँ आकर शिवजी की पूजा की। नर्मदाजी ने देवी की पूजा की। यहाँ नन्दाह्रद, भैरव, केदार और रुद्रमहालय ये चार तीर्थ हैं। नन्दादेवी के पूजन से सन्तान वृद्धि होती है।

१४—नन्दातीर्थ के निकट दिलवाड़ा ग्राम में सोमतीर्थ है

÷ (रे० खं० १३६ अ०)



श्री बाबूभाई विठ्ठलदास के बड़ौदा वाले घर पर,
बायें से श्री राजा भैया, श्री ब्रह्मचारीजी, श्री बाबूभाई, उनके दो चिरञ्जीव पुत्र

पृष्ठ २८६

चन्द्रमा का गुरुतल्पग का दोष यहीं निवृत्त हुआ।× यहाँ शक्रतीर्थ और कर्कटेश्वर तथा ओज ये तीन तीर्थ और हैं।

१–शक्रतीर्थ—अहल्या के कारण गौतम ऋषि का दिया इन्द्र का शाप यहीं मिटा। इन्द्र ने १००. यज्ञ किये।×

२–कर्कटेश्वर—पूर्वकाल में काशिराज जयन्त बड़ा पापी था, मरकर वह कुलीर पक्षी हुआ। पक्षिराज ने उसे मारकर यहाँ नर्मदा किनारे फेंक दिया। तभी शिवलिंग प्रकट हो गयी। पक्षिराज ने पूजन किया। बालखिल्य ऋषियों ने भी यहाँ पूजा की।×

३–ओज (अयोध्यापुरी) अहिल्या तीर्थ को श्रीरामजी जब नर्मदा किनारे आये तो उनके मन में संकल्प हुआ। नर्मदा किनारे भी हमारी अयोध्या होनी चाहिये। तभी उन्होंने यहाँ अयोध्याजी का निर्माण किया। यहाँ स्नान दान धार्मिक कार्यों का अयोध्या के सदृश फल होत है।×

१५—ओज से कुछ ही दूर कोरल ग्राम में कुबेरतीर्थ है। इसके अतिरिक्त १–वरुणेश्वर, २–वायवेश्वर, और ३–याम्येश्वर ये तीन तीर्थ और हैं।

यहाँ कुबेर, वरुण, वायु और यम इन चारों लोकपालों ने तपस्या करके सिद्धि प्राप्त की। कुबेर धनद और यक्षेश्वर बन गये। वरुण जलाधिपति हुए। वायु सर्वत्रगामी हुए। यम दंडाधिकारी हुए। यहाँ ब्राह्मण भोजन का विशेष माहात्म्य है। लोकपाल कह गये हैं—ब्राह्मण राजारूपी वृक्ष के मूल के सदृश हैं। राजा के सेवक भृत्य वृक्ष के पत्तों के सदृश हैं। मन्त्री मानों उसकी शाखा हैं। इसलिये मूल का यत्नपूर्वक संरक्षण करना चाहिये। यदि

× (रे० खं० १३६ अ०)

मूल गुप्त हो जायगा तो वृक्ष का नाश हो जायगा।* यहाँ अमावास्या पूर्णिमा का विशेष माहात्म्य है।÷ कोरल ग्राम में इतने तीर्थ और हैं। १–आशापुरीदेवी, २–आदिवाराह तीर्थ, ३–कोटितीर्थ, ४–ब्रह्मप्रसादज तीर्थ, ५–मार्कण्डेय तीर्थ, ६–भृग्वीश्वर तीर्थ, ७–पिंगलेश्वर तीर्थ, ८–अयोनिज तीर्थ, ९–रवितीर्थ धौरादित्य। वायु पुराण रेवाखण्ड के १३३, १३२ अध्यायों में इनकी पृथक्-पृथक् कथायें हैं।

१५—कोरल से कुछ दूर साया ग्राम में सागरेश्वर तीर्थ है। समुद्र ने तीर्थ निन्दा दोष नष्ट करने के निमित्त शिवजी की आराधना करके सिद्धि प्राप्त की। यहाँ शुभ कर्म का फल समुद्र सदृश होता है।×

१६—सागरेश्वर के समीप सायर ग्राम के पास कपर्दिकेश्वर तीर्थ है। यहाँ गणेशजी ने त्रिपुरासुर का वध करने के निमित्त विष्णु भगवान् की आज्ञा से तप किया था। यहाँ दोनों पक्ष की चतुर्थी का विशेष माहात्म्य है।×

१७—कपर्दिकेश्वर के सन्निकट फत्तेपुर घाट के समीप नर्मदेश्वर अथवा नारेश्वर तीर्थ है। इसकी कथा भी सुनिये—प्राचीन काल में शिवजी पार्वतीजी के सहित घूमते-फिरते इस स्थान में आये। शिवा सहित शिव को स्वयं अपने समीप आया देखकर नर्मदाजी जल में से अपने दिव्य स्वरूप से निकलीं और उन्होंने दोनों की विधिवत् पूजा की। शिवजी ने वर माँगने को कहा तो नर्मदाजी ने यही वर माँगा कि "आप यहाँ सदा सर्वदा विराज-

---

* राजा वृक्षो ब्राह्मणस्तस्य मूलं पर्णाभृत्या मन्त्रिणस्तस्यशाखा।
तस्मान् मूलं यत्नतोरक्षणीयं मूले गुप्ते अस्ति वृक्षस्य नाशः॥

÷ (रे० खं० १३५ अ०) × (रे० खं० १३२ अ०)



श्री बाबूभाई के बड़ौदा तेल मिल में श्री ब्रह्मचारीजी (कुर्सी पर बैठे) के साथ श्री बाबूभाई, राजा भैया, विष्णु भाई तथा मिल के कार्यकर्तागण

पृष्ठ २८८

कर भक्तों के मनोरथों को पूरा करते रहे।" तब से यहाँ नर्मदेश्वर विराजकर सबकी इच्छा पूर्ण करते हैं।

पहिले यहाँ कपर्दीश्वर का ही मन्दिर था। वह नर्मदाजी के तट पर था। प्रत्येक चतुर्मास की वर्षा में प्राचीन मन्दिर गिरते-गिरते एक बार की बाढ़ में पूरा गिर गया। बहुत दिनों तक वह गिरा रहा। मुसलमानी शासन समाप्त होने पर पेशवाओं के अधीन यह प्रदेश आया। यहाँ के राजपाल एक नारोपन्त हुए। वे शिव भक्त थे। कपर्दीश्वर शिवजी ने एक बार स्वप्न दिया कि मेरी मूर्ति इस गिरे हुए मन्दिर के नीचे दबी है। इसकी जीर्णोद्धार करो। तब उन्होंने मलवा हटवा कर शिवलिंग निकलवाकर उसकी प्रतिष्ठा की, उन्हीं के नाम से ये नारेश्वर प्रसिद्ध हुए।

तब यहाँ घोर जंगल और स्मशान था। भाग्यवश श्री दण्डी स्वामी श्री वासुदेवानन्दजी सरस्वती के शिष्य श्री रंग अवधूत स्वामी यहाँ नर्मदाजी की परिक्रमा करते हुए आ गये और यहीं रहकर तपस्या करने लगे। फिर तो जंगल में मंगल होने लगा। बड़ा भारी आश्रम बन गया है।

श्री रंग अवधूत स्वामी के पूर्वज महाराष्ट्र के रत्नागिरि जिले के देवले ग्राम के रहने वाले थे। इनके पिता श्री विठ्ठल बलामे गुजरात के गोधरा ग्राम में विठ्ठल मन्दिर के पुजारी होकर सपत्नीक यहीं रहने लगे। इन्हीं दम्पत्ति के सन् १८९८ में पुत्ररत्न उत्पन्न हुआ उनका नाम पांडुरंग हुआ। आगे चलकर ये ही श्रीरंग अवधूत स्वामी के नाम से विख्यात हुए। पाँच वर्ष की अवस्था में इनके पिता श्री का देहान्त हुआ। इनकी माता ने अत्यन्त कष्ट से इन्हें पढ़ाया लिखाया। पढ़कर ये कुछ दिन अध्यापक रहे। फिर लेखक, अनुवादक, सम्पादक तथा राजनैतिक कार्य कर्ता रहे। गुजराती में आपने गीर्वाण भाषा प्रवेश, दो भागों में उपनिषद् की कहानियाँ, टालस्यय की शिक्षा आदि कई

ग्रन्थ लिखे। फिर संन्यास लेने पर "अवधूत आनन्द" नाम की आपकी पुस्तक प्रकाशित हुई जिसमें हिन्दी, गुजराती और मराठी के आपके भजनों का संग्रह है। संस्कृत के स्तोत्रों का संग्रह "रंगहृदयम्" के नाम से प्रकाशित हुआ। आपका एक गुजराती में बड़ा ग्रन्थ "गुरुलीलामृत" भी प्रकाशित हुआ है। अपने गुरु-देव श्री स्वामी वासुदेवानन्दजी के अनन्य भक्त थे। आपके ही शिष्य श्री स्वामी नर्मदानन्दजी हैं, जिन्होंने तीन वर्ष में श्रीनर्मदा-जी की परिक्रमा करके गुजरा ी में दो भागों में "हमारी नर्मदा परिक्रमा" पुस्तक लिखी है। श्री रंगअवधूत स्वामी का शरीरान्त सन् १९६८ नवम्बर की १९ ता० में हुआ। गुजरात के ये प्रसिद्ध महात्मा थे।

१८—नारेश्वर के समीप ही कोहनेश्वर तीर्थ है, जिसकी स्थापना कोहन ऋषि ने की। यहाँ मृतयुंजय तथा रुद्री पाठ का विशेष माहात्म्य है।❀

१९—कोहिनेश्वर के समीप ही कोठिया ग्राम में चन्द्रप्रभास तीर्थ है। जहाँ चन्द्रेश्वर शिवजी हैं। ये चन्द्रमा द्वारा स्थापित हैं। चन्द्रदेव तो नित्य हैं, कल्प-कल्प में इनकी भिन्न-भिन्न स्थानों से उत्पत्ति होती है। प्रथम चन्द्रमा की उत्पत्ति ब्रह्माजी के मन से हुई। फिर ब्रह्माजी द्वारा सोनबल्ली से प्रकट हुए। फिर समुद्र से निकले। वराह कल्प में अत्रि से अनसूया में ब्रह्माजी के अंश से उत्पन्न हुए। इसी कल्प में गुरुपत्नी गमन का दोष लगने पर महाकाल की आज्ञा से इस कोहिन तीर्थ में आकर तपस्या की। प्रसन्न होकर शिवजी ने अपने मस्तक पर धारण करके शिरोभूषण बनाया। यह परम पावन तीर्थ है। चन्द्रग्रहण, संक्रान्ति, व्यति-पातादि पुण्य पर्वों पर यहाँ विशेष माहात्म्य है।❀

❀ (रे० खं० १३० अ०)

२०—चन्द्रेश्वर के निकट ही राणापुर ग्राम में कंबुकेश्वर तीर्थ है। इसकी कथा इस प्रकार है--हिरण्याक्ष असुर के वंश में कंबुक नामक एक असुर हुआ। उसने विष्णु भगवान् के भय से मुक्त होने के निमित्त इस स्थान पर एक अर्बुद वर्ष तक तपस्या की। इसके तप से प्रसन्न होकर शिवजी ने प्रत्यक्ष होकर इससे वर माँगने को कहा। उस समय इसकी जीह्वा पर सरस्वती बैठ गयी। अतः इसने यही वर माँगा कि "विष्णु भगवान् को छोड़कर और कोई मुझे मार न सके।" शिवजी ने तथास्तु कह दिया। उसी के द्वारा स्थापित ये कम्बुकेश्वर शिवलिंग हैं। कालान्तर में यह लिंग गुप्त हो गया। कुछ समय से पश्चात् ऋषि पुत्रों ने इसे सीपी के ढेर में प्राप्त किया। यहाँ गायत्री जाप का विशेष माहात्म्य है। यहाँ शङ्ख जल से शिवजी का अभिषेक तथा सङ्कल्पादि करना चाहिये।×

२१—कम्बुकेश्वर के अति निकट ही दिबेल ग्राम में कपिलेश्वर और त्रिलोचन तीर्थ हैं। कपिलेश्वर की कपिल ऋषि ने और त्रिलोचन की, महाराज पुण्डरीक के पुत्र त्रिलोचन ने स्थापना की। दोनों ही शिव प्रिय हुए।×

२२—कपिलेश्वर के समीप ही मालसर ग्राम में पांडुतीर्थ है। यहीं अंगरेश्वर और अयोनिज तीर्थ है। महाराज पांडु ने मृगया के समय मैथुन धर्म में प्रवृत्त मृगरूपी ऋषि का वध किया था। उस पाप से मुक्त होने को उन्होंने यहाँ तपस्या की और पाप मुक्त हुए। तब उनके पाँच पांडव पुत्र हुए, परम पवित्र तीर्थ है।+ रेवातट पर परम रमणीक स्थल है। यहीं परमहंस माधवदासजी महाराज का सुन्दर आश्रम है।

२३—पांडुतीर्थ के सन्निकट ही कँटोई ग्राम में कोटीश्वरतीर्थ

× (रे० खं १२६, १२५ अ०)

है। करोड़ों ऋषियों ने स्कन्द के देव सेनापति बनने के उपलक्ष्य में स्थापना की। समीप में ही आंगरिसतीर्थ है। अङ्गिरा मुनि ने १२ वर्ष तपस्या करके इसकी स्थापना की।÷

२४—कोटीश्वर के समीप ही सीनोर ग्राम है जिसे सेनापुर भी कहते हैं। यहाँ आठ तीर्थ मुख्य हैं। इनके नाम इस प्रकार हैं—

१. धूतपापेश्वर—स्कन्द स्वामी ने देव सेनापति बनकर असुरों का संहार किया। वे यहाँ निष्पाप बने।×

२. मार्कण्डेश्वर—स्कन्द को विजय प्राप्त कराने के निमित्त मार्कण्डेय मुनि ने इनकी स्थापना की।

३. निष्कलंकेश्वर—परशुरामजी को क्षत्रिय वध का जो कलंक था वह यहाँ तप करके दूर हुआ।

४. केदारतीर्थ—एक दैत्य के भय से भागकर बद्री केदार यहाँ नर्मदा किनारे आ गये थे।

५. भोगेश्वर—स्कन्द के सेनापति बनने पर देवों ने शिवजी को नाना भोग अर्पित किये।

६. उत्तरेश्वर—स्कन्द की तपस्थली है।

७. चक्रतीर्थ—स्कन्द की प्रार्थना पर भगवान् ने चक्र से दैत्यों का वध करके चक्र को नर्मदा में डाल दिया।

८. रोहिणेश्वर तीर्थ—नारदजी की आज्ञा से चन्द्र को वश में करने को रोहिणी ने यहाँ तप किया। यहाँ स्त्री, दान धर्म करें तो पति उनके वश में होते हैं। कन्या दान का माहात्म्य है।×

२५—सीनोर के समीप ही दावापुर ग्राम में धनदेश्वर तीर्थ है। यहाँ धनदकुवेर ने तपस्या करके देवों का कोषाधिकार पुष्पक

÷ (रे० खण्ड १२६, १२५ अ०) × (रे० ख १२३, १२४ अ०)

विमान और अलकापुरी प्राप्त की। यह तीर्थ विशेषकर वैश्यों का है। जिसका दिवाला निकल गया हो या व्यापार में घाटा हो यहाँ तप करने से तत्काल फल मिलता है। दीपावली का यहाँ विशेष माहात्म्य है। नित्य पूजा करने वाले की धन वृद्धि होती है।

२६—धनदेश्वर के सन्निकट ही कंजैठा ग्राम में सौभाग्य सुन्दरी माता हैं। अरुंधती के कहने से ख्याति ने पुत्र प्राप्ति के हेतु तप किया। जिससे पुत्र प्राप्ति हुई। यहाँ दान धर्म पूजा करने से स्त्रियों को पुत्र प्राप्ति होती है।

१–यहीं नागेश्वर हैं त्वष्टा पुत्र पुण्डरीक नाग ने इन्द्र शाप मिटाने को तप किया। यहाँ सर्पभय नहीं होता।

२–भरतेश्वर—शकुन्तला सुत भरत ने यहाँ अनेकों यज्ञ, अगणित दान धर्म किये। दान धर्म पुण्य प्रद है।

३–करंजेश्वर—करंज ऋषि बाल ब्रह्मचारी थे, उन्होंने घोर तप किया। बाल ब्रह्मचारियों को मिष्ठान्न भोजन कराने का विशेष माहात्म्य है। ×

२७—कंजैठा ग्राम से आगे अंबाली ग्राम में अंम्बिकेश्वर तीर्थ है। काशिराज की पुत्री अंबिका ने उत्तम पति पाने के निमित्त तप किया। यहाँ पाठ पूजा करके कुमारियों को भोजन करावे तो उत्तम पति की प्राप्ति होती है।

२८—सुवर्ण शीला तीर्थ, सुवर्ण शीला ग्राम में है। यहाँ अनेक ऋषि घोर तपस्या करते थे। शिवजी ने उनकी परित्तार्थ बड़ी सुन्दरी सुवर्ण शीला सुकुमारी बनाकर भेजा। किन्तु ऋषियों का चित्त विचलित नहीं हुआ। तभी उस शीला के स्थान में शिवलिङ्ग उत्पन्न हो गया। यहाँ समीप में ही एरंडी संगम है। इसे हत्याहरण तीर्थ भी कहते हैं। गौतमवंशीय एक ब्राह्मण की

× (रे० खण्ड १२२ अ०)

पत्नी ने पति सेवा के पीछे पुत्र के प्राणों की भी चिन्ता न की, पुत्र की मृत्यु हो गई। उसके शरीर में कीड़े पड़ गये। इससे पति पत्नी को हत्या का पाप लगा। उन्होंने यहाँ आकर तपस्या की शिवजी की और अनसूया सती की पूजा की। यहाँ दोनों नवरात्रों की सप्तमी अष्टमी का विशेष माहात्म्य है।

यहीं नर्मदा के बीच में अनसूया माताजी हैं अपने पति अत्रि की आज्ञा से अनसूया देवी ने पुत्र प्राप्ति के लिये तप किया। तब ब्रह्मा, विष्णु, महेश तीनों देवों के अंश से क्रमशः चन्द्रमा, दत्तात्रेय और दुर्वासा ये तीन पुत्र उत्पन्न हुए। यहाँ स्त्रियों की सन्तान कामना पूर्ति होती हैं।❀

२९—एरंडी संगम से कुछ दूर झांझर के ह्रद में मन्मथेश्वर तीर्थ है। शिवजी के कोप से जब काम भस्म हो गया तब उसने छाया रूप से यहाँ तपस्या करके सिद्धि प्राप्त की। यहाँ तपस्या करने से नपुंसकता नष्ट होती है। स्त्रियों को सन्तान प्राप्त होती है। चैत्र शुक्ल पक्ष का विशेष माहात्म्य है।❀

३०—झांझर ग्राम में ही जानकेश्वर तीर्थ है। महाराज जनक ने तपस्या करके शिवजी को प्रसन्न किया। बहुत से यज्ञ, याग, दान धर्म किये। यहाँ दान धर्म का बड़ा माहात्म्य है।❀

३१—जानकेश्वर तीर्थ से आगे बटकाल के समीप यज्ञबट के मध्य में संकर्षण तीर्थ है। यहाँ ययाति पुत्र यदु ने तपस्या करके पिता के शाप से मुक्ति पाई। यहाँ ही बलरामजी ने यात्रा काल में तप किया था। उन्होंने ही संसार के कल्याणार्थ इस तीर्थ का निर्माण किया। सब मास की शुक्ला एकादशी का विशेष माहात्म्य है। यहाँ पिण्ड दान भी होते हैं।

३२—पास में ही प्रभा तीर्थ है। सूर्य पत्नी प्रभा ने तपस्या करके सूर्य सान्निध्य प्राप्त किया। कन्यादान का माहात्म्य है।

❀ (रे० खण्ड १२० अ०)

३३—प्रभा तीर्थ से कुछ दूर नर्मदाजी के बीच द्वीप में व्यासेश्वर तीर्थ है। पराशर मुनि के पुत्र व्यासजी यहाँ नर्मदा किनारे दक्षिण तट पर रहकर तपस्या करने लगे। एक समय बहुत से ऋषि आये। जब उनसे प्रसाद पाने को कहा तब उन्होंने कहा—हम नर्मदा के दक्षिण तट पर प्रसाद न पाकर उत्तर तट पर पायेंगे। तब व्यासजी की प्रार्थना पर नर्मदाजी बीच से बहने लगीं। व्यासजी का आश्रम उत्तर तट पर हो गया। तभी से व्यासजी की सर्वत्र बड़ी ख्याति हो गई। यहाँ गायत्री पुरश्चरण का अनन्त माहात्म्य है। सभी शुभ कर्म सफल होते हैं।[1]

३४—व्यासेश्वर से कुछ आगे मालेथा ग्राम में कोटेश्वर तीर्थ है। व्यासजी के आश्रम पर जो बदरिकाश्रम के अनेक ऋषि आये थे उन्होंने इस तीर्थ को स्थापित किया।[2]

३५—कोटेश्वर से लगभग मील भर आगे नन्दोरिया ग्राम में बदरिकाश्रम अथवा नर नारायण तीर्थ है। यहाँ नर नारायण ने रेवा तट पर तपस्या की थी।

३६—यहीं नन्दीकेश्वर तीर्थ है। नन्दीश्वर तपस्या करके पार्वतीजी के शाप मुक्त हुए।

३७—नन्दोरिया से कुछ दूर पर काल्होड़िका (गंगनाथ) तीर्थ है। पापियों के पाप से पीड़ित गंगाजी यहाँ आयीं और नर्मदा में स्नान करके पाप मुक्त हो गयी। यहाँ (१) मित्रद्रोह, (२) कृतघ्नता, (३) विश्वासघात, (४) स्वामिद्रोह और (५) गुरु-द्रोह ये जो महापातक हैं, वे सब यहाँ तपस्या करने से नष्ट हो जाते हैं। यहाँ के स्नान का तीर्थराज प्रयाग के समान, पुष्करराज के समान माहात्म्य है। गंगनाथ नर्मदा तट पर बहुत ऊँचे पर बड़ा ही सुन्दर रमणीक स्थान है। नर्मदाजी पर पक्का घाट है। पास

१. (रे० खं० ११५ अ०) २. (रे० खं० ११६ अ०)

में ही श्री आनन्दमयी माँ का आश्रम है, यह भी बड़ा रमणीक स्थल है। पंचवटी है, नर्मदा की अपूर्व शोभा है। हम चार बार इस स्थान में गये हैं। गङ्गनाथजी का दर्शन किया। वैद्यनाथ के सुप्रसिद्ध स्वामी श्री बालानन्दजी ब्रह्मचारी के गुरुदेव यहीं रहते थे।

३८—गङ्गनाथजी से कुछ ही दूर पर चाँदोद नगर है। इसके पास ही यमहास तीर्थ है। इसे यमराजजी ने स्थापित किया था। जो लोग यहाँ स्नान करते हैं उन्हें यमलोक नहीं देखना पड़ता।

३९—चाँदौद नगर में सात तीर्थ हैं।

१—चंडिका देवी—सूर्य भगवान् ने चंड मुंड को वरदान दिया कि स्त्री को छोड़कर तुम्हें कोई भी नहीं मार सकेगा। तब पराशक्ति ने शिवजी को प्रसन्न किया। तब भगवान् काली देवी द्वारा व्यवस्था करके उनका नाश कराया। यहाँ अष्टमी, नवमी और चतुर्दशी का विशेष माहात्म्य है। देवी के दर्शनों से समस्त शुभ कर्म सफल होते हैं।[१]

२—चण्डादित्य—यहाँ चण्ड और मुंड आदि दैत्यों को इन्द्र ने परास्त किया। तब उन्होंने आदित्य भगवान् की उपासना की। सूर्य ने प्रसन्न होकर वर दिया कि दो देवों को छोड़कर तुम्हें कोई परास्त न कर सकेगा।[२]

३—चक्रतीर्थ अथवा जलशायी नारायण तीर्थ—तालमेघ दैत्य का शेषशायी भगवान् ने चक्र से वध किया। फिर उस चक्र को नर्मदजी में धोया। नर्मदाजी को क्षीरसागर मानकर भगवान् ने उसमें शयन किया। यहाँ अनन्त चतुर्दशी और प्रत्येक एकादशी का विशेष माहात्म्य है।[३]

---

१. (रे० खं० ११२ अ०) २. (रे० खं० १११ अ०)
३. (रे० खं० ११० अ०)

४--कपिल तीर्थ--कपिलजी ने तीर्थयात्रा के समय यहाँ तप किया था। कपिल गौ के दूध की खीर ब्राह्मणों को खिलाने का माहात्म्य है।*

५—ऋणमोचन तीर्थ—यहाँ ६ महीने रहकर देवर्षि पितृ तर्पण करने से तीनों के ऋण से उऋण हो जाता है। इसे ब्रह्मर्षियों ने इसी निमित्त बनाया था।*

६—पिङ्गलेश्वर तीर्थ--शिवजी के कोप से अग्निदेव का मुख पिङ्गल वर्ण का हो गया था। यहाँ तपस्या करके अग्नि ने मनोवांछित फल पाया।*

७—नन्दाह्रद—नन्दादेवी ने शिवजी की प्रेरणा से दैत्यों का नाश किया। फिर शिवजी ने नन्दनी तीर्थ की स्थापना की। कश्यप ऋषि ने भी तपस्या करके यहाँ सिद्धि प्राप्त की। यहाँ अष्टमी, नवमी और चतुर्दशी का विशेष माहात्म्य है। यहाँ सामने ओर नदी का संगम है। चाँदौद से नौका द्वारा संगम में जाया जाता है। संगम के सामने ही हनुमन्तेश्वर का मन्दिर है। संगम का दृश्य बड़ा ही सुन्दर है।

इस प्रकार भड़ौच से चाँदौद तक का वर्णन हुआ।

छप्पय

(१)

पुनि भड़ौंचतैं चलो सेंधवा देवी आओ।
झाड़ेश्वर करि दरस फेरि कपिलेश्वर जाओ॥
गोपेश्वर पुनि शुक्ल-तीथं हुङ्कारेश्वर हैं।
मङ्गलेश, लिंकेश अँगारेश्वर बराह हैं॥
बह्नितीर्थ झीनोरमें, वैष्णव तीर्थ महान हैं।
नन्दा देवी नाँदमें, काशी गुप्त कुराल हैं॥

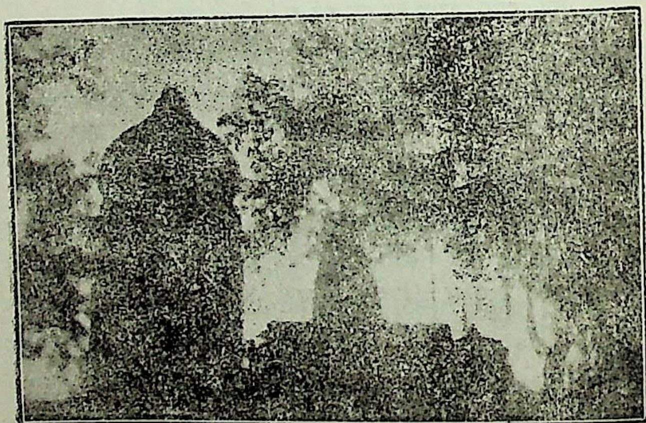
* (रे० खण्ड १०६ अ०)

(२)

सागर-ईश्वर न्हाइ कपर्दीश्वर हैं सामर।
कोहिन-ईश्वर आइ कम्बुकेश्वर चन्द्रेश्वर॥
कपिलेश्वर दीवेर त्रिलोचन अङ्गारेश्वर।
कोटेश्वर अङ्गिरस रोहिणी पुनि धनदेश्वर॥
भरतेश्वर कंजेटमें, एरंडी सङ्गम सुघर।
अनुसूया माई, कनक, झांझरमें मनमथेश्वर॥

(३)

सङ्कर्षण वर तीर्थ व्यास मुनि तीर्थ मनोहर।
गङ्गनाथ शुभ तीर्थ पास ही शिव कोटेश्वर॥
तीर्थ तहाँ यमहास फेरि चाँदौद गाम है।
रेवा सङ्गम होइ और सरिता सुनाम है॥
सात तीर्थ चाँदौदमें, देव चण्डिका चण्ड रवि।
चक्र, कपिल, ऋणमोचनहु, पिङ्गल नँदहद कहहिँ कवि॥



नर्मदा तट के एक घाट का दृश्य

बड़ौदा (चाँदौद) से गरुड़ेश्वर

(१६)

भ्रमन्ति तावन्नरकेषु मर्त्या
दुःखातुराः पापपरीतदेहा ।
महानिलोद्भूततरङ्गभंगम्
यावत्तवांभो न हि संश्रयन्ति ।।*

(स्कन्दे)

छप्पय

पापी प्रानी परें नरकमें इत उत भटकत ।
दुख नरकनिमें सहत यातनातें सिर पटकत ।।
तब तक आतुर भ्रमत न जब तक तव जल निरखत ।
अति उत्ताल तरङ्ग नहीं निरमल पय परसत ।।
तव जल मिश्रित वायु कण, परस पाइ अचमन करें ।
होयँ कृतारथ विमल बनि, तट अन्हाँय सब दुख टरें ।।

ज्ञान बुद्धि का विषय है और भक्ति समस्त अन्तःकरण का कारण है। जो लोग बुद्धि प्रधान होते हैं, वे तर्क-वितर्क करके एक निर्णय पर पहुँचते हैं। किन्तु तर्क द्वारा जो निर्णय होगा,

---

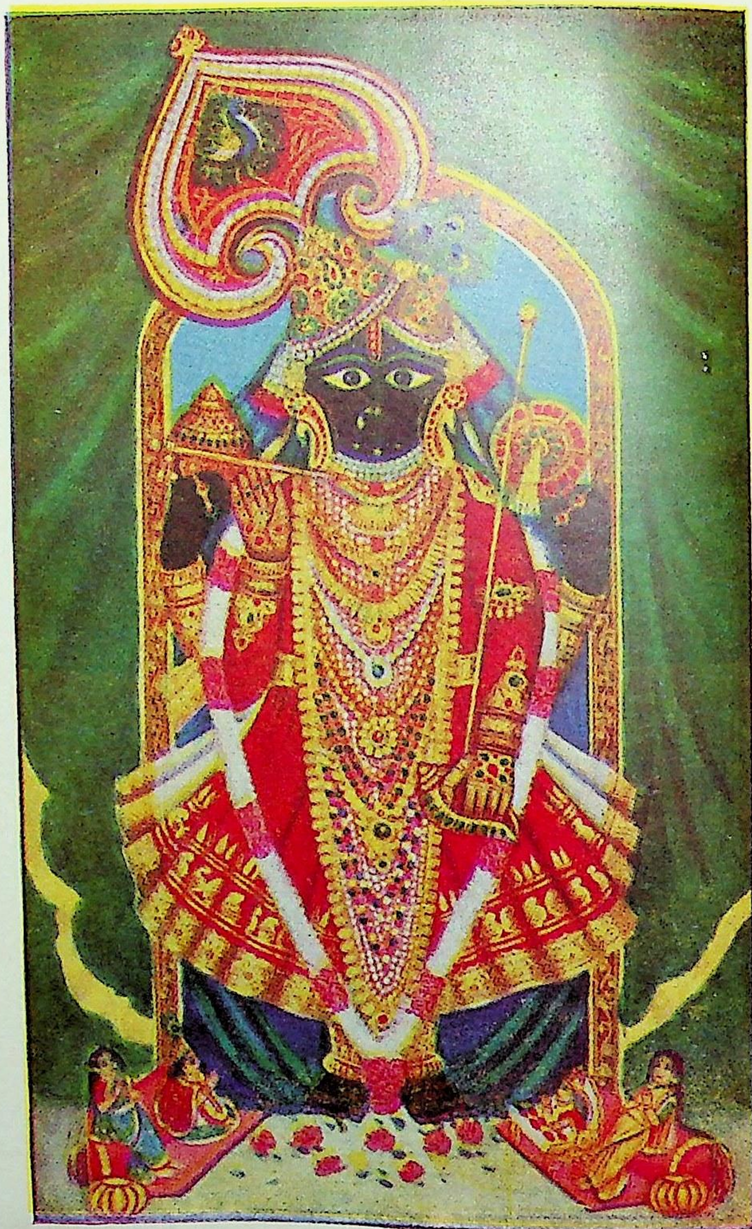
* हे माँ नर्मदे ! ये दुखों से आतुर और पापों से मलिन देह वाले प्राणी तभी तक नाना नरकों में भ्रमण करते रहते हैं, जब तक कि वे प्रचण्ड वायु के वेग से उत्पन्न तुम्हारे तरङ्गों वाले जल का आश्रय ग्रहण नहीं करते ।

वह अप्रतिष्ठित होगा, क्योंकि कोई तुमसे भी अधिक तार्किक हुआ तो वह तुम्हारे तर्क द्वारा निर्णीत विषय को निरस्त कर देगा। अन्त में तुम्हें श्रद्धा का ही आश्रय लेना पड़ेगा। इसीलिये उपनिषद्कार बार-बार इसी पर बल देते हैं। "श्रद्धस्व, श्रद्धस्व' श्रद्धा करो, श्रद्धा करो।

भक्ति मार्ग में प्रवेश का द्वार है, सत्सङ्ग–सज्जनों के–सन्त-जनों के समीप रहना। सज्जनों की पहिचान क्या है? जिनके यहाँ नित्य नियम से भगवत् सम्बन्धी कथायें भागवती कथायें हुआ करती हों वे ही सज्जन हैं। उनका सङ्ग करने से नित्य भगवत चर्चा सुनने को मिलेगी। उन कथाओं को सुनते-सुनते परमार्थ पथ में–मोक्ष मार्ग में–श्रद्धा बढ़ने लगती है। श्रद्धा ही बढ़ते-बढ़ते वह प्रेम का रूप धारण कर लेती हैं। प्रेम की परा-काष्ठा का ही नाम भक्ति है।* गुरुजनों में श्रद्धा, शास्त्र वचनों में श्रद्धा, तीर्थों में श्रद्धा ये ही प्रभु प्रेम बढ़ाने के सुगम साधन हैं। शास्त्रों में जिन तीर्थों को परम पावन बताया है, उनका श्रद्धा के साथ सेवन करने से उनमें रति–आसक्ति–प्रेम की वृद्धि होगी। वही जगत् को पावन बनाने वाली भक्ति है। चाहे निर्गुण निरा-कार अद्वय परब्रह्म में श्रद्धा करो, चाहें साक्षात् वेदान्त सिद्धान्त रूप साकार अवतार पुरुष में श्रद्धा करो। चाहे वही ब्रह्म द्रव रूप में गङ्गा यमुना, सरस्वती और नर्मदा के जल रूप में परिणत

---

* सतां प्रसङ्गान्मम वीर्यसंविदो
भवन्ति हृत्कर्णरसायनाः कथाः।
तज्जोषणादाश्वपवर्गवर्त्मनि
श्रद्धा रतिर्भक्तिरनुक्रमिष्यति॥
(श्री० भा० ३ स्क० २५ अ० २५ श्लोक)



श्री रनछोर राय डाकोर जी

हो गया है। उसमें श्रद्धा करो। किसी में भी श्रद्धा करो कल्याण-ही-कल्याण है। "श्रद्धाया किं न लभ्यते ?"

हाँ तो फाल्गुन शुक्ला त्रयोदशी (११ मार्च) को प्रातःकाल हम बड़ौदा से गरुड़ेश्वर के लिये चले। वैसे बड़ौदा से गरुड़ेश्वर के लिये सीधा मार्ग है। किन्तु यहाँ समीप डाकौर में रणछोड़ भगवान् विराजमान हैं। पैदल होते तो सीधे ही जाते। जब साथ में मोटरें हैं तो "घोड़ों को घर कितनी दूर ?" यों न गये, डाकौर होकर निकल गये। अतः हम सबने डाकौर होकर गरुड़ेश्वर के लिये प्रस्थान किया। बड़ौदा से करचिया, सांकरदा, रायका, महीनदी पार करके वारुद, पोरसद, आकलबाड़ी, वहरा-खड़ी, सासद, सम्भोठजा, उमरेठ, प्रतापपुर, वाघीपुरा, हमेद-पुरा आदि स्थानों में होते हुए डाकोरजी में पहुँचे। यहाँ पहिले से ही पुनीत आश्रम में हम सब लोगों के ठहरने तथा भोजन का प्रबन्ध था। यहाँ के लोगों ने हमारा बड़ा ही भव्य स्वागत किया। मन्दिर में गये भगवान् के दिव्य दर्शन हुए। भगवान् की ओर से हमें भगवान् का प्रसादी पीताम्बर दिया गया। भगवान् रणछोड़राय के दिव्य दर्शनों से सभी को परमानन्द की प्राप्ति हुई।

ये रणछोड़राय भगवान् तो श्रीद्वारकाजी में पधारते थे। यहाँ कैसे आ गये, इस सम्बन्ध की एक कथा है—इसी डाकोर ग्राम के एक अनन्य भक्त श्री विजयसिंहजी बोडाणा थे। उनकी धर्मपत्नी का नाम था गङ्गाबाई। ये दोनों पति पत्नी भगवान् द्वारकाधीशजी के अनन्य भक्त थे। ये वर्ष में दो बार दाहिने हाथ में तुलसीजी लेकर पैदल-पैदल द्वारकाजी जाते और उसी तुलसी को भगवान् के चरणों में चढ़ाते। इसी प्रकार यात्रा करते-करते उनकी अवस्था ७२ वर्ष की हो गयी। अब भक्तों में चलने की शक्ति नहीं रही। तब भगवान् ने कहा—"भक्तराज ! अब तुम

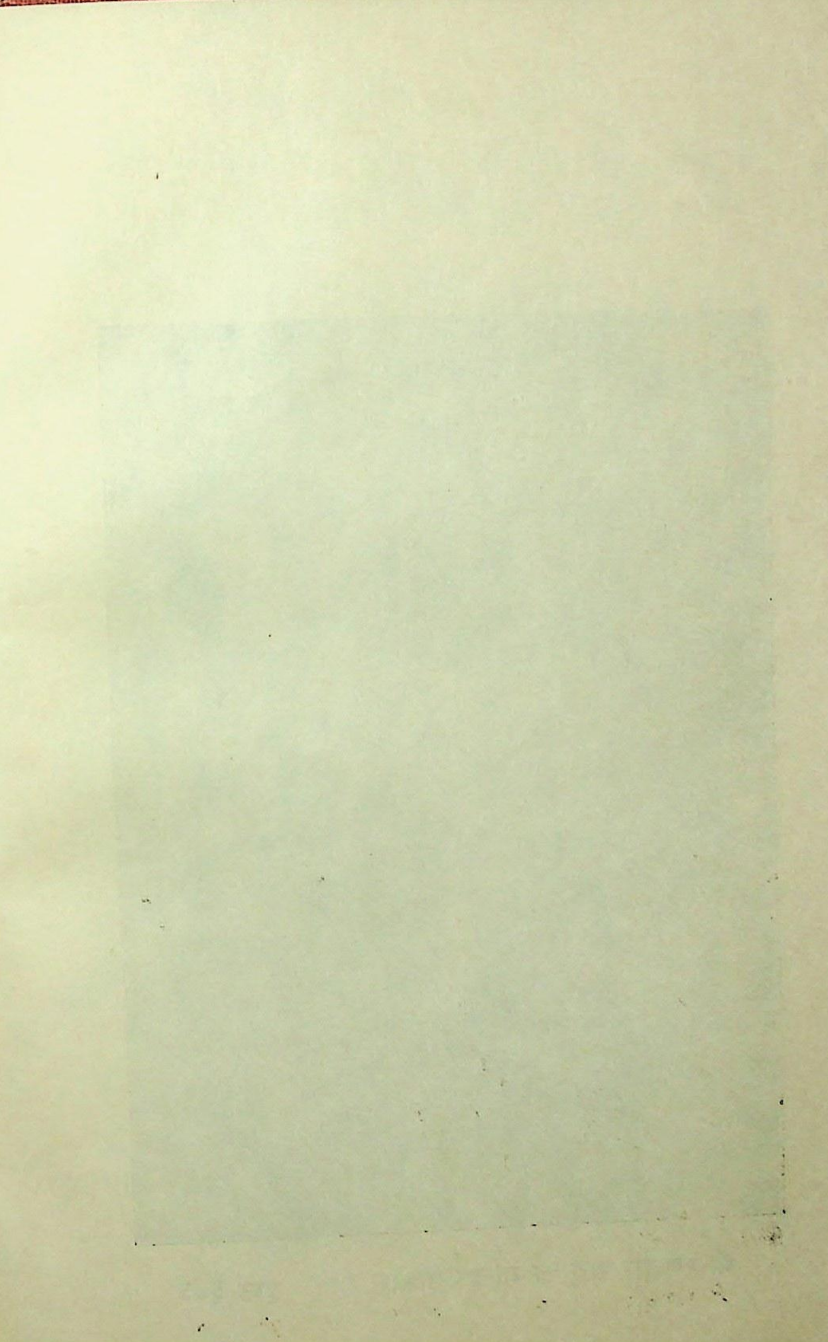
बृद्ध हो गये हो, अब तुम्हें यहाँ आने की आवश्यकता नहीं। मैं ही तुम्हारे यहाँ चलूँगा। तुम अमुक दिन गाड़ी लेकर मेरे पास आ जाना।"

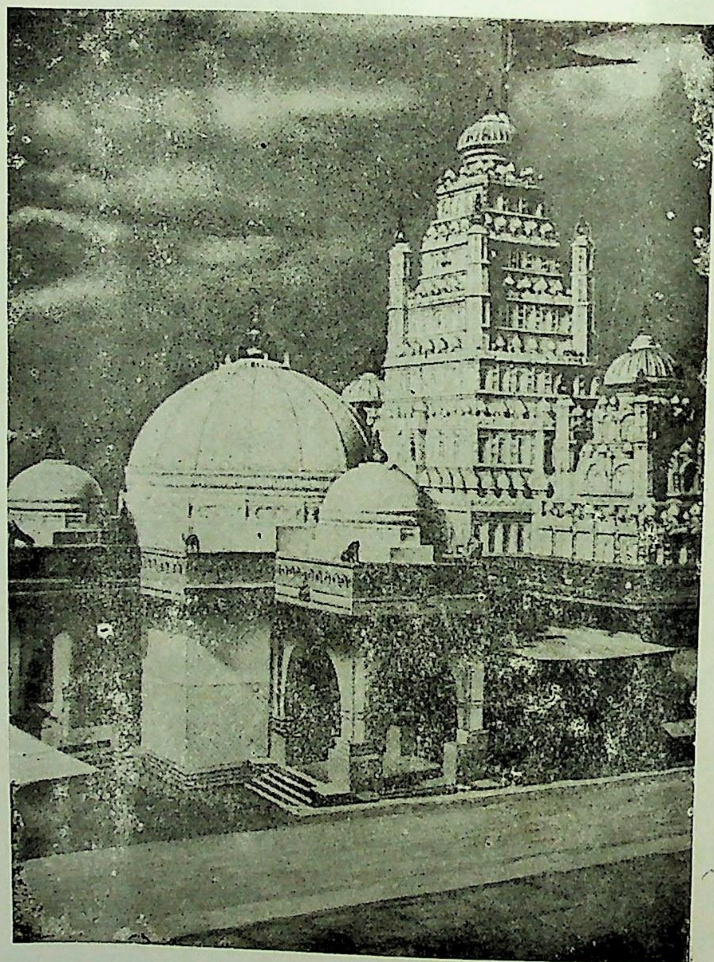
भगवान् की ऐसी आज्ञा पाकर भक्त को परम हर्ष हुआ, वे नियत समय पर गाड़ी लेकर द्वारका पहुँच गये। वे रात्रि तक छिपे रहे। जब अर्चकगण रात्रि की शयन आरती करके भगवान् को शयन कराके चले गये तब बोडाणाजी गाड़ी लेकर आ गये। भगवान् उसमें विराजमान हो गये। रात्रि भर चलते रहे।

इधर प्रातःकाल जब मङ्गला आरती के लिये पट खोले गये तो भगवान् के श्रीविग्रह को न पाकर वे सब परम विस्मित हुए। उन्हें बोडाणाजी पर पहिले से ही सन्देह था। सबने समझा वही ले गया है, अतः वे सब अस्त्र-शस्त्र लेकर दौड़े। डाकौर पहुँचकर बोडाणाजी ने जब अर्चकों को आते देखा तो मूर्ति को गोमती सरोवर में छिपा दिया। बहुत कहा-सुनी हुई। अन्त में अर्चकों के मन में लोभ आ गया। उन्होंने कहा—"अच्छा, मूर्ति के बराबर सुवर्ण तोल दो। हम सुवर्ण लेकर लौट जायँगे।"

इन निर्धन भक्त पर सुवर्ण कहाँ था, किन्तु जिन पर प्रभु प्रसन्न हों, उसके पास कमी किस वस्तु की है। जब एक ओर तराजू में भगवान् की मूर्ति रखी गई तब भक्त की पत्नी ने दूसरे पलड़े में एक तुलसी दल और अपनी नाक की नथ रख दी। नथ वाला पलड़ा नीचा हो गया। तब तो अर्चक लोग लज्जित हो गये।

रात्रि में भगवान् ने अर्चकों को स्वप्न में आज्ञा दी—"हमारी इच्छा अब यहीं रहने की है, अब तुम लोग लौट जाओ। ६ महीने पश्चात् श्री वर्धनी बावली में मेरी एक मूर्ति है, उसे निकाल कर मेरे स्थान पर प्रतिष्ठित करना।" तब अर्चक लौट गये और





श्री रणछोर राय का मन्दिर डाकौर पृष्ठ ३०३

भगवान् की आज्ञा से श्रीवर्धिनी बावली से भगवान् का श्री विग्रह निकालकर उनकी विधिवत् पूजा करने लगे यह सम्वत् १२१२ की बात है।

पहिले भगवान गोमती सरोवर के किनारे एक छोटे से मन्दिर में विराजते थे। शनैः-शनैः उनकी महिमा बढ़ी। महाराष्ट्र के एक परम भक्त तांबेकरजी थे। उन्होंने इस वर्तमान मन्दिर को बनवाया और मन्दिर की परिधि में ही अपने रहने का भवन बनाकर वहीं भगवान् की सन्निधि में रहने लगे। उन्हीं के वंशज वर्तमान वकील तांबेकरजी हैं। ये मन्दिर की प्रबन्ध समिति के अध्यक्ष हैं, इनकी धर्मपत्नी सौ० चम्पा बहिन परम भगवत् भक्ता तथा सङ्गीत में पारङ्गता हैं। इन्होंने हमारी भागवती कथा के आधार पर भगवान् की लीलाओं का अभिनय तैयार किया है। सम्भ्रान्त कुल की १०-१२ बालिकायें जो सुशिक्षिता हैं, बहुत-सी उनमें स्नातिका भी हैं। वे भागवत चरित लीलाभिनय करती हैं। एक छोटी बच्ची श्रीकृष्ण बनती हैं, अन्य सब सखी। चम्पा बहिन स्वयं यशोदा बनती हैं। कितना सुन्दर भव्य अभिनय होता है। दुबारा जब हम गये थे तब चम्पा बहिन ने अपने घर में ही आयोजन करके हमें लीला दिखायी थी उन बालिकाओं का मनोहर रूप, उनके बहुमूल्य दिव्याभूषण, उनका कोकिल कूजित कण्ठ, चम्पा बहिन का सङ्गीत और उनकी नारी सुलभ करुणा भरी वाणी, पता ही नहीं चला कि यह अभिनय हो रहा है या प्रत्यक्ष लीला। फिर जब हमारा बेमार (समलाया) रणछोड़ आश्रम में राजा भैया के द्वारा महोत्सव हुआ उसमें भी चम्पा बहिन ने अपनी श्रीकृष्ण लीला प्रदर्शित की। वे अपनी मण्डली सहित उसमें आई और सात दिनों तक रहीं। तांबेकरजी बड़े भक्त हैं, भगवान् रणछोड़लालजी की सेवा में सदा संलग्न रहते हैं। डाकौर में आकर हम सब

लोगों को परम प्रसन्नता हुई। भगवान् रणछोड़जी ने अत्यन्त अनुराग प्रदर्शित किया।

डाकौर में भरत भवन के महन्त मोहनदासजी भी साधु-सेवा में संलग्न रहते हैं, उनकी विशाल गौशाला को देखकर हमें परम प्रसन्नता हुई। डाकौर में भगवान् की सेवा पूजा विधि-वत् होती है। वहाँ का ऐश्वर्य दर्शनीय है। वहाँ बार-बार जाने की इच्छा होती है। इसके पश्चात् भी हम दो बार पुनः दर्शनों को गये।

हमें तो आज गरुड़ेश्वर पहुँचना था एक सज्जन डाक्टर हमें अपनी गाड़ी में बिठाकर अपने ग्राम ले गये। हमारे समस्त साथ के लोग तथा गाड़ियाँ पुनः बड़ोदा, रामपुरा, ततारपुर, डबोई, सीतपुर, थनबाड़ा, औरसेग, अकोरी, सोमपुर, बुजनेग, ममोड़, पहाड़, नुकिया तथा गाजीपुरा आदि गाँवों में होते हुए गरुड़ेश्वर पहुँचे।

डबोई के बालकृष्ण दवेजी हमारे साथ थे, यहाँ राजा भैया के सप्ताह हो चुके हैं, उनके बहुत से नर-नारी यहाँ भक्त हैं। राजा भैया बड़ौदा से ही हमारे साथ थे। डबोई वालों ने बहुत भव्य स्वागत-सत्कार किया। फलों की भारी लूट-पाट हुई। सब लोग रात्रि में गरुड़ेश्वर में पहुँच गये। गरुड़ेश्वर न्यास (ट्रस्ट) के न्यासियों (ट्रस्टियों) को पहिले से ही सूचना थी। राजपिप्पला के न्यासी के घर तो हम उस पार की यात्रा में ठहरे ही थे। अतः वे भी यहाँ आ गये थे और भी न्यासीगण आ गये थे। भड़ौंच की हिन्दु विश्व परिषद् के सभापति वकील साहब भड़ौंच से ही हमारे साथ आये थे। वे पहिले कभी इस गरुड़ेश्वर विभाग के तहसीलदार रह चुके थे। सभी ने यहाँ बड़ा सुन्दर प्रबन्ध किया था। सभी के भोजन का विश्राम का सुन्दर प्रबन्ध था।

गरुड़ेश्वर

नर्मदाजी के किनारे पर गरुड़ेश्वर बहुत ही भव्य एकान्त शान्त अनुष्ठान करने योग्य सुन्दर स्थान है। प्राचीन काल में कुमार स्वामी ने यहाँ तपस्या करके सिद्धि प्राप्त की है। यहाँ कार्तिक शुक्ला चतुर्दशी का विशेष माहात्म्य है। कुमारेश्वर की स्थापना कार्तिकेय स्वामी ने की। इसके समीप ही करोटीश्वर तीर्थ है, इसकी भी कथा सुन लीजिये—प्राचीन काल में यहाँ एक असुर गज के रूप में रहता था। उसका नाम गजासुर था। गरुड़जी यहाँ जल पीने के लिये आये होंगे। उन्हें भूख लगी। वे इस गजासुर को लेकर उड़ गये और समीप के पर्वत शिखर पर बैठकर उसका भक्षण करने लगे। भक्षण करते समय इसकी करोटी (खोपड़ी) नर्मदाजी में गिर पड़ी। नर्मदाजी के जल का स्पर्श होते ही उस गजासुर दैत्य का दिव्य रूप हो गया। उसी दिव्य रूप से उसने तपस्या की। शिवजी उस पर प्रसन्न हुए, वर माँगने को कहा। तब उसने यही वर माँगा कि आप मेरे चर्म को धारण करें और जहाँ मेरी करोटी (खोपड़ी) गिरी है, वहाँ रहकर आप भक्तों की मनोकामना पूर्ण करें। तभी से शङ्करजी यहाँ करोटीश्वर के रूप में रहकर भक्तों की मनोकामना पूर्ण करते हैं। यहाँ गज छाया पर्व, व्यतीपात, संक्रान्ति, कृष्णा अष्टमी, चतुर्दशी ग्रहणादि में स्नान का विशेष माहात्म्य है। यहाँ दान धर्म किये हुए का लक्ष गुणा माहात्म्य है।

पहिले यह गरुड़ेश्वर ग्राम बहुत छोटा था इसकी महिमा भी इतनी नहीं थी। जब से श्री स्वामी वासुदेवानन्दजी सरस्वती यहाँ आकर रहने लगे तब से इसकी ख्याति विशेष हुई। अब तो गरुड़ेश्वर आधुनिक साधनों से सम्पन्न छोटा-मोटा नगर ही बन गया है। यहाँ तक बड़ौदा से डबोई होकर पक्की सड़क है। बड़ी

गाड़ियाँ बसें चलती हैं, पाठशाला, डाकघर, पुलिस घर सभी हैं। स्वामीजी द्वारा स्थापित दत्त भगवान् का भव्य मन्दिर है।



श्री १०८ श्री स्वामी वासुदेवानन्द जी सरस्वती

स्वामीजी का जन्म सम्वत् १९११ में सावन्त बाड़ी राज्य में माणगाँव में हुआ था। आपके पिताश्री का नाम गणेश भट्ट रेंबे तथा माताजी का नाम रमाबाई था। इनके पिता भगवान् दत्ता-

त्रेय के परम भक्त थे। स्वामीजी बाल्यकाल से ही दत्त भक्त थे। इक्कीस वर्ष की अवस्था में अन्नपूर्णा बाई के साथ इनका विवाह हुआ। २५ वर्ष तक ये गृहस्थाश्रम में रहे। एक सन्तान हुई वह भी मर गई। सम्वत् १९४७ में इनकी धर्मपत्नी का स्वर्गवास हो गया। उसी वर्ष आपने उज्जैन में विराजमान श्री नारायण स्वामी द्वारा संन्यास की दीक्षा लेकर दण्ड धारण किया। फिर आप तीर्थ यात्रा करते हुए देश में पर्यटन करते रहे। सन् १९१३ में आप गरुड़ेश्वर पधारे तब यह स्थान घोर निर्जन था। स्वामीजी एक पेड़ के नीचे विराजमान हुए। फिर भक्तों ने फूँस की कुटिया बना दी। शनैः-शनैः चारों ओर आपकी ख्याति फैल गयी। आप संस्कृत के अच्छे ज्ञाता थे, ज्योतिष तथा आयुर्वेद भी जानते थे। संस्कृत तथा मराठी में आपके लिखे २०-२२ ग्रन्थ हैं।

सम्वत् १९७० में आपके सङ्कल्प से यहाँ भगवान् दत्तात्रेय के मन्दिर की स्थापना हुई। उसी समय आपने न्यास (ट्रस्ट) बनाकर उसका समस्त प्रबन्ध न्यासियों (ट्रस्टियों) को सौंप दिया। उसी वर्ष सम्वत् १९७० में ज्येष्ठ वदी अमावस्या को आपने अपने इस नश्वर शरीर का त्याग कर दिया। यहीं नर्मदा किनारे आपकी भव्य समाधि बनी है। वहाँ गुफा भी है। चित्रकारों ने वहाँ दत्त भगवान् के, स्वामीजी के बड़े ही सुन्दर चित्र अङ्कित किये हैं। इन्दौर की महारानी ने वहाँ बड़ा ही सुन्दर पक्का घाट बनवा दिया है। दत्त मन्दिर में भगवान् दत्तात्रेय के सम्पूर्ण जीवन के बड़े ही सुन्दर भावमय भित्ति चित्र अंकित हैं। यहाँ मार्गशीर्ष पूर्णिमा को दत्तात्रेय जयन्ती तथा आषाढ़ शुक्ला प्रतिपदा को स्वामीजी की पुण्य तिथि बड़ी धूम धाम से मनाई जाती है। यहाँ हमने रात्रि भर विश्राम किया।

यदि चाँदौद (बड़ौदा) से नर्मदा किनारे-किनारे पैदल-पैदल चलें तो हमें निम्नलिखित तीर्थ मार्ग में पड़ेंगे।

१—चाँदौद से लगभग एक मील दूरी पर कर्नाली ग्राम में सोमेश्वर तीर्थ है। यहाँ चन्द्रमा ने तपस्या की और अपने नाम से तीर्थ की स्थापना की। इसकी कथा इस प्रकार है। प्रजापति दक्ष ने अपनी ६० कन्याओं में से अश्विनी, भरणी आदि सत्ताइस कन्यायें चन्द्रमा को दीं। किन्तु चन्द्रमा रोहिणी से ही अधिक प्रेम करने लगा। तब सबने यह बात अपने पिता दक्ष से कही। यह सुनकर दक्ष बड़े कुपित हुए। उन्होंने चन्द्रमा को शाप दिया—"जा, तुझे क्षय–राजक्ष्मा–रोग हो जाय।" यह सुनकर चन्द्रमा दुखी हुए, तब से वे सब में समान भाव से रखने लगे। फिर उन्होंने यहाँ नर्मदा किनारे आकर ओर नदी और नर्मदा के तट पर घोर तपस्वा करके सिद्धि पायी। यह ओर नर्मदा संगम सबसे श्रेष्ट तीर्थ है। नर्मदा जी वैसे तो सर्वत्र पवित्र है, किन्तु अमरकंटक, ओर नर्मदा संगम और रेवासागर संगम इन तीन स्थानों में अत्यन्त दुर्लभ है। यहाँ पर कण्व महाराज की ब्रह्म-हत्या इस तीर्थ के प्रभाव से छूट गयी। यहाँ चन्द्र ग्रहण अष्टमी चतुर्दशी और रविवार की शुक्ला सप्तमी का विशेष माहात्म्य है।※ यहाँ हमारे श्री स्वामी विद्यानन्दजी महामण्डेश्वर द्वारा स्थापित गीता मन्दिर है।

२—सोमेश्वर के समीप ही कुबेरेश्वर तीर्थ है कुबेरजी से एक पतिव्रता का कुछ अपराध बन गया था। पतिव्रता ने शाप दिया—तुम जराग्रस्त हो जाओ। जब कुबेरजी ने अनुनय विनय की तो सती ने कहा—"तुम नर्मदा किनारे सोमेश्वर तीर्थ में तप करो वृद्धावस्था के दोष से छूट जाओगे।" तब कुबेरजी ने अपने नाम से कुबेरेश्वर शिवलिङ्ग की स्थापना करके तपस्या की तब वे सती के शाप से मुक्त हुए। यहाँ नर्मदाजी के जल में खड़े

※ (रे० खं० १०७ अ०)

होकर सुवर्ण दान का विशेष माहात्म्य है। नर्मदा किनारे का यह एक प्रकार से कनखल तीर्थ है।❀

३—कुबेरेश्वर के सन्निकट ही पावकेश्वर तीर्थ है भृगुजी की पत्नी की सगाई पहिले किसी असुर से हो गई थी। पीछे उसके पिता ने उसका विवाह भृगु ऋषि के साथ कर दिया। एक दिन जब भृगु ऋषि आश्रम में नहीं थे तो वह असुर वराह का रूप रखकर आश्रम में आया। उस समय यज्ञशाला में अग्निदेव प्रज्वलित हो रहे थे। गर्भवती भृगु पत्नी वहाँ बैठी थीं। उस असुर ने अग्निदेव से कहा—"देखो, अग्नि! तुम देवताओं के मुख हो। सत्य बताओ, इस स्त्री की पहिले मेरे साथ सगाई हुई थी या नहीं?"

अग्नि ने सत्य बात बता दी कि "हाँ हुई थी।" तब वह असुर, भृगुपत्नी का हरण कर ले गया। वह रोती हुई जा रही थी। भय के कारण उसके गर्भ का च्यवित हो गया। उससे बड़ा तेजस्वी बालक उत्पन्न हुआ। च्यवित होने से उनका नाम च्यवन ऋषि हुआ। उनकी दृष्टि मात्र से ही वह असुर जलकर भस्म हो गया। जब बच्चे को लेकर रोती हुई भृगुपत्नी आश्रम में आई तब तक ऋषि आ चुके थे। सब वृत्तान्त सुनकर ऋषि ने पूछा—"असुर को यह बात बतायी किसने थी?"

तब भृगुपत्नी ने कहा—"अग्निदेव ने बताई थी।"

इतना सुनते ही ऋषि ने शाप दिया—"अग्निदेव! तुम सर्वभक्षी हो जाओ।"

इस पर अग्नि ने अपना कार्य बन्द कर दिया। ब्रह्माजी ने आकर अग्नि को समझाया। तब अग्नि ने यहाँ नर्मदा तट पर अपने नाम से पावकेश्वर शिवलिङ्ग की स्थापना करके तप किया,

---

❀ (रे० खं १०५ अ०)

इससे उनका दोष निवृत्त हुआ। यहाँ स्नान दान भजन पूजन से अभक्ष्य भक्ष्य का दोष मिट जाता है। वन्हि सूक्त के पाठ से दारिद्र दुःख दूर हो जाता है।[१]

४—पावकेश्वर के पास ही वरुणेश्वर तीर्थ है। यहाँ वरुण तपस्या करके लोकपाल बन गये।

५—वरुणेश्वर के सन्निकट नक नामक ग्राम में नंदिकेश्वर तीर्थ है। शिवजी से बिना पूछे दधि-मधु क्षेत्र से नन्दीश्वर कैलास चले गये। इस पर शिवजी ने उन्हें पृथ्वी पर बैल बनने का शाप दिया। उन्हीं की आज्ञा से यहाँ तप करके वे शाप मुक्त हुए।[१]

६—दधि स्कन्ध तथा मधु स्कन्ध तीर्थ नर्मदाजी में हैं। इसकी कथा इस प्रकार है। एक गोप दधि का मटका लेकर दही बेचने जा रहा था। एक वैश्य एक घड़े में मधु बेचने जा रहा था, दोनों यहाँ नर्मदा किनारे आकर घड़ों को रखकर नर्मदाजी में स्नान करने लगे। उस समय एक व्याघ्र आया। व्याघ्र को देखकर ये घड़ों को लेकर भागे। व्याघ्र ने इनका पीछा किया। ये भय के कारण गिर पड़े गिरने से इनके घड़े फूट गये। दधि और मधु बहने लगे। उसी समय वहाँ से दो शिवलिङ्ग प्रकट हुए। घड़ों के फूटने का शब्द सुनकर व्याघ्र भाग गया। तब इन दोनों ने, उन दोनों लिङ्गों की विधिवत् पूजा की। शिवजी ने प्रसन्न होकर इन दोनों को अपना लोक दिया। यहाँ दधि, मधु दान का विशेष माहात्म्य है।[२]

७—दधि स्कन्ध के पास ही नारदेश्वर तीर्थ है यहाँ नारदजी ने तथा अन्य बहुत से देवों ने तपस्या करके सिद्धि प्राप्त की।[३]

८—नारदेश्वर से आगे चूड़ेश्वर ग्राम में ही अश्वपर्णी संगम

---

१. (रे० खं० १०४ अ०) २. (रे० खं० १०३ अ०)
३. (रे० खण्ड ६८ अ०)

है। यह चन्द्रकावाह अश्वपर्ण की तपस्थली है। इसकी कथा इस प्रकार है—समुद्र मन्थन के समय उच्चैश्रवा नाम का अश्व उत्पन्न हुआ। उसके (१) अश्वपर्ण, (२)सुपर्ण, (३) मधुपर्ण और (४) मरुद् गति ये चार पुत्र हुए। इनमें अश्वपर्ण चन्द्रदेव का वाहन हुआ। जब चन्द्रदेव ने यहाँ तप किया तो उसके वाहन अश्वपर्ण ने भी आहार परित्याग करके घोर तप करना आरम्भ किया। जब कुछ काल के पश्चात् भूख के कारण अश्व भूमि पर गिर पड़ा। तब वटु रूप में शङ्करजी ने प्रकट होकर उसे सरूपता प्रदान की। जहाँ वटु रूप शिवजी प्रकट हुए वटवीश्वर शिवजी हैं। उसी अश्व के नाम से अश्वावती यह नदी है।

९—अश्वपर्णी संगम के समीप चन्द्रघाट में चन्द्रेश्वर तीर्थ है। इसे गुप्त प्रयाग भी कहते हैं। चन्द्रमा को मयूर कल्प में जब राजयक्ष्मा होने का शाप लगा, तब उसने यहीं तप करके सिद्धि प्राप्त की। यह गुप्त प्रयाग है। यहाँ समस्त कार्य तीर्थराज प्रयाग के ही सदृश किये जाते हैं।[1]

१०—चन्द्रेश्वर से कुछ ही दूर पर तिलक बाड़ा ग्राम में मातृ तीर्थ है। सप्तमातृकायें यहीं शापमुक्त अहल्या को लेकर गौतम ऋषि के समीप आईं। तभी से सप्तमातृका यहाँ रहकर क्षेत्र का कल्याण करती हैं। अष्टमी, नवमी तथा चतुर्दशी का यहाँ विशेष माहात्म्य है। यहाँ पूजा करने से स्त्रियों का वन्ध्यापन नष्ट होता है।[2]

११—मातृ तीर्थ के सन्निकट ही गौतमेश्वर तीर्थ है। प्राचीन काल में महर्षि गौतम ने यहाँ घोर तप किया था। इनके तप से प्रसन्न होकर शिवजी प्रकट हुए और वर माँगने को कहा।

तब गौतम ऋषि ने कहा—"भगवन्! पत्नी के बिना न तो

---

१. (रे० खं० ९७ अ०)   २. (रे० खं० ९६ अ०)

यज्ञ याग ही होते हैं, न गृहस्थी के ही कोई कार्य सम्पन्न होते हैं। अतः मुझे एक मनोरमा पत्नी प्रदान कीजिये।"

यह सुनकर शिवजी हँसे और बोले—"मुनिवर ! धैर्य धारण कीजिये। अभी शीघ्रता न करें। त्रेतायुग में जब रामावतार होगा तब तुम्हें ऐसी त्रिभुवन सुन्दरी पत्नी प्राप्त होगी जिसमें तनिक हल (पाप) न होगा अहल्या उसका नाम होगा।" यह सुनकर गौतमजी फिर तपस्या करने लगे। जब त्रेता में अहल्या मिली और उसे पाषाण होने का शाप हुआ और श्रीराम द्वारा उसका उद्धार हुआ तो यहीं मातृका उन्हें लेकर गौतम ऋषि के समीप आई थीं। तभी उनके नाम से यह गौतमेश्वर तीर्थ विख्यात हुआ। जिनका विवाह न होता हो वे यहाँ आकर तपस्या करें तो उन्हें निश्चय ही पत्नी की प्राप्ति होगी।[1]

१२—गौतमेश्वर के सन्निकट ही में तिलकेश्वर है इनके भिन्न-भिन्न मन्वन्तरों में, उन-उन मनुओं के नाम से प्रियव्रतेश्वर, चैत्रेश्वर, अजस्रेश्वर, शान्तीश्वर, सत्येकेश्वर, शतद्युम्नेश्वर आदि नाम हुए। जब वैवस्वत मनु के पुत्र तिलक ने गौतमजी द्वारा इनकी महिमा सुनी तो इन्होंने तिलकेश्वर नाम से इनकी पूजा की और यहाँ तपस्या की। यहाँ सब समय तपस्या की जा सकती है। तिल दान का विशेष माहात्म्य है।[2]

१३—तिलकेश्वर के समीप ही मणीश्वर नामक ग्राम में मणि नागेश्वर तीर्थ है। जब कद्रू ने अपने पुत्रों को राजा जनमेजय के यज्ञ में जल जाने का शाप दे दिया तब मणि नाग ने यहाँ तप किया। शिवजी ने उसे अपने कण्ठ का हार बना लिया।[3]

१४—मणिनागेश्वर से कुछ ही दूर पर वासणा ग्राम में

---

१. (रे० खं० ६५ अ०) २. (रे० खण्ड ६४ अ०)
३. (रे० खं० ६३ अ०)

कपिलेश्वर तीर्थ है। महर्षि कपिल ने जब सगर के पुत्रों को अपनी दृष्टि से भस्म कर दिया तो यहाँ तपस्या करके शान्ति प्राप्त की।*

१५—कपिलेश्वर से कुछ ही दूर पर कामेश्वर तीर्थ है यह गाणपत्य तीर्थ है। गणेशजी ने यहाँ तपस्या करके सिद्धि प्राप्त की है। मार्गशीर्ष की अष्टमी का विशेष माहात्म्य है गौरी गणेश की यहाँ पूजा की जाती है।*

१६—रवीश्वर तीर्थ भी यहीं है। भानुमती नामकी कन्या के प्रति सूर्य का मानसिक दोष होने से रवि ने यहाँ तपस्या करके सिद्धि प्राप्त की। यहाँ तप करने से सबकी मनोकामना पूर्ण होती है।*

१७—रवीश्वर तीर्थ से आगे अगनेश्वर नामक ग्राम में केदारेश्वर तीर्थ है। इसकी कथा इस प्रकार है—आन्ध्र प्रदेश का रहने वाला एक शांडिल्य गोत्रिय ब्राह्मण केदारनाथ की यात्रा के लिये चला। चलते-चलते वह यहाँ नर्मदाजी के किनारे आया। पैदल चलने से थका हुआ था। भूख-प्यास से व्याकुल होकर यहाँ आ गया। तब स्वप्न में नर्मदाजी और केदारनाथ आये और इससे बोले—"हे ब्राह्मण ! मैं तेरी भक्ति से प्रसन्न होकर यहीं आ गया हूँ तू उठकर भोजन कर।" जब उसकी आँखें खुली तो उसे विश्वास नहीं हुआ। तभी उसके सिर के नीचे से एक शिवलिङ्ग प्रकट हो गयी। तब उसने उनकी केदारेश्वर की भावना से विधि-वत् पूजा की।×

१८—इसी अकतेश्वर (अगस्तेश्वर) ग्राम में अगस्तेश्वर नाम के शिवजी हैं। एक बार विन्ध्याचल ने सूर्य से कहा—"तुम जैसे सुमेरु पर्वत की प्रदक्षिणा करते हो, वैसी ही मेरी भी प्रदक्षिणा

* (रे० खण्ड ६२ अ०) × (रे० खं० ८५ अ०)

किया करो। सूर्य ने कहा--हमें तो ब्रह्माजी की सुमेरु प्रदक्षिणा की ही आज्ञा है। इस पर विन्याचल बढ़ने लगा। सब देवता ब्रह्माजी के समीप गये। ब्रह्माजी ने कहा--वह जड़ है, हमारी बात न मानेगा। अगस्त्य उसके गुरु हैं, उन्हें ले चलो। अगस्त्य जी को मनाकर ले गये। गुरु को देखकर विन्ध्याचल ने साष्टाङ्ग दण्डवत की। साष्टाङ्ग दण्डवत का यह नियम है कि जब तक गुरु उठने की आज्ञा न दे तब तक उठे नहीं। दण्ड की भाँति लेटा ही रहे। तब अगस्त्य मुनि ने कहा—"बेटा ! जब तक हम लौटे नहीं तब तक ऐसे ही लेटे रहना।" अगस्त्यजी आगे बढ़ गये। देवताओं ने प्रार्थना की—महाराज ! आप दक्षिण में ही रहिये। तब से अब तक विन्ध्याचल लेटा ही हुआ है। यहाँ अगस्त्यजी ने अपने नाम से अगस्तेश्वर शिवजी की स्थापना करके पूजा की तभी से यह तीर्थ अगस्तेश्वर के नाम से विख्यात हुआ। यहाँ कार्तिक की चतुर्दशी का विशेष माहात्म्य है।*

१९—अगस्तेश्वर से आगे गरुड़ेश्वर ग्राम में कुमारेश्वर तथा करोटेश्वर हैं। जिनका वर्णन हम पहिले ही कर चुके हैं। हम लोग रात्रि में गरुड़ेश्वर ही में रहे। बहुत देर हो जाने से यहाँ रात्रि में रासलीला नहीं हुई।

छप्पय

(१)

चक्रतीर्थ चाँदौद न्हायके आगे आओ।
कर्नालीमें पहुँच तीर्थ सोमेश्वर जाओ॥
बरबाड़ा वरुणेश फेरि चूड़ेश्वर थल बर।
है यह गुप्त प्रयाग गोमतेश्वर तिलकेश्वर॥

---

* (रे० खण्ड ८३ अ०)

मणि नागेश्वर मणि नदी, कपिलेश्वर हैं तीर्थवर।
कामेश्वर रेंगण रहें, सँजरौलीमें रवीश्वर॥

(२)

अकतेश्वर वर ग्राम अगस्तेश्वर शिव पावन।
केदारेश्वर तहाँ तीर्थ अति ही मनभावन॥
गरुड़ेश्वर शुभ ग्राम करोटीश्वर तीरथ वर।
कार्तिकेय तपथली कुमारेश्वर सुन्दर तर॥
गरुड़ेश्वर पावन परम, शान्त दान्त थल विमलवर।
दत्तात्रेय सुधाम शुभ, भव्य भवन मन्दिर सुघर॥



नर्मदा तट के एक घाट का दृश्य

गरुड़ेश्वर से कुक्षी

[२०]

म्लेच्छाः पुलिन्दास्त्वथ यातुधानाः
पिबन्ति येंऽम्भस्तव देवि पुण्यम् ।
मुक्ता भवन्तीह भयात्तु घोरा-
न्निःसंशयं तेऽपि किमत्र चित्रम् ॥*

(स्कन्दे)

छप्पय

परम नीचतैं नीच म्लेच्छ अरु यातुधान जे ।
हिंसक क्रूर पिशाच अधम अघ दोष खान जे ॥
ते तव पावन परम पान पय प्रतिदिन करिहैं ।
भव-सागर भय भरित तुरत ते तातैं तरिहैं ॥
पय प्रभावतैं जीव जड़, जारैं जड़ता जगत की ।
देवि ! नहीं अचरज कछू, टारो विपदा भगत की ॥

हमारी नर्मदाजी तो एक मात्र अपने पिता शङ्करजी की शरणागत हैं । इन्हें शङ्करजी का ही एकमात्र आश्रय है । इसीलिये

---

* हे भगवति नर्मदे ! चाहें म्लेच्छ हों, पुलिन्द हों और चाहें राक्षस ही क्यों न हों, जो तुम्हारे परम पावन पय का पान करते हैं, वे लोग भी निःसन्देह भयङ्कर भयों से विमुक्त बन जाते हैं । इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं । क्योंकि हे देवि ! आपके पय का प्रभाव ही ऐसा है ।

इनके नाम के साथ सदा सर्वदा इनके शरणदाता पिता का नाम लिया जाता है। "नर्मदे हर" ये तो शिवजी की शरणागत हैं, किन्तु इनकी शरण में कोई भी पापी-से-पापी जाय, वह भी विशुद्ध बन जाता है। शरणागत भक्त की महिमा ही ऐसी है। श्रीमद्‌भागवतकार कहते हैं—जो शरणागत भक्तों की शरण ग्रहण कर लेते हैं, वे चाहें किरात हों, हूण हों, आन्ध्र हों, पुलिन्द हों, पुल्कस हों, आभीर हों, कंक हों यवन हों, चाहें खस आदि कैसे भी जाति के हो भक्तों की शरण आने पर वे भी परम पावन बन जाते हैं, ऐसे सर्वशक्तिवान् भगवान् को बारम्बार नमस्कार है।× और उनके शरणागतों को तथा शरागतों के शरणागतों को बारं-बार नमस्कार है। 'नर्मदे हर'

हाँ, तो हम लोग फाल्गुन शुक्ला चतुर्दशी (१२ मार्च) को प्रातःकाल गरुड़ेश्वर से प्रातः नर्मदा स्नान करके चल दिये। गरुड़ेश्वर में गुजरात का हमारा यह अन्तिम विश्राम स्थान था। आज हम पुनः मध्यप्रदेश में पहुँच जायँगे। छोटा उदयपुर से आगे मध्यप्रदेश की ही सीमा है। इसलिये गुजरात के विश्व हिन्दु परिषद् के अध्यक्त वकील साहब तथा अन्यान्य कार्यकर्ता यहाँ से ही हमसे विदा प्राप्त करके लौट गये। राजा भैया जो बड़ौदा से हमारे साथ आये थे। दवेजी आदि अपने साथियों के सहित वे भी लौट गये। हाँ, मध्यप्रदेश विश्व हिन्दु परिषद् के सहमन्त्री गुप्ताजी जो आरम्भ से हमारे साथ थे वे अन्त तक प्रयागराज तक हमारे साथ ही रहे।

× किरातहूणान्ध्रपुलिन्दपुल्कसा
आभीरकङ्का यवनाः खसादयः।
येऽन्ये च पापा यदुपाश्रयाश्रयाः
शुध्यन्ति तस्मै प्रभविष्णवे नमः॥
(श्री० भा० २ स्क० ४ अ० १८ श्लोक)

हम लोग गरुड़ेश्वर भादरवा, कोपरी, सुखाकोठी, अमेर, हरीपुरा, नवापुरा, काटकई, उचाद, बाड़िया, जेतपुर, शीरा, गोधाम, वाभरिया, अकोना, नरुबाड़ी, सोठलिया, बधाम, रङ्गापुर आश्रम, देवद, धनीबाड़ी, धनपुरी सीगला आदि स्थानों में होते हुए छोटा उदयपुर पहुँचे। यहाँ के राजा को हमारी नाहन शिरमौर की राजमाता श्री मदालसा देवी की पुत्री राजकुमारी प्रेमा (कृष्णा) विव्राही थी। वर्ष भर में ही विधवा हो गयी। राजा सब समाप्त हो गये। राजमहल खँडहर हो गये। राजमहलों को देखते हुए, खोंस, बरवेड़ी, रानेबाड़, सुरखेड़ा, अवाना, देवहाट, चौरुड़ीया, जोड़ाबाट, राजघाट सुनकड़ नदी पार करके अलीराजपुर पहुँच गये। जहाँ गुजरात सीमा समाप्त होती है और मध्य प्रदेश आरम्भ होता है वहाँ अलीराजपुर तथा मध्यप्रदेश के बहुत से व्यक्ति स्वागत के लिये आये हुए थे। यही वे भीलों के ग्राम हैं जहाँ यात्रियों को लूट लेते हैं। आज होली का दिन था। वनवसी भीलों का यही सबसे बड़ा पर्व है। आज ही युवक भील अपनी चहेती युवतियों को भगा ले जाते हैं। पहिले से ही साठ गाठ लगी रहती है। विवाह की इन वनवासी भीलों में यही प्रथा है। आज ये सब-के-सब सुरा के मद में मत्त हुए नाचते गाते सैकड़ों सहस्रों की संख्या में जा रहे थे। आज स्थान-स्थान पर इनके मेले लगते हैं उन्हीं में युवक अपनी भावी चहेती को लेकर भाग जाते हैं। आज अलीराजपुर में भी इनका मेला था। सड़क पर स्त्री पुरुष नाचते गाते, मद में मत्त हुए जा रहे थे। हमसे तो कोई बोला नहीं। किन्तु हमारी बस पर उन्होंने पत्थर फेंके शीशा टूट गये। दो चार के चोटें भी आयीं किन्तु कोई विशेष दुर्घटना नहीं हुई। अलीराजपुर में आज हमारा मध्यान्ह का भोजन था। अतः हम सबको राजा के भवनों में हठराया गया। अलीराजपुर के महाराज कहीं के

राजदूत बनकर विदेश में रहने लगे हैं और लोग बड़े-बड़े नगरों में चले गये। राजमहल खाली पड़े थे। भूतावास बने हुए थे। न उनमें झाड़ू लगी थी न स्वच्छता। मनुष्य की माया और वृक्ष की छाया उसके साथ ही चली जाती है। यहाँ के लोगों ने भोजन का सर्वोत्तम प्रबन्ध किया था। सबके लिये बाफला और भाँति-भाँति के सुन्दर पदार्थ बनाये। हमारे पुराने साधक मुकुन्द प्रसाद भी सपत्नीक मिले, यहाँ के एक सेठ हमारे साथ यात्रा में थे। इस प्रकार यहाँ के भक्तों ने सेवा सत्कार बड़े प्रेम से किया। आज यहाँ बनबासी कोल भीलों का मेला था। सहस्रों कोल भील स्त्री पुरुष नवीन वस्त्र पहिने नृत्य कर रहे थे। उनकी बाँसुरी और ढोल की सम्मिलित ध्वनि अपूर्व थी। मदिरा के मद में मदमाते बने मस्ती में झूम रहे थे। सब-के-सब आत्म विस्मृत थे। बनवासियों का ऐसा बृहद् रूप में नृत्य हमने पहिले ही पहिल देखा था। हमें उन सबों ने अपनी कलायें दिखायीं।

तदनन्तर शोभा यात्रा निकाली दूर-दूर से दर्शनार्थी आये हुए थे। एक तो कोल भीलों का मेला, दूसरे हम नर्मदा परिक्रमार्थियों का मेला एक अपूर्व अवर्णनीय दृश्य था। हमें एक भव्य विमान पर बिठाया गया। अँगरेजी बाजों की आकाश को गुंजाने वाली ध्वनियों से वहाँ का वातावरण अत्यन्त सरस बन गया था। अबीर और गुलाल की वर्षा से दिशायें और विदिशायें रङ्गमय बनी हुई थीं। जय ध्वनियों से आकाश गुंजायमान हो रहा था। अलीराजपुर धनिक श्रीमानों की वस्ती है। सभी घरों की महिलायें सैकड़ों सहस्रों की संख्या में वस्त्राभूषणों से सुसज्जित होकर कलशों के ऊपर चौमुखे दीपक जलाये पूजन के लिये निकल रही हैं। कोई अटा अटारियों से छज्जा तिवारियों से पुष्पों की वर्षा कर रही हैं। सभी आकर तिलक करती हैं, अबीर गुलाल लगाती हैं। भीड़ की कोई सीमा नहीं। कोल भीलों की

मण्डलियों का नृत्य पृथक् होता चलता है। लोगों की कीर्तन मंडलियाँ अनुराग में भरकर नृत्य कर रही थीं। घंटों यह शोभा यात्रा चलीं। अन्त में वह शोभा यात्रा एक विशाल जन सभा के रूप में परिणत हो गयी। भाषण हुए। वहाँ के स्वयं सेवकों ने वनवासी बालकों के लिये एक आश्रम का प्रस्ताव रखा। मैंने समुपस्थित जन्ता से आर्थिक सहायता करने को विनती की। तत्क्षण सहस्रों रुपये आ गये। उस सब धनराशि को वहीं के कार्य कर्ताओं को सौंपकर मैं कीर्तन करते-करते शनैः-शनैः जनता को चीरता हुआ अपनी मोटर में आकर बैठ गया। सबने मोटर घेर ली। दिन डूबने ही वाला था। आज हमें कुक्षी पहुँचना है। मार्ग कोल भीलों के ग्रामों से होकर जाना था। यह स्थान शूल-पाणि की झाँड़ियों के अन्तर्गत है। अतः यहाँ के पुलिस अधि-कारियों ने एक सशस्त्र पुलिस की गाड़ी हमारी सुरक्षा के लिये साथ भेजी। आगे-आगे सशस्त्र पुलिस की गाड़ी चल रही थी। उसके पीछे हमारी गाड़ियाँ चल रही थीं। मार्ग में अनेकों स्थानों पर धनुष वाण लिये बनवासी मिले। किन्तु हमसे वे कोई बोले नहीं। पुलिस की गाड़ी बहुत दूर जाकर एक थाने पर रुक गयी और हमसे कह दिया—अब आप निर्भय होकर चले जायँ, आगे किसी प्रकार का भय नहीं। इस प्रकार हम चलते-चलते रात्रि के १० बजे के लगभग कुक्षी में पहुँच गये। वहाँ के भक्तगण सायं-काल से ही हमारी प्रतीक्षा कर रहे थे। सहस्रों का जन समूह पण्डाल सजाये, विद्युत का प्रकाश किये हुए बैठे थे। शीघ्रता से पूजन आदि करके सभा में आये। बारह एक बजे तक सभा चली, फिर आकर सब लोग सो गये। यदि हम गरुड़ेश्वर से पैदल-पैदल नर्मदा किनारे कुक्षी तक आते तो मार्ग में कौन-कौन से तीर्थ पड़ते इनका वर्णन आगे किया जायगा।

१—गरुड़ेश्वर में जो करोटीश्वर तीर्थ है, उससे कुछ दूर पर

भीमकुल्या संगम है। यहाँ संगमेश्वर शिवजी का मन्दिर है। भीम रूपी शिवजी ने देवताओं के साथ इस तीर्थ को स्थापित किया है।[१]

२—भीमकुल्या संगम के सन्निकट बागड़िया ग्राम में आदित्येश्वर तीर्थ है। इसकी कथा इस प्रकार है—प्राचीनकाल में एक बार घोर अकाल पड़ा। उस समय सप्तर्षि तथा उनके साथ और भी बहुत से ऋषियों ने यहाँ नर्मदा किनारे आकर नर्मदा मैया का आश्रय लिया। उस समय ऋषिगण क्या देखते हैं कि एक भयंकर रूप वाली राक्षसी लाल वस्त्र पहिने ऋषियों की ओर आ रही है उसके साथ में भयङ्कर वेष वाले चार राक्षस भी हैं। उनकी भयङ्कर मूर्ति को देखकर समस्त ऋषिगण भयभीत हो गये। वे भगवान् आदित्येश्वर के निकट जाकर भाव विह्वल होकर स्तुति करने लगे। उन सबने भगवती नर्मदाजी की भी स्तुति की। तब नर्मदाजी ने उन्हें अभय प्रदान की। उन पाँचों ने तुरन्त अग्नि में प्रवेश किया। अग्नि में प्रवेश करते ही बैकुंठ से विमान आया और उसमें बैठकर दिव्य रूप धारण करके बैकुण्ठ चले गये। तब ऋषियों ने इस परम पावन तीर्थ की महती महिमा जानी। यहाँ रविवार की सप्तमी का विशेष माहात्म्य है, क्योंकि यह आदित्य श्रीसूर्यनारायण सम्बन्धी तीर्थ है।[१]

३—आदित्येश्वर के समीप में कम्बलेश्वर तीर्थ है। यहाँ कम्बल दान का विशेष माहात्म्य है।[२]

४—कम्बलेश्वर के सन्निकट ही पुष्करिणी तीर्थ है। यह सूर्य द्वारा स्थापित तीर्थ है। इसमें सूर्यनारायण सदा निवास करते हैं। यह नर्मदा के तीर्थों में कुरुक्षेत्र के सदृश तीर्थ है। सूर्य तथा चन्द्रग्रहण में यहाँ के स्नान का विशेष माहात्म्य है।[२]

---

१. (रे० खं० ७८ अ०) २. (रे० खं ७६ अ०)

५—पुष्करणी तीर्थ से कुछ दूरी पर विमलेश्वर तीर्थ है। प्राचीनकाल में यहाँ गोपाल नाम का एक ग्वाला रहता था। उससे किसी कारण वश सवत्सा गौ की हत्या हो गयी। तब उसने यहाँ नर्मदा किनारे आकर घोर तप किया, इससे वह गो हत्या के दोष से छूटकर विमल बन गया और शिवजी का विमलेश्वर नाम का गण बन गया। उसी के द्वारा स्थापित यह परम पुण्य प्रद तीर्थ है।❀

६—विमलेश्वर से तीन मील आगे कपिल तीर्थ है। उस पार सामने शूलपाणि तीर्थ है। इस पर उस पार यह शूलपाणि की घोर झाड़िया हैं। जहाँ विशेषकर वनबासी कोल भील रहते हैं। कपिलेश्वर तीर्थ में कपिल महर्षि ने तपस्या की थी। यह सिद्धि स्थली है।❀

७—विमलेश्वर के समीप भी एक पुष्करिणी तीर्थ है शूलभेद तीर्थ की महिमा जानने के निमित्त जब शिवजी ने शूल उठाया था, तब वह शूल सूर्यनारायण के रथ के घोड़ों में लगा। इससे सूर्यनारायण के रथ के घोड़े विदुक गये और सूर्यनारायणजी को भी सम्भ्रम हो गया, वे चौंक पड़े कि यह क्या हुआ। उसी दशा में उनके हाथ का कमल यहाँ गिर गया उसी से यह पुष्करिणी प्रकट हुई। यहाँ दान, धर्म, जप, तप, ब्राह्मण भोज का लक्षों गुणा माहात्म्य है। रविवारी सप्तमी का विशेष पर्व है।+

८—पुष्करिणी तीर्थ के आगे मार्ग अत्यन्त ही संकीर्ण है। नर्मदा यात्रा में सबसे कठिन भयावह यही मार्ग है। इस पार और उस पार पर्वत श्रेणियों से संयुक्त एकान्त ऊँचा नीचा, जन शून्य मार्ग है। नगर बहुत ही कम हैं। दश मील चलने पर माकर खेड़ा गाँव पड़ता है। उस पार दक्षिण की ओर सिंदूरनदी का संगम है। यहाँ से भी १२ मील आगे घोर झाड़ियों और बड़े-

❀ (रे० खं ७६ अ०)

+ (रे० खण्ड ६२ अ०)

बड़े पाषाणों से परिपूर्ण कठिन मार्ग को पार करने के अनन्तर पापली घाट आता है। पापली घाट से कुछ दूर पर देवदी ग्राम है। उसी के समीप बाणगंगा संगम है। इस संगम के स्नान का विशेष माहात्म्य है।

९—बाणगङ्गा संगम से ८ मील की दूरी पर हापेश्वर तीर्थ है। यह आठ मील का मार्ग घोर जङ्गल का मार्ग है। कहीं-कहीं बनवासियों के छोटे-मोटे ग्राम पड़ते हैं विकट मार्ग है। हापेश्वर को हन्सेश्वर या हप्येश्वर कहते हैं। यह स्थान छोटा उदयपुर राज्य में था। मन्दिर २२ खम्बों का बहुत ही भव्य बना है। छोटा उदयपुर राज्य की ओर से यहाँ नर्मदा परिक्रमा के यात्रियों को सदावर्त भी मिलता था। घोर वन में यह दर्शनीय स्थान है। इसकी कथा भी सुन लीजिये—

जब इन्द्र को ब्रह्महत्या लगी तो ब्रह्माजी ने पृथ्वी, वृक्ष, स्त्रियों तथा जल इन चारों को बाँट दी। जल के स्वामी वरुण हैं उनको भी एक भाग मिला। अतः उन्होंने इस स्थान पर आकर घोर तपस्या की। शंकरजी ने प्रसन्न होकर इन्हें शान्ति प्रदान की। यह वरुणदेवजी द्वारा स्थापित तीर्थ परम पवित्र और पुण्य प्रद है।+

१०—हापेश्वर से आगे कठिन मार्ग है, पर्वतों की कठिन चढ़ाई है। निर्जन मार्ग है। इस शूलपाणि की झाड़ियों में होते हुए २९ मील दूरी पर इतनी संगम है। कहते हैं वनबास के समय में यहाँ पाण्डवों ने यज्ञ किया था। और भी बहुत से राजाओं ने यहाँ घोर वन में यज्ञ किये थे। सुनते हैं अब भी यहाँ यज्ञ की भस्म निकलती है। इतनी संगम में स्नान दान तपस्या का विशेष माहात्म्य है।+ यहाँ वैजनाथ शिव हैं।

+ (वशि० सं० ३४ अ०)

११—इतनी संगम से आगे वैसे ही वन पर्वत तथा झाड़ियों को लाँघते हुए कठिन मार्ग से कतखेड़ा घाट मिलता है। यह स्कन्द कार्तिकेय स्वामी का स्थापित तीर्थ है।

१२—कतखेड़ा घाट से ११ मील वैसे ही भयंकर झाड़ी मार्ग से हरणफाल घाट आता है। सामने दक्षिण तट को भी हरणफाल घाट ही कहते हैं। उस पार के विवरण में हम बता ही चुके हैं।

१३—हिरणफाल से ४ मील ऐसे ही विकट मार्ग से धर्मराय तीर्थ आता है। यह पाण्डवों की तपस्थली है। धर्मराज युधिष्ठिर ने अपने नाम से इस तीर्थ की स्थपना की थी।

१४—धर्मराय से तीन मील आगे अरण्य के मार्ग से मेघनाद तीर्थ है। यह रावण के पुत्र मेघनाद द्वारा स्थापित तीर्थ है। समीप ही रावण कुम्भकर्ण की भी तपस्थली बतायी जाती है।

१५—मेघनाद तीर्थ से १ मील आगे कोटेश्वर तीर्थ है। इसे कुण्डेश्वर भी कहते हैं। कुवेर के पुत्र कुण्डदानव ने इसे स्थापित किया। यहाँ गौदान का विशेष माहात्म्य है। यहाँ पर समस्त शुभ कार्य शीघ्र ही सफल होते हैं।÷

शूलपाणि की जो कठिन झाड़ी बतायी जाती है, वह यहाँ आकर समाप्त हो जाती है। यहाँ से आगे अब कोई कठिनाई नहीं। साधारण मार्ग है।

१६—कोटेश्वर से ७ मील आगे चिखलदा पंचकुण्ड तीर्थ है। मार्ग सर्वथा साधारण है। आगे न तो मार्ग ही शूलपाणि की झाड़ी के सदृश दुखद है और न अब किसी प्रकार का भय ही है। यहाँ पर नीलकण्ठेश्वर, हरिहरेश्वर और अग्निश्वर शिव

÷ (रे० खं० ६० अ०)

हैं। यह अग्निदेव प्रधान तीर्थ है। यहाँ सप्तर्षियों ने तप किया था, अग्निदेव का यहाँ नित्य निवास बताया गया है। प्राचीन काल में समस्त ऋषि मुनियों ने अग्निदेव को ब्रह्मस्वरूप मानकर उनकी स्तुति की। तब अग्निदेव ने प्रसन्न होकर वरदान दिया— जो यहाँ आकर विधिपूर्वक श्रद्धा से यज्ञ करेंगे, वे विमुक्त बन जायँगे। तभी समस्त ऋषि मुनियों ने मिलकर अग्निश्वर शिवजी की स्थापना की। यहाँ पर यज्ञ, तप, दान तथा अन्यान्य धार्मिक कार्यों का तथा ब्रह्मभोज का विशेष माहात्म्य है।॥

इस प्रकार यहाँ तक हम कुक्षी के सामने पहुँच गये। अब कुक्षी से आगे महेश्वर तक का वर्णन आगे किया जायगा।

छप्पय

(१)

गरुड़ेश्वरमें करो दत्त मन्दिरके दरसन।
गाँम गमोणा जहाँ भीमकुल्या जल परसन॥
शूलपाणिकी झाड़ि संगमेश्वरतैं आगे।
कम्बलेश शिव यहाँ मार्ग अति दुखप्रद लागे॥
विमलेश्वर बड़गाँवमें, कपिलेश्वर हैं तीर्थवर।
माकड़खेड़ा देवली, बाणगङ्गसंगम सुघर॥

(२)

हंसेश्वर बन विकट घोर जंगल ऊँचे गिरि।
शाकरजा-मथबार बिकट झाड़ी आवैं फिरि॥
इतनीसंगम विमल निकट है अलीराजपुर।
हिरनफाल हिरनाक्ष तपथली अति ही मनहर॥
धर्मराज थापित विमल, धर्मेश्वर शिव मुक्तिदा।
मेघनाद तप थल जहाँ, कोटेश्वर पुनि चिखलदा॥

॥ (रे० खं ४५ अ०)

कुक्षी से महेश्वर

[२१]

सरांसि नद्यः क्षयमभ्युपेता
घोरेयुगेऽस्मिन् हि कलौ प्रदूषिते ।
त्वं भ्राजसे देवि जलौघपूर्णा
दिवीव नक्षत्रपथे च गंगा ॥*

(स्कन्दे)

छप्पय

क्रूर कठिन कलिकाल करै कलुषित तीरथ सब ।
सूखें सब सर सरित न पावैं पावन जल तब ॥
किन्तु एक तुम देवि ! सतत नित बहति रहति हो ।
कलि कलुषित जे जीव विमल तिनि सुखी करति हो ॥
सुरसरि त्रिभुवन पाविनी, नभ गंगा तुम नर्मदा ।
बनी रहो अक्षय सतत, रहो एकरस सर्वदा ॥

जो काल सबको खाता रहता है, सबको कवलित करता रहता है, उसकी कुटिल गति है । कालस्य कुटिला गतिः । संसार

---

* हे नर्मदे देवि ! अति घोर परम दूषित कलिकाल के आने पर अनेक नदियाँ, बहुत से तालाब क्षय को प्राप्त हो जाते हैं अर्थात् सूख जाते हैं, किन्तु हे भगवति ! जल से परिपूरित स्वर्ग के सदृश एक तो तुम और दूसरी आकाश पथ में शोभायमान गंगाजी दो ही नहीं सूखतीं । तुम सर्वदा सुशोभित होती रहती हो ।

एक चक्र है, उस चक्र को काल घुमाता रहता हैं। काल कभी स्थिर नहीं रहता। वह सबकी गणना करता रहता है। उसके चंगुल से कोई कभी छूट नहीं सकता। एक काल का तो ऐसा रूप है कि वह सबको निगलता रहता है, क्षय करता रहता है। दूसरा काल का वह रूप है जो सदा-सर्वदा एक रस बना रहता है। उसी को परम महान् कहते हैं। भागवतकार इसी को उद्देश्य करके कहते हैं—जो काल प्रपञ्च की परमाणु जैसी सूक्ष्म अवस्था में व्याप्त रहता है यह अत्यन्त सूक्ष्म है। और जो सृष्टि से लेकर प्रलय पर्यन्त उसकी सभी अवस्थाओं का भोग करता है, वही परम महान् है।*

हमारी गंगा मैया, नर्मदा मैया। द्रवरूप ब्रह्म ही परम महान् हैं। इनका किसी काल में क्षय नहीं होता। ये सदा सर्वदा अक्षय ही बनी रहती हैं। ये कालातीत हैं।

फाल्गुन शुक्ला पूर्णिमा (१३ मार्च) आज होली का दिन था कुद्दी से चले। मार्ग में कुद्दी, कुड़माल, मेहल गाँव, नर्मदानगर, कोसवारा सिंहोना, झापड़ी, वोरुद, देदला, कुराड़ा खाल, ओजमखाड़ी, मनावर, बाँकानेर, केंकनदी, झरवी, खलई, चिड़ीनदी, धर्मपुरी, खलघाट वारुदनदी, खराड़ीनदी, महेश्वरीनदी आदि स्थान पड़े। दिन में ही हम महेश्वर में आ गये। यहीं भोजन विश्राम हुआ। आज होलिका दहन तथा चन्द्र ग्रहण था। नर्मदा जी के किनारे ही एक नूतन धर्मशाला में हमारा डेरा लगा। और सब लोग धर्मशाला में ठहरे।

महेश्वर बहुत प्रसिद्ध और ऐतिहासिक स्थान है। इसका प्राचीन नाम माहिष्मती था। महाराज सहस्रार्जुन की यह राजधानी

---

* स कालः पारमाणुर्वै यो भुङ्क्ते परमाणुताम्।
स तोऽविशेष भुग्यस्तु स कालः परमो महान्॥
(श्री भागवते)

थी। उस समय इसका क्या वैभव रहा होगा ? भगवान् आद्य-शंकराचार्य का मण्डन मिश्र से यहीं शास्त्रार्थ हुआ था। श्री शंकर दिग्विजय में इसका बहुत ही सुन्दर वर्णन किया है। श्रीशंकराचार्य जी तीर्थराज प्रयाग से ही कुमारिलभट्ट के चावल की भूसी में प्रायश्चित्त स्वरूप प्राण विसर्जन के दृश्य को देखकर दिग्विजय के लिये चले। उन दिनों कर्मकांडियों में पंडित मंडन मिश्र का बहुत नाम था। अतः सर्वप्रथम प्रयाग से ही वे मण्डन मिश्र को परास्त करने की इच्छा से चले। इसीलिये दिग्विजयकार ने वर्णन किया है—श्रीकुमारिल भट्टपाद की विष्णुपद प्राप्ति के अनन्तर श्रीमद् शङ्कराचार्यजी पण्डित मन्डन मिश्र को जीतने के निमित्त प्रयागराज से निकले। चलते-चलते वे मण्डन मिश्र द्वारा शोभित माहिष्मती नाम की नगरी में पहुँच गये। जो नगरी रत्नों द्वारा सुशोभित है उस महानगरी को देखकर श्री शंकराचार्य पाद परम विस्मत हुए। इस नगरी के समीप ही रमणीक वन में अवतरित हुए। यह स्थान प्रफुल्लित कमलों में वन में विहार करने वाली तरंगों के मध्य में उड़ती हुई जलकी झीनी-झीनी कणों से भिजाने वाली तथा साल वृक्षों की पंक्तियों से कंपायमान तथा परिश्रम से उड़ते हुए नर्मदा जी के जल मिश्रित पवन को श्रीशंकर पाद सेवन करने लगे।

उस वन में विश्राम करके नित्य कर्म से निवृत्त होकर जब आकाश के मध्य में सूर्य नारायण आ गये, तब श्री शङ्कराचार्य वहाँ से चले। मार्ग में मंडन मिश्र के घर की दासी जल भरने के लिये जा रही थीं। उनसे शङ्कराचार्य जी ने पूछा—"यहाँ पण्डित मण्डन मिश्र का घर कहाँ है ?"

जिन दासियों को श्री शङ्करपाद के दर्शनों से ही अद्भुत सुख प्राप्त हुआ था और आचार्य को देखकर परम सन्तोष हुआ था, वे दासी नीचे लिखे प्रमाण से उत्तर देने लगीं। जिस घर के

द्वार में लटके हुए पींजड़ों में तोताओं की मातायें परस्पर कह रही हों कि श्रुति के वचन स्वतः प्रमाण हैं या परतः प्रमाण हैं, इस प्रकार जहाँ शास्त्रार्थ सम्बन्धी भाषण तोता मैंना कर रहे हों, उसे ही आप मंडन मिश्र का घर जानिये। जिस घर के द्वार पर लटके पींजड़ों में तोता मैंना शास्त्रार्थ करते हुए पूछ रहे हों कि फल को कर्म देता है या ईश्वर देता है, उसे ही आप मण्डन मिश्र का घर जाने। जिस घर के द्वार पर पींजड़ों में बैठे तोता मैंना इस प्रकार शास्त्रार्थ कर रहे हों कि जगत् सत्य है या असत्य है, उसे ही मण्डन मिश्र का घर जाने।※

इस वर्णन से ही आप उस समय की माहिष्मती के वैभव को

※ अथ प्रतस्थे भगवान्प्रयागात्तन्मंडनं पण्डितमाशु जेतुम्।
गच्छन् स्वसृत्यापुरमालुलोके माहिष्मतीं मण्डनमण्डितांसः॥
अवातरद्रत्न विचित्र वप्रां विलोक्यतां विस्मितमानसोऽसौ।
पुराणवत् पुष्करवर्तनीतः पुरोपकंठस्थ वने मनोज्ञे॥
प्रफुल्ल राजीववने विहारी तरंगरिंगत् कणशीकरार्द्रः।
रेवामरुत् कंपित शालमालः श्रमापत् दृद्धाष्यक्रतं सिषेवे॥
तस्मिन् स विश्रम्यकृताह्निकः सन् सस्वस्तिकारोहण शालिनीने
गच्छन्नसौ मन्डन पण्डितौको दासीस्तदीयाः स ददर्शमार्गे॥
कुत्रालयोमण्डनपण्डितस्येत्येताः स प्रच्छज्जलायगंत्रीः।
ताश्चापि दृष्टवाद्भुत शंकरं तं सन्तोषवत्योददुरुत्तरंस्म॥
स्वतः प्रमाणं परतः प्रमाणं कीरांगनायत्रगिरं गिरन्ति।
द्वारस्थनीडांतर सन्निरुद्धा जानीहि तन्मण्डनपण्डितोकः॥
फलप्रदं कर्म फलप्रदोऽजः कीरांगना यत्रगिरंगिरन्ति।
द्वारस्थनीडांतरसन्निरुद्धा जानीहि तन्मण्डनपण्डितौकः॥
जगत्ध्रुवं स्याज्जगदध्रुवंस्यात्कीरांगना यत्र गिरंगिरन्ति।
द्वारस्थ नीडांतर सन्निरुद्धा जानीहि तन्मन्डनपण्डितौकः॥

जान सकते हैं। भगवान् शङ्कराचार्य जी ने माहिष्मतीपुरी में जाकर जिस प्रकार मण्डन मिश्र से शास्त्रार्थ किया और उन्हें शास्त्रार्थ में पराजित किया। तदनन्तर उनकी परम विदुषी धर्मपत्नी सरस्वती ने कहा—आपने उनके आधे शरीर पर ही विजय प्राप्त की है। अभी अर्धाङ्गिनी मैं तो शेष ही हूँ। मुझसे शास्त्रार्थ कीजिये। तब आचार्यपाद ने उससे शास्त्रार्थ किया। उसी बीच में उसने काम सम्बन्धी प्रश्न किये। तब आचार्य ने परकाया प्रवेश विद्या के द्वारा मृतक राजा अमरक के शरीर में प्रवेश करके काम शास्त्र का अनुभव करके उसे शास्त्रार्थ में हराया और मण्डन मिश्र को अपना शिष्य बनाया। यह सब कथा विस्तार के साथ शङ्कर दिग्विजय में वर्णित है। इस विषय के इच्छुक पाठकों को इसे शङ्कर दिग्विजय में ही देखना चाहिये।

इस प्रकार यह महेश्वर-माहिष्मतीपुरी भगवान् शङ्कराचार्य के पादपद्मों द्वारा पवित्र की हुई है। फिर धर्म संम्राज्ञी महारानी अहल्याबाई ने इसे अपनी राजधानी बनायी थी। उसके बनाये हुए घाट, उनकी छत्री, उनके बनाये मन्दिरों के समान उत्तर-प्रदेश में स्यात् ही कहीं हों। इनके बनाये पक्के घाटों की शोभा निराली है। उस पार से देखिये तो काशी की-सी छटा दिखायी देती है यहाँ पर अहल्याबाई होल्कर का एक न्यास (ट्रस्ट) है। उसी के द्वारा यहाँ का प्रबन्ध होता है। यहाँ के कार्यकर्ता, अधिकारी तथा अर्चकों ने हमारे साथ अत्यन्त सौहार्दपने का व्यवहार किया। अहल्याबाई की जीवन झाँकी के सभी दृश्य देखे। अहल्याबाई जहाँ हाथ में शिवलिंग लेकर सिंहासन पर न्याय करने बैठतीं वह स्थान भी देखा। महारानी इतनी न्याय प्रिया थीं कि अपने एकमात्र प्रिय पुत्र को भी अपराधी सिद्ध होने पर घोर दंड दिया। महारानी के नवरत्नों के जो शिवलिंग थे, वे भी हमें दिखाये। अभी जो होल्कर महाराज थे, उन्होंने एक अमेरि-

कन महिला से विवाह कर लिया था उनके एक पुत्र भी हुआ। जो यहाँ महेश्वर में ही रहते हैं, वे ईसाई धर्म को ही मानते हैं।

जब यह महारानी अहल्या की राजधानी थी तब बहुत समृद्धि शालिनी नगरी थीं। यहाँ का साड़ियाँ बहुत प्रसिद्ध थी। साड़ियाँ तो अब भी बनती हैं, किन्तु उतनी नहीं। जब महाराज यशवन्तराव होल्कर ने महेश्वर से उठाकर अपनी राधधानी इन्दौर में बनाली, तब से इस नगरी की शोभा क्षीण हो गयी। नर्मदा किनारे जीर्णशीर्ण दशा में एक किला अब भी पड़ा है, जो प्राचीन वैभव की स्मृति करा रहा है।

आज होली थी। रात्रि में होलिका दहन हुआ। आज चन्द्र-ग्रहण भी था। कल चन्द्र ग्रहण का स्नान करके यहाँ से प्रस्थान करने का निश्चय हुआ।

यदि हम चिखलदा पंचकुण्ड तीर्थ (कुक्षी के सामने) से नर्मदा किनारे-किनारे पैदल परिक्रमा करें तो हमें मार्ग में कौन-कौन से स्थान पड़ेंगे इसका वर्णन आगे किया जायगा।

१—चिखलदा पंचकुंड तीर्थ से आगे चलकर चिखलदा और बोध बाड़े के बीच में देवमय तीर्थ है। यह तीर्थ देवताओं द्वारा स्थापित है। प्राचीन काल में जब देवताओं ने नर्मदा परिक्रमा आरम्भ की थी, तब सब देव यहीं एकत्रित हुए थे। तभी उन्होंने इस तीर्थ की स्थापना की। यहाँ स्नान, दान, स्तुति पूजा, तप, उपवास, कुशा के अग्रभाग से सोमपान करके इसके पश्चात् नर्मदा जी के जल का एक बिन्दुपान करने का माहात्म्य है। इस तीर्थ में तपादि शुभ कर्मों से सौभाग्य की प्राप्ति होती है।[१]

२—देवतीर्थ के आगे बोध बाड़ा ग्राम के निकट देवपथ लिंग तीर्थ है। देवताओं ने मिलकर यहीं से नर्मदा परिक्रमा आरम्भ

---

१. (रे० खं० ४५ अ०)

की थी और यहीं आकर उसे समाप्त भी किया। परिक्रमा आरम्भ करने पर उन्होंने यहाँ देवमय शिवलिंग की स्थापना की थी। जब परिक्रमा समाप्त हो गयी, तब यहाँ आकर देवमय लिंग की तथा नर्मदा मैया की पूजा की थी। यहाँ चैत्र की कृष्णा और शुक्ला दोनों चतुर्दशियों का विशेष माहात्म्य है।[१]

३—देवमय लिंगतीर्थ से चार मील आगे बगाड़ संगम है। यहाँ बगाड़ नदी आकर नर्मदा में मिली हैं। संगम के समीप ही गांगलादेघाट है यहाँ शिवजी के नन्दी ने तपस्या की थी और अपने नाम से नन्दिकेश्वर शिवजी की स्थापना की थी।

४—बगाड़ संगम से आगे तीन मील पर बागीश्वर तीर्थ है। प्राचीन काल में आदि सतयुग के समय सूर्यवंशी ब्रह्मदत्त नाम के राजा हो गये हैं। वे अत्यन्त ही दानी महाराजा थे। उन्होंने इस स्थान पर सोने के स्तम्भ वाले बड़े-बड़े सौ यज्ञ किये थे। और सौ बार सुवर्ण से अपनी शरीर को तौलकर तुलादान किये थे। उन्होंने दान द्वारा आगन्तुक सभी याचकों को परितृप्त किया। उनके यज्ञों में वसिष्ठ पराशरादि सभी ऋषि मुनि समुपस्थित हुए थे।

यहाँ वागु नदी का नर्मदाजी के साथ संगम है। यहाँ चामुंडा देवी का सर्वदा निवास रहता है। यहाँ पिंडदान, पितृतर्पण, ब्रह्म-भोज का विशेष माहात्म्य है।[२]

५—वागीश्वर तीर्थ से दो मील आगे सेमरदा घाट के समीप दीप्तिकेश्वर तीर्थ है। यह तीर्थ ब्रह्मा, विष्णु, महेश त्रिदेवों द्वारा स्थापित है यहाँ असुरों के भय से भयभीत देवताओं को भगवान् ने अभय प्रदान की। यहाँ दीप्तिकेश्वर, नर्मदेश्वर, अमरेश्वर,

---

१. (रे० खं० ४७ अ०)   २. (रे० खं० ४३ अ०)

शुक्लेश्वर आदि शिवलिङ्ग हैं। यहाँ पर यज्ञ यागादि सभी शुभ कर्म सफल होते हैं।[1]

६—दीप्तिकेश्वर तीर्थ से कुछ ही दूरी पर पेरखेड़ ग्राम में कांकड़िया संगम विष्णु तीर्थ हैं। प्राचीन काल में यहाँ ब्रह्माजी ने एक बहुत बड़ा यज्ञ किया था। यज्ञ में सदा से असुरगण विघ्न किया ही करते हैं। बहुत से असुर ब्राह्मणों का वेष बनाकर यज्ञ में घुस आये। वे उन ब्राह्मणों को कष्ट देने लगे जो यथार्थ याज्ञिक ब्राह्मण थे। यज्ञ में जिस द्रव्य को भी देखें उसी का हरण करने लगे। ब्रह्माजी तो दीक्षित थे। दीक्षित को क्रोध करना निषेध है, अतः उन्होंने भगवान् विष्णु का स्मरण किया। भगवान् विष्णु की सहायता से उन ब्राह्मण बने दैत्यों को मार भगाया। तभी से यह विष्णु तीर्थ के नाम से विख्यात हुआ। यहाँ पर सभी जप, तप, यज्ञ यागादि काय सफल होते हैं।[2]

७—विष्णु तीर्थ से कुछ ही दूर पर बड़ा वार्धा घाट में वराहेश्वर तीर्थ है। वराह कल्प में एक जटासुर नाम का दैत्य था। उसने घोर तप करके शिवजी से अपराजित होने का वर प्राप्त कर लिया था। इससे उसका अभिमान अत्यधिक बढ़ गया था। वह सदैव अपने साथ दस करोड़ दैत्यों को रखता था। उसने अपने बल प्रताप से समस्त देवताओं को जीत लिया था और पृथ्वी सहित समस्त वेदों को वह पाताल में ले गया था। देवताओं की प्रार्थना पर भगवान् ने वाराह रूप धारण करके पाताल में जाकर दैत्य का वध किया और पृथ्वी सहित वेदों का उद्धार करके ले आये। यहाँ आकर उन्होंने वाराहेश्वर शिवजी की स्थापना की। यहाँ देवशयनी (आषाढ़ में) और देवोत्थापिनी (कार्तिक में) दोनों एकादशियों का विशेष माहात्म्य है। उपवास

---

१. (रे० खण्ड ४८ अ०) २. (रे० खण्ड ४६ अ०)

करके शिवजी का पूजन करे, रात्रि जागरण करे। दूसरे दिन ब्रह्मभोज करावे तो अनन्त गुणा फल होता है।[१]

८—वराहेश्वर तीर्थ से एक मील आगे ऋद्धेश्वर तीर्थ है। इसे देवताओं की माता अदिति देवी ने आदि कल्प में यहाँ दिव्य सहस्र वर्ष तपस्या करके स्थापित किया था। इसलिये इसे अदितीश्वर तीर्थ भी कहते हैं। इसी तपस्या के प्रभाव से उनके सूर्य और चन्द्र पुत्र रूप में उत्पन्न हुए। यह परम पावन तपस्थली है। यहाँ तपस्या करने का विशेष माहात्म्य है।[२]

९—ऋद्धेश्वर से दो मील जंगल के मार्ग से चलकर आगे मान संगम है। यहाँ मान नाम की नदी आकर नर्मदाजी में मिली हैं।

१०—मानसंगम से आगे वन मार्ग से ३ मील पर शुक्लेश्वर सौर तीर्थ है। प्राचीन काल में कुश नामक ऋषि ने बहुत दिनों तक यहाँ सूर्य भगवान् की उपासना की। उनकी तपस्या से प्रसन्न होकर सूर्य भगवान् उनके सम्मुख प्रकट हुए और वरदान माँगने को कहा। ऋषिजी ने यही वरदान माँगा कि आप यहाँ सदैव निवास करके आर्तजनों के दुःखों को निवारण करते रहें। यह सूर्य भगवान् सम्बन्धी तीर्थ है। अन्ध, वधिर, कूबड़े, तथा कुष्ट रोग से पीड़ित सूर्योपासना करके इच्छित फल को प्राप्त करेंगे। यहाँ संन्यासी की मृत्यु हो तो मुक्ति प्राप्त होती है।[३]

११—शुक्लेश्वर से ४ मील आगे हतनोर में दारुकेश्वर तीर्थ है। यहाँ प्राचीन काल में दारुक नाम वाले ऋषि यहाँ आजीवन रहकर तपस्या करते रहे। वे यहाँ वानप्रस्थाश्रम का पालन करते हुए कन्द मूल फलों पर ही निर्वाह करते रहे। यहाँ जो फलाहार

१. (रे० खण्ड ४६ अ०) २. (रे० खं० ४६ अ०)
३. (रेवा खण्डे ५५ अध्याय)

करके वर्णाश्रम धर्म के अनुसार तपस्या करेंगे उन्हें स्तोत्रापणी यज्ञ का फल प्राप्त होगा। यहाँ जप तपादि सकाम भाव से शुभ कर्म करने वालों का राजकुल में जन्म होता है। यह यज्ञस्थल है। अब तक यज्ञीय भस्म यहाँ निकलती है।×

१२—दारुकेश्वर तीर्थ से २ मील आगे खुजा नाम के ग्राम में कुब्जा संगम विल्वाम्रक तीर्थ है। यहाँ पर कुब्जा कुंड है और नागेश्वर तथा विष्णु भगवान् की ५ मूर्तियाँ हैं। यहाँ रेवाजी के बीच में धर्मपुरी नामक द्वीप है। उसमें विल्वाम्रक तीर्थ है। इस स्थान में राजर्षि दधीचि तपस्या किया करते थे। एक समय देवता और असुरों का युद्ध हुआ। उसमें देवता पराजित हुए। देवता दधीचि मुनि के समीप आये और प्रार्थना की—महाराज! ये दिव्य अस्त्र-शस्त्र हैं इन्हें आप न्यासभूत धरोहर की भाँति रख लें। ऋषि ने वे रख लिये। अब सब देवता नारदजी के समीप गये। उनसे अपनी विजय के लिये आग्रह किया। नारद दधीचि मुनि के समीप आये और उनसे प्रार्थना की—"भगवन्! देवताओं की विजय कैसे हो इसका उपाय बतावें।"

तब दधीचि मुनि ने कहा—"देखो, नारदजी! रेवा किनारे तपस्या करते-करते मेरी हड्डियाँ वज्र के सदृश बन गयी हैं। देवताओं से कहिये मेरी हड्डियों का बज्र बनावें, तभी उनकी विजय हो सकती है।"

नारदजी ने यह बात जाकर देवताओं से कही। तब सब इन्द्रादि देव मिलकर दधीच मुनि के आश्रम में आये। कामधेनु से जीवित महर्षि के शरीर को चटवाकर हड्डियों को विशुद्ध करके उसका वज्र बनाया। उसी वज्र से वृत्रासुरादि दैत्यों का वध करके देवताओं ने असुरों पर विजय प्राप्त की। तभी से दधीच

× (रे० खं० ५२ अ०)

की तपोभूमि कुब्जा संगम की सर्वत्र महिमा फैल गई। कुब्जा संगम का नाम विल्वाम्रक तीर्थ क्यों पड़ा? इसकी भी कथा सुनिये।

प्राचीन काल में पार्वतीजी की १०८ कन्यायें सखी थीं। किसी बात पर इन कन्याओं की पार्वतीजी से अनबन हो गई। तब ये सब पार्वतीजी का परित्याग करके यहाँ रेवा तीर पर आकर तपस्या करने लगीं। इन्होंने शिवजी का एक करोड़ विल्व पत्र तथा एक करोड़ आम्र पत्तों से पूजन किया। इससे शिवजी प्रसन्न हुए और इनको मनोवांछित फल प्राप्त हुआ। तभी से शिवजी का नाम विल्वाम्रक हो गया। ये कन्यायें ही देवी बनकर हरिद्वार में चण्डिका, काशी में विशालाक्षी, नैमिषारण्य में लिङ्ग-धारिणी, प्रयाग में ललितादेवी, गन्धमादन पर्वत पर कामुका तथा मानसरोवर में क्रमदा के नाम से विख्यात हुईं।

यहाँ पर मेघवन यज्ञ पर्वत के राजा रन्तिदेव ने अपने पाप मिटाने को यज्ञ किया था। समस्त याज्ञिकों को यथेष्ट दक्षिणा दी उनके समस्त पाप छूट गये। पितरगण प्रसन्न हुए। जिस स्थान पर यज्ञ कलश रखा गया वहाँ कुब्जेश्वर शिवजी प्रकट हुए। संगम के चारों दिशाओं में एक कोस तक सवा करोड़ शिव-लिङ्ग हैं यह शिव क्षेत्र परम पावन तीर्थ है। यहाँ सभी शुभ कर्म सिद्ध होते हैं। कार्तिकी पूर्णिमा और सोमवती अमास्या का यहाँ विशेष माहात्म्य है। प्रयागराज के समान फल है।❀

१३—कुब्जा संगम से ८ मील आगे मांडवगढ़ रेवाकुंड की परिक्रमा के पगारा ग्राम में वक्रतुंड गणेशजी का स्थान है। रेवा कुंड के कारण कोई-कोई नर्मदा परिक्रमा वाले यहाँ आते हैं। यह नर्मदाजी से ८ मील है। उत्तर दिशा में पद यात्रियों को नियमा-

❀ (रे० खण्ड ४१ अ०)

नुसार नर्मदाजी से ७ मील आगे नहीं जाना चाहिये। अतः मांडवगढ़ किला में नर्मदा कुंड परिक्रमा करने कोई-कोई ही जाते हैं मांडवगढ़ में नीलकंठ शिवजी का स्थान है यहाँ रेवाकुंड, कमालकुंड, बावड़ी, श्रीरामचन्द्रजी का मन्दिर, नीलकंठ महादेव के मंदिर हैं। मांडवगढ़ सुप्रसिद्ध जम्बे राजा का किला है। जहाँ जम्भ राजा के साथ ऊदल की लड़ाई हुई थी। यहाँ से लोहारया ग्राम सुन्दरेल ग्राम होकर १८ मील की दूरी पर नर्मदाजी का खलघाट है।

१४—खलघाट—खुजा गाँव के समीप धर्मपुरी नाम का नगर है। धर्मपुरी से खलघाट तक पक्की सड़क गयी है। धर्मपुरी से खलघाट ७ मील है। जो लोग मांडवगढ़ न जाना चाहें वे धर्मपुरी से इसी पक्की सड़क द्वारा खलघाट आ सकते हैं। हम लोग धर्मपुरी होकर इसी पक्की सड़क से कुत्ति से आये थे। यहाँ नर्मदाजी पर पक्का पुल है। आगरा से जो बम्बई को पक्की सड़क गयी है, वह यहीं नर्मदाजी को पार करती है।

खलघाट अच्छी बस्ती है। यहाँ पर कपिल तीर्थ भी है। इसकी भी कथा सुन लीजिये—प्राचीनकाल में यहाँ नर्मदा तट पर ब्रह्माजी ने एक बड़ा भारी यज्ञ किया। उस यज्ञ के कुंड से एक कपिला गौ प्रकट हुई। समस्त देवताओं ने गौ माता की स्तुति की। तब कपिला गौ ने प्रसन्न होकर देवताओं से पूछा—देवगण ! तुम्हारी इच्छा क्या है ? सबने कहा—माताजी ! तुम मृत्युलोक में जाकर विश्व का कल्याण करो। तब कपिला ने इस स्थान पर नर्मदा किनारे आकर घोर तप किया। तब नर्मदाजी ने प्रसन्न होकर उन्हें जगत् माता बना दिया। इस तीर्थ में गौदान का विशेष माहात्म्य है और स्थानों से यहाँ किये हुए जप का कोटि गुणा फल बताया है।❀

❀ (रे० खण्ड ५८ अ०)

१५—खलघाट से तीन मील की दूरी पर कारम और बूटी दो नदियाँ आकर नर्मदा जी में मिलती हैं। अतः इसे त्रिवैंणी तीर्थ कहते हैं।

१६—त्रिवैंणी तीर्थ से एक मील आगे वन मार्ग से जाने पर जलकोटि ग्राम के समीप सहस्त्र धारा तीर्थ आता है। यह बहुत ही पवित्र तथा रमणीक स्थल है, कहते हैं यह माहिष्मती के महाराजा सहस्रबाहु का युद्धस्थल है।

१७—सहस्त्र धारा तीर्थ से तीन मील आगे ज्वाला नदी के संगम के समीप महेश्वर अर्थात् माहिष्मती नगरी है। यहाँ बहुत से तीर्थ हैं, किन्तु ज्वालेश्वर शिवजी, भर्तृहरि की गुफा, स्कन्देश्वर शिव, गणेशजी, नरसिंहजी, पंढरीनाथ ये तो महेश्वर नगर में है, नर्मदाजी के बीच में जो द्वीप है, उसमें वाणेश्वर, मातंगेश्वर, सिद्धेश्वरी देवी, राज राजेश्वर, काशी विश्वेश्वर तथा कालेश्वर ये मुख्य तीर्थ हैं।

ज्वालेश्वर की कथा इस प्रकार है—सत्ययुग में इस माहिष्मती नगरी में सूर्यवंशी राजा दुर्योधन था। उसने नर्मदाजी से विवाह किया उससे सुदर्शना नामकी कन्या हुई। जिसका विवाह अग्नि के साथ हुआ। इसीलिये यह अग्नि तीर्थ ज्वालेश्वर कहलाया।❀

मातंगेश्वर तीर्थ की कथा इस प्रकार है—यह अशोक वनिका तीर्थ प्रसिद्ध है। आदि सत्ययुग में एक भील ने यहाँ नर्मदा तट पर चिरकाल तक घोर तपस्या की। इसके प्रभाव से मृत्यु के पश्चात् वे मातंग नाम के ऋषि हुए। वे तीर्थ यात्रा करते हुए यहाँ आये। पूर्वजन्म के संस्कारवश वे यहाँ रह गये और सौ दिव्य वर्षों तक तपस्या करते रहे। उनकी तपस्या से प्रसन्न होकर शिव जी प्रकट हुए और वर माँगने को कहा। तब मातंग ऋषि ने यही वर माँगा कि आपकी इस तीर्थ में नित्य सन्निधि हो। तभी से यह

❀ (रे० खं० ५४ अ०)

तीर्थ परम पवित्र माना जाता है। यहाँ कार्तिक कृष्णा चतुर्दशी और दीपावली का विशेष माहात्म्य है। यहाँ जौ के सत्तू और गुड़ के पिण्डदान का तथा ब्रह्मभोज का विशेष माहात्म्य है।÷

माहिष्मती में महाराज सहस्राजुन राज्य करते थे। वे दत्तात्रेय जी के भक्त तथा मातंग ऋषि के शिष्य थे। इन्होंने ही राजराजेश्वर सिद्धेश्वरीदेवी, गणेशजी और स्कन्द इन देवों की स्थापना की।॥ स्कन्द पुराण में इस क्षेत्र की महिमा विस्तार के साथ वर्णित है।

इस प्रकार महेश्वर (माहिष्मती पुरी) की महिमा पुराणों में विशेष रूप से कही गयी। हम लोग रात्रि भर इस नर्मदा किनारे इस पावन पुरी में रहे। प्रातःकाल चन्द्रग्रहण का स्नान करके हम इन्दौर के लिये चल दिये। उसका वर्णन आगे किया जायगा।

छप्पय

(१)

चले चिखलदा पंच-कुंड तीरथतैं आगे।
संगम जहाँ बगाड़ गांगली गाँम किनारे॥
बागीश्वर श्रीशम्भु अकलबाड़ा सुग्रामवर।
दीप्तेश्वर शुभ तीर्थ बराहेश्वर अदितीश्वर॥
मान नदी संगम जहाँ, शुक्लेश्वर चिड़िया नदी।
दारुकेश हतनोरमें, धरम द्वीप कुब्जा नदी॥

(२)

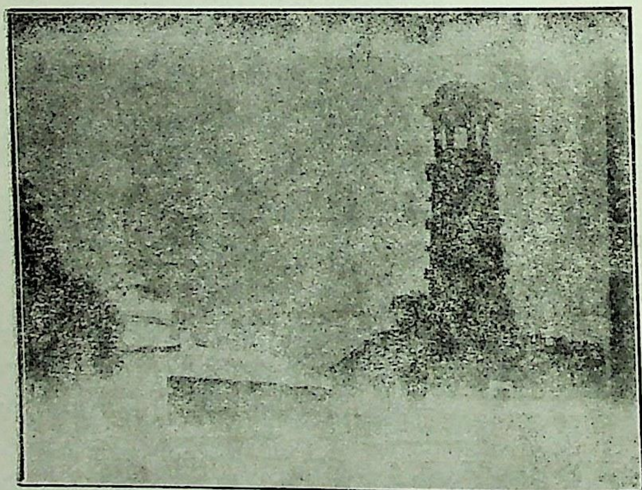
बक्रतुंड गणनाथ पागरा ग्राम विराजें।
मांडवगढ़ खलघाट शम्भु कमिलेश्वर राजें॥
जलकोटी वर तीर्थ करम-चूटी संगम जहँ।
तिरबैणी सम पुण्य सहसधारा आगे तहँ॥

÷ (रे० खं० ३८ अ०) ॥ (वाशि सं० २६ अ०)

माहेश्वर माहिष्मती, सहसार्जुन भूपति भये।
मंडन मिश्रहि जीतिबें, शङ्कर पाद जहाँ गये॥

(३)

जालेश्वर नरसिंह पंढरीनाथ जहाँ हैं।
श्रीगणेश मा मध्य मतंगेश्वरहु तहाँ हैं॥
वागेश्वर कालेश राजराजेश्वर शङ्कर।
देवी सिद्धेश्वरी शम्भु काशी विश्वेश्वर॥
जहाँ अहल्या देविकी, हती राजधानी सुघर।
माहिष्मती पुरी यही, रेवातट पै तीर्थ-वर॥



नर्मदा तट के एक घाट का दृश्य

महेश्वर से इन्दौर

[२२]

तव प्रसादाद् वरदे वरिष्ठे
कालं यथेमं परिपालयित्वा ।
यामोऽथ रुद्रं तव सुप्रसादात्
वयं तथा त्वं कुरु वै प्रसादम् ॥*

(स्कन्दे)

छप्पय

तव जल करि नित पान स्नान करि अति सुख पावें ।
तव तट बसि तप करें प्रेमतैं समय बितावें ॥
जैसे तुमने कृपा करी इत जग सुख दीयो ।
चरन सरन दै जननि कृतारथ किङ्कर कीयो ॥
वैसे ही परलोकमें, हे वरदे माँ श्रेष्ठ अति ।
जावैं तव-पितु लोकमें, तव पद पदुमनि रहे रति ॥

अल्पज्ञ जीव का पुरुषार्थ सर्वज्ञ भगवान् के सम्मुख नगण्य है। जो संसार के भीतर के तथा त्रिपाद विभूति के समस्त ऐश्वर्य से सम्पन्न हों, जो समस्त वीर्य-पुरुषार्थ, समस्त यश, समस्त श्री,

---

* हे श्रेष्ठ वरिष्ठ वर देने वाली माँ नर्मदे ! यह जो हमारा वर्तमान का समय है उसका पालन करके, हम लोग जिस प्रकार आपकी कृपा से इसके अनन्तर रुद्रलोक को प्राप्त हो सकें, ऐसी कृपा हे माता ! तुम हम पर करना ।

समस्त ज्ञान, समस्त वैराग्य से युक्त हों ऐसे षडैश्वर्य सम्पन्न भगवान् को हम अपने किन गुणों से रिझा सकते हैं। किस अभिमान को लेकर उनके समीप जा सकते हैं। अल्पज्ञ जीव का पुरुषार्थ ही कितना है। वह तो अपने निज के पुरुषार्थ से पेट पालन करने में भी असमर्थ है। पग-पग पर जीव प्रभु की कृपा पर ही अवलम्बित है। पैदा होते ही जीव क्या पुरुषार्थ करके पेट भर सकता है ? पैदा होने के पूर्व ही कृपालु प्रभु माता के स्तनों में दूध उत्पन्न कर देते हैं गर्भ से भी क्या वह अपने पुरुषार्थ से बाहर निकल सकता है ? जब जीव भाँति-भाँति की स्तुति करता है तो कृपा करके भगवान् उसे उदर के बाहर कर देते हैं। फिर वे असमर्थ होने पर भी माता-पिता रूप में आपकी कृपा के ही बल पर जीते हैं। प्यास लगने पर आप कृपा करके जल नारायण रूप से उसकी प्यास बुझाते हैं। खाये हुए अन्न को आप कृपा करके वैश्वानर रूप से चतुर्विध अन्न को पचाते हैं। कहाँ तक कहें प्रतिक्षण आपके कृपा प्रसाद से ही जीव जीवित रहता है। इसीलिये उद्धवजी ने विदुरजी से कहा था—"विदुर जी ! मैं तो प्रतिक्षण उनकी कृपा का भाजन बना रहता था–प्रतिक्षणानुग्रह–भाजनोहऽम्।"

भगवान् अल्पज्ञ जीव के पुरुषार्थ से नहीं, भक्ति के द्वारा–स्तुति प्रार्थना के द्वारा–ही उनके कृपा प्रसाद का भागी बन सकता है। इसीलिये भगवान् नृसिंह की स्तुति करते हुए प्रह्लाद जी ने कहा है—मेरी बुद्धि में तो (१) धन, (२) कुलीनता, (३) सुरूप, (४) तपस्या, (५) विद्या, (६) ओज, (७) तेज, (८) प्रभाव, (९) बल, (१०) पौरुष, (११) बुद्धि और (१२) योग ये बारह गुण परम श्रेष्ठ हैं, परमार्थ में सहायक हैं, किन्तु केवल इन्हीं गुणों के द्वारा जीव भगवान् को सन्तुष्ट कर ले, यह असम्भव है। भगवान् तो केवल भक्ति के द्वारा ही वश में किये जा सकते

हैं। भक्ति से तो भगवान् मनुष्य की तो बात ही क्या है गजेन्द्र जो पशु था, उस पर भी उसकी केवल स्तुति सुनकर ही सन्तुष्ट हो गये थे।* इसलिये भगवान् का जो रूप प्रिय हो उस रूप की सदा स्तोत्रों द्वारा स्तुति ही करते रहना चाहिये।

हाँ तो हम चैत्र कृष्णा प्रतिपदा धुलैड़ी (१४ मार्च) को श्री नर्मदाजी में ग्रहण का स्नान करके शिवजी की स्तुति विनय करके आगे के लिये चल पड़े। आज बड़वाह में मध्यान्ह भोजन का तथा रात्रि में इन्दौर पहुँचने का निश्चय था। उसी निश्चय के अनुसार हम सब लोग चल पड़े। मार्ग में हमें ये-ये स्थान पड़े। मण्डलेश्वर, धरगाँव, कतूर गाँव, गादी नदी, बड़यिया, झपलगाँव, नजिहार, उभरिया, संभरिया, पढ़ाती, कसरावद, बड़वाह, गँवाल, कालाकुण्ड, बाईघाट, बाई ग्राम, बिलावली और फिर आ गई इन्दौर।

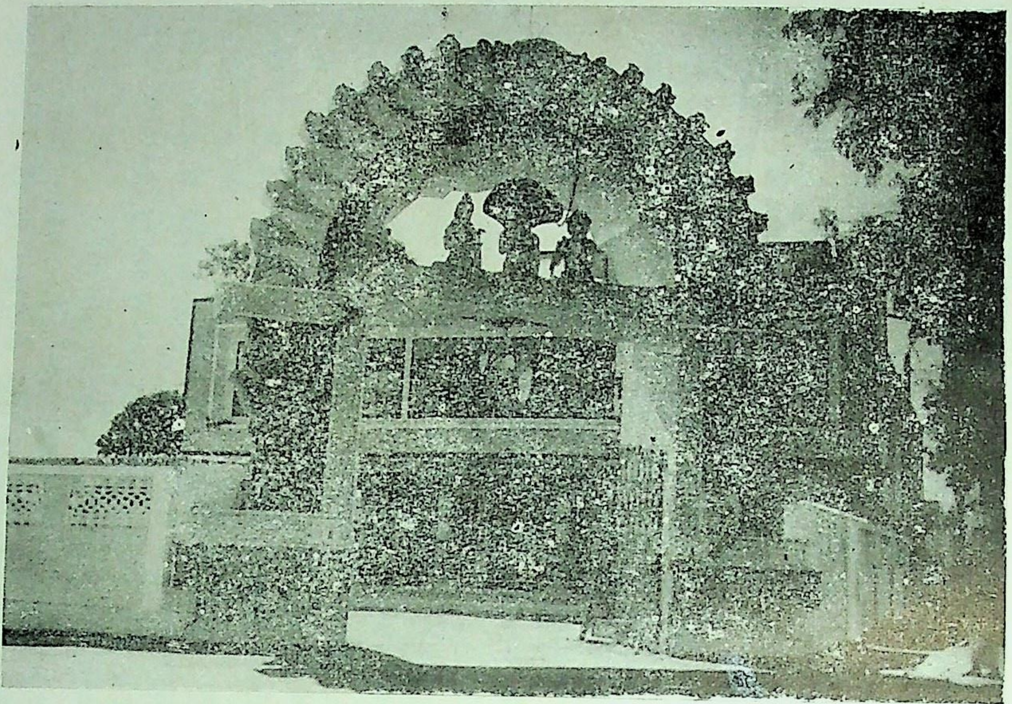
हमारे साथ परिक्रमा में इधर के बहुत से यात्री थे। उन्होंने अपने गाँवों में पहिले से ही स्वागत-सत्कार का प्रबन्ध कर रखा था। हमारे इधर प्रतापगढ़ के एक वैष्णव बाबा इधर बहुत दिनों से यहाँ आकर बस गये थे। पहिले तो वे बाबा रहे। फिर विवाह करके गृहस्थी हो गये। बाल-बच्चों वाले बन गये। वे हमारे साथ पूरी परिक्रमा में अपने बहुत से साथियों के साथ रहे। वे स्यात् धरगाँव के थे। उन लोगों ने स्वागत का बड़ा प्रबन्ध कर रखा था। उनकी धर्मपत्नी जब एक वर्ष के लगभग शिशु को लेकर प्रणाम

---

* मन्ये धनाभिजनरूपतपः श्रुतौज-
स्तेजःप्रभावबलपौरुषबुद्धियोगाः।
नाराधनाय हि भवन्ति परस्य पुंसो
भक्त्या तुतोष भगवान् गजयूथपाय॥
(श्री० भा० ७ स्क० ९ अ० ९ श्लोक)

करने आई तो मैंने हँसी में कहा—क्यों बाबा ! हम तो तुम्हें अब तब विरक्त बाबा ही समझे बैठे थे, तुम्हारे तो इस बुढ़ाई में भी बच्चे हो रहे हैं क्या ? तब उनकी पत्नी, उनकी पुत्री और वहाँ आई सभी हँसने लगीं। सभी उन्हें बाबा ही कहते थे। मैंने कहा—देखो, ये आचार्य जी तो तुमसे छोटे ही होंगे इनके नाती नतिनी हो गये हैं। तब वे कुछ लज्जित से होकर बोले—महाराजजी ! मेरा विवाह बहुत पीछे हुआ है। उनकी एक विवाहिता पुत्री थी। उसने अपने पिता से पूछा—"बाबा ! हम लोग महाराजजी के गुलाल लगा दें ?" तब वे बोले—"हाँ लगाओ।" अब तक सब सहमी हुई खड़ी थीं। बाबा की अनुमति पाकर सबने गुलाल लगाया। मालायें पहिनायीं। सबको जलपान कराया। शीघ्रता के साथ दो चार शब्द कहकर मन्दिर में भगवान् के दर्शन करके हम लोग आगे चल पड़े।

आगे हम लोग बड़वाह पहुँचे। बड़वाह में मार्ग में हमें कुछ कार्यकर्ता मिले। उनसे हमने पूछा—"भोजन का कहाँ प्रबन्ध है ? उन्होंने कहा—विद्यालय में।" हमने पूछा—"भोजन बन गया ?" उन्होंने कहा—"अब बनने ही वाला है। हमारे साथ भेड़ाघाट से ही इन्दौर गीता भवन के प्रबन्ध न्यासी (मैनजिङ्ग डाइरेक्टर) श्री एन० एम०, व्यासजी परिक्रमा में थे। उनके साथ इन्दौर के और भी ३०-३५ नर-नारी थे। सबकी सम्मति हुई। अभी यहाँ भोजन का कुछ भी प्रबन्ध नहीं है। सीधे इन्दौर ही चला जाय। इन्दौर वहाँ से ४०-४५ किलोमीटर ही होगा। घण्टे भर का भी मार्ग नहीं। अतः हम लोग बड़वाह में न रुक कर सीधे इन्दौर ही चल दिये और लगभग ११-१२ बजे गीता भवन में पहुँच गये। गीता भवन के संस्थापक बाबा बालमुकुन्द दासजी सायंकाल के लिये ही हमारी प्रतीक्षा कर रहे थे। परिक्रमा में वे भी चलने वाले थे, किन्तु बस दुर्घना में सिर में चोट



इन्दौर का सुप्रसिद्ध गीता भवन

पृष्ठ ३४५

लगने से निर्बलता के कारण नहीं चल सके। फिर भी ओंकारेश्वर में आकर हमसे मिल गये थे। दोपहर में ही यात्रा को अपने यहाँ पहुँचा देखकर वे अत्यन्त ही प्रसन्न हुए। तुरन्त सबके लिये दूध जलेबी का जलपान कराया। भोजन बनवाया। आनन फानन में सभी समुचित प्रबन्ध हो गया। रात्रि में हमने धुलैड़ी मनाई। सब के माथे पर गुलाल लगाया। भोजनोपरान्त रात्रि में रासलीला में शङ्कर लीला हुई। अपूर्व दृश्य था।

गीता भवन इन्दौर की ही नहीं पूरे मध्य प्रदेश की एक बहुत ही परोपकारिणी अपूर्व संस्था है। बाबा बालमुकुन्दजी देश विभाजन के समय इन्दौर में आये। आरम्भ में घोर जंगल में उन्होंने एक छोटी-सी झोपड़ी में इसका आरम्भ किया था। जैसे नन्हें से बट के बीज से बढ़ते-बढ़ते एक विशाल बट वृक्ष बन जाता है, उसी प्रकार बढ़ते-बढ़ते आज-कल यह संस्था एक आदर्श संस्था बन गई है। इसमें बहुत बड़ा दर्शनीय सभा भवन है अनेक मन्दिर और मूर्तियाँ हैं, बहुत से यात्रियों के ठहरने के विश्राम भवन हैं। बड़ा भारी भंडारगृह तथा भोजनालय है। एक अच्छा पुस्तकालय है। यहाँ नित्य नियम से बारहों महीने सत्सङ्ग होता है। समीप ही बहुत बड़ा चिकित्सालय है। जिसमें भारतवर्ष के नामी चिकित्सक चिकित्सा करते हैं। उसमें एक नेत्र चिकित्सा विभाग है। मृतकों की आँखें निकालकर अन्धों के लगाई जाती है। बम्बई कलकत्ते तक से लोग यहाँ चिकित्सा कराने आते हैं। बड़े-बड़े असाध्य रोगों को सुयोग्य चिकित्सकों की देख-रेख में शूची शालाक पद्धति (आपरेशन) द्वारा चिकित्सा होती है। मोटरों द्वारा गाँव-गाँव में औषधि वितरित की जाती है, रोगियों को यहाँ लाया जाता है। वर्ष में अनेकों स्थानों में नेत्र यज्ञों का आयोजन होता है, शिविर लगाये जाते हैं। सहस्रों नेत्रों का आपरेशन होता है, उन्हें निःशुल्क भोजनादि के साथ

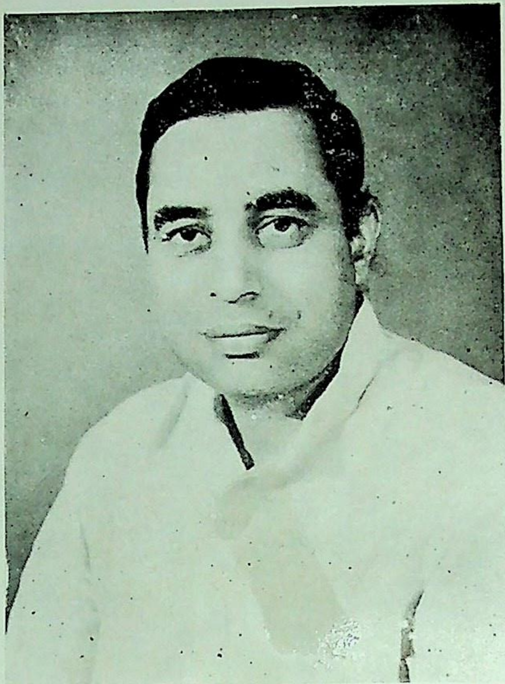
उपनेत्र (चश्मे) भी बिना मूल्य दिये जाते हैं। इस प्रकार यहाँ का चिकित्सालय रुग्ण आर्तों की समुचित सेवा कर रहा है।

गीता भवन में नित्य नैमित्तिक सत्सङ्गों के अतिरिक्त मार्गशीर्ष शुक्ला में गीता जयन्ती के अवसर पर ९-१० दिन का विशाल महोत्सव मनाया जाता है। जिसमें भारतवर्ष भर के नामी-नामी सन्त महात्मा उपदेशक बुलाये जाते हैं। जिसमें सहस्रों नर-नारी बड़े उत्साह से भाग लेते हैं। आस-पास में और भी नगरों में बहुत से गीता भवन हैं। जिस नगर वाले अपने यहाँ गीता भवन बनाना चाहें उन्हें संस्था की ओर से दश सहस्र रुपये सहायता के रूप में दिये जाते हैं, ऐसे बीसों गीता भवन हैं, उन सब में भी गीता जयन्ती मनायी जाती है, यहीं से उपदेशक भेजे जाते हैं।

बाबा बालमुकुन्ददासजी ९०-९५ वर्ष के वृद्ध हैं, किन्तु उत्साह में नवयुवकों के कान काटते हैं। अभिमान की गन्ध नहीं सभी के पैर छूते हैं, उन्हें विरकत सन्त उपदेशक अधिक प्रिय हैं। (पंजाबी होने से वे विरक्त को विरकत कहा करते हैं) कोई संन्यासी अच्छा व्याख्यान दें तो वे व्यासजी से कहते हैं— "व्यासजी! ये तो विरकत महात्मा हैं, इन्हें एक महीने को रख लो।" कुछ दिनों के पश्चात् वे किसी काम के लिये अधिक द्रव्य की माँग करते हैं, तब कहते हैं—"व्यासजी! ये तो ब्रह्म निकले। इन्हें बिदा करो।" कोई नौकर आता है कुछ लेकर चला जाता है तो कहते हैं—"अजी वह तो पूरा ब्रह्म निकला।" सबसे सरलता का व्यवहार करते हैं। उत्सवों के समय मनों दूध आता है। उसकी मलाई निकलवाकर रख लेते हैं। जिसका प्रवचन व्याख्यान उन्हें प्रिय होगा। चुपके से उसे जाकर मलाई दे आवेंगे। हमें तो कभी मलाई दी नहीं। वैसे हमसे अत्यधिक स्नेह रखते हैं। उदारता उनका विशिष्ट गुण है। शास्त्रों में कहा है—



गीता भवन इन्दौर के संस्थापक
बाबा बाल मुकुन्ददास जी



इन्दौर गीता भवन के प्रबन्धन्यासी श्री पं०
एन० एम० व्यास (विरक्त महापुरुष) पृष्ठ ३९७

दातृत्वं प्रियवक्तृत्वं धीरत्वं उचितज्ञता।
अभ्यासात् नैवलभ्यन्ते चत्वारो सहजाः गुणाः ॥

एक तो दान देने की सामर्थ्य, दूसरे मीठा वचन बोलने का स्वभाव, तीसरे दुख में, सुख में धैर्य को धारण किये रहना और चौथे कौन-सा काम कब, कैसे, किसके द्वारा कराया जाय ऐसी उचितज्ञता। ये चार गुण अभ्यास करने से नहीं आते। ये तो भगवान् के दिये हुए सहज ही—जन्मजात गुण होते हैं। हमारे बाबा बालमुकुन्ददासजी में दातृत्व और उचितज्ञता ये सहज स्वाभाविक गुण हैं। फिर उन्हें व्यासजी जैसे सहयोगी मिल गये हैं। सोने में सुगन्ध का संयोग हो गया है। हम सब लोगों ने धुलैड़ी उत्सव बड़े धूमधाम से उत्साहपूर्वक इन्दौर के गीता भवन में मनाया।

यदि हम महेश्वर से इन्दौर के सामने चौबीस अवतार तक नर्मदा किनारे-किनारे पैदल परिक्रमा करें तो हमें मार्ग में ये-ये स्थान पड़ेंगे।

१—महेश्वर से कुछ ही दूर पर गादी नदी आकर नर्मदाजी में मिली है। अतः गादी संगम तीर्थ महेश्वर के सन्निनकट ही है।

२—गादी संगम से ५ मील की दूरी पर मंडलेश्वर स्थान आता है। यहाँ पर मलशमनेश्वर तीर्थ है परशुरामजी ने इक्कीस बार क्षत्रियों का वध किया। तदनन्तर उन्हें पश्चात्ताप हुआ। अतः वे यहाँ रेवा किनारे आकर तपस्या करने लगे। उन्होंने मलशमनेश्वर शिवलिंग की स्थापना की। इससे उनका क्षत्रिय वध का जो मल था वह शमन हुआ। यहाँ तपस्या करने से सब प्रकार के पापों का शमन होता है। यहाँ ब्रह्मभोज का विशेष माहात्म्य है।×

× (वशि० सं० ३०।३१ अ०)

३—मण्डलेश्वर में ही एक गुप्तेश्वर हैं, उनकी भी कथा सुन लीजिये—यहाँ के वन को दारुवन कहते हैं। प्राचीन काल में अनेकों महर्षिगण इस दारुवन में रहकर तपस्या करके सिद्धि को प्राप्त हुए। एक बार पार्वतीजी सहित शिवजी घूमते-घामते इस दारुवन में आये। उन इतने ब्रह्मवेत्ता ब्राह्मणों को तप में लीन देखकर पार्वतीजी ने शिवजी से पूछा—"भगवन्! इस घोर अरण्य में इन ब्राह्मणों को ऐसी ऋद्धि सिद्धि कैसे प्राप्त हो जाती है?"

शिवजी ने कहा—"वास्तव में यह सिद्धि तो इन ब्राह्मणों की सती स्त्रियों के सतीत्व के कारण है। सती स्त्रियाँ संसार में सब कुछ करने में समर्थ हैं। रिद्धि सिद्धि तो उनके सम्मुख तुच्छ हैं।"

पार्वतीजी ने कहा—"अच्छा, इन विप्र पत्नियों के सतीत्व की आप परीक्षा लें।"

शिवजी ने कहा—"देवि! ऐसी बात मत कहो। ब्राह्मणों को जो भी कष्ट देता है उसका सर्वनाश हो जाता है।"

पार्वतीजी ने कहा—"मैं कष्ट देने को तो कहती नहीं। सतीत्व की परीक्षा लेने को कहती हूँ। मेरी यह प्रार्थना आपको अवश्य स्वीकार करनी पड़ेगी।"

शिवजी ने सोचा—"त्रियाहठ को ब्रह्माजी भी नहीं टाल सकते। पार्वतीजी अब मानेगी नहीं। अतः उन्होंने कापालिक ब्रह्मचारी का बहुत ही सुन्दर स्वरूप बनाया। दिगम्बर होकर अत्यन्त ही मधुर स्वर में वंशी बजाने लगे। इनके इतने लोकत्तर सुन्दर स्वरूप को देखकर तथा मनमोहक वंशी की सुरीली तान को सुनकर दारुवन की जितनी स्त्रियाँ थीं सब आ गयीं। जगत-पति कापालिक शम्भु डमरू बजा रहे थे और ताण्डव नृत्य कर रहे थे। इनके सुन्दर स्वरूप को, नृत्य को देखकर विप्रपत्नियाँ

मन्त्र मुग्ध की भाँति मोहित हुई उन्हें अनुराग के साथ अवलोकन कर रही थीं। ब्राह्मणों ने देखा यह दिगम्बर ब्रह्मचारी सदाचार के नियमों के विरुद्ध नग्न नृत्य कर रहा है, तब उन्होंने शाप दिया—"जाओ, तुम्हारी लिङ्ग गिर जाय।" उसी समय शिवजी की लिङ्ग गिर गयी। तब तो देवता बहुत घबड़ाये। वे ब्राह्मणों के समीप आये और बोले—"ये तो स्वयं साक्षात् शिवजी हैं।"

तब ब्राह्मणों को बड़ा पश्चात्ताप हुआ। तब ब्राह्मणों ने कहा—"हमारे वचन मिथ्या तो नहीं होंगे। किन्तु आज से संसार में शिवजी के लिङ्ग की पूजा हुआ करेगी और उससे समस्त सिद्धियाँ प्राप्त होंगी।

तब फिर ब्राह्मणों ने शिवजी से कहा—"भगवन्! आप यहीं इस दारुवन में विराजें। पतिव्रताओं के मन को विचलित करने का जो दोष आपको लगा है, उसका शमन इसी क्षेत्र में होगा।" शिवजी ने इसे स्वीकार किया। वे एक गुफा में गुप्तेश्वर नर्मदेश्वर की स्थापना करके तप करने लगे। इससे उनका दोष मिट गया। यहाँ तपस्या करने से सभी प्रकार के पाप नष्ट हो जाते हैं। गुहावासी गुप्तेश्वर के दर्शन से सर्व तीर्थों के पुण्य का फल प्राप्त होता है।×

४—गुप्तेश्वर से ४ मील अरण्य के मार्ग से चलकर आगे नान संगम है। यहाँ नान नदी आकर नर्मदाजी में मिली हैं।

५—नान संगम से ६ मील आगे पथराल ग्राम के समीप मालन संगम है। यहाँ मालन गङ्गा नर्मदाजी में आकर मिली हैं।

६—मालन संगम से कुछ ही आगे पीतामली ग्राम के सन्निकट पिप्पलेश्वर तीर्थ है यहाँ पिप्पलाद मुनि का आश्रम है। कहते

× (रे० खं० ५७ अ०)

हैं मिथिलापुरी के महर्षि याज्ञवल्क्य की विधवा बहिन के यहाँ नियम विरुद्ध एक पुत्र उत्पन्न हो गया। वह पीपल के वृक्ष के नीचे हुआ और शनिदेव ने उसका पालन पोषण किया। वह महान तपस्वी हुआ। उसने तपस्या के प्रभाव से शनिदेव से बालकों को कष्ट न देने की प्रतिज्ञा करा ली। इसने शूलपाणि में भी जाकर तपस्या की और शिवजी को प्रसन्न किया।

७—पिप्पलेश्वर तीर्थ से आगे पेशवाओं द्वारा स्थापित एक विजयेश्वर शिव हैं, उससे आगे मैलखलग्या ग्राम के सन्निकट खुलार नदी का संगम है। संगम के समीप ही दारुकेश्वर शिव जी हैं प्राचीन काल में देवताओं की एक सभा हुई। उसमें वर्ध-मान का पुत्र दारुक दुष्ट स्वभाव का होने से ब्राह्मणों को बहुत कष्ट देने लगा। तब इन्द्र ने उसे शाप दिया—"तू मर्त्यलोक में जाकर मानव योनि में उत्पन्न हो।" इस पर दारुक ने देवराज इन्द्र की बहुत अनुनय विनय की। तब देवराज इन्द्र ने कहा—"मनुष्य योनि में तो तुझे जन्म लेना ही पड़ेगा और सूत जाति में तू पैदा होगा। किन्तु श्रीकृष्ण भगवान् का सारथी होगा। रेवा तीर में तपस्या करने से तू मुक्त हो जायगा। उसी श्रीकृष्ण सारथी दारुक ने अपने नाम से इस तीर्थ की स्थापना की। यह सभी कर्मों को सुफल बनाने वाला परम पुण्यप्रद पावन तीर्थ है।÷

८—दारुक तीर्थ से २ मील आगे सेमलदा ग्राम के समीप विमलेश्वर तीर्थ है। एक बार बहुत बड़ा दुर्भिक्ष पड़ा। उस समय गङ्गातीर निवासी ब्राह्मणों को अभक्ष भक्षण करना पड़ा। जब दुर्भिक्ष मिट गया तब ऋषियों की सभा हुई। उसमें यही निर्णय हुआ—अभक्ष्य भक्षण दोष नर्मदा किनारे जाकर तपस्या करने से

÷ (रे० खं० ५६ अ०)

छूट सकता है। तब सब लोग इस विमलेश्वर तीर्थ में आये। शिवजी की आराधना करने से वे सब विमल बन गये। यहाँ ओंकारेश्वर कुन्देश्वर भी हैं।×

९—विमलेश्वर से ३ मील आगे वन के मार्ग से बड़वाई ग्राम है। उसके समीप नागेश्वर तीर्थ है यहाँ रेवा कुंड में नागेश्वरनाथ का मन्दिर है, ओंकारनाथ की झाड़ी यहीं से मानी जाती है।

१०—नागेश्वर से २ मील आगे खेड़ीघाट है बहुत सुन्दर रमणीक स्थान है।

११—नागेश्वर से २ मील आगे वन मार्ग से चारुसंगमेश्वर गङ्गनाथ तीर्थ है। यह स्थान भी सुन्दर और एकान्त है।

१२—चारु संगमेश्वर से १ मील आगे झाड़ी के मार्ग से गङ्गा नदी संगम है। यहीं कोटेश्वर तीर्थ है। दनु के पुत्र करञ्ज दानव ने यहाँ तप करके शिवजी को प्रसन्न करके उनकी भक्ति प्राप्त की। यह परम पुण्यप्रद तीर्थ है।÷

१३—कोटेश्वर से ४ मील आगे बीहड़ वनों में होकर चौबीस अवतार तीर्थ है। यह स्थान नर्मदा में जो कावेरी का दूसरा संगम है उसके समीप है। यहाँ चौबीस अवतारों की मूर्तियाँ काले पाषाण की स्थित हैं, मन्दिर बहुत जीर्ण-शीर्ण अवस्था में है मेरे पास यहाँ के एक महात्मा का पत्र आया था कि २४ अवतारों की मूर्तियाँ किस क्रम से स्थापित करें। मैंने श्रीमद्भागवत के द्वितीय स्कन्ध के सप्तम अध्याय में जो भगवान् के अवतारों की लीला कथा है वही क्रम उन्हें लिखकर भेज दिया था। स्यात् चौबीस अवतार स्थान का जीर्णोद्धार होने वाला है।

× (रे० खं० ६२ अ०)   ÷ (रे० खं० ५६ अ०)

इस प्रकार हमने महेश्वर से इन्दौर के सामने चौबीस अवतारों तक के स्थानों का वर्णन किया। अब आगे इन्दौर से नेमावर तक के स्थानों का वर्णन आगे किया जायगा।

छप्पय

तीर्थ महेश्वर निरखि मण्डलेश्वरमें आओ।
गादी संगम नाँघि नान संगममें न्हाओ॥
सुघर ग्राम पथराल नदी मालन संगम वर।
आगे है बैगाँव पितामलि दारुक ईश्वर॥
सेमलदा विमलेश्वर हु, आगे बड़बाहा नगर।
रेवा खेड़ीघाट पुनि, चरु संगमेश्वर विमल वर॥

दोहा

कोटेश्वर वर तीर्थ है, हैं चौबिस अवतार।
ओंकारेश्वर पासमें, जिला पासमें धार॥



नर्मदा तट के एक घाट का दृश्य

इन्दौर से नेमावर

(२३)

गतिस्त्वमेवेव पितेव पुत्रान्
त्वं पासि नो यावदिमं युगान्तम् ।
कालेत्वनावृष्टि हतं सुघोरम्
यावत्तरामस्तव सुप्रसादात् ॥*

(स्कन्दे)

छप्पय

काल सुघोर गँभीर नहीं गति अन्य दिखावैं ।
अति सूखेको समय नष्ट फल जल है जावैं ॥
जैसे अति लघुवत्स जनक जननी गति पावैं ।
भूख प्यासतैं दुखी शरन उनकी ही जावैं ॥
वैसे ही माँ ! सबनिकी, एकमात्र गति आप हो ।
रक्षा युग युग तक करो, तुम रक्षक पितु मातु हो ॥

जिनके सहारे से हम अपने समस्त मनोरथों को प्राप्त कर सकें वे ही हमारी एकमात्र गति माने गये हैं। केवल स्तनों से ही

---

* जिस प्रकार पुत्रों के लिये माता-पिता एकमात्र गति हैं, उसी प्रकार अनावृष्टि से नष्ट किये हुए इस भयङ्कर काल को हम तेरे प्रसाद से पार कर सकेंगे, इस दुष्काल में तुम ही एकमात्र गति हो इसलिये हे माता ! तुम युग पर्यन्त हम लोगों की रक्षा करो ।

दूध पर रहने वाले शिशु की एकमात्र गति माता ही है। किन्तु शिशु की एकमात्र माँ ही गति है, यह भी नहीं कह सकते। मान्धाता तो पिता के पेट से पैदा हुए, फिर भी वे जीवित रह सके। पिप्पलाद मुनि की माँ तो अपने उदर को विदीर्ण करके पेट के शिशु को निकालकर–पीपल के वृक्ष के नीचे रखकर–अपने पति दधीच के साथ सती हो गयी। वे बिना माता-पिता के पीपल के फलों को खाकर बड़े हुए। अतः माता-पिता तो उपचार के अर्थ में शिशु की गति–सहारे–माने जाते हैं। वास्तव में समस्त प्राणियों की गति तो सर्वेश्वर अथवा सर्वेश्वरी ही हैं। गति शब्द के अनेक अर्थ हैं। वेद निघंटु में गति शब्द के १२२ पर्यायवाची शब्द हैं। श्रीमद्‌भगवत् गीता में स्वयं भगवान् ने गति के अर्थ में ही। इन १२ शब्दों का प्रयोग किया है। (१) गति, (२) भर्ता, (३) प्रभु, (४) साक्षी, (५) निवास, (६) शरण, (७) सुहृद्, (८) प्रभव, (९) प्रलय, (१०) स्थान, (११) निधान और (१२) अव्यय बीज।+ इससे यही सिद्ध हुआ कि सबकी एकमात्र गति लक्ष्मीनारायण ही हैं। इसीलिये भगवान् शुकदेवजी ने श्रीमद्‌भागवत की कथा आरम्भ करते हुए भगवान् की स्तुति करते हुए सबके पति और सबके गति एकमात्र श्रीकृष्ण को ही बताया है। वे कहते हैं—जो लक्ष्मीजा के पति हैं, समस्त यज्ञों के पति हैं, समस्त प्रजाओं के पति है, समस्त बुद्धि के अन्तर्यामी रूप से पति हैं, समस्त लोकों के पति हैं, पृथ्वी के पति हैं तथा अन्धक, वृष्णि तथा समस्त सात्वत–वैष्णवों के एकमात्र पति भी हैं और गति भी हैं। वे ही सन्तजनों के सर्वस्व भक्तवत्सल श्रीकृष्ण मुझ

+ गतिर्भर्ता प्रभुः साक्षी निवासः शरणं सुहृत् ।
प्रभवः प्रलयः स्थानं निधानं बीजमव्ययम् ॥

(गी० ९, १८)

पर प्रसन्न होवें।* जैसे विष्णु भक्तों की एकमात्र गति जगत् पिता विष्णु हैं। वैसे ही नर्मदा भक्तों की एकमात्र गति जगज्जननी माता नर्मदाजी हैं। उनका आश्रय लेने से, उनका सहारा लेने से जीव जगज्जाल से सदा के लिये निर्मुक्त हो जाता है।

हाँ तो हम इन्दौर से प्रसादादि पाकर चैत्र कृष्णा द्वितीया (१५ मार्च) को मध्यान्होत्तर नेमावर के लिये चले। मार्ग में हमें सुडेख, अकबरपुर, धगवोगा, करनाद, पालौद, कानौद, डाकूली-खेड़ा, बुखईखेड़ा, सिमरौल, खटेगाँव आदि बहुत से गाँव पड़े। सभी को देखते भालते सभी का स्वागत सत्कार स्वीकृत करते हुए, सायंकाल के समय नेमावर स्थान में पहुँचे। हमारी गाड़ियाँ नर्मदाजी के समीप तक पहुँच गयीं।

नेमावर—

दक्षिण तट की परिक्रमा में हम हँड़िया तक नर्मदा की नाभि स्थान तक आये थे। नाभि के सामने ही उत्तर तट पर नेमावर ग्राम है। हँड़िया में उस दिन न ठहर कर हरदा में ठहरे थे। सबको पता था चैत्र कृष्णा द्वितीया को हम लौटकर नेमावर आवेंगे। अतः आस-पास के ग्रामों के हरदा तथा हुसंगाबाद तक के लोग रासलीला देखने आ गये थे।

नेमावर सुप्रसिद्ध तीर्थ है, नर्मदाजी की नाभि ही ठहरी। यह सिद्ध भूमि कहलाती है। किसी का मत है, पहिले जमदग्नि मुनि का निवास स्थान यहीं था। श्री परशुरामजी का जन्म यहीं

---

* श्रियः पतिर्यज्ञपतिः प्रजापति–
धियां पतिर्लोकपतिर्धरापतिः।
पतिर्गतिश्चान्धकवृष्णिसात्वतां
प्रसीदतां मे भगवान् सतां पतिः॥
(श्री० भा० २ स्क० ४ अ० २० श्लो०)

हुआ था। गाँव के समीप परशुरामजी की माताजी रेणुकाजी का मन्दिर है। यहाँ ऊँचे पर ग्वाल टेकरी है। पहिले इसका नाम मणिगिरि था। ग्वाल टेकरी नाम कैसे पड़ा इस सम्बन्ध की एक कथा है—

प्राचीन काल में इस मणिगिरि की गुफा में एक सिद्ध महात्मा रहते थे। उनकी गुफा में से एक गौ निकलकर एक ग्वाल की गौओं में आकर मिल जाती, दिन भर चरती। सायंकाल के समय ग्वाला की गौओं से पृथक् होकर चली जाती। बहुत दिनों तक जब वह गौ ग्वाला की गौओं में चरती रही। तब एक दिन ग्वाला ने सोचा—"इतनी सुन्दर गौ किसी बड़े आदमी की है। मैं बहुत दिन से इसे अपने गौओं के साथ चरा रहा हूँ। इसके स्वामी का पता चले तो उससे अधिक चरवाही के रूप में धन प्राप्त हो सकता है।" यह सोचकर एक दिन जब गौ उसकी गौओं से पृथक् होकर जाने लगी, तब वह ग्वाला भी उस गौ के पीछे-पीछे हो लिया। मणिगिरि के मार्ग से गौ गुफा में घुसी। ग्वाला भी उसके साथ घुस गया। वहाँ उसने एक तेजस्वी महात्मा को बैठे देखा।

महात्माजी ने पूछा—"भाई, तुम यहाँ कैसे आ गये ?"

ग्वाला ने कहा—"महात्माजी ! बहुत दिनों से मैं आपकी गौ को चराता हूँ। आपसे उसकी चरबाही माँगने के लिये आया हूँ।"

महात्माजी उसकी बात सुनकर कुछ रोष के साथ उसे १०-२० कंकड़ उठाकर देते हुए बोले—"ले यह चरवाही है।"

ग्वाल उन कंकड़ों को लेकर गुफा के बाहर निकला। बाहर देखता है वे तो कंकड़ हैं। महात्मा ने क्रोध में भरकर कंकड़ दे दिये हैं। उसने और सब कंकड़ तो फेंक दिये। ३-४ रख लिये कि गाँव में चलकर सबको दिखाऊँगा। बाबाजी ने चरवाही में ये

कंकड़ दिये हैं। उन कंकड़ों को लेकर वह गाँव की ओर चल दिया। गाँव के समीप पहुँचने पर जब उसने उन कंकड़ों को देखा तो वे तो सुवर्ण के थे। अब उसे बड़ा आश्चर्य हुआ। पश्चात्ताप करने लगा—हाय मैंने सबको फेंक क्यों दिया ? सबको ले आता तो मालामाल हो जाता। वह लौटकर दौड़ा-दौड़ा पुनः गया। किन्तु न वे कंकड़ मिले, न वह गुफा मिली, न वह गौ मिली और न वे साधु ही मिले। पहिले पहिल इस टोकरी पर ग्वाले को ही सिद्ध महापुरुष के दर्शन हुए। इसीलिये इसका नाम ग्वाल टेकरी प्रसिद्ध हुआ। कुछ दिन से इस पर बेंगलोर के एक महात्मा रहने लगे हैं। उनका नाम 'मूँगफली बाबा' है। स्यात् वे मूँगफली ही खाकर निर्वाह करते हैं। नीचे राधाकृष्णजी का मन्दिर है। एक बड़ा-सा सघन वृक्ष है। हम उसके फल तुड़वा कर ले आये थे।

यहाँ सिद्धनाथजी का बहुत ही प्राचीन कलात्मक मन्दिर है। भारतवर्ष में कितनी अद्भुत पाषाण की कारीगरी थी इसे देखकर पता चलता है। तिल-तिल भर स्थान में भव्य कारीगरी है। सुनते हैं इस मन्दिर का निर्माण पांडवों ने किया था आततायी दस्युधर्मी यवनों ने इसे क्षत-विक्षत कर दिया। अब कोई ऐसा माई का लाल नहीं है जो इस प्राचीन भारत की अभूतपूर्व दर्शनीय आदर्श विश्वविख्यात अन्यत्र असुलभ कारीगरी का जीर्णोद्धार करा सके। हम मन्दिर को विषाद भरी दृष्टि से बहुत देर तक देखते रहे। शिवलिंग पर भी आततायियों ने प्रहार किया था। मन्दिर जीर्ण-शीर्ण अवस्था में है। उसके ऊपर एक टेकरी में विश्वनाथ ब्रह्मचारी नाम के एक महात्मा रहते हैं। उसके ऊपर पहाड़ की चोटी पर नयी धर्मशाला बन रही है। सामने विस्तृत मैदान है। उसी मैदान में सामयाना लगाकर रासलीला का

प्रबन्ध किया गया था। धर्मशाला की कोठरियों में हम सब लोग ठहरे थे।

श्री ब्रह्मचारी जी से हम मिलने गये। वे अपने पूर्व के परिचित निकले। उन्होंने बड़ा स्वागत-सत्कार किया।

श्री तीर्थराज प्रयाग में रहने से एक सबसे बड़ा लाभ हमें यह हुआ कि इधर ६०-७० वर्ष के पूरे भारतवर्ष के साधुओं में से स्याद् ही कोई ऐसा हो जिनसे हमारा परिचय न हुआ हो। कारण यह है कि प्रयागराज में प्रति वर्ष माघ मकर का महीने डेढ़ महीने का मेला होता है। जिसमें प्रतिवर्ष कुम्भ मेलों के ही सदृश उत्तर प्रदेशीय सरकार को प्रबन्ध करना पड़ता है। प्रति वर्ष भारतवर्ष भर के सहस्रों साधु महात्मा कल्पवास करते हैं। कभी-कभी तो माघ का मेला कुम्भ से भी बढ़ जाता है। ६ वर्ष में प्रयागराज की अर्धकुम्भी पड़ती है। जिसमें लाखों यात्री आते हैं। बारह वर्ष में कुम्भ का मेला होता है जिसमें करोड़ों नर-नारी आते हैं। प्रयागराज का-सा कुम्भ न तो हरिद्वार में होता है, न नासिक में और न उज्जैन में। इन तीर्थों में उतना स्थान ही नहीं। प्रयागराज में गङ्गा-यमुना के संगम में तीनों ओर बीसों मील का स्थान पड़ा है। भारतवर्ष का स्यात् ही कोई ऐसा साधु रहा हो जो कभी प्रयाग न आया हो। जो प्रयाग आते हैं, वे झूसी संकीर्तन भवन में भी कृपा कर पधारते हैं। फिर मैं पहिले प्रति वर्ष बद्रीनाथ भी जाया करता था। महीने दो महीने रहता था। वहाँ भी बहुत से महात्माओं के दर्शन होते थे। अतः हम अटक से कटक तक रामेश्वर से हिमालय तक जहाँ भी गये, जिन महात्मओं के भी दर्शनों को गये। प्रायः सभी पुराने परिचित ही निकले।

ब्रह्मचारीजी के सामने ही लगभग सौ सवा सौ वर्ष के एक दण्डी स्वामी भी विराजते थे। हम उनके भी दर्शनों को गये। वे बोले—"ब्रह्मचारीजी ! ब्रज के लोग बड़े भक्त होते हैं।"

मैंने कहा—"हाँ महाराज मेरा जन्म व्रज में ही हुआ है।"

वे बोले—"पहिले हम समझते थे ये व्रज के रहने वाले अनपढ़ धूर्त ठग होते हैं। अतः हम कभी व्रज में नहीं जाते थे। 'एक बार चले गये' तो व्रजवासियों ने कहा—"बाबा! तू अबकें यहीं व्रज में चतुर्मास कर।" हमारी इच्छा तो नहीं थी। किन्तु बहुत लोगों के आग्रह से हमने वहाँ चातुर्मास्य व्रत किया। तब हमें पता लगा कि अन्य स्थान का विद्वान् शास्त्र मर्मज्ञ और भगवत् भक्त व्रज के अपढ़ गँवार व्रजवासी के बराबर भी नहीं हैं। व्रजवासी तो जन्मजात भक्त होते हैं। इसी प्रकार अन्य स्थान का षट्शास्त्री और काशी का मूर्ख व्यक्ति दोनों बराबर है। काशी में ज्ञान होना स्वाभाविक है।

फिर बोले—"ब्रह्मचारीजी हमने सुना है, आपके साथ रास-लीला मंडली भी है, हमें रास दिखलवा देंगे?"

मैंने कहा—"हाँ, महाराजजी! हमारे साथ रास मण्डली है, आप आज्ञा करें कौन-सी लीला करवावें?"

वे कुछ सोचकर बोले—"नौका लीला करवाइये।"

मैंने कहा—"जो आज्ञा, लीला आरम्भ होते ही मैं आपको बुलवा लूँगा।"

और भी बहुत-सी बातें होती रहीं। वे दाक्षिणात्य दंडी स्वामी थे। मैं पहिले सोच रहा था। रज्जू सर्प वाले शुष्क वेदान्ती होंगे। जीव-जगत् ब्रह्म-जगत् के मिथात्व पर वाद-विवाद करने वाले मायावादी होंगे? किन्तु ये तो इतने सरस, इतने सहृदय, इतने उदार निकले। बड़ी प्रसन्नता हुई। नित्य कर्मों से निवृत्त होकर रासलीला प्रारम्भ हुई। मैंने स्वामीजी को बुलवाया। ब्रह्म-चारीजी भी स्वयं ही आ गये। रासलीला के अन्त तक बैठे रहे बड़े ध्यान से देखते रहे। उन स्वामी जी के दर्शनों से बड़ी प्रस-

न्नता हुई। रात्रि भर वहाँ रहे। दूर-दूर से चारों ओर से सहस्रों नर-नारी वहाँ आ गये थे।

यदि हम इन्दौर के सामने (चौबीस अवतारों) से पैदल-पैदल नर्मदा किनारे-किनारे यात्रा करें तो हमें मार्ग में कौन-कौन से तीर्थ पड़ेंगे। इसका विवरण नीचे दिया जाता है।

१—चौबीस अवतार–यह स्थान ओंकारनाथ के ईशान कोंण में जहाँ कावेरी का नर्मदाजी में पुनः दूसरा संगम हुआ है उसके समीप ही है, श्रीनर्मदाजी की सर्वप्रथम जमात स्थापित करके परिक्रमा आरम्भ करने वाले श्रीस्वामी कमल भारतीजी महाराज का यहाँ आश्रम हैं। श्री भारतीय स्वामी जी ने जमात स्थापित करके जमात के साथ श्रीनर्मदाजी की तीन परिक्रमायें कीं। आपकी जमात में हाथी, घोड़े, बैलगाड़ियाँ झंड़ा निशान सभी रहते थे। श्री गौरीशङ्कर ब्रह्मचारी महाराज आपके साधक शिष्य थे। तीन परिक्रमाओं के पश्चात् इन्होंने अपना झंडा निशान देकर श्री गौरीशङ्कर ब्रह्मचारीजी महाराज को जमात का महान्त बनाया। उनके काल में जमात की अत्यधिक वृद्धि हुई। सम्वत् १९४४ में श्री गौरीशङ्कर महाराज ने समाधि ली तदनन्तर श्री नर्मदानन्दजी महाराज जमात के महान्त हुए। श्रीनर्मदानन्दजी के पश्चात् श्री काशीनन्दजी जमात के महान्त हुए। सं० १९९० में उन्होंने अपने शिष्य श्रीरतिनन्दजी को जमात का महान्त बनाया। पुनः धीरे-धीरे जमात समाप्त ही हो गयीं। श्री स्वामी कमल भारतीयजी महाराज जमात का भार छोड़कर मण्डलेश्वर के समीप मर्कटी संगम पर आश्रम बनाकर रहने लगे। कुछ वर्ष के पश्चात् मर्कटी संगम के आश्रम को छोड़कर यहाँ चौबीस अवतार में अपना नवीन आश्रम बनवाकर रहने लगे। सन् १९१२ के लगभग आपने इस पाञ्चभौतिक शरीर का परित्याग इसी स्थान पर किया। चौबीस अवतार में आपका स्थान विद्यमान है।

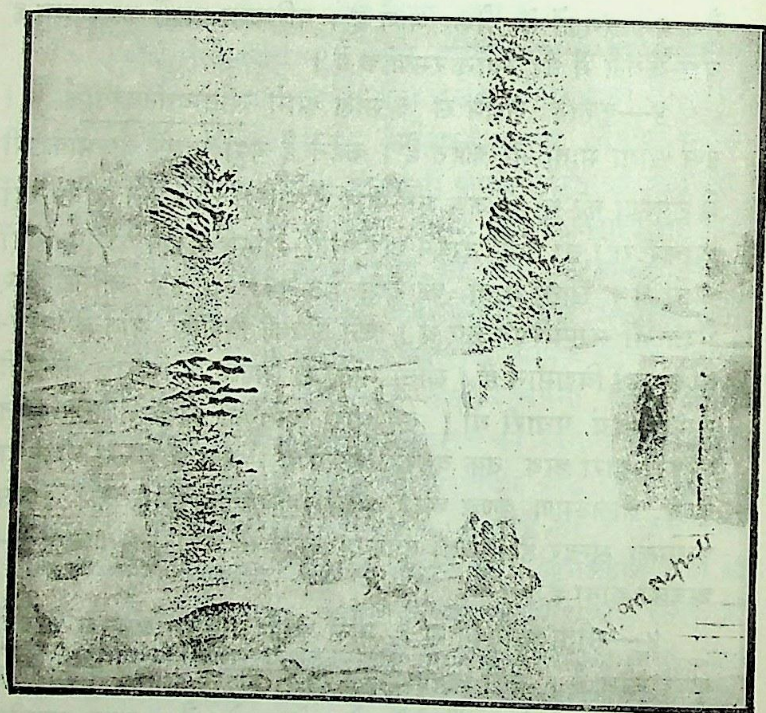
२—चौबीस अवतार से ९ मील आगे। कठिन झाड़ियों के मार्ग से सेलानी घाट आता है। इस घाट से कुछ ही दूर पर बखतगढ़ का पुराना छोटा-सा जीर्ण-शीर्ण दशा में किला पड़ा है।

३—सेलानी घाट के समीप ही रामपुरा ग्राम में कुनाड़संगम है। घने जंगलों में होकर मार्ग है। परिक्रमा वालों का कहना है घोर जंगल में यह स्थान रमणीक है।

४—कुनाड़ संगम से ६ मील आगे सीताबाटिकातीर्थ है। इसे सीता माता भी कहते हैं। कहते हैं यहाँ महर्षि वाल्मीक जी ने तपस्या की थी। जब लव-कुश के सहित श्री सीता माता यहाँ आकर रहीं तो उन्हें देखने अरुन्धती सहित महर्षि वसिष्ठ यहाँ आये थे। सीता माता की रक्षा हेतु यहाँ पर ६४ योगिनी ५२ भैरव भी समुपस्थित हुए थे। उन सबकी विशाल मूर्तियाँ अद्यावधि यहाँ विद्यमान हैं। सीता माता से मिलने के निमित्त भगवती नर्मदा स्वयं पधारी थी। वह धारा पर्वत को फोड़कर उस पर्वत कन्दरा द्वारा अब तक बहती रहती है। इस धारा में श्रीसीता कुण्ड, श्रीलक्ष्मण कुण्ड और श्रीराम कुण्ड विद्यमान हैं। स्थान अत्यन्त सुन्दर है। यहाँ तपस्या करने से महारोग—कुष्ट रोग—अच्छा होता है।

५—सीता बाटिका से ६ मील आगे धावड़ी ग्राम में धावड़ी कुण्ड तीर्थ है। यहाँ विशालकाय धूँआँधार है। २५ फुट ऊपर से धारा गिरती है, यहाँ छोटे-बड़े अनेक स्रोत हैं। परम दर्शनीय स्थान हैं। कहते हैं माता नर्मदाजी ने विन्ध्याचल के गर्व को खर्व करने के निमित्त ऐसा अद्‌भुत दृश्य दिखाया था। इसके सामने ही दक्षिण तट पर धारेश्वर शिवजी का मन्दिर है। नर्मदाजी के जगत् प्रसिद्ध वाणलिंग इसी धावड़ी कुण्ड में से निकलते हैं। इस सम्बन्ध की एक कथा है—

प्राचीन काल में वाणासुर एक कोटि शिवलिंग बनाकर इस स्थान में पूजन करने के निमित्त बैठा था। उसी समय शिवजी ने उसका स्मरण किया। वे सब बने बनाये शिवलिंग उसने नर्मदाजी के इस धावड़ी कुण्ड में डाल दिये और स्वयं शिवजी के



धावड़ी कुंड का जल प्रपात।

समीप जाकर समुपस्थित हुआ। भारतवर्ष में जहाँ भी जिस मन्दिर में नर्मदाजी के बाणलिंग स्थापित हैं, वे इसी धावड़ी कुण्ड से जाते हैं। यहाँ पनडुब्बे लोग रहते है। उन्हें कुछ द्रव्य दीजिये वे तुरन्त डूबकर कुंड में से वाणलिंग निकालकर आपको दे देंगे। यहाँ किये हुए शुभ कर्म अक्षय होते हैं।

६—धावड़ी कुंड से ५ मील आगे झाड़ी मार्ग से चलकर प्रेमगढ़ नाम का ग्राम आता है, उसके समीप ही खांडा संगम है। यहाँ खांड़ा नदी आकर श्रीनर्मदाजी में मिली हैं खांडा संगम पर सङ्गमेश्वर शिवजी का मन्दिर है।

७—खांडा संगम से १ मील आगे भेटखेड़ा नामक ग्राम है। ग्राम से कुछ ही दूर पर लकड़कोट नाम का स्थान है। यहाँ नर्मदाजी में चक्रकुण्ड है। धावड़ी कुण्ड में वाणलिंग शिवजी का निवास है। वहाँ चतुर्मास में बहकर जो लकड़ियाँ कूड़ा कर्कट आता है। वह धावड़ी कुण्ड में न रहकर यहाँ चक्रकुण्ड में आकर एकत्रित हो जाता है। माता ने इसी के निमित्त स्वयं इस कुंड का निर्माण किया है।

८—लकड़कोट से ६ मील आगे कालादेव नामक स्थान है। परिक्रमा का मार्ग यहाँ वासांग पर्वत श्रेणी पर से गया है। मार्ग झाड़ियों का है। आगे चलने पर बारङ्गा नाला पड़ता है। यह नाला दो पर्वतों के बीच से टेढ़ा-मेढ़ा सर्पाकार बहा है। इसलिये इसे २४ बार पार करना पड़ता है। १६ बार पार करने के पश्चात् झाड़ी में काल भैरव का स्थान हैं। इन्हीं काल भैरव को ग्वाला लोग कालादेव कहते हैं। ये कालादेव इसी सर्पाकार बारंगा नाला के तीर पर विशाल पर्वत की गुफा में स्थित है। यह गुफा किसी ने बनायी नहीं है। प्राकृत-स्वयंभू है। यह विशेपकर ग्वाला भाइयों का तीर्थ स्थान है। यहाँ बारंगा नाला को १६ बार पार करने पर कालादेव पहुँचे थे।

९—कालादेव से ६ मील आगे झाड़ी मार्ग से चलिये। ८ बार पुनः बारंगा नाले को पार कीजिये, तब आपको पामाखेड़ी ग्राम मिलेगा। यहाँ तक आपने बारंगा नाला को २४ बार पार किया।

१०—पासाखेड़ा ग्राम से ४ मील जंगल के मार्ग से चलकर आप धर्मपुरी तीर्थ में पहुँचेंगे। यहाँ पर धर्मेश्वर शिवजी का मंदिर है। कहते हैं वनवास के काल में धर्मराज युधिष्ठिर ने यहाँ कुछ काल रहकर यज्ञ, दान, तपादि धर्म के कार्य किये थे। तभी से इसका नाम धर्मपुरी प्रसिद्ध हो गया। सामने ही उस पार दक्षिण तट पर पुनघाट है। धर्मपुरी रमणीय स्थान है।

११—धर्मपुरी से ६ मील आगे कीटी घाट है। जब पांडव लोग धर्मपुरी में निवास कर रहे थे। तब भीमसेन ने किसी राक्षस का यहाँ वध किया था। यहाँ नर्मदाजी के बीच में भीम-सेन की कांवड़ है।

१२—कीटीघाट से ६ मील आगे चलकर हरण्याखेड़ा नामक ग्राम है, उसके सन्निकट ही दाँतोनी संगम है। यहाँ दाँतोनी नदी आकर नर्मदाजी में मिली हैं इस स्थान को फतेगढ़ भी कहते हैं। इसके सामने ही नर्मदा के दक्षिण तट पर जोगा किला है। दाँतोनी नदी के संगम के समीप हरणेश्वर शिवजी का एवं काल भैरव का स्थान है। नर्मदा की धारा यहाँ सभिटि कर छोटी हो गयी हैं।

१३—दँतोनी संगम से १० मील आगे बागदी संगम है यहाँ बागदी नदी आकर नर्मदाजी में मिली हैं यहाँ कालभैरव ने तपस्या करके सिद्धि प्राप्त की।

१४—बागदी संगम से ६ मील आगे नेमावर स्थान है। यह नर्मदाजी का नाभि मंडल माना जाता है यहाँ सिद्धनाथ भगवान् का ऐतिहासिक मन्दिर है। कहते हैं इसका निर्माण पांडवों ने कराया था। इस प्रकार का अद्‌भुत कलायुक्त मन्दिर सम्पूर्ण भारत में स्यात् ही कहीं हो। हम तो इस मन्दिर की कारीगरी को देखकर मन्त्र मुग्ध हो गये। और इसकी धर्मान्ध दस्युधर्मी

यवनों द्वारा ऐसी दुर्दशा की हुई देखकर तथा इसकी जीर्ण-शीर्ण दशा देखकर दुःख भी अत्यधिक हुआ।

वसिष्ठ संहिता में इस तीर्थ की कथा इस प्रकार है। श्रीरामचन्द्रजी के पूछने पर वसिष्ठजी ने कहा—श्रीराम! ब्रह्माजी के सनक, सनन्दन, सनातन और सनत्कुमार ये चार मानसिक पुत्र थे। उनकी अवस्था सदा ५-६ वर्ष की-सी ही रहती है। वैसे वे प्रजापतियों के भी पूर्वज हैं। एक बार भ्रमण करते हुए वे नर्मदाजी के इस नाभि मंडल तीर्थ पर आये। इनका आगमन सुनकर चारों ओर से ऋषि महर्षि आ-आकर यहाँ एकत्रित हो गये। तब सबने सनकादि महर्षियों की विधिवत् पूजा की। उनको उच्चासन पर बैठाकर उनसे चारों आश्रमों का धर्म पूछा।

इस पर सबसे पहिले महर्षि सनक ने ब्रह्मचर्याश्रम वाले ब्रह्मचारियों के धर्म बताने आरम्भ किये, उन्होंने कहा—

१–द्विज बालकों को अधिक-से-अधिक ८ वर्ष की अवस्था में उपनयन संस्कार कराके गायत्री मन्त्र की दीक्षा लेकर गुरुकुल में बास करना चाहिये।

२–प्रतिदिन नियमित रूप से भिक्षा माँगकर गुरु को अर्पण कर दे। गुरु जो दे दें उसी से निर्वाह करे।

३–नित्य नियम से अंगों के सहित वेदों का अध्ययन करे।

४–सदा पृथ्वी पर ही शयन करे। शैया पर नहीं।

५–कभी भी असत्य भाषण न करे। सदा सत्य बोले।

६–अग्नि की आहुति से, सूर्य की अर्घ्य द्वारा, गौ की घास आदि से, ब्राह्मण की आतिथ्य द्वारा तथा गुरु की सेवा सुश्रूषा द्वारा पूजा करे।

७–दिन में शयन न करे।

८–केशों का छेदन न करे। पञ्चशिखी बना रहे।

९–सन्ध्यावन्दनादि करता हुआ सदा सर्वदा पवित्रता से रहे।

इस प्रकार कम-से-कम २५ वर्ष तक गुरुकुल में निवास करके ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करे। तत्पश्चात् गुरु को दक्षिणा देकर समावर्तन संस्कार कराकर गृहस्थाश्रम में प्रवेश करे।

इस प्रकार सनक महर्षि ब्रह्मचर्याश्रम के संक्षिप्त धर्म बताकर जब चुप हो गये। तब उनके दूसरे भाई सनंदनजी गृहस्थाश्रम के धर्मों को बताते हुए कहने लगे।

१–समावर्तन संस्कार कराकर घर में आकर माता-पिता की अनुमति से सत् कुलोत्पन्न अपने ही वर्ण की सुन्दरी कन्या के साथ शास्त्रीय विधि से विवाह करे।

२–ऋतुकाल में ही धर्म समझकर सन्तान की इच्छा से गमन करे। भोग बुद्धि से नहीं।

३–गुरुकुल में जो वेदाध्ययन किया है, उसका समय-समय पर अवलोकन करता रहे! स्वाध्याय नियमित करे।

४–द्रव्योपार्जन धर्मपूर्वक सात्त्विकी वृत्ति से करे। अधर्म-पूर्वक धनोपार्जन कभी न करे।

५–समय-समय पर पितरों का शास्त्रीय विधि से श्राद्ध करे। जहाँ तक हो श्राद्ध में विद्वान् कर्मनिष्ठ वेदज्ञ ब्राह्मणों को ही बुलावे। सदाचार से हीनों को नहीं।

६–सदा सर्वदा सत्य का ही भाषण करे। असत्य न बोले।

७–सत्य भी यदि अप्रिय हो तो उसे भी न बोले।

८–नित्य नियम से अग्निहोत्र आदि पञ्चयज्ञ करे।

९–माता, पिता, भाई तथा जो अपने परिजन हैं, इनका कभी अपमान न करे।

१०–धर्मपत्नी का अपमान न करे, क्योकि जिस घर में स्त्री अपमानित होकर कुपित होती है उस गृह की लक्ष्मी नष्ट हो जाती है।

११–इस प्रकार धर्मपूर्वक गृहस्थाश्रम में रहकर पुत्र पुत्रियों

को उत्पन्न करे। तदनन्तर पुत्रों को पढ़ाकर उनकी योग्य वृत्ति लगाकर उन्हें शुभ कार्यों में नियुक्त करे। कन्याओं का योग्य वरों के साथ विवाह कर दे। फिर चाहें विरक्त भाव से घर में हो रहे या वन में जाकर वानप्रस्थ धर्म का पालन करे। गृहस्थाश्रम धर्म का मुख्य कर्तव्य अतिथि सेवा ही है।

इस प्रकार महर्षि सनन्दन जब गृहस्थाश्रम धर्म का वर्णन करके चुप हो गये, तब वानप्रस्थ धर्मों का वर्णन करते हुए महर्षि सनातन कहने लगे।

सनातन महर्षि ने कहा—"इस प्रकार आधी आयु समाप्त करके अपनी धर्मपत्नी को पुत्रों को सौंप कर वानप्रस्थ होकर वन में बास करे। चाहे तो पत्नी को भी साथ रख सकता है।

१–वानप्रस्थी वन में निवास करके जटाजूट को धारण करे।

२–वन के कन्द, मूल फलादि जो भी प्राप्त हो जायँ अथवा नीबार सवाँ मुनियों के जो अन्न मिले उसी में सन्तोष रखे।

३–तपस्या के लिये शीत ऋतु में शीत में निवास करे, उष्ण ऋतु में धूप में रहकर पंचाग्नि सेवन करे। वर्षा के चार महीनों को खुले आकाश में बैठकर बितावे। पूरी वर्षा को शिर पर ले। भगवान् का ध्यान करता रहे।

४–शम, दम, तप, तितिक्षा आदि के द्वारा ब्रह्म कर्मों का सदा सर्वदा पालन करता रहे।

५–जब तक शरीर में बल रहे। तितिक्षा सहन करने की शक्ति रहे, तब तक अग्निहोत्र आदि कर्मों को करते हुए वानप्रस्थ धर्मों का प्रेम पूर्वक पालन करता रहे। जब पूर्ण वैराग्य हो जाय तब संन्यास ग्रहण कर ले।

इस प्रकार जब सनातन मुनि वानप्रस्थ धर्मों का वर्णन करके चुप हो गये। तब संन्यास धर्मों को बताते हुए सनत्कुमार महा-मुनि कहने लगे।

महर्षि सनत्कुमार ने कहा—

१–संन्यासी यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि इन अष्टाङ्गयोग को धारण करके समाधि द्वारा ब्रह्म में लीन हो जाय।

२–चारों वर्णों के यहाँ से भिक्षा माँग लावे।

३–कौपीन तथा दण्ड कमण्डलु धारण किये रहे।

४–सदा वेदान्त शास्त्र में ही अपनी वृत्ति को लगाये रखे।

इस प्रकार जो विधिवत् शास्त्रानुकूल वर्ण और आश्रम धर्मों का पालन करता है वह संन्यासी अन्त में ब्रह्मलोक को प्राप्त कर लेता है।

वसिष्ठजी श्रीरामचन्द्रजी से कह रहे हैं--"राघव ! इस प्रकार चारों महर्षियों के मुख से चारों आश्रमों के धर्म श्रवण करके यहाँ एकत्रित हुए मुनिगण परम प्रमुदित हुए। फिर सनकादि महर्षियों ने भगवान् सिद्धेश्वर की स्थापना की। तभी से यह सिद्धनाथ तीर्थ विख्यात हुआ। ×

यहाँ जमदग्नि ऋषि ने अपनी धर्मपत्नी रेणुका के सहित तप किया था। यहाँ किये हुए शुभ कर्मों का अनन्त फल है। इस प्रकार हम लोगों ने रात्रि में यहाँ नेमावर में निवास किया। अब नेमावर से बुधनी तक का वर्णन अगले अध्याय में किया जायगा।

छप्पय

(१)

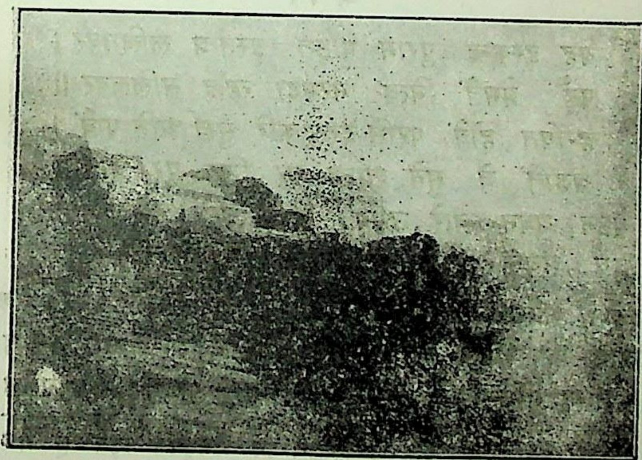
सेलानीवर घाट अनन्तर रामपुरा है।
सीता माता तीर्थ बाटिका सीता ताँ है॥
फेरि धाबड़ी कुण्ड नर्मदा बाणलिङ्ग जहँ।
इत प्रपात अति वृहद् खांड संगम शुभ है तहँ॥

× (वसि० स० ४९ अ०)

भटखेड़ा के निकट ही, चक्र कुंड लकड़ी खचित।
कालभिरब पामाखिड़ी, धर्मपुरी पाण्डव रचित॥

(२)

कीटीघाट समीप हिरण्याखेड़ा भाई।
शुभ दाँतौनी नदी नरमदामें मिलि जाई॥
है राजोर सुग्राम बागदी संगम मनहर।
सिद्धनाथ पुनितीर्थं कहें ताकूँ नेमावर॥
नाभि नर्मदाकी कही, सनकादिक इत तप कर्यो।
सिद्धनाथ के दरस करि, हियो हमारो अति भर्यो॥



नर्मदा तट के एक घाट का दृश्य

नेमावर से बुधनी

(२४)

पठन्ति ये स्तोत्रमिदं द्विजेन्द्राः
श्रृण्वन्ति ये चापि नराः प्रशान्ताः ।
ते यान्ति रुद्रं वृषसंयुतेन
यानेन दिव्याम्बर भूषिताश्च ॥*

(स्कन्द पुराणे)

छप्पय

यह इस्कन्द पुरान पठित इस्तोत्र ललितवर ।
पढ़ैं प्रेमतैं नित्य नरमदा न्हाँइ सलिलवर ॥
हरषित होवैं परसि दरस करि सुख अति पावैं ।
श्रद्धातैं जे सुने शान्त नर शिव पुर जावैं ॥
पठन श्रवन वारे उभय, दिव्य वस्त्र भूषन पहिन ।
वृष संयुक्त विमानतैं, जावैं ते शिवकी शरन ॥

इस कलिकाल में तीर्थों की श्रद्धा प्रेमपूर्वक यात्रा और भगवान् की भक्ति ये ही दो सरल सुगम साधन हैं। इनमें भी भगवत् भक्ति मुख्य है । बिना भक्ति के की हुई तीर्थ यात्रा भी

---

* जो द्विजेन्द्रगण इस पुण्यस्तोत्र का प्रेमपूर्वक पढ़ते हैं और जो प्रशान्त पुरुष इस स्तोत्र को श्रद्धा से श्रवण करते हैं वे सभी दिव्य वस्त्राभूषणों से विभूषित होकर उस विमान पर चढ़कर जिसमें नादिया वृषभ जुड़ा हुआ है शिवलोक को जाते हैं ।

उतनी हितकर नहीं। भक्ति का सर्वप्रथम अङ्ग है सत्संग। संत्सग का अर्थ है सज्जन पुरुषों का सङ्ग करना। सज्जन किसे कहते हैं ? जिनके यहाँ सदा सर्वदा बारहों मास नित्य नियम से भागवती कथा होती रहती हो। भगवत् सम्बन्धी कथाओं के बिना एक भी दिवस व्यर्थ न जाता हो। ऐसे पुरुषों का सङ्ग करोगे, उनकी सेवा में रहोगे तो तुम्हें भी नित्य कथा सुनने का सुयोग प्राप्त होगा। नित्य कथा सुनने से क्या होता है ? भागवती कथाओं में कौन से विषय होते हैं ? उनमें भगवान् के प्रबल पराक्रमों का वर्णन होता है। भगवान् ने यह किया वह किया। इस भक्त का उद्धार किया, उस भक्त पर कृपा की। उनकी कृपा का, दया का, अनुकम्पा का यथार्थ वर्णन होता है। वे कथायें इतनी सरस सुखद होती हैं कि कानों में अमृत-सा घोलती हैं, हृदय को परम प्रफुल्लित करती हैं। उन कथाओं को जो नित्य नियम से श्रवण करते हैं, उन्हें मोक्षमार्ग के प्रति पहिले तो श्रद्धा उत्पन्न होती है। यही कि अपवर्ग अध्यात्म मार्ग है, उसके अस्तित्व का भान होता है। बार-बार श्रद्धा करने से श्रद्धा दृढ़ हो जाती है, उसी दृढ़ श्रद्धा का नाम रति या प्रीति है। (रम्यते अनया सा+रति) दृढ़ रति का ही नाम भक्ति है। वह भक्ति श्रवण कीर्तनादि भेद से नौ प्रकार की होती है।*

कथा श्रवण-साधु संग या सत्संग के द्वारा प्राप्य है श्रवण भक्ति के पश्चात् कीर्तन भक्ति होती है। भगवान् के स्तोत्रों का गान-श्रवण करना यही कीर्तन भक्ति है। यह आवश्यक नहीं कि नौऊ भक्ति के अंग हों। इन नौ में से कोई भी एक भक्ति हो जाय तो

---

* सतां प्रसङ्गान्मम वीर्यसंविदो भवन्ति हृत्कर्णरसायनाः कथाः।
तज्जोषणादाश्वपवर्गवर्त्मनि श्रद्धा रतिर्भक्तिरनुक्रमिष्यति॥
(श्री० भा० ३ स्क० २५ अ० २५ श्लो०)

मनुष्य का बेड़ा पार हो जाय। प्रेम भरित गद्गद वाणी से स्तोत्र पाठ करने से इष्ट प्रसन्न होते हैं। इष्ट के प्रसन्न होने पर कोई दुर्लभ वस्तु नहीं जो प्राप्त न हो सके।

नर्मदाजी में भक्ति रखने वाले यदि नर्मदा जी की प्रेमपूर्वक स्तुति करें, उनके स्तोत्रों का भक्ति भाव से पाठ करें, उन्हें श्रद्धा से श्रवण करें तो उन्हें शिवलोक की प्राप्ति तो हो ही जायगी।

हाँ तो हम लोग चैत्र कृष्णा तृतिया। (१६ मार्च) को प्रातः काल नेमावर से चले। मार्ग में हमें दीपगाँव, गोपालपुर, बड़-नगर, पौंड़ागाँव, सीपनदी, नसरुल्लागंज बाराखेड़ा, रेहती, सलकन, नीमकछार, ओड़िया, ऊँचाखेड़ा, पीलीमगर आदि स्थान मिले। नसरुल्लागंज में भक्तों ने स्वागत सत्कार का बहुत ही सुन्दर प्रबन्ध कर रखा था। सड़क से कुछ ही दूरी पर किन्हीं भक्त का शिव मन्दिर था। उन्होंने पूड़ी मालपुआ आदि बहुत सुन्दर रसोई तैयार कर रखी थी। मैंने पहुँचकर मालपुआ परसने आरम्भ कर दिये। जो भी आ जाता उसी को यथेष्ट मालपुआ दे देता। बड़ी देर तक मालपुआ बटौअल लीला होती रही। दोपहर के पश्चात् वहाँ से चलकर बुधनी पहुँचे।

बुधनी में हमारे ठहरने का प्रबन्ध भक्तों ने डाक बँगले में किया था। अन्य सब लोगों के ठहरने का प्रबन्ध गाँव में किसी पाठशाला में किया था। बुधनी साधारणतया अच्छा ग्राम है। नर्मदा के उस पार दक्षिण तट पर हुसङ्गाबाद गुलजारी घाट है। यहाँ मध्यरेलवे का स्टेशन है और नर्मदाजी पर रेलवे का पक्का पुल है। पुल के समीप ही नर्मदा जी बड़े-बड़े पत्थरों में से होकर प्रवाहित हुई हैं। उनका कल-कल शब्द अत्यन्त ही कर्ण प्रिय लगता है। बुधनी घाट के सन्निकट ही स्टेशन तथा डाकघर है जिस प्रतीक्षालय (डाक बँगले) में हम ठहरे थे, वह नर्मदा जी के तट पर बहुत ही सुन्दर स्थान था, बहुत ही विस्तृत बना था।

अँगरेजों ने जहाँ भी प्रतीक्षालय, जिलाधीशों के तथा अन्य उच्चाधिकारियों के आवास गृह बनाये बहुत शान्त एकान्त और प्राकृतदृश्य पूर्ण स्थानों में बनाये। इस प्रतीक्षालय को देखकर चित्त अत्यन्त प्रसन्न हुआ। समस्त आधुनिक सुविधाओं से युक्त ठेठ नर्मदा जी के ऊपर परम रमणीक स्थान था। यहाँ से हम नर्मदा जी स्नान के लिये गये। बहुत ही सुन्दर नीचे तक पक्के घाट तथा मन्दिर बने हुए हैं। काल की कुटिला गति के कारण यद्यपि ये घाट जीर्ण-शीर्ण से हो गये हैं। अब इनका कोई जीर्णोद्धार करने वाला नहीं, किन्तु घाट निर्माता की धार्मिकता की छाप दर्शक के हृदय में इनकी विशालता को देखकर ही पड़ती है। सुनते हैं चाँदनी, बुधनी और बन्हेटा इन गाँवों के भूमिपाल पंडित शिव सुकुल के बनवाये हुए ये घाट और शिवालय है। नर्मदा जी की आनेकों बाढ़ों ने इन्हें जीर्ण-शीर्ण कर दिया है। भक्तों ने सबके भोजनों की समुचित व्यवस्था पहिले से ही कर रखी थी। हुसंगाबाद से तथा अन्य अनेकों स्थानों से सहस्रों दर्शनार्थी आये हुए थे। भोपाल तक से हमारे बहुत से बन्धु मोटरों से आये थे। रात्रि में रासलीला हुई। सभी ने यहीं विश्राम किया। यदि हम नेमावर से नर्मदा किनारे-किनारे पैदल परिक्रमा करते तो कौन-कौन से स्थान हमें बीच में पड़ते। इन सबका विवरण आगे दिया जाता है।

१—नेमावर से १ मील दूरी पर जामनेर स्थान है यहाँ जाम्बुवती नदी आकर नर्मदा जी में मिली हैं। जांबुवती संगम पर आत्माराम बाबा की समाधि है। ये महात्मा पेशवाओं के काल में हुए थे।

२—जामनेर से २ मील आगे गोनी संगम है। यहाँ गोनी नदी आकर नर्मदा जी में मिली हैं। सुनते हैं, जब परशुराम जी

ने सहस्रबाहु का बध कर दिया और इक्कीस बार पृथ्वी को क्षत्रियों से रहित बना दिया, तब जहाँ-जहाँ इनके पिता महर्षि जमदग्नि ने तप किया था, वहाँ-वहाँ उन्होंने अपने पितरों का श्राद्ध तर्पण किया था। यह स्थान भी जमदग्नि जी की तपस्थली मानी जाती है। अतः यहाँ भी पितरों के श्राद्धतर्पण का अनन्त फल बताया है।

३—गोनी संगम से ६ मील आगे खेड़ी ग्राम है। वहाँ खेड़ीघाट है। उसके नीचे ककेड़ा संगम है। यहाँ ककेड़ी नदी आकर नर्मदा जी में मिली हैं।

४—ककेड़ी संगम से ४ मील आगे वन पथ से छीपानेर घाट है। यहाँ सीपसंगम है। सीप नदी आकर नर्मदाजी में मिली हैं। आगे सात देवघाट हैं।

५—छीपानेर से ३ मील आगे शीलकंठ शिवजी का स्थान है। स्थान दर्शनीय है। शिवजी के दर्शन हैं।

६—शीलकंठ शिवजी से ३ मील आगे कोलार स्थान है। यहाँ कोलार अर्थात् कौसल्या नदी आकर नर्मदा जी में मिली हैं। यहाँ नीलकंठ शिवजी का मन्दिर है। स्थान सुन्दर रमणीक है।

७—कोलार से ७ मील आगे बाबरीघाट है यहाँ टिमरनी नदी आकर नर्मदा जी में मिली हैं। टिमरनी सङ्गम सुन्दर स्थान है।

८—टिमरनी सङ्गम से ८ मील आगे मर्दानाघाट है। यहाँ भी शिवजी का दर्शन है।

९—टिमरी सङ्गम से २ मील आगे आँवरी घाट तीर्थ है। यहाँ नर्मदा मैया झाड़ियों के बीच में से प्रवाहित होती हुई, तीन मील तक चली गयी हैं। यहाँ नर्मदा जी के बीच में, पर्वत में एक

गुफा-सी है। जिसे ब्रह्मयोनि कहते हैं। यात्री इसमें से होकर निकलते हैं जो इस ब्रह्मयोनि से निकल जाते हैं, वे पाप रहित बन जाते हैं। यहीं पर श्री भीमसेन द्वारा निर्मित भीमकुंड है। यह प्रसिद्ध तीर्थ है। वसिष्ठ संहिता में इसकी कथा इस प्रकार है—

वसिष्ठ जी श्री रामचन्द्र जी से कह रहे हैं—राघव ! हिरण्यकशिपु ने घोर तपस्या करके ब्रह्माजी से दुर्लभ वर प्राप्त किये। ब्रह्माजी द्वारा निर्मित इस सृष्टि का कोई भी जीव उसका नाश करने में समर्थ नहीं था। उसने समस्त देवताओं को पराजित करके इन्द्रासन छीन लिया और वह तीनों लोकों का राजा बन गया। तब समस्त देवतागण भगवान् विष्णु की शरण में गये। उन देवताओं की पत्नियाँ इस तीर्थ में आकर घोर तपस्या करने लगीं। वे सब भगवती पार्वती जी को शरणापन्न हुई, उन्होंने एकाग्रचित्त से भगवती शिवा की आराधना की, उनकी स्तुति कीं। उनकी स्तुति पूजा से प्रसन्न होकर पार्वती जी प्रकट हुईं और बोलीं—"देखो, तुम सब किसी प्रकार की चिन्ता मत करो। जब यह हिरण्यकशिपु अपने भगवत् भक्त पुत्र प्रह्लाद को दुःख देगा तब इसका निश्चित ही विनाश हो जायगा। तुम तब तक यहीं निवास करके तप करो। इसके विनाश के पश्चात् तुम्हारे पतिओं को पुनः अपना-अपना पद प्राप्त हो जायगा।"

इसके अनन्तर भगवान् नृसिंह ने हिरण्यकशिपु का वध करके सब देवताओं को उनके स्थान दे दिये। तभी से यह तीर्थ अमरों की पत्नियों के नाम आँवरी प्रसिद्ध हुआ। यहाँ जप तप आदि सुकर्म करने का अनन्त फल है। यहाँ सोमवती अमावास्या के स्नान का विशेष माहात्म्य है।*

(वसि० सं० २१ अ०)

१०—आँवरीघाट तीर्थ से ६ मील आगे तालपुराघाट है। मार्ग अत्यन्त सुहावना वन प्रान्तों में होकर गया है। यहाँ की शोभा अत्यन्त ही मनोरम है।

११—तालघाट से २ मील आगे साततुमड़ी घाट है इसके सामने दक्षिण तट पर कोकसर ग्राम है।

१२—साततूमड़ी घाट से २६ मील आगे होलीपुरा घाट है। यहाँ भागानेर नदी का संगम है। यहीं पर पंचमुखी हनुमान् जी भी हैं। यहाँ पर किसी भक्त ब्राह्मण को हनुमान् जी द्वारा मुक्ति प्राप्त हुई। यहाँ बटु ब्राह्मण भोजन का विशेष माहात्म्य है।

१३—होलीपुरा घाट से १ मील आगे तींदरी नदी का सङ्गम है। यहाँ तींदरी नदी नर्मदा जी में मिली है।

१४—तींदरी नदी से २ मील आगे महुघाट है यहाँ से बुधनी घाट लगभग ६॥ है।

१५—महुघाट से ६॥ मील आगे बुधनी घाट है। स्थान बहुत ही सुन्दर है। हम लोगों ने रात्रि निवास यहीं किया। अब यहाँ से आगे ब्रह्माण्ड घाट तक का वर्णन आगे किया जायगा।

छप्पय

(१)

नेमवार तैं मेलघाट संगम जमनेरा।
गोनी संगम न्हाय बढ़ो पुनि बीजल खेरा॥
छीपानेर निहारि शंभु श्री सीलकंठ हैं।
केकड़ि संगम तहाँ दरस जहँ नीलकंठ हैं।
संगम है कालार को, नदी टिमरनी बाँवरी।
शिवतीरथ मर्दानपुर, फेरि घाट है आँबरी॥

(२)

कह्यो आँवरीघाट भीम को कुंड तहाँ है।
तालपुरा बढ़ि चलो तूमड़ी सात जहाँ है॥
होलीपुरा समीप सु संगम भागनेर है।
नदी तींदरी जहाँ नर्मदा तैं संगम है॥
महू घाट आगे बढ़ो, बुधनी पुनि शुभ ग्राम है।
घाट मनोहर सुघर तट, यहीं रात्रि विश्राम है॥



नर्मदा तट के एक घाट का दृश्य

बुधनी से ब्रह्माण्ड घाट

(२५)

ये स्तोत्रमेतत्सततं पठन्ति
स्नात्वा तु तोये खलु नर्मदायाः ।
अन्ते हि तेषां सरिदुत्तमेयं-
गतिं विशुद्धा मचिराद्ददाति ।।*

(स्कन्दे)

छप्पय

तीनहु काल नहाय करो नित तीरथ सेवन ।
कन्द मूल फल खाय चलहि नहिँ विषयनिमें मन ।।
इन्द्रिय मन अरु बुद्धि सदा निज वशमें राखो ।
पाप करम नहिँ करो सदा सत बानी भाखो ।।
अन्त मुक्ति मिलि जायगी, तीर्थ वास चिर दिन करो ।
इस्तुति पाठ करो सतत, इष्टदेवमें मन धरो ।।

---

* जो नर्मदा तट पर निवास करता हुआ, नित्य नर्मदाजी के जल में स्नान करके इस स्तोत्र का निरन्तर पाठ करते रहते हैं, सरित् प्रवरा नर्मदाजी उनको अन्त में शीघ्र ही विशुद्ध गति प्रदान करती हैं ।

समस्त साधनों का एकमात्र लक्ष्य यही है कि सब कुछ वासुदेव ही हैं "सर्वं खलु इदं ब्रह्म !" यह जो भी कुछ दृश्य प्रपञ्च है, सब ब्रह्ममय है। वासुदेवस्वरूप है। सबको वासुदेव रूप में मानने वाला महात्मा दुर्लभ है। ऐसे महात्मा के दर्शनों से ही कल्याण हो जाता है।* धैर्य के साथ विश्वास और दृढ़ता के साथ साधन में जुटा रहे। चाहे जितने जन्म बीत जायँ, भगवान् की शरण में ही पड़ा रहे। उन्हीं की कृपा की प्रतीक्षा करता रहे।

नर्मदाजी तपस्थली है। इसके किनारे पर रहकर ब्रह्मा, विष्णु, महेश, इन्द्र, लोकपाल, देवता, यक्ष, गन्धर्व, राक्षस, मनुष्य तथा अन्य सभी ने आकर तपस्या ही की है। किसी ने दश सहस्र वर्ष, किसी ने युगयुगान्तों तक तप किया है, क्योंकि चिरकाल तक तपस्या करते हुए तीर्थ सेवन करे, तभी सिद्धि प्राप्त होती है। धैर्य धारण करके श्रद्धा विश्वास के साथ जो चिरकाल तक तीर्थ वास करते हैं, निरन्तर इष्टदेव की स्तुति करते रहते हैं, वे ही इस सिद्धि को प्राप्त करने में समर्थ होते हैं। जो धैर्य को खो देते हैं, कुछ ही काल में ऊबकर साधन का परित्याग कर देते हैं, वे कुछ प्राप्त नहीं कर सकते। तीन प्रकार के मनुष्य होते हैं। एक उत्तम, दूसरे मध्यम और तीसरे अधम। अधम तो वे पुरुष हैं, जो साधनों को दुरूह समझकर विघ्नों के भय से कभी साधना आरम्भ ही नहीं करते। मध्यम वे हैं, जो साधन आरम्भ तो कर देते हैं, किन्तु "श्रेयांसि वहु विघ्नानि" अच्छे कार्यों में,

---

* बहूनां जन्मनामन्ते ज्ञानवान् मां प्रपद्यते।
वासुदेवः सर्वमिति स महात्मा सुदुर्लभः॥
(गी० ७।१९)

सुन्दर साधनों में–सदा बहुत से विघ्न आते ही रहते हैं तो वे मध्यम साधक विघ्नों के आने पर साधन को छोड़ देते हैं। उत्तम साधक वे होते हैं कि चाहे जितने विघ्न क्यों न आ जायँ। जिस साधन को उन्होंने आरम्भ कर दिया है, उसे बिना इष्ट सिद्धि हुए छोड़ते नहीं हैं। अतः समय निरवधि है। उसकी कभी अवधि नहीं, अन्त नहीं, सदा सर्वदा साधन करता रहे, साथ ही सत्सङ्ग अवश्य करता रहे। सज्जन पुरुषों के सत्सङ्ग से, साधु पुरुषों को सङ्गति से शीघ्र ही इष्ट सिद्धि होती है। इसीलिये भागवतकार कहते हैं, तीर्थ तो बहुत दिनों के पश्चात् निरन्तर सेवन करने से पवित्र करते हैं, किन्तु सन्त पुरुषों के तो दर्शन मात्र से ही हृदय में पवित्रता आ जाती है। (ते पुनन्त्युरुकालेन दर्शनादेव साधवः) इसलिये तीर्थ सेवन और सत्सङ्ग दोनों ही करने चाहिये।

हाँ तो हम चैत्र कृष्णा चतुर्थी (१७ मार्च) को बुधनी से ब्रह्माण्ड घाट को चले। मार्ग में हमें जवाहरखेड़ा, डोभी, बकतर, गाजीखेड़ा, सिलमेना, अमरावद, बाड़ीघोंट, धनसारी, साहगंज, बासानदी, बरेली, सलइया, गोड़िया, खरगौन, नूरनगर, कड़ैली, उदयपुरा, बमलेरी, खिटिया, तेंदूखेड़ा, देवरी, बरमान आदि-आदि। आज हमारी यह अन्तिम यात्रा समझिये, क्योंकि कल तो हम अपने गन्तव्य स्थान भेड़ाघाट पहुँच ही जायेंगे। आज का मार्ग परम मनोरम था। न घोर वन, न ऊबड़-खाबड़ भूमि, सुन्दर सड़कें थीं। दिन में ही हम ब्रह्माण्ड घाट पहुँच गये। दक्षिण की परिक्रमा में बरमान या छोटा ब्रह्माण्ड घाट में हम ठहरे थे। वह इस पार के ब्रह्माण्ड घाट से नर्मदाजी को पार करके आधा मील पर ही था। यहाँ के महाविद्यालय के प्रधानाचार्य तथा और भी सज्जन पुरुष जब हम दक्षिण की परिक्रमा में आये

थे, तब हमारे पास गये थे वे हमारी आज प्रतीक्षा ही कर रहे थे। ठहरने का भोजनादि का सब प्रबन्ध उन लोगों ने कर रखा था। रासलीला के लिये भी सुन्दर मञ्च बना रखा था। हम सब लोग यथास्थान ठहर गये। हम एक धर्मशाला में ठहरे। उसके निर्माणकर्ता लगभग ९०-१०० वर्ष के एक महात्मा थे। वे हमारे पूर्व परिचित निकले। अपनी सब गाथा सुनाते रहे। जीव कभी कुछ सोचता है, कभी उसके विपरीत सोचने लगता है। कभी वैराग्य का प्राबल्य होता है तो त्याग वृत्ति जाग्रत हो जाती है, सभी को छोड़ने की इच्छा हो जाती है, फिर कभी संग्रह वृत्ति जाग्रत हो जाती है तो त्याग किये हुए को भी फिर से अपनाने की इच्छा करने लगता है। जीवन में स्थिरता आ जाय। सभी को नाशवान् अनित्य समझकर एकमात्र भगवान् की ही शरण में आ जाय तो बेड़ा पार हो जाय, किन्तु ऐसा होता नहीं। चित्त सदा चंचल बना रहता है, उसी चित्त की बिखरी वृत्तियों के निरोध का ही नाम योग है। मनुष्य योगस्थ होकर कर्म करता रहे, आसक्ति को छोड़ दे। सिद्धि असिद्धि में समभाव रखे तो उसका कल्याण हो जाय। क्योंकि समत्व बुद्धि का ही नाम योग है।* इसी असमत्व के कारण जीव संसार-सागर में सदा भटकता रहता है और दुःखों को सहता रहता है।

ब्रह्माण्ड घाट प्राचीन तीर्थ है, यहाँ ब्रह्माजी ने चिरकाल तक तप किया था। उन्हीं के नाम से यह तीर्थ प्रसिद्ध हुआ। बहुत दिनों तक इस पर पेशवाओं का राज्य रहा। इतने सुन्दर सुदृढ़

---

* योगस्थः कुरु कर्माणि सङ्गं त्यक्त्वा धनंजय।
सिद्ध्यसिद्ध्योः समो भूत्वा समत्वं योग उच्यते॥
(गी० २।४८)

पक्के घाट पेशवाओं के ही बनवाये हुए हैं। इन्दौर की अहिल्या बाई ने भी यहाँ सेवा की थी। जब धर्मात्मा राजा जमींदार थे तब इस तीर्थ की बड़ी श्रीवृद्धि रही होगी। अब इस धर्म निरपेक्ष शासन ने हिन्दु धर्म का जितना नाश किया है उतना नाश न मुसलमानी शासन में हुआ, न अँगरेजों के शासन में। जिन मन्दिरों की पूजा उत्सवादि के लिये १०-१०, २०-२० गाँव लगे थे। वे सब-के-सब सरकार ने ले लिये। अब मन्दिरों में भोग लगाने तक का प्रबन्ध नहीं। इन अर्चावतारों का भी भाग्य होता है, कभी तो इनका इतना वैभव हो जाता है कि महाराजों के समान अर्चा पूजा होती है। कभी ऐसा हो जाता है कि नित्य के भोग के भी लाले पड़ जाते हैं। ब्रह्माण्ड घाट के बहुत से प्राचीन मन्दिरों की भी ऐसी ही दुर्दशा हो रही है। बाढ़ में कुछ घाट टूट गये थे। हम गये थे तब वे घाट बन रहे थे, किन्तु पहिले जैसे अब कैसे बन सकते हैं। यहाँ पक्के घाटों पर खड़े होकर नर्मदाजी का दृश्य देखिये, कितना चित्ताभिराम मनमोहक दृश्य है। यहाँ के दृश्य को देखकर काशी के घाटों की स्मृति हो आती है। यहाँ रात्रि में रासलीला बहुत सुन्दर हुई। यहाँ के भक्तों ने सेवा भी हृदय खोलकर की। रात्रि में हम यहीं रहे।

यदि बुधनी से ब्रह्माण्ड घाट तक नर्मदा किनारे-किनारे पैदल परिक्रमा करते हुए आवें तो हमें मार्ग में कौन-कौन से स्थान पड़ेंगे। इसका वर्णन आगे किया जाता है।

१—बुधनी घाट से १॥ मील आगे गदरियाँ संगम है यहाँ गदरियाँ नदी आकर नर्मदाजी में मिली है।

२—गदरियाँ संगम से १ मील आगे गुलजारी संगम है। यहाँ सुन्दर पक्के घाट हैं, श्रीरामचन्द्रजी का मन्दिर है। इसी के सामने उस पार दक्षिण घाट पर हुसंगाबाद नगर है।

३—गुलजारी संगम से ६ मील आगे जङ्गल के मार्ग से बानराभान स्थान है। जिसे बानर भालु तीर्थ भी कहते हैं। इसके समीप ही महात्मा मृगनाथजी का आश्रम है। १००-१५० वर्ष पूर्व ये महात्मा थे।

४—बानर भालु तीर्थ से २ मील आगे जानपुर नामक ग्राम है। इसके सन्निकट ही चाँदनी संगम है। यहाँ चाँदनी नदी आकर नर्मदाजी में मिली है।

५—चाँदनी संगम से २ मील आगे चिचली घाट है। ६—चिचली घाट से १॥ मील आगे मढ़ावन है, यहाँ से ३ मील आगे ७—कुसुमेली संगम है। यहाँ से भी ३ मील आगे ८— हतनोरा घाट है। यहाँ से ४ मील आगे ९—खोड़िया घाट है। यहाँ से ३ मील आगे नाँदगैर ग्राम के समीप ही १०—मनकामनेश्वर शिव जी है, इनके समीप ही महाकालेश्वर भी हैं। यह प्राचीन स्थान है बहुत से मन्दिरों के खँड़हर अभी तक पड़े हैं।

११—यहाँ से ३ मील आगे कुसुमखेड़ा घाट है।

१२—इससे भी ६ मील आगे भारकच स्थान है, जिसे भृगु क्षेत्र भी कहते हैं यहाँ पर गरुड़जी ने रहकर तपस्या की थी। गरुड़जी को तपस्या करने की आवश्यकता क्यों हुई ? इस सम्बन्ध की वसिष्ठ संहिता में कथा है। श्रीरामचन्द्रजी के पूछने पर वसिष्ठजी ने कहा—राघव ! प्राचीन काल में भृगु वंशोद्भव महर्षि सौभरिजी वृन्दावन के समीप (सुनरख स्थान में) यमुना जी के जल में बैठकर तपस्या किया करते थे। जल में बैठकर तपस्या करने से उनके चारों ओर मछलियाँ स्वच्छन्द किलोलें

किया करती थीं। भगवान् विष्णु के वाहन गरुड़जी वहाँ आये और महर्षि के सम्मुख ही वहाँ से पकड़कर मछली खाने लगे।



मछली खाते हुए गरुड़ जी को सौभारि ऋषि शाप दे रहे हैं

मछलियाँ बड़ी दुखी हुईं। तब सौभरि ऋषि ने गरुड़जी को शाप दिया—"यदि गरुड़ फिर कभी इस यमुनाजी के कुण्ड में घुसकर मछलियों को खायेंगे तो उसी क्षण प्राणों से हाथ धो

बैठेंगे, मैं यह सत्य-सत्य कहता हूँ ।* यहाँ जो कोई भी हत्या करेगा वह मृत्यु को प्राप्त होगा। तब से गरुड़जी ने वहाँ आना



कालीदह अहिवास में गरुड़ जी

बन्द कर दिया। श्रीमद्भागवत, विष्णु पुराणादि में तो इतना ही वर्णन है कि सौभरि ऋषि के शाप के भय से गरुड़जी फिर वहाँ

---

* अत्र प्रविश्य गरुड़ो यदि मत्स्यान् स खादति ।
सद्यः प्राणैर्वियुज्येत सत्यमेतत् ब्रवीम्यहम् ।।
(श्री० भा० १० स्क० १७ अ० ११ श्लोक)

हिंसा करने नहीं आये। इस बात को कालिय अहि जानता था, अतः गरुड़जी के भय से कालिय अहि सौभरि ऋषि के उस कुण्ड में आकर रहने लगा। तभी से वह कुण्ड कालिय ह्रद या अहिवास के नाम से प्रसिद्ध हुआ।

किन्तु वसिष्ठ संहिता में इससे आगे भी वर्णन है। उसमें कहा है, सौभरि ऋषि के शाप देने पर भी गरुड़जी नहीं माने और वे फिर भी मछली पकड़कर ज्यों ही खाने को उद्यत हुए कि उनकी वहीं मृत्यु हो गई।

अपने स्थान पर भगवान् विष्णु के वाहन की मृत्यु देखकर महर्षि सौभरि बड़े चिन्तित हुए वे असमञ्जस में पड़ गये अब क्या किया जाय ? तब उन्होंने संजीवनी मन्त्र द्वारा मृतक गरुड़जी को जीवित कर दिया। गरुड़जी जीवित तो हो गये, किन्तु उनमें पहिले जैसा तेज प्रकट नहीं हुआ। तब सौभरि ऋषि ने उन्हें हरिहर मन्त्र देकर रेवा तीर, यहाँ भृगु क्षेत्र (भारकच) में तप करने की आज्ञा दी। गरुड़जी ने वैसा ही किया और उनको सिद्धि प्राप्त हुई।*

सौभरि ऋषि ने मछलियों को विहार करते देखा तो उनकी इच्छा विवाह करने की हुई। उन्होंने अयोध्या के महाराजा मान्धाता की ५० कन्याओं से विवाह किया। प्रत्येक में १००-१०० पुत्र उत्पन्न किये और अन्त में वैराग्य होने पर पत्नियों सहित घोर तपस्या की और अन्त में मुक्त हो गये।× इसका विस्तार भागवती कथा एवं भागवत चरित में वर्णित है।

---

* (वसि० सं० २० अ०)

× सौभरि ऋषि का विस्तार से चरित देखना हो तो हमारी लिखी "भागवती कथा" के २६ वें खण्ड में सौभरि ऋषि चरित पढ़िये। भागवती कथा के अब तक ११८ खण्ड छप चुके हैं। प्रत्येक खण्ड की न्यौछावर ३) है।

यह भारकच तीर्थ भृगुक्षेत्र क्यों कहलाया इसकी भी कथा है। प्राचीन कल्प में असुरों के राजा बलि ने स्वर्ग पर चढ़ाई की। इन्द्र सहित समस्त देवताओं को जीतकर वह स्वर्ग का राजा बन गया। देवता स्थान भ्रष्ट होकर मारे-मारे घूमने लगे। असुरों की विजय क्यों हो गई ? इसलिये कि भृगु मुनि ने बलि की विजय के लिये इस स्थान पर गायत्री का पुरश्चरण किया था। इसी के कारण इन्द्र को पराजित करके महाराज बलि त्रिलोकी के राजा बन गये। भृगु मुनि की तपस्थली होने के कारण ही यह

भागवत चरित के चतुर्थाह के २२ वें अध्याय में भी सौभरि चरित वर्णित है वहाँ कहा है—

गरुड़ शापवश तहाँ फेरि कबहूँ नहिँ आये।
अहिकूँ दीयो बास शेष मुनि अति हरषाये॥
कालिय ह्रद अहिबास भयो विख्यात जगतमहँ।
अहि बहु युग पर्यन्त रह्यो परिवार सहित तहँ॥
अब तक जगमें ख्यात हैं, हलधर पूजक विप्रवर।
अहिवासीके नामतैं, सौभरि ऋषिके वंशधर॥

भागवत चरित में ऐसे छप्पय आदि छन्दों में समस्त श्रीमद्-भागवत वर्णित है। लगभग एक हजार पृष्ठों के ग्रन्थ की जिसमें पचासों चित्र हैं ११) न्योछावर है। बड़े आकार में दो खण्डों में मोटे टाइप में लगभग ८००-८०० पृष्ठों में, सटीक भागवत चरित ग्रन्थ के दोनों खण्डों की न्योछावर ४२) रुपये हैं। जिसमें ४००-५०० चित्र हैं। शेष विवरण इसी ग्रन्थ के अन्त में सूची पत्र में पढ़ें।

पता :—संकीर्तन भवन, पो० भूसी (प्रयाग)

प्रकाशक की ओर से

भृगुक्षेत्र तीर्थ कहलाया। यहाँ समस्त शुभ कर्मों की सिद्धि होती है। गायत्री पुरश्चरण का विशेष माहात्म्य है।

१३--भारकच भृगुक्षेत्र से ३ मील आगे गोराघाट है। १४--गोराघाट से ६ मील आगे चलकर मोतलसिर स्थान है। यहाँ नारदी नदी आकर नर्मदाजी में मिली है। नारदी संगम के समीप नारदेश्वर मन्दिर था। अब वह नहीं रहा। नारदी गङ्गा को नारदजी ने तप करके प्रकट किया था।

१५—नारदी गङ्गा संगम से ५ मील आगे वगलवाड़ा घाट है। यहाँ वरुणा नदी आकर नर्मदाजी में मिली है। संगम पर वारुणेश्वर शिवजी का जीर्ण-शीर्ण प्रतिमा विहीन मन्दिर पड़ा है।

१६—वरुणा संगम से २ मील आगे आकाश दीप तीर्थ है। यहाँ तेंदोनी नदी आकर नर्मदाजी में मिली हैं। पास में सतरा-वन घाट है। वनवास के समय में कार्तिक मास में पांडवों ने आकाश दीप जलाये थे और यज्ञ किया था। इसकी भस्मी अब तक निकलती है। यहाँ कार्तिक मास में आकाश द्वीप जलाने का विशेष माहात्म्य है।

१७—आकाश द्वीप तीर्थ से ३ मील आगे मोआर स्थान है। यहाँ से ४ मील आगे १८—मांगरोल स्थान है। मांगरोल से ५ मील आगे १९—बहा स्थान है। उससे ५ मील आगे २०—केतुधान घाट है।

२१—केतुधान घाट के समीप ही खांड नदी का संगम है। यहाँ केतुधान घाट पर केतु ने तपस्या की थी। इसीलिये उसे नवग्रहों में स्थान प्राप्त हुआ। यहाँ श्रीरामचन्द्रजी का सुन्दर मन्दिर है। जहाँ परिक्रमावासियों के ठहरने की व्यवस्था है।

२२—खांड संगम से ३॥ मील आगे उड़िया घाट है। उसके

४ मील आगे २३—बोरास घाट है। यहाँ पर कई मन्दिर हैं। यहाँ से ३ मील आगे २४—बांसखेड़ा घाट है। इससे ६ मील आगे २५—केलकच घाट है। यहाँ से भी २ मील आगे २६—अनघोरा घाट है। यहीं पर जनकेश्वर तीर्थ है। महाराज विदेह जनक ने यहाँ अनेक यज्ञ किये थे।

२७—जनकेश्वर तीर्थ से ५ मील आगे शुक्ल घाट है। जहाँ शुक्लेश्वर तीर्थ है। यहाँ के स्नान का अनन्त फल है। यहाँ सभी देवों ने, प्रह्लादजी ने तथा ब्रह्माजी ने तप किया। ब्रह्माजी ने ही यहाँ शुक्लेश्वर तीर्थ की स्थापना की। यहाँ के शिवलिंग स्वयंभू हैं। यहाँ सूर्य-चन्द्र ग्रहण के स्नान का विशेष माहात्म्य है। यहाँ दान, धर्म ब्रह्मभोज तथा कृच्छ्चान्द्रायण आदि व्रतों का अनन्त गुणा फल है।❀

२८—शुक्लघाट से १ मील आगे रिछावन घाट है। वहाँ से ४ मील आगे २९—सिनोरी संगम है यहाँ से ५ मील आगे ३०—करोदी घाट है करोदी घाट से ४ मील आगे ३१—बेलधारी घाट है। इसे बलि स्थली तीर्थ भी कहते हैं। महाराज बलि ने यहाँ अनेक यज्ञ किये थे। यहाँ से ६ मील आगे ३२—अंडिया घाट है। इससे ५ मील आगे ३३—रामघाट है। यहाँ श्रीरामचन्द्रजी ने तीर्थ यात्रा के समय कुछ काल निवास किया था।

३४—रामघाट से २ मील आगे ही ब्रह्माण्ड घाट है। जिसे ब्रह्माणी घाट भी कहते हैं। इसकी कथा इस प्रकार है—श्रीभगवान् विष्णु के नाभि कमल से ब्रह्माजी की उत्पत्ति हुई। ब्रह्माजी ने अपने आप चतुर्दश भुवनों की उत्पत्ति की। फिर वे नारदादि को साथ लेकर सब भुवनों को देखने चले। देखते-देखते जब वे

❀ (रे० खं० ४७ अ०)

पृथ्वी पर आये तो वहाँ क्षीरसागर में शेषशायी भगवान् विष्णु के दर्शन हुए। दोनों में विवाद हो गया। हम बड़े, हम बड़े। उसी समय उन दोनों के बीच में एक दिव्य ज्योतिर्लिङ्ग उत्पन्न हुआ। तब निश्चय हुआ कि जो इस ज्योतिर्लिङ्ग के आदि अन्त का पता लगा ले वही बड़ा। इस निश्चय के अनुसार ब्रह्माजी ऊपर की ओर और विष्णु नीचे की ओर गये। किसी को भी आदि अन्त का पता न चला तब दोनों ने ज्योतिर्लिङ्ग रूपी शङ्कर की स्तुति की। तब भगवान् शङ्कर ने कहा—मैंने ही तुम दोनों के वाद शमन हेतु ज्योतिर्लिङ्ग रूप में प्रकट होकर दोनों का कल्याण किया। त्रिदेवों का मैं ही जनक हूँ, आप लोग प्रेम से हिल-मिलकर सृष्टि का कार्य चलाओ। यह सर्व प्रथम ज्योतिर्लिङ्ग की उत्पत्ति की कथा है।

कुछ काल के पश्चात् ब्रह्माजी को बड़ा पश्चात्ताप हुआ कि मैंने अपने पिता विष्णु भगवान् से व्यर्थ ही विवाद किया। इसके प्रायश्चित्त स्वरूप मुझे तपस्या करनी चाहिये। यह सोचकर सृष्टि के कार्य को विश्वकर्मा, गणेशजी, स्कन्दजी तथा रुद्रजी को सौंपकर यहाँ ब्रह्माण्ड घाट में ब्रह्मेश्वर शिवजी की स्थापना करके तपस्या करने लगे। किन्तु उन चारों से सृष्टि का कार्य यथावत् सम्पन्न नहीं हुआ, तब विष्णु भगवान् ने आकर ब्रह्माजी से कहा—मैंने तुम्हारे सब अपराधों को क्षमा कर दिया, अब तुम पूर्व की भाँति सृष्टि कार्य करो।" भगवान् की आज्ञा से ब्रह्माजी पुनः सृष्टि कार्य करने लगे। यह ब्रह्माणी अथवा ब्रह्माण्ड तीर्थ उन्हीं के नाम से विख्यात हुआ।

यहाँ नर्मदाजी के बीच में एक द्वीप है। उसमें भीम कुण्ड, अर्जुन कुण्ड, ब्रह्मकुण्ड तथा सूर्यकुण्ड आदि सप्त कुण्ड हैं। इनके सम्बन्ध में हम दक्षिण घाट के परिक्रमा में बता चुके हैं। ये कुण्ड नर्मदा के बीच में होने से परिक्रमा वाले यात्री वहाँ जाते नहीं

हैं, क्योंकि वे नर्मदा को पार नहीं कर सकते। उस दिन रात्रि में हम ब्रह्माण्ड घाट में ही रहे।

अब आगे ब्रह्माण्ड घाट से भेड़ाघाट का वर्णन अगले अध्याय में पढ़िये।

छप्पय

(१)

अब बुधनीतैं चलो घाट गुलजारी आओ।
मिली गदरिया नदी चाँदनी संगम न्हाओ॥
बाँदर भालू तीथ जानपुर शाहगञ्ज है।
फेरि मढ़ावन गाँव कुसमिली वर संगम है॥
हतनौरा पुनि खेड़िया, मनकामेश्वर तीर्थ वर।
भारकच्छमें गरुड़ने, कर्‌यो कठिन तप बास करि॥

उ०—सौभरि ऋषिने दया करि, गरुड़ तपस्या हित रहे।
पठये तप करि शुद्ध बनि, वाहन हरिके ह्वै गये॥

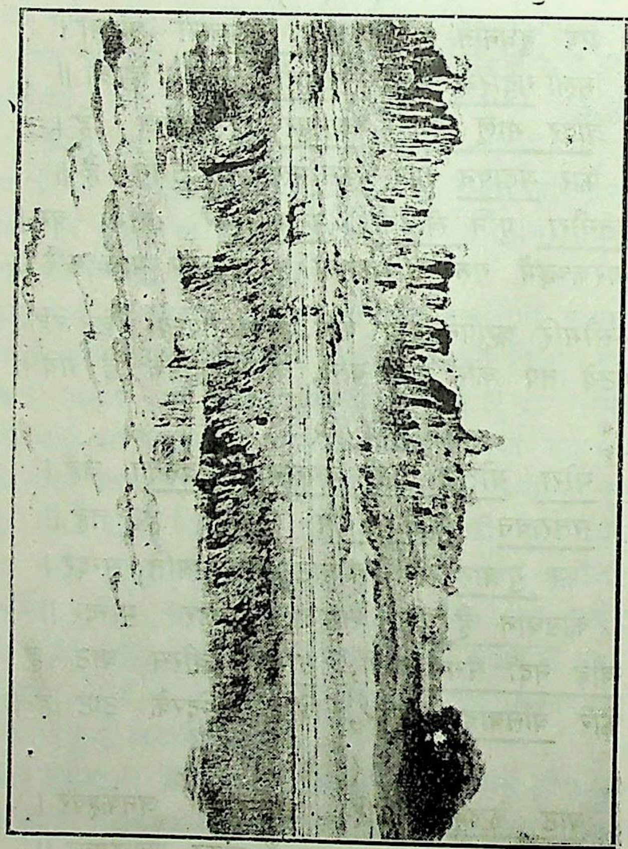
(२)

गोरा मोतल घाट बगलबाड़ा बरुणा जहँ।
सतरावन आकाश दीप तैंदोनी है तहँ॥
फिर मुआर मँगरौल घाट बड़हा अति सुन्दर।
कोडधान है घाट रामजी मनहर मन्दिर॥
खांड़ नदी संगम जहाँ, उड़िया बीरस घाट हैं।
फेरि बाँसबाड़ा सुघर, शिव मन्दिरके ठाट हैं॥

(३)

घाट केलकच फेरि अँधौरामें जनकेश्वर।
शुक्ल घाट कछु दूर जहाँ शंकर शुक्लेश्वर॥

चलो रिछावर टिमिर वनहु सिन्नोर सँगम है।
कारौंदी बिलथरी बली राजा तप थल है॥
अँड़िया चावर पाठ है, फिर ब्रह्माण्ड सुतीर्थ वर।
सत कुण्ड जहँ द्वीपमें, घाट मनोहर अति सुघर॥



नर्मदा तट के एक घाट का दृश्य

ब्रह्माण्ड घाट से भेड़ाघाट

(२६)

प्रातः समुत्थाय तथा शयानो
यः कीर्तयेतानुदिनं स्तवं च ।
स मुक्तपापः सुविशुद्ध देहः
समाश्रयं याति महेश्वरस्य ॥*

(स्कन्दे)

छप्पय

है तप जगमें सार नर्मदा तटपै बसिकें ।
कन्द मूल फल खाइ सतत शिव सेवा करिकें ॥
रेवा रेवा रटो प्रेमतें इस्तुति गाओ ।
कीर्तन तीनहु काल तीनि सन्ध्यनिमें न्हाओ ॥
प्रतिदिन इस्तुति पाठ करि, देवि "नर्मदे हर" करो ।
अन्त जाउ शिवलोककूँ, जीवो जब तक सुख लहो ॥

कीर्तन निरन्तर होना चाहिये । वह अखण्ड होता रहे । योगमार्ग में एक अजपा गायत्री जाप है । जिसमें जिह्वा से तो जपना नहीं पड़ता, किन्तु अखण्ड—आठों प्रहर—जप होता रहता

---

* जो पुरुष प्रातःकाल उठकर तथा सायंकाल में सोते समय प्रतिदिन इस स्कन्द पुराण के नर्मदा स्तोत्र का पाठ करता है, वह पापों से मुक्त होकर तथा विशुद्ध देह वाला होकर महेश्वर के लोक को प्राप्त होता है ।

है। वह जप की गायत्री कौन-सी है ? वह मन्त्र कौन-सा है ? वह है "हंसः" हम सदा सोते जागते श्वास प्रश्वास छोड़ते रहते हैं। भीतर जो वायु जाती है उसे 'प्राण' कहते हैं। शरीर के भीतर से जो वायु निकलती है उसे 'अपान' कहते हैं। भीतर से जब बाहर वायु आवे अर्थात् प्रश्वास लें तब 'हं' इस शब्द को ध्यान में रखे। भीतर को जब श्वास लें तब 'सः' इस शब्द का ध्यान बना रहे। इस प्रकार श्वास प्रश्वास पर हंसः इस मन्त्र का जप तो स्वाभाविक होता ही है। केवल ध्यान की आवश्यकता है। इसीलिये योग में कहा है—हकार से प्राणवायु बाहर जाती है, सकार से प्राणवायु भीतर जाती है। हंसः इस परम मन्त्र को जीव सर्वदा जपता ही रहता है।[१] हंस को उलट दे तो वही "सोऽहं" बन जाता है। चाहे हंसः जपो चाहे सोऽहं। या 'ओम्' या 'राम' या रेवा-रेवा जपो भीतर प्राण जायँ तो रे को जपो बाहर अपान निकले तो वा को जपो। इस प्रकार रेवा महामन्त्र को सर्वदा जपते रहो। जप तो होता रहता है, केवल श्वास प्रश्वास पर चित्त की वृत्ति को स्थिर रखना है। प्रत्येक श्वास प्रश्वास पर ध्यान बनाये रखना है। यह रेवा-रेवा या जो भी द्वयक्षर मन्त्र हो उसका सतत कीर्तन करना है। गीता में भगवान् कहते हैं—जो दृढ़ व्रत वाले साधक मेरा सतत-निरन्तर-कीर्तन करते रहते हैं मेरी प्राप्ति के हेतु प्रयत्न करते हुए, मुझे नमस्कार करते हैं, नित्य युक्त होकर मेरी उपासना करते हैं, (वे मुझे ही प्राप्त होते हैं)।[२] सतत कीर्तन भजन के लिये इसलिये कहते हैं कि

---

१. हकारेण वहिर्याति सकारेण विशेत् पुनः ।
हंसेति परमं मन्त्रं जीवो जपति सर्वदा ॥

२. सततं कीर्तयन्तो मां यतन्तश्च दृढव्रताः ।
नमस्यन्तश्च मां भक्त्या नित्ययुक्ता उपासते ॥ गी० ९।१४

एक में ही समस्त चित्त की वृत्तियाँ लगी रहें। एक म्यान में दो तलवारें नहीं रह सकतीं। तुम चाहो कि रेवा-रेवा भी रटते रहें और संसार की सेवा में भी संलग्न रहें तो असम्भव है। जो जिसकी सेवा में सतत रहता है, स्वामी उसी का हो जाता है। इसीलिये गोपिकाओं ने फिर से आये हुए भ्रमर से कहा था— अरे भौंरा! तू हमें मथुरा वाले चतुर्भुज विष्णु के पास ले जाना चाहता है? अरे हम वहाँ जाकर क्या करेंगी? हमें लौटना ही पड़ेगा। क्योंकि उनके वक्षःस्थल पर तो सतत लक्ष्मी विराजमान रहती हैं। वे तो लक्ष्मीनारायण हैं। गोपीजन बल्लभ तो नहीं।[१] अतः रेवा तीर पर रहकर रेवा के ही होकर निरन्तर रेवा-रेवा रटते हुए जीवन के शेष समय को सार्थक करना यही रेवा सेवन का, रेवा अर्चन का, रेवा परिक्रमा का तात्पर्य है।

हाँ तो हम लोग चैत्र कृष्णा पंचमी सं० २०३५ (१८ मार्च सन् १९७९) को प्रातःकाल ब्रह्माण्ड घाट से चलकर सायंकाल अपने गन्तव्य स्थान भेड़ाघाट में पहुँच गये। मार्ग में हमें महाराजपुर, समइया खेड़ी, वरोही, बहेरिया, धनगौर, पाटन, तरगुँवा, वासन, गाड़घाट, पाटन और चँदवा आदि मुख्य स्थान पड़े। चँदवा पं० शिवराम पटेल का ग्राम है। वे अपने पिताजी पं० सौदामिनी (दीनानाथजी) पटेल दद्दा, अपनी पत्नी, पुत्र, भानजे, भाई तथा और भी परिवार के बहुत से लोगों के साथ परिक्रमा में गये थे। परिक्रमा की व्यवस्था सब ये ही करते थे। सबके प्रसाद पा लेने के पश्चात् प्रसाद पाते और सबके पीछे चलते।

---

१. प्रियसख पुनरागाः प्रेयसा प्रेषितः किम्
वरय किमनुरुन्धे माननीयोऽसि मेऽङ्ग।
नयसि कथमिहास्मान् दुस्त्यज द्वन्द्व पार्श्वम्
सतत मुरसि सौम्य! श्रीवधूः साकमास्ते॥

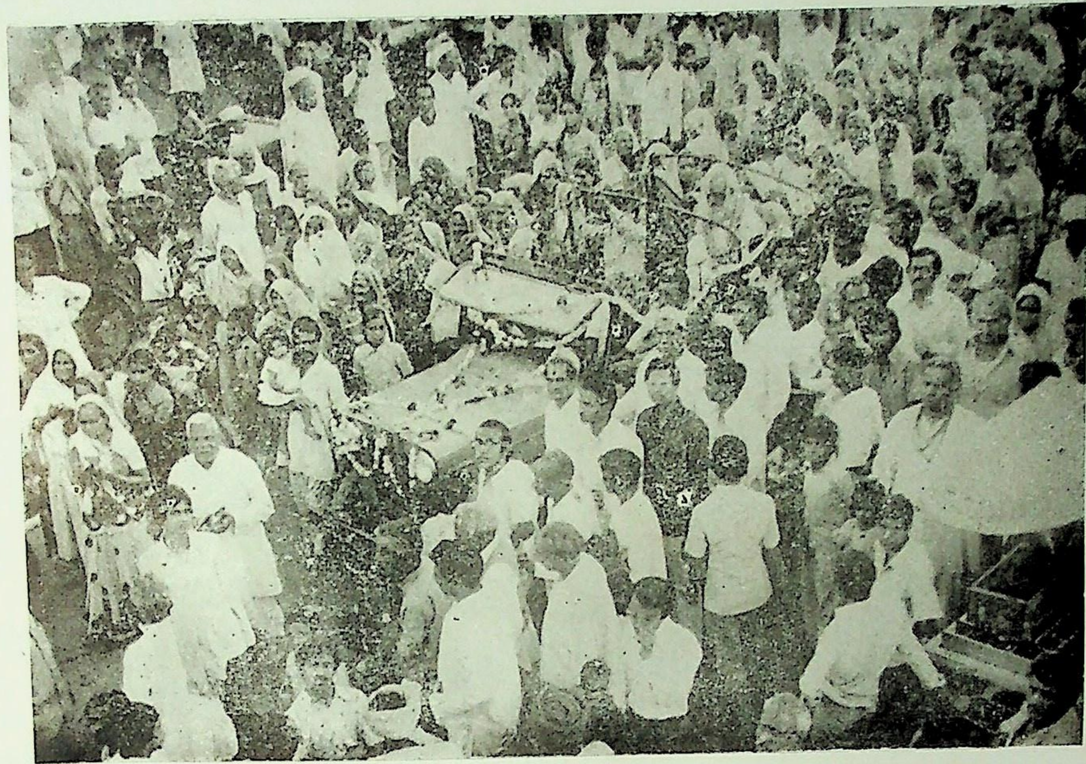
उनकी इच्छा थी एक समय का समस्त परिक्रमावासी बन्धुओं का भोजन हमारे यहाँ हो। उनके बड़े भाई ने स्वागत-सत्कार का बड़ा प्रबन्ध कर रखा था। प्रो० राजेन्द्रसिंह रज्जू भैया जबलपुर के बहुत से साथियों के सहित चँदवा में पहिले ही पहुँच गये थे। बम्बई से ऊषा जैन तथा और भी बहुत से बन्धु चँदवा में उपस्थित थे। पटेलजी की ओर से सबका समुचित सत्कार किया गया। भोजनोपरान्त कुछ सत्सङ्ग हुआ, फिर वहाँ से परिक्रमा जबलपुर होती हुई भेड़ाघाट पहुँच गयी। जैसा कि पूर्व निर्धारित कार्य क्रम था उसी के अनुसार आज २६ दिन में हम जहाँ से परिक्रमा के लिये चले थे वहीं पहुँच गये।

यदि हम ब्रह्माण्ड घाट से नर्मदा किनारे-किनारे पैदल परिक्रमा करते हुए भेड़ाघाट आते तो हमें मार्ग में कौन-कौन से स्थान पड़ते इसका भी अब अन्तिम विवरण सुनने की कृपा कीजिये। आपको बहुत रूखी कथा सुनाई इसके लिये क्षमा कीजिये।

१—हाँ तो ब्रह्माण्ड घाट से ३ मील आगे सगुन घाट है। वहाँ से ३॥ मील आगे २—धूआँधार घाट है। यहाँ से ६ मील आगे ३—रामपुरा घाट है। यहाँ से २ मील आगे ४—केरपाणि घाट है। समीप में ही ५—पिठेराघाट है। यहाँ से ८ मील आगे ६—हरणी संगम है। यहाँ से ४ मील आगे ७—ब्रह्माण्ड कुण्ड है। यहाँ से ४ मील आगे ८—झलौन घाट है।

९—झलौन घाट से १॥ मील आगे सुनाचर घाट है। यहाँ पर सहस्रावर्त तीर्थ है। यहाँ पितरों का उद्धार होता है। प्राचीन तीर्थ है यहाँ पर जप, तप शुभ कर्म करने का विशेष माहात्म्य है।×

× (रे० खं० ४४ अ०)



भेड़ाघाट में अवभृत स्नान करते हुए यात्रीगण

पृष्ठ ३९६

१०—सुनाचर घाट से १ मील आगे सर्राघाट है। यहीं सौगन्धिकावन तीर्थ है। यहाँ प्राचीन काल में १०० ब्रह्मचारियों ने तर्पण करके अपने पितरों का उद्धार किया था। किसी सिद्ध महात्मा ने अपने तप के प्रभाव से यहाँ गङ्गा और यमुना को बुला लिया था। यमुनाजी यहाँ सहस्रधाराओं से प्रकट हुईं। यहाँ स्नान करने का प्रयागराज त्रिवेणी स्नान के समान माहात्म्य बताया है। इस वन के वृक्षों की छाया पड़ने का अनन्त फल है यहाँ सभी शुभ कर्मों का विशेष माहात्म्य कहा है।❀

११—सर्राघाट से ४ मील आगे गोरा ग्राम में ब्रह्मोद तीर्थ है। यहाँ प्रचीन काल में सप्तर्षियों ने तपस्या की थी। यह विशेष-कर पितरों का तीर्थ है। यहाँ विधि-विधानपूर्वक श्राद्ध कर्म करने वालों के पितरों का ब्रह्मलोक में निवास होता है। यहाँ उदुंवर शिवजी हैं, उनकी पूजा करने से आत्मज्ञान की प्राप्ति बतायी गयी है।❀

१२—गोरा घाट से ४ मील आगे बेलापठार घाट है यह महाराज बलि की यज्ञस्थली है। यहाँ महाराज बलि ने यज्ञ करके ब्राह्मणों को अनन्त दान दिये थे।

१३—बेलापठार घाट से २ मील आगे मालकच्छ घाट है। यहाँ शिवजी का मनोहर मन्दिर है।

१४—मालकच्छ घाट से २ मील आगे जलेरी घाट है। यहाँ से २ मील आगे १५—सिद्धाघाट है यहाँ से भी २ मील आगे रामघाट पिपरिया है।

१५—रामघाट पिपरिया घाट ३ से मील ही आगे भेड़ाघाट है। जहाँ से हमने परिक्रमा उठाई थी और यहीं आकर समाप्त भी की। नर्मदे हर ! नर्मदे हर !! नर्मदे हर !!!

❀ (रे० खं० ४४ अ०)

भेड़ाघाट में आकर सभा हुई, भाषण हुए कुछ लोग जिन्हें शीघ्रता थी, भेड़ाघाट आते ही चल दिये। इन्दौर के व्यासजी अपने विरकत महात्माओं को चाय पानी कराकर चलते बने। शेष सब रह गये। दूसरे दिन हवन हुआ, अवभृत स्नान हुआ। अगले दिन नर्मदा मैया की कढ़ाई अर्थात् भण्डारा हुआ। आस-पास के ग्रामों के सहस्रों नर-नारी भण्डारे में सम्मिलित हुए। पं० शिवराम पटेल ने मार्ग रोककर जो भी यात्री आये, सबको प्रसाद पवाया। इस प्रकार हमारी मोटर द्वारा नर्मदा परिक्रमा साङ्गोपाङ्ग समाप्त हुई। फिर जो जहाँ से आये थे शनैः-शनैः सब चलते बने।

आये एकहि घाटतैं, उतरे एकहि घाट।
अपने अपने करमतैं, ह्वै गये बारह बाट॥

नर्मदा किनारे की कथा तो लम्बी है हमने अत्यन्त संक्षेप में सुना दी है। थोरे लिखे को बहुत समझना जी।

नर्मदे हर ! नर्मदे हर !! नर्मदे हर !!!

छप्पय

(१)

चले फेरि ब्रह्माण्ड घाटतैं सगुन घाटकूँ।
धुँआधार रमपुरा केरपानी पुरानकूँ॥
फेरि पिठेरा ग्राम नदी हरणी संगम है।
शिव हरणेश्वर जहाँ संगमेश्वर मन्दिर है॥
ब्रह्मकुण्ड झालौन थल, तीर्थ सहस्रावर्त जहँ।
ग्राम सुनाचर के निकट, सर्रा गोरा घाट तहँ॥



भेड़ाघाट में श्री ब्रह्मचारीजी प्रसाद बाँट रहे हैं दायीं ओर से श्री स्वामी कृष्णानन्द, रानी, उर्मिला, कला, कैलासो, दया, ब्रह्मचारीजी के पीछे टण्डनजी, आचार्य राजदेव, सियाराम त्रिपाठी पृष्ठ ३९८

(२)

ब्रह्मोदावर तीर्थ उदुंवर तीर्थ जहाँ है।
बेलपठार सुमाल–कच्छ शिव तीर्थ तहाँ है॥
बढ़ो जलेरी ग्राम शुकेश्वर सिद्धनि थल है।
रामचन्द्र जहँ रहे रामजीको मन्दिर है॥
रामघाट पीपारिया, आगे भेड़ाघाट है।
परिकम्मा पूरन भई, श्री रेवाके ठाट है॥

(३)

निबसे भेड़ाघाट यहाँ सप्ताह भयो है।
पाठ भागवत चरित सबनि मिलि प्रथम कर्यो है॥
परिकम्मा पुनि उठी अमरकंटकमें आये।
दक्षिण तटतैं चले नर्मदा संगम न्हाये॥
उत्तर तट भृगु क्षेत्र है, गरुड़ेश्वर पुनि महेश्वर।
आये भेड़ाघाट पुनि, कहो नर्मदे हर प्रवर॥



प्रार्थना

(१)

देवि नर्मदे ! कृपा करो अपराध बिसारो ।
भवसागरमें डूबि-रहे माँ ! आइ उबारो ॥
जोग जाग नहिँ करे तपस्या तनिक न कीन्हीं ।
चले न पैदर नहीं सबिधि परिकम्मा दीन्हीं ॥
कछु सतकृत नहिँ बनि सके, नहिँ अपनो पुरुषार्थ है ।
अवलम्बन तव दयाको, जननी बात यथार्थ है ॥

(२)

हमरी ओर न लखो मातु ! हैं हम अघखानी ।
उदर भर्यो भरपूर सोइ सब उमरि बितानी ॥
काम, क्रोध, मद, लोभ, मोह, ममतामें डूबे ।
परमारथ नहिँ बन्यो कथा कीर्तनतैं ऊबे ॥
एक भरोसो है यही, हम तो मातु कुपूत हैं ।
तुम जननी तारो सबनि, तव पद परम पुनीत हैं ॥

(३)

पुत्र कुपुत्र कहाय कुमाता होय न कबहूँ ।
करे न हम शुभ करम लगाये आशा तबहूँ ॥
जल तव अमृत समान पान करि तामें न्हाये ।
जैसे तैसे जननि ! शरन चरननिकी आये ॥
माँ ! तुम अशरन शरन हो, गोदीमें बैठाइ लैं ।
भले बुरे जैसे तनय, किरपा करि अपनाइ लैं ॥

(४)

प्रेम पियासे फेरि प्रेम जगमें नहिँ पायो ।
स्वारथके सब मीत अरथ हित प्रेम दिखायो ॥
अब सबतैं मुख मोरि शरन तुमरीमें आये ।
तुम बहु करें कृतार्थ सबनि तव पद सुख पाये ॥

बिनु जप तपके मातु हम, प्रेम निमित गहि शरन तव ।
अङ्क लाइ मुख चूमिकें, प्रेम करो सुख देउ अब ॥

(५)

सार जगतमें प्रेम प्रेम बिनु भटकत प्रानी ।
जड़के प्रेमी जीव प्रेम गति तिनि का जानी ॥
द्रव्य, देह जड़ सबहिँ प्रेम इनितैं जे करिहैं ।
प्रेम मरम नहिँ जानि मौतिके बिनु ते मरिहैं ॥
सत, चित, आनँद रूप तुम, प्रेम रूप तुम ही सतत ।
प्रेमस्वरूपा मातु तुम, प्रेमरहित यह सब जगत ॥

(६)

सच्चो प्रेम प्रदान करो माँ! जगत भुलावैं ।
मोहक जगके द्रव्य न चक्कर तिनि परि जावैं ॥
जगके नाते तोरि एक नातो अपनावैं ।
सरबसु अरपन करें शरन तुमरीमें आवैं ॥
जग भटक्यो प्रभु-दत्त बहु, इत उत बहु दुर्गति सहीं ।
हैं मिथ्या सब जग विषय, सत्य एक माँ तुम रहीं ॥

इति नर्मदा दर्शन समाप्त



परिशिष्ट

(अ)

ऐश्वर्यदात्री जन दुःखहन्त्री
पापान्विहन्त्री विमलार्चितश्रीः ।
शिवात्मिका लोकपदस्थिता त्वं
श्रीनर्मदे देवि मम प्रसीद ॥*

(भवानी तन्त्रे)

छप्पय

नहिँ परिकम्मा करी मातु ! विधिवत पग पग तैं ।
नहिँ तप नहिँ उपबास चले नहिँ तव तट तटतें ॥
नहीं अहंता तजी न ममता मातु ! भगाई ।
बाहन चढ़ि चढ़ि फिरे नहीं सेवा अपनाई ॥
तऊ कृपा इच्छुक जननि ! दयामयी हो देवि ! तुम ।
करो दया निज ओर लखि, अपराधी हैं मातु ! हम ॥

तीर्थ यात्रा एक अनुष्ठान है, यज्ञ है, मोक्ष प्राप्ति का साधन है, किन्तु वह आस्तिक बुद्धि से, शास्त्रीय विधि से की जाय तब

---

* हे श्रीनर्मदा माताजी ! तुम समस्त ऐश्वर्य को देने वाली हो समस्त जनों के दुःखों को हरण करने वाली हो, पापों को विनाश करने वाली हो, विमला द्वारा अर्चित हो । आप साक्षात् श्री हो आप शिवजी की पुत्री हो, इस प्रकार के लोक पद में स्थित हो । हे देवि ! आप मेरे ऊपर प्रसन्न हो ।

ही भली-भाँति फलदातृ होती है। तीर्थ शब्द का अर्थ है, जिसके द्वारा पापादिक दुष्कर्मों से तर जाय, पार हो जाय। (तरति पापादिकं यस्मात्=तीर्थं) तीर्थ-यात्रा के भी नियम है। जब तीर्थयात्रा को चले तो पहिले क्या करे, ब्रह्म पुराण में बताया है—जो तीर्थ यात्रा को जाय वह पहिले अपने घर में ही सुसंयत होकर उपवास करे, प्रमाद न करे, पवित्रता से रहे। उसे पहिले घर में ही भक्तियुक्ति होकर श्रीगणेशजी का पूजन करना चाहिये। फिर देवता, पितर, ब्राह्मणों का तथा साधुओं और विद्वान् पुरुषों को यथाशक्ति धनादि से प्रसन्न करना चाहिये, उनकी यथायोग्य प्रयत्न पूर्वक सेवा करनी चाहिये। फिर जब तीर्थ यात्रा करके लौट आवे तब इन सबका सेवासत्कार करना चाहिये। देवताओं की, पितरों की तथा ब्राह्मणों की यथा शक्ति पूजा करनी चाहिये। जो लोग इस प्रकार शास्त्रीय विधि से तीर्थ यात्रा करते हैं, उन्हें शास्त्र में कहे हुए तीर्थों के फल की प्राप्ति होती है, इसमें किसी प्रकार का सन्देह नहीं है।❀

जिस तीर्थ में जाय उसमें पहिले तीन दिन का उपवास करे।

❀ यो यः कश्चित्तीर्थयात्रान्तु गच्छेत्
सुसंयतः स च पूर्व्वं गृहे स्वे।
कृतोपवासः शुचिरप्रमत्तः
सम्पूजयेद् भक्ति नम्रो गणेशम्॥
देवान् पितृन् वित्तशक्त्या प्रयत्नात्
प्रत्यागतश्चापि पुनस्तथैव।
देवान् पितृन् ब्राह्मणान् पूजयेच्च
एवं कुर्व्वतस्तस्यतीर्थे यदुक्तं॥
फलं तत् स्यान्नात्र सन्देह एव

(ब्रह्मपुराणे)

तीर्थ में जाकर सुवर्ण दान और गौ दान अवश्य करे। जो तीर्थों में जाकर शक्ति रहते हुए भी इन दोनों दानों को नहीं करता तो वह दूसरे जन्म में दरिद्री होता है।× तीर्थ यात्रा सदा पैदल ही अपने पैरों से ही करनी चाहिये। जो ऐश्वर्य के लाभ को लेकर सवारी से तीर्थ यात्रा करता है, उसकी तीर्थ यात्रा निष्फल है, इसलिये तीर्थयात्रा में सवारी का परित्याग कर दे। ऐसा मत्स्य-पुराण में कहा है।❀

वास्तव में तीर्थ यात्रा का फल कैसे तीर्थ यात्री को मिलता है। इसके सम्बन्ध में प्रायः सभी पुराणों में आता है कि जिस तीर्थ यात्री के हाथ, पैर और मन सुसंयत हैं। जिसे अपनी विद्या, अपनी तपस्या और कीर्ति पर संयम है वास्तव में वही तीर्थ यात्रा का फल प्राप्त कर सकता है। जो प्रतिग्रह से-दान लेने से-बचा रहता है, अर्थात् तीर्थ में किसी का दान ग्रहण नहीं करता। जो भी कुछ मिल जाता है उसी से सन्तुष्ट रहता है। पेट भरने को भिक्षा ग्रहण करना प्रतिग्रह नहीं माना है। जो अहंकार से रहित है। वही तीर्थ यात्रा का फल प्राप्त कर सकता है। जो दम्भ नहीं करता, किसी नये कार्य का आरम्भ नहीं करता, जो आहार मिल जाय उसी में सन्तुष्ट रहता है और बहुत नहीं खाता, लघु आहार करता है जो अपनी इन्द्रियों को जीत लेता है, जो सभी प्रकार के सङ्गों से विमुक्त रहता है, वास्तव में वही तीर्थ यात्रा के फल को प्राप्त करता है। जो क्रोध नहीं करता,

---

× अनुपोष्यत्रिरात्राणि तीर्थान्यनभिगम्य च।
अदत्त्वा कांचनं गाश्चदरिद्रो नाम जायते॥
(काशी खण्डे)

❀ ऐश्वर्यलाभमाहात्म्यात् गच्छेत् यानेन योनरः।
निष्फलं तस्य तत्तीर्थं तस्मात् यानं विवर्ज्जयेत्॥
(मत्स्य पुराणे)

जिसकी विमल मति है, जो सत्यवादी है तथा दृढ़मति वाला है, जो सभी प्राणियों में अपने ही समान आत्मभाव रखता है वही तीर्थ के फल को प्राप्त कर सकता है। जो श्रद्धावान् नहीं है, जो पापात्मा है, जो नास्तिक है, जिसके संशय छिन्न नहीं हुए हैं जो कोई-न-कोई हेतु रखकर कार्य करता है, ये पाँचों तीर्थ फल प्राप्त नहीं कर सकते ।+

शास्त्र के इन बचनों के अनुसार हमारी नर्मदा परिक्रमा विधिवत् नहीं हुई वह तो एकमात्र 'नर्मदा दर्शन' ही हुआ। वैसे शास्त्रों में नर्मदा दर्शन का, नर्मदा स्नान का, नर्मदा जल पान का भी महान् पुण्य बताया है। "अस्तु अकरणात् मन्दकरणः श्रेयः"। न करने से तो कुछ करना अच्छा ही है। जैसा भी कुछ हुआ वह सब हमने आपके सम्मुख रख दिया। जो चलने में असमर्थ हैं, वृद्ध हैं, रोग ग्रस्त हैं, वे वाहनों के द्वारा भी श्रीनर्मदाजी की परिक्रमा करें तो श्रेयस्कर ही है। जो लोग नर्मदा की वाहनों द्वारा परिक्रमा करें उन्हें इतनी बातों का ध्यान रखना चाहिये।

+ यस्य हस्तौ च पादौ च मनश्चैव सुसंयतम् ।
विद्या तपश्च कीर्तिश्च स तीर्थफलमश्नुते ॥
प्रतिग्रहादुपावृत्तः सन्तुष्टो येन केनचित् ।
अहङ्कार विमुक्तश्च स तीर्थफलमश्नुते ॥
अदाम्भिको निरारम्भो लघ्वाहारो जितेन्द्रियः ।
विमुक्तः सर्व्वसंगैर्यः स तीर्थफलमश्नुते ॥
अकोपनोऽमलमतिः सत्यवादी दृढ़व्रतः ।
आत्मोपमश्च भूतेषु स तीर्थफलमश्नुते ॥
अश्रद्दधानः पापात्मा नास्तिकोऽछिन्नसंशयः ।
हेतुनिष्ठश्च पञ्चैते न तीर्थफलभागिनः ॥

(काशी खण्डे)

१—वाहन से जो परिक्रमा करें उन्हें ऐसा प्रयत्न करना चाहिये कि रात्रि में नर्मदा के तट पर ही निवास करें। आज कल सर्वत्र पक्की सड़कें निकल गयी हैं। हमने अनुभव किया कि इस नियम का आसानी से पालन हो सकता है फिर मोटर वालों के लिये तो कहना ही क्या।

२—नित्य नर्मदा में स्नान करे और नर्मदा जल का ही पान करें।

३—तीर्थ में दान न लें परिग्रह से बचे। कोई श्रद्धा पूर्वक भोजन करावे तो उसका भोजन कर ले। क्योंकि आतिथ्य सत्कार ग्रहण करना यात्री का धर्म है। जो त्यागी है उनका तो भिक्षा आहार ही है।

"भिक्षान्नममृतान्नं च भिक्षानैव परिग्रहः"

४—व्यर्थ बाद-विवाद, पर चर्चा न करें।

५—परिक्रमा करने के पश्चात् ओंकारेश्वर के दर्शनों को वाहन से अवश्य जायँ और आकर दान धर्म हवन ब्राह्मण भोजन अवश्य करावें।

जो लोग नर्मदा किनारे पैदल-पैदल परिक्रमा करें उन्हें इन बातों का ध्यान रखना चाहिये—

(१) परिक्रमा आरम्भ करने के पहिले नर्मदाजी में सङ्कल्प करना चाहिये। माई की कड़ाई–अर्थात् यथाशक्ति ब्राह्मण भोजन कराके परिक्रमा आरम्भ करनी चाहिये।

(२) नित्य प्रति नर्मदाजी में स्नान, नर्मदा जल पान करना चाहिये। स्नान शिर से करना चाहिये। जो पंचकेशी हैं या केशवती मातायें हैं, उन्हें पर्व-पर्व पर शिर से स्नान करना चाहिये।

(३) बहुत से स्थान ऐसे हैं, जहाँ नर्मदा किनारा छोड़ना पड़ता

है। उन दिनों के लिये नर्मदा जल साथ रखना चाहिये। नर्मदा जल का आचमन कर ले छींटा दे ले।

(४) दक्षिण तट को परिक्रमा नर्मदा तट से ५ मील दूर और उत्तर तट की परिक्रमा में ७॥ मील से दूर नहीं जाना चाहिये।

(५) कहीं भी नर्मदाजी को पार न करे। नर्मदाजी में जो बीच-बीच में टापू पड़ गये हैं, परिक्रमा वाले यात्रियों को उन टापुओं में भी नहीं जाना चाहिये। हाँ, जो नर्मदाजी की सहायक नदियाँ नर्मदाजी में आकर मिली हैं उन्हें एक बार पार करना चाहिये। क्योंकि उन्हें पार किये बिना परिक्रमा कैसे हो सकती है।

(६) चातुर्मास में परिक्रमा न करे। आषाढ़ शुक्ला एकादशी (देवशयनी एकादशी) से कार्तिक शुक्ला एकादशी (देवोत्थापिनी एकादशी) तक चातुर्मास्य माना जाता है। कोई क्वार के दशहरा तक तीन मास का ही मानते हैं। कोई श्रावण, भाद्रपद पक्ष को महीना मानकर दो महीने का ही मानते हैं। चातुर्मास्य में परिक्रमा न करे एक ही स्थान पर रहे फिर परिक्रमा उठावे तो ब्राह्मण भोजन कराके उठावे।

(७) बहुत संग्रह न करे। अधिक-से-अधिक दो दिन की भोजन सामग्री साथ रखे, अधिक नहीं।

(८) बाल नख न कटावे। वानप्रस्थी के रूप में रहे।

(९) सदाचार का पालन करे। सत्य बोले। ब्रह्मचर्य का दृढ़ता से पालन करे।

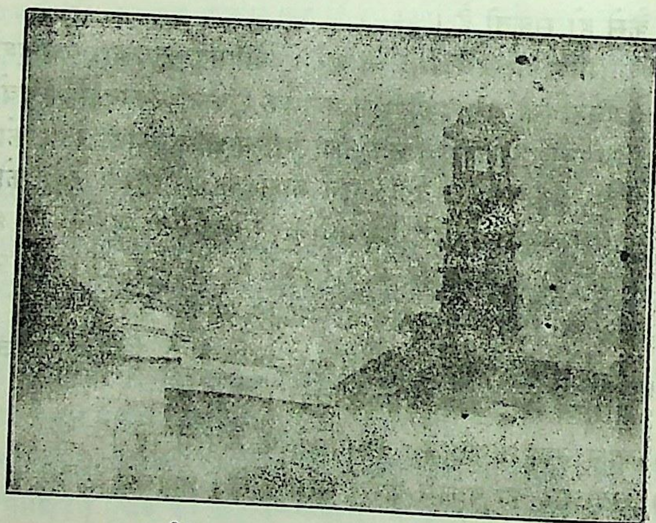
(१०) जब परिक्रमा समाप्त हो जाय तब यथाशक्ति हवन पूजन ब्राह्मण भोजन करावे।

(११) परिक्रमा समाप्त होने के एक वर्ष के भीतर-ही-भीतर ओंकारेश्वर के जाकर दर्शन अवश्य कर आवे।

इस प्रकार दैन्यता धारण करके अपरिग्रही बन के सदा-

चार का पालन करते हुए जो लोग श्रद्धा भक्ति के साथ नर्मदाजी की परिक्रमा करते हैं, नर्मदामाई की उनके ऊपर अवश्य कृपा होती है।

हिन्दी भाषा में बड़े-बड़े कवियों ने नर्मदाजी के ऊपर कविता की है। हमने भी नर्मदाजी की आरती, नर्मदाजी की महिमा पर दो तीन तुकबन्दियाँ की हैं। उन्हें भी यहाँ उद्धृत करते हैं।



नर्मदा तट के एक घाट का दृश्य

श्री रेवा जी की आरती

आरती रेवा की कीजै।
अमृत पय जननी को पीजै॥

है माता की मूर्ति मनोहर। सौम्य सुलोचन सुन्दर सुखकर।
बहति किलोलनि करि-करि हर हर।
सुधा सम पयमें नित भीजै। आरती रेवा की कीजै॥१॥

दरस दै दुख दुष्कृत काटौ। अमृत रस सबही कूँ बाँटो॥
सतत यमदूतनिकूँ डाँटो।
शरन चरननि की अब दीजै। आरती रेवा की कीजै॥२॥

शम्भु की पुत्री सुकुमारी। जननि गिरिजा की अति प्यारी॥
विन्ध्य सुत मेकल शिरधारी।
प्रेम बिनु जीवन यह छीजै। आरती रेवा की कीजै॥३॥

जननि तब नामनिकूँ गाऊँ। मनोहर मूरति नित ध्याऊँ॥
पाद पदुमनिमें सिर नाऊँ।
दासकूँ अपनो करि लीजै। आरती रेवा की कीजै॥४॥



विनय

नर्मदे ! लीजौ खबरि हमारी।

कब तैं जगमें भटकि रहे हैं।
दुख सहि सहि सिर पटकि रहे हैं।
भव फन्दे में लटकि रहे हैं॥
आये तट झट हम अब जननी ! तुम शिवङ्कर प्यारी ॥१॥ नर्मदे

कोटि तीर्थ तेरे तट निबसें।
शत शत सरिता तुममें प्रविसें।
अगनित कमल चहूँ दिशि विकसें॥
हे जननी ! दुख दुरित विनासो। महिमा तुमरी भारी ॥२॥ नर्मदे

सुघर सबारी मकर तुम्हारी।
कर कमलनि की शोभा न्यारी।
कमल नयन पग दृग हितकारी॥
कमल बदन अरबिन्द सरिस तनु, माँ मनहर मुखवारी ॥३॥ नर्मदे

बन परबत तरु करे कृतारथ।
तट पषान शिव करे जथारथ॥
शरनागत के साधो स्वारथ॥
तुमरी शरन गही जिन भगतनि। तिनकी नैया तारी ॥४॥ नर्मदे



नर्मदा-महिमा

नर्मदे हर हर हर जे गावैं ।
तिनिके पाप ताप दुख दारिद, ततछिनही कटि जावैं ॥१॥ नर्मदे०
नित्य नर्मदा कहि सो जावैं ।
उठें नर्मदा के गुन गावैं ।
नीर नर्मदा में नित न्हावैं ॥
भोग नर्मदा को लगाइकें, नित परसादी पावैं ॥२॥ नर्मदे०
करें नर्मदा कीर्तन निसि दिन ।
रहें न कथा नर्मदा के बिन ।
नाम नर्मदा सहस जपै गिन ॥
बसैं नर्मदा तट पै नितही, शम्भु लोक ते जावैं ॥३॥ नर्मदे०
नित्य नर्मदा जलकूँ पीवैं ।
सतत नर्मदा जपिके जीवैं ।
फटे करम फल तट बसि सीवैं ॥
पावैं पद प्रभु-दत्त सदा वे, धाम धनी के धावैं ॥४॥ नर्मदे०



रेवाष्टक

[१]

रेवा रेवा रटहिँ नित, रेवा जलमें न्हायँ।
सेवा रेवाकी करें, जनम सफल ह्वै जायँ॥

[२]

है रेवा दुख मेंटनी, सबरे सुख सरसाय।
तट कंकर शङ्कर बनें, मूरख च्यौं घबराय॥

[३]

पारस सम पय परसिकें, होवैं शिव पाषान।
तिनि तजि भटके अनत च्यौं, ओ मूरख नादान॥

[४]

सबतैं उलटी धार जिनि, वह उलटै जग धार।
जा रेवाकी शरन तू, काहे करै विचार॥

[५]

शङ्कर तनया सरित् वर, सब सरितनिमें श्रेष्ठ।
जब तक जग जनम्यो नहीं, तब जल जनम्यो ज्येष्ठ॥

[६]

सुर, नर, ऋषि, मुनि, इन्द्र, अज, विप्र, पितर गन्धर्व।
तव तट बसि जप तप करहिँ, असुर दैत्यगन सर्व॥

[७]

पावैं पापी परम पद, काटो कठिन कलेश।
कहूँ न जे पातक कटैं, जननि! कटे तव देश॥

[८]

तव तट शिव क्रीड़ा करें, नाना वेष बनाय।
देवैं इच्छित वर सबनि, अति मनमें हरषाय॥



कृतज्ञता प्रकाश—

हमें इस नर्मदा दर्शन पुस्तक लिखने में सबसे अधिक सहायता श्री १०८ स्वामी मायानन्द जी महाराज की "नर्मदापञ्चाङ्ग" पुस्तक से मिली है। हमारे मित्र पं० दयाशंकर जी दुबे की पुस्तक "नर्मदा रहस्य" से तथा श्री १०८ स्वामी नर्मदा नन्दजी की गुजराती पुस्तक "साधकनी स्वानुभव कथा अथवा मारी नर्मदा परिक्रमा" से भी सहायता मिली है।

इन तीनों पुस्तकों के लेखक प्रकाशक तथा मुद्रकों के प्रति भी हम कृतज्ञता प्रकाश करते हैं। इन लेखकों के हम अत्यन्त आभारी हैं। हमारे मित्र पं० दयाशंकर जी दुबे के ज्येष्ठ पुत्र पं० गंगाधर जी दुबे बी० ए० एल० एल० बी० ने कृपा करके हमें 'नर्मदा रहस्य' के कुछ ब्लाक छापने को दिये हैं हम उनके भी आभारी हैं। पूजार्थ इन तीनों पुस्तकों में से हम एक-एक पद्य उद्धृत करके उनका सम्मान करते हैं।



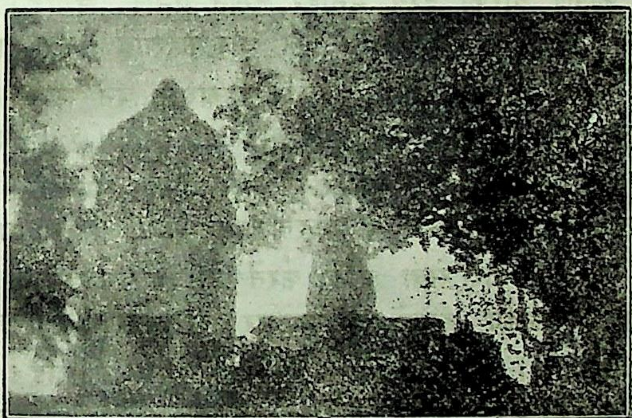
परिक्रमा के नियम

(श्री १०८ स्वामी मायानन्द जी कृत)

तुम सुनो आज महाराज परिक्रमा वासी।
यह कर्म करे जो, उसे न जमकी फाँसी॥ ध्रु०॥
जब निकलोगे तुम करन परिक्रमा मनसे।
तब रेवाजी को पूजो तन मन धनसे॥
निश्चय से रखना ब्रह्मचर्य अघनासी।
मुख से सब बोलो सत्य, न करना हाँसी॥ १॥ तुम०
नित न्हाना तीनों समय, सदा शुचि रहना।
तुम अन्य तीर्थ की महिमा कभी न गाना॥
पूजो शिवको, भजना साकेत निबासी।
सब स्त्रियाँ समझना माता अरु कन्या सी॥ २॥ तुम०
हिंसा नहिँ करना, अन्न एक टक पाना।
धरती पर सोना, कविता बुरी न गाना॥
छाता नहिँ रखना, जूता खड़ाऊँ वैसी।
निज करका पाना अन्न, न होवै बासी॥ ३॥ तुम०
नहिँ खाना गाजर प्रियाज भी त्यज देना।
पत्तल पर भोजन पाना, मधु नहिँ खाना॥
बैंगन पाना यह है बैकुण्ठ बिनाशी।
बीड़ा नहिँ छूना, लहसुन आज्ञा ऐसी॥ ४॥ तुम०
नख बाल बढ़ाना, जलमें अधिक न जाना।
गुरु, पितर, देव, द्विज इनका आदर करना॥
दर्पण नहिँ लेना छोड़ो सुरमा मिस्सी।
सत्सङ्ग करो, तुम रहना सदा उदासी॥ ५॥ तुम०

तुम जानो, जलके कंकर हैं सब शङ्कर।
तीर्थ में बसो, न करना नहिं संगम फिर कर॥
ऋषि वसिष्ठ नें कही प्रभू से जैसी।
सेवक यह "मायानन्द" बखाने तैसी॥

(नर्मदा पञ्चाङ्ग से उद्धृत)



नर्मदा तट के एक घाट का दृश्य

रेवा-स्तुति

(पं० दयाशंकर जी दुबे कृत)

हाथ जोड़कर प्रेम से कहिये जय जय रेवा माई।
अमरकंटक से जब तू प्रकटी, देव मनुज हर्षाई।
तेरे तट पर ऋषि मुनि तप कर, अनेकों सिद्धि पाई ॥१॥ हाथ०
कपिल धारका दृश्य मनोहर, देखत मनहिँ लुभाई।
तेरा पावन और निर्मल जल, दूध धार कहलाई ॥ २ ॥ हाथ०
मँडला नगर से आगे बढ़कर, सहस्त्रधार बन आई।
शङ्कर तेरे तट पर तपकर, जगद्गुरू हो जाई ॥ ३ ॥ हाथ०
भेड़ा घाटमें थोड़ी दूर पर, जल प्रपात सुखदाई।
उसके कण-कण में रहती है, अद्भुत शक्ति समाई ॥ ४ ॥ हाथ०
सब देवता तेरी सेवा करते, करते तेरे तट पर आई।
महादेवजी प्रकट होयकें, ओंकारेश्वर कहलाई ॥ ५ ॥ हाथ०
रेवा तेरी महिमा अति भारी, सकल पुराणन गाई।
तेरे जलके कंकर पत्थर, शङ्कर रूप हो जाई ॥ ६ ॥ हाथ०
प्रेम से तेरी परिक्रमा करते, अनेकों लोग लुगाई।
वे सब सुख और शान्ति पाते, तेरी कृपा से माई ॥ ७ ॥ हाथ०
तेरे दर्शन से ही सबके, दुःख दूर हो जाई।
दुबे प्रेम से विनय करत है, देहु मोइ मुक्ति माई ॥ ८ ॥ हाथ०

(नर्मदा रहस्य से उद्धृत)



नर्मदा की स्तुति

हैं तेरे आधार नर्मदे, हैं तेरे आधार।
मूर्ति मनोहर मंगलकारी, नीलाम्बर है मगर सवारी।
रूप अनूपम भव भयहारो, महिमा अमित अपार ॥
नर्मदे हैं तेरे आधार ॥१॥

शम्भु लोक से धारा आई, मेकल पर्वत तीर्थ बनाई।
अमरकंटक जग कीरति छाई, होवै जय जयकार ॥
नर्मदे हैं तेरे आधार ॥२॥

रेवाकुंड की शोभा न्यारी, जहँ स्नान करें नर नारी।
छटा अनूठी निर्मल वारी, चहुँदिशि फाटक द्वार ॥
नर्मदे हैं तेरे आधार ॥३॥

पूरब बगिया बनी सुहावन, मार्कंडेय आश्रम अति पावन।
सोनभद्र धारा मन भावन, गिरती फोर पहार ॥
नर्मदे हैं तेरे आधार ॥४॥

कपिलधार की है छवि न्यारी, दूधधार निर्जन भयकारी।
बड़े बड़े गिरि दुर्गम भारी, तिनको दिये बहार ॥
नर्मदे हैं तेरे आधार ॥५॥

धार नर्मदा पश्चिम धाई, उत्तर सोनभद्र प्रभुताई।
दोनों शिवगङ्गा पद पाई, दिया पातकिन तार ॥
नर्मदे हैं तेरे आधार ॥६॥

यम से दूतन जाय पुकारे, पापी खोज खोज हम हारे।
थे वे सब रेवाके द्वारे, बन्द किया यम द्वार ॥
नर्मदे हैं तेरे आधार ॥७॥

सुमिरन से मैया दुख हरती, दरसन से पातक संहरती।
मज्जन से मिलती है मुक्ती, पाप होयँ सब छार॥
नर्मदे हैं तेरे आधार ॥८॥

शङ्कर तुम्हें महा वर दीन्हें, तुम शङ्कर कंकर सम कीन्हें।
भक्तनको निज सेवत चीन्हें, किया जगत उद्धार॥
नर्मदे हैं तेरे आधार ॥९॥

मातु नर्मदे तुम्हें मनाऊँ, तुम्हरी कृपा विमल मति पाऊँ।
शिव सरिते! तेरे गुन गाऊँ, करदे बेड़ा पार॥
नर्मदे हैं तेरे आधार ॥१०॥

("साधकनी स्वानुभव अथवा मारी नर्मदा परिक्रमा" नामक स्वामी नर्मदानन्द जी की गुजराती पुस्तक से उद्धृत।)

यह स्वामी जी की रचना नहीं है किसी ब्रह्मचारी ने रेवा संगम पर समुद्र पार करते समय गायी थी—

ये कवितायें कैसी हैं, इन्हें तो पाठक पढ़कर ही समझ लेंगे। हमने तो इनको केवल अपने परवर्ती नर्मदा लेखकों के सम्मानार्थ ही उद्धृत कर दिया है। नर्मदाजी के सम्बन्ध में बहुत कुछ लिखा जा सकता है, हमने तो केवल बहुत ही संक्षेप में नर्मदा किनारे के मुख्य-मुख्य स्थानों का वर्णन कर दिया है। इसमें बहुत-सी त्रुटियाँ भी रह गयी होंगी। बहुत से गाँवों का, बहुत से स्थानों का नाम अशुद्ध लिखा गया होगा। बहुतों के क्रम भी उलटे-पुलटे हो गये होंगे। बड़ी शीघ्रता में चलती मोटरों में लड़कों ने गाँवों के नाम लिखे हैं। और भी बहुत-सी भूलें रह गयी होंगी। जानकार प्रेमी पाठकों से हमारा निवेदन है कि वे हमारी भूलों को सूचित करें। "नर्मदा दर्शन" के दूसरे संस्करणों में ये त्रुटियाँ सुधार दी जायँगी। हमारी सभी प्रेमी पाठकों से प्रार्थना है कि

वे ऐसा आशीर्वाद दें कि हमारी भगवान् के चरणों में अहैतुकी भक्ति हो। इन शब्दों के साथ इस "नर्मदा दर्शन को हम समाप्त करते हैं।

छप्पय

दीन अकिञ्चन भक्तिहीन हम भटकि रहे हैं।
चौरासीके चक्रभ्रमै बहु कष्ट सहे हैं॥
कीर्ति मान सम्मान हेतु बहु काज किये हैं।
प्रभु पद पदुमनि ध्यान हियेतें नहीं धरे हैं॥
अब ऐसी किरपा करो, जगतैं नातो तोरिकें।
चरन शरन तुम्हरी गहें, तुमतैं नातो जोरिकें॥

इति श्री नर्मदा-दर्शन समाप्त।

नर्मदे हर ! नर्मदे हर !! नर्मदे हर !!!



नर्मदा यात्रा

दिनांक २२ फरवरी से १८ मार्च १९७९ तक

पैमाना :- १ सेमी० = २५ किमी०

श्री विनोदकुमार गर्ग द्वारा निर्मित

।। श्रीहरिः ।।

संकीर्तन भवन, झूसी (प्रयाग) से प्रकाशित

श्री प्रभुदत्तजी ब्रह्मचारी द्वारा लिखित

पुस्तकों का

संक्षिप्त सूची-पत्र

हिन्दुत्व की रक्षा के निमित्त प्रत्येक हिन्दु के लिये
नित्य अवश्य पालनीय चार नियम

१. *शिखाधारण*—प्रत्येक हिन्दु को सिर पर शिखा अवश्य रखनी चाहिये।

२. *प्रातःस्मरण*—प्रातःकाल उठकर अपनी निष्ठा के अनुसार भगवान् के किन्हीं नामों का स्मरण अवश्य करना चाहिये।

३. *देव दर्शन*—नित्य नियम से आस-पास के किसी देवालय या मन्दिर में दिन में एक बार–किसी भी समय देवता को प्रणाम अवश्य कर लेना चाहिये।

४. *धर्मग्रन्थ पाठ*—किसी भी धार्मिक ग्रन्थ का एक श्लोक अथवा एक छन्द ही नित्य नियम से पाठ अवश्य करें अथवा सुनें ही।

इससे अधिक जितना भी धार्मिक कृत्य करें, उतना ही उत्तम है।

"अधिकस्याधिकंफलम्"

॥ श्रीहरिः ॥

पूज्यपाद श्री प्रभुदत्त ब्रह्मचारीजी महाराज कृत "भागवती कथा" "भागवत चरित" तथा अन्यान्य दिव्य ग्रन्थों की

संक्षिप्त-सूची

श्री पूज्यपाद ब्रह्मचारीजी महाराज लिखित धार्मिक अनुपम ग्रन्थों से प्रायः सभी हिन्दी भाषा-भाषी धर्मप्राण पाठक पूर्णरीत्या परिचित हैं। श्री महाराजजी द्वारा लिखित श्री चैतन्य-चरितावली भारत में ही नहीं विश्व के साहित्य में अनुपम ग्रन्थ है। गुजराती, मराठी, तेलगु, तामिल, मलयालम तथा देश की अन्यान्य भाषाओं में इसके अनुवाद प्रकाशित हो चुके हैं। आपकी लिखी भागवती कथा हिन्दी साहित्य में बेजोड़ ग्रन्थ है। इसे हिन्दी भाषा का समस्त धार्मिक कोश कहना चाहिये। संस्कृत साहित्य में गीता, उपनिषदें और ब्रह्मसूत्र इन तीनों को प्रस्थानत्रयी कहते हैं। महाप्रभु श्री बल्लभाचार्य जी इनमें श्रीमद्भागवत को भी और सम्मिलित करके प्रस्थान चतुष्टयी बताते हैं। भागवती कथा में इन चारों की ही विस्तृत सरस-सरल सर्वोपयोगी व्याख्यायें हैं। इन सबका संक्षिप्त परिचय पढ़िये—

१. भागवती कथा—यह एक विस्तृत वृहद् ग्रन्थ है। अब तक इसके ११८ खण्ड प्रकाशित हो चुके हैं। प्रत्येक खण्ड दो सौ–ढाई सौ पृष्ठ का होता है, सादे तथा रंगीन चित्र भी रहते हैं। प्रत्येक खण्ड का इस मँहगाई काल में भी केवल ३ रुपया न्यौछावर है। डाक-व्यय पृथक्। भागवती कथा के प्रथम ६० खण्डों में तो भगवत् सम्बन्धी सरस-सरल सुमधुर कथायें हैं।

प्रत्येक अध्याय के आरम्भ में एक श्रीमद्भागवत का छँटा श्लोक होता है, उसी भाव का व्रजभाषा का छप्पय, फिर उस अध्याय की भूमिका तदनन्तर विषय विवेचन, एक-दो दृष्टान्त की कहानियाँ, उपसंहार और फिर अन्त में छप्पय। यह क्रम आदि से अन्त तक यथावत् है। प्रत्येक अध्याय एक प्रकार से स्वतन्त्र है। केवल छप्पयों को ही पढ़ते जाओ तो पूरा विषय आ जायगा। ६० भागों में तो कथा भाग है, दो भागों में माहात्म्य और ६ भागों में भागवती स्तुतियाँ हैं। इस प्रकार ६८ भागों में भागवत् विवेचन है। सोलह भागों में गीता की सरल-सुगम व्याख्या है। प्रत्येक अध्याय में दो श्लोकों की व्याख्या है, फिर २३ भागों में १९१ उपनिषदों का विवेचन है। आज तक सभी आचार्यों ने दश उपनिषदों के ही सम्बन्ध में लिखा है। १९१ उपनिषदों का विवेचन संसार की किसी भाषा में आज तक नहीं है। हिन्दी भाषा में यह प्रथम प्रयास है। १०७ वें भाग में दर्शनों का संक्षिप्त परिचय और १०८ वें भाग से ११८ वें भाग तक ब्रह्मसूत्रों पर विवेचन है।

इस प्रकार भागवती कथा समस्त आर्य वैदिक सनातन वर्णाश्रम धर्म का प्रतिनिधित्व करती है। भाषा इतनी सरल-सुगम सुबोध है कि बालक, वृद्ध, स्त्री, पुरुष, पठित-अपठित सभी सरलता से समझ सकते हैं। देश के कोने-कोने में सहस्रों स्थानों पर इसकी नित्य नियमित कथायें होती हैं। जिनसे नित्य लाखों स्त्री-पुरुष लाभ उठाते हैं। प्रत्येक ग्राम में, प्रत्येक घर में भागवती कथा रहने से धार्मिक वातावरण बन जाता है।

उत्तर प्रदेश, बिहार तथा बहुत-सी जिला परिषदों के पुस्तकालयों के लिये सरकार द्वारा स्वीकृत है। ३५ रुपया भेजकर स्थायी ग्राहक बनें। वर्ष के १२ खण्ड आपको घर बैठे रजिस्ट्री से मिल जाया करेंगे।

विद्वानों, नेताओं तथा प्रतिष्ठित पुरुषों ने इसकी भूरि-भूरि प्रशंसा की है। हमारा बड़ा सूची-पत्र बिना मूल्य मँगाकर बहुत से विद्वानों की सम्मतियाँ पढ़ें। यह ग्रन्थ किसी का अक्षरशः अनुवाद नहीं स्वतन्त्र विवेचन है।

२. भागवत चरित सप्ताह (पद्यों में)—यह भागवत का सप्ताह है। छप्पय छन्दों में लिखा है। सैकड़ों सादे चित्र ५-६ बहुरंगे चित्र हैं कपड़े की सुन्दर जिल्द है, लगभग हजार पृष्ठों की पुस्तक का मूल्य ११ रु०।

३. भागवत चरित (सटीक दो भागों में)—अनुवादक—पं० रामानुज पाण्डेय, बी० ए० विशारद 'भागवत चरित व्यास' भागवत चरित की सरल हिन्दी में सुन्दर टीका है, प्रत्येक खण्ड में ९०० पृष्ठ हैं, मूल्य ४२ रुपया। एक खण्ड का २१ रुपया।

४. बद्रीनाथ दर्शन—श्री बद्रीनाथ दर्शन यात्रा पर यह बड़ा ही खोजपूर्ण ग्रंथ है। बद्रीनाथ यात्रा की सभी आवश्यक बातों का तथा समस्त उत्तराखण्ड के तीर्थों का इसमें वर्णन है। लगभग सवा चार सौ पृष्ठों की सजिल्द सचित्र पुस्तक का मूल्य ६ रुपया भारत सरकार द्वारा अहिन्दी प्रान्तों के लिये स्वीकृत है।

५. महात्मा कर्ण—महाभारत के प्राण महात्मा कर्ण का यह अत्यन्त ही रोचक, शिक्षाप्रद तथा आलोचनात्मक जीवन-चरित्र है। ३४० पृष्ठ की पुस्तक का मूल्य ५ रुपया।

६. मतवाली मीरा—मीरा बाई के दिव्य जीवन की सजीव झाँकी तथा उनके पदों की रोचक भाषा में व्याख्या। २२४ पृष्ठ की सचित्र पुस्तक का मू० ४ रु० है। यह इसका सातवाँ संस्करण है।

७. नाम संकीर्तन महिमा—नाम संकीर्तन महिमा के ऊपर

जितनी भी शङ्कायें उठ सकती हैं उनका शास्त्रीय ढङ्ग से युक्तियुक्त विवेचन है। मूल्य १ रुपया।

८. श्रीशुक (नाटक)—श्रीशुकदेव मुनि के जीवन की दिव्य झाँकी। पृष्ठ सं० १००, मूल्य १ रुपया।

९. भागवती कथा की बानगी—भागवती कथा के खण्डों के कुछ अध्याय बानगी के रूप में इसमें दिये गये हैं। इसे पढ़कर आप भागवती कथा की शैली समझ सकेंगे। पृ० ९६ मूल्य १ रुपया।

१०. शोक शान्ति—अपने प्रिय स्वजनों के परलोक प्रयाण पर सान्त्वना देने वाला मार्मिक पत्र। शोक सन्तप्तों की सञ्जीवनी बूटी है। पृष्ठ ६४, मूल्य ५० पैसे। षष्टम् संस्करण।

११. मेरे महामना मालवीयजी—महामना मालवीय जी के सुखद संस्मरण। १३५ पृष्ठ की छोटी पुस्तक, मूल्य ५० पैसे।

१२. भारतीय संस्कृति और शुद्धि—क्या अहिन्दु पुनः हिन्दु बन सकते हैं, इस प्रश्न का शास्त्रीय ढङ्ग से प्रमाणों सहित विवेचन बड़ी ही मार्मिक भाषा में किया गया है, वर्तमान समय में जब विधर्मी अपनी संख्या बढ़ा रहे हैं यह पुस्तक बड़ी उपयोगी है। पृष्ठ ७६ मूल्य ५० पैसे।

१३. प्रयाग माहात्म्य—तीर्थराज प्रयाग के माहात्म्य पर ३२ पृष्ठ की छोटी-सी पुस्तिका। मूल्य ५० पैसे।

१४. वृन्दावन माहात्म्य—श्रीवृन्दावन के माहात्म्य पर लघु पुस्तिका। मूल्य २५ पैसे।

१५. राघवेन्दु चरित—(छप्पय छन्दों में)—श्रीरामचन्द्रजी की कथा के ९ अध्याय भागवत चरित से पृथक् छापे हैं। राम-

भक्तों को नित्य पाठ के लिये उपयोगी है। पृष्ठ सं १६० मूल्य ६० पैसे, अर्थ सहित ३ रुपया।

१६. प्रभुपूजा पद्धति—भगवान् की पूजा करने की सरल सुगम शास्त्रीय विधि इसमें श्लोकों सहित बताई है। श्लोकों का भाव दोहाओं में भी वर्णित है। मूल्य ५० पैसे।

१७. श्री श्रीचैतन्य-चरितावली—

- प्रथम खण्ड—पृष्ठ २९४, तिरंगे ६ चित्र, मूल्य ४.५० पैसे। सजिल्द ५.५० पैसे।
- दूसरा खण्ड—पृष्ठ ३०३, तिरंगे ४ चित्र, मूल्य ४.५० पैसे। सजिल्द ५.५० पैसे।
- तीसरा खण्ड—पृष्ठ ३८४ तिरंगे ७ चित्र, मूल्य ४.५० पैसे। सजिल्द ५.५० पैसे।
- चौथा खण्ड—पृष्ठ २३४, तिरंगे ५ चित्र, मूल्य ४.०० सजिल्द ५ रुपया।
- पाँचवाँ खण्ड—पृष्ठ २८८, तिरंगे ४ चित्र, मूल्य ४.५० सजिल्द ५.५० पैसे।

पाँचों खण्डों का मूल्य २२ रु०, सजिल्द २७ रु०। डाक व्यय सभी का पृथक। पहिले श्रीचैतन्य-चरितावली गीताप्रेस गोरखपुर से छपी थी। अब पाँचों खण्ड हमारे यहाँ छपकर तैयार हैं।

१८. भागवत चरित की बानगी—इससे भागवत चरित के पद्यों की सरसता जान सकेंगे। पृष्ठ १०० मूल्य १ रुपया।

१९. गोविन्द दामोदर शरणागत स्तोत्र—(छप्पय छन्दों में) दोनों स्तोत्र हैं। मूल स्तोत्र भी दिये हैं। मूल्य ५० पैसे।

२०. श्रीकृष्ण चरित—भागवत चरित से यह पद्यों में श्रीकृष्ण चरित पृथक् छापा गया है। पृष्ठ सं० ३५० मू० ५ रु०।

२१. गोपालन शिक्षा—गौ कैसे पालनी चाहिये। गौओं की कितनी जाति हैं, उन्हें कैसे आहार देना चाहिये। बीमार होने पर कैसे चिकित्सा की जाय। कौन-कौन देशी दवाएँ दी जायँ, इन सब बातों का इसमें विशद् वर्णन है। पृष्ठ २०४ मू० ३ रु०।

२२. मुक्तिनाथ दर्शन—नैपाल में सुप्रसिद्ध मुक्तिनाथ तीर्थ है। यात्रा का बहुत ही हृदयस्पर्शी वर्णन है। नैपाल राज्य तथा नैपाल के समस्त तीर्थों का इसमें विशद वर्णन है, मू० ३ रुपया।

२३. आलवन्दार स्तोत्र मूल तथा छप्पय छन्दों में—अनूदित श्री वैष्णव सम्प्रदाय के महामुनीन्द्र श्रीमत् यामुनाचार्य कृत यह स्तोत्र सर्वमान्य तथा बहुत प्रसिद्ध है। ५ बार में १९५०० प्रतियाँ छपी हैं। मूल्य १ रुपया।

२४. रास पंचाध्यायी—भागवत चरित से रास पंचाध्यायी पृथक् छापी गई है। मूल्य १ रुपया।

२५. गोपी गीत—श्रीमद्भागवत के गोपी गीत का उन्हीं छन्दों में व्रजभाषा अनुवाद है। बिना मूल्य वितरित की जाती है।

२६. श्रीप्रभु पदावली—श्रीब्रह्मचारीजी के स्फुट पदों का सुन्दर संग्रह है। पृष्ठ सं० १२२, मूल्य १ रुपया ५० पैसे।

२७. परम साहसी बालक ध्रुव—१०० पृष्ठ की पुस्तक मूल्य १ रुपया।

२८. सार्थ छप्पय गीता—गीता के श्लोक एक ओर मूल और अर्थ सहित छापे हैं। उनके सामने अर्थ की छप्पय है। सचित्र मूल्य ४ रु०।

२९. हनुमत् शतक—नित्य पाठ करने योग्य यह पुस्तक बहुत ही सुन्दर है। इसमें १०८ छप्पय हैं, सुन्दर हनुमान्‌जी का एक बहुरङ्गा तथा २१ सादे चित्र हैं। मूल्य १ रुपया।

३०. महावीर हनुमान्—श्री ब्रह्मचारीजी महाराज ने श्री हनुमान्जी का यह विस्तृत जीवन-चरित्र भागवती कथा की भाँति लिखा है, इसमें २१ अध्याय हैं। पृष्ठ सं० २०६ मूल्य ३ रुपया।

३१. भक्त-चरितावली [दो भागों में]—यदि आप चाहते हैं कि हम भी प्रभु के भक्तों की गाथा पढ़कर, भक्ति में आत्मविभोर होकर प्रभु की दिव्य झाँकी की झलक का दर्शन करें तो आज ही भक्त-चरितावली के दोनों भाग मँगाकर पढ़ें। भाग (१) पृष्ठ ४४४ मूल्य ६ रु०। भाग (२) पृष्ठ ३०३ मूल्य ४. ५० पैसे।

३२. छप्पय भर्तृहरि शतकत्रय—श्री भर्तृहरि के नीति, शृङ्गार और वैराग्य तीनों शतकों का छप्पय छन्दों में भाव अनुवाद। पुस्तक बहुत ओजस्वी कविता में है। मू० २ रु० ५० पैसे।

३३. श्रीसत्य नारायण व्रत कथा (माहात्म्य)—छप्पय छन्दों में श्लोक सहित साथ ही पूजा पद्धति भी संक्षेप में दी गई है। मू० १ रुपया।

३४. छप्पय विष्णु सहस्रनाम तथा दोहा—भाष्य सहित सहस्र नामों के सहस्र दोहे। मूल्य १ रु० ५० पैसे।

३५. भागवत चरित सङ्गीतसुधा—(स्वरकार पं० बंशीधर शर्मा 'भागवत चरित व्यास') भागवत चरित के छप्पय छन्दों को तथा पद स्तुतियों को संगीत के स्वरों में विविध रागों में लिपिबद्ध किया गया है। मूल्य १ रुपया ५० पैसे।

३६. सूक्त-त्रय (सार्थ छप्पय सहित—(१) पुरुष-सूक्त (२) श्रीसूक्त और (३) लक्ष्मीसूक्त, भगवान् श्रीलक्ष्मीनारायणजी के मनोहर चित्र के साथ न्यौछावर १) रुपया।

३७. निःश्वास—आज से ४०-४५ वर्ष पूर्व श्री महाराजजी अपनी दैनन्दिनी में कुछ मन को समझाने के निमित्त उपदेश लिखते थे। उन्हें आपके एक परमप्रिय भक्त श्री ने निःश्वास नाम

से छपा दिया, इसके कई संस्करण हिन्दी तथा अँग्रेजी में छप चुके हैं। यह छोटी-सी पुस्तक बहुत ही उपादेय है। इसके उपदेश सीधे हृदय पर चोट करते हैं। मूल्य ५० पैसे।

३८. गुरु-भक्ति और एकलव्य—रङ्गमञ्च पर खेलने योग्य धार्मिक नाटक, मूल्य १ रुपया।

३९. भरत-यात्रा तीर्थ माहात्म्य—न्यौछावर ५० पैसे।

४०. शुभ विवाह मङ्गलमय हो।

वर-वधू को शुभशिक्षा तथा आशिर्वाद अमूल्य

४१. नर्मदा दर्शन—(आपके हाथ में है) मू० १० रुपया।

सनातन माधुर्य ग्रन्थ माला के १२ अनुपम ग्रन्थ

रचयिता—स्वामी श्री सनातन देव जी

१—माधुर्य-मन्दाकिनी—इसमें विविध राग रागिनियों में २५० पद हैं। न्योछावर ३) रुपये मात्र।

२—माधुर्य-तरङ्गिणी—इसमें भी ऐसे ही लगभग २५० पद हैं। इसका भी मूल्य ३) रुपये है। डाक व्यय पृथक्।

३—माधुर्य लहरी पृष्ठ २२६-मूल्य ३)

४—माधुर्य मञ्जूसा पृष्ठ-२०१ मू० ३)

५—माधुर्य-कौमुदो पृष्ठ-१६० मू० ३)

६—माधुर्य-मकरन्द पृष्ठ-१८० मू० ३)

७—माधुर्य-सुरसरि पृष्ठ-१८४ मू० ३)

८—माधुर्य-मयङ्क पृष्ठ-१८१ मू० ३)

९—माधुर्य निकुञ्ज पृष्ठ-१६७ मू० ३)

१०—माधुर्य-निर्झर (बड़े आकार के) पृष्ठ-१६८ मू० ३)

११—माधुर्य-लतिका पृष्ठ-१६८ मू० ३)

१२—माधुर्य वाटिका (प्रेस में है)

पता—संकीर्तन भवन पो० भूसी (प्रयाग)

सत्यं शिवं सुन्दरम् के आदर्श से अनुप्राणित

भागवती कथा

अनन्त शान्ति तथा अखण्ड आनन्द देने वाली
भागवती कथा १२५ भागों में

लेखक

कोटि-कोटि भारतीयों के हृदय में अपनी
लेखनी से अविरल भक्ति भागीरथी
प्रवाहित करने वाले
सन्त शिरोमणि

श्री प्रभुदत्त ब्रह्मचारीजी महाराज

दैहिक, दैविक, मानसिक-चाहिँ होहि भव की व्यथा।
सब रोगनिकी एक है, ओषधि 'भागवती कथा'॥